राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क ७६

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्करोद्धार एवं दुर्गमबोध टीकाद्वय संवलित]

प्रकाशक

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR.

जोधपुर (राजस्थान)

१९६५ ई०

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य सचालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएन्टल सोसाइटी, जर्मनी;
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन, बम्बई; प्रधान सम्पादक,
सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि

ग्रन्थाङ्क ७९

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्करोद्धार एव दुर्गमबोध व्याख्याद्वय सवलित]

प्रकाशक
राजस्थान राज्याज्ञानुसार
सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
जोधपुर (राजस्थान)
१९६५ ई०

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[भट्ट लक्ष्मीनाथ एवं महोपाध्याय मेघविजय प्रणीत टीकाएं तथा आठ परिशिष्ट एवं समीक्षात्मक विस्तृत भूमिका सहित]

सम्पादक

महोपाध्याय विनयसागर

साहित्य महोपाध्याय, साहित्याचार्य, दर्शनशास्त्री,

साहित्यरत्न, काव्यभूषण, शास्त्रविशारद

प्रकाशनकर्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२२
प्रथमावृत्ति १०००

भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८७

खिस्ताब्द १९६५
मूल्य—१८.२५

मुद्रक— हरिप्रसाद पारीक, साधना प्रेस, जोधपुर

सञ्चालकीय वक्तव्य

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ७९वें ग्रन्थांक के स्वरूप वृत्त-मौक्तिक नाम का यह एक मुक्तांकित ग्रन्थरत्न गुम्फित होकर ग्रन्थ-माला के प्रिय पाठकवर्ग के करकमलों मे उपस्थित हो रहा है।

जैसा कि इसके नाम से हो सूचित हो रहा है कि यह ग्रन्थ वृत्त अर्थात् पद्यविषयक शास्त्रीय वर्णन का निरूपण करने वाला एक छन्द.शास्त्र है। भारतीय वाङ्मय मे इस शास्त्र के अनेक ग्रन्थ उपलब्ध होते है। प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक, इस विषय का विवेचन करने वाले सैकडो ही छोटे-बड़े ग्रन्थ भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओ मे ग्रथित हुए है। प्राचीनकाल मे प्राय: सब ग्रन्थ सस्कृत और प्राकृत भाषा मे रचे गये है। बाद में, जब देश्य-भाषाओं का विकास हुआ तो उनमे भी तत्तद् भापाओ के ज्ञाताओं ने इस शास्त्र के निरूपण के वैसे अनेक ग्रन्थ बनाये।

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला का प्रधान उद्देश्य वैसे प्राचीन शास्त्रीय एव साहित्यिक ग्रन्थो को प्रकाश मे लाने का रहा है जो अप्रसिद्ध तथा अज्ञात स्वरूप रहे है। इस उद्देश्य की पूर्त्तिरूप में, हमने इससे पूर्व छन्द शास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले पाँच ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला में प्रकाशित किये है। प्रस्तुत ग्रन्थ का छठा स्थान है।

इनमे पहला ग्रन्थ महाकवि स्वयंभू रचित है जो 'स्वयंभू छंद' के नाम से अकित है। स्वयभू कवि ९-१०वी शताब्दी मे हुआ है। वह अपभ्रंश भाषा का महाकवि था। उसका बनाया हुआ अपभ्रंश भाषा का एक महाकाव्य 'पउमचरिउ' है, जिसको हमने अपनी 'सिंघी जैन ग्रन्थमाला' में प्रकाशित किया है। स्वयभू कवि ने अपने छन्द शास्त्र मे, सस्कृत और प्राकृतभाषा के उन बहुप्रचलित और सुप्रतिष्ठित छन्दों का तो यथायोग्य वर्णन किया हो है परन्तु तदुपरान्त विशेष रूप से अपभ्रंश-

भाषा-साहित्य के नवीन विकसित छन्दो का भी बहुत विस्तार से वर्णन किया है। अपभ्रंश-भाषा-साहित्य को दृष्टि से यह ग्रन्थ विशिष्ट रत्न-रूप है।

दूसरा ग्रन्थ है 'वृत्तजातिसमुच्चय'। इसका कर्त्ता विरहांक नाम से अंकित कोई 'कइसिट्ठ' है। यह शब्द प्राकृत है, जिसका सही संस्कृत पर्याय क्या होगा, पता नही लगता। 'कइसिट्ठ' का सस्कृत रूप कवि-श्रेष्ठ, कविशिष्ट और कृतशिष्ट अथवा कृतिश्रेष्ठ भी हो सकता है। वृत्तजातिसमुच्चय भी प्राचीन रचना सिद्ध होती है। इसकी रचना ९वी-१०वी शताब्दी की या उससे भी कुछ प्राचीन अनुमानित की जा सकती है। यह रचना शिष्ट प्राकृत-भाषा मे ग्रथित है। इसमे सस्कृत की अपेक्षा प्राकृत के छन्दो का विस्तृत निरूपण है और साथ मे अपभ्रंश भाषा के भी अनेक छन्दों का वर्णन है। ग्रन्थकार ने अपभ्रंश शैलो के छन्दो का विवेचन करते हुए उसकी उपशाखाएँ-स्वरूप 'आभोरी' और 'मारवी' अथवा 'मारुवाणी' का भी नाम-निर्देश किया है जो प्राचोन राजस्थानी-भाषा-साहित्य के विकास के इतिहास की दृष्टि से प्राचीनतम उल्लेख है। राजस्थानी के पिछले कवियो ने जिसे 'मरुभाखा' अथवा 'मुरधरभाखा' कहा है, उसे ही कवि विरहांक ने 'मारुवाणो' नाम से उल्लेख किया है। इस मारुवाणी का एक प्रिय और प्रसिद्ध छन्द है जिसका नाम 'धोषा' अथवा 'घोषा' बताया है। इस उल्लख से यह ज्ञात होता है कि ९वी-१०वी शब्तादी मे राजस्थान की प्रसिद्ध बोली 'मारुई' या 'मारवी' का अस्तित्व और उसके कवि-सम्प्रदाय तथा उनकी काव्यकृतियो का व्यवस्थित विकास हो रहा था। प्राकृत और अपभ्रंश भाषा मे पद्य-रचना के विविध प्रयोगो का इस ग्रन्थ मे वहुत महत्त्वपूर्ण निरूपण है।

तीमरा ग्रन्थ है 'कविदर्पण'। यह भी प्राकृत के पद्य-स्वरूपों का निरूपण करने वाला एक विशिष्ट ग्रन्थ है। इसकी रचना विक्रम की १४वी शताब्दी के आरम्भ मे हुई प्रतीत होती है। विक्रम की १२वी शताब्दी के आरम्भ से राजस्थान और गुजरात में प्राकृत और अप-

भ्रंश भाषा के साहित्य में जिस प्रकार के अनेकानेक मात्रागणीय छन्दों का विकास और प्रसार हुआ है उनका सोदाहरण लक्षण-वर्णन इस रचना मे दिया गया है। 'सदेशरासक' जैसी रासावर्ग की सर्वोत्तम रचना मे जिन विविध प्रकार के छन्दों का कवि ने प्रयोग किया है उन सब का निरूपण इस ग्रन्थ मे मिलता है। प्राकृतपिंगल नाम के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में जिस प्रकार के छन्दो का वर्णन दिया गया है उनमे के प्राय: सभी छन्द इस ग्रन्थ में, उसी शैली का पूर्वकालीन पथप्रदर्शन करने वाले, मिलते है। जिस प्रकार प्राकृतपिंगल मे दिये गये उदाहरणभूत पद्यो मे, कर्ण, जयचद, हमीर आदि राजाओ के स्तुति-परक पद्य मिलते है उसी तरह इस ग्रन्थ मे भीमदेव, सिद्धराज जयसिह, कुमारपाल आदि अणहिलपुर के राजाओ के स्तुतिपरक पद्य दिये गये है।

उक्त तीनो ग्रन्थो का सम्पादन हमारे प्रियवर विद्वान् मित्र प्रो० एच० डी० वेलणकरजी ने किया हैं जो भारतीय छन्द शास्त्र के अद्वितीय मर्मज्ञ विद्वान् है। इन ग्रन्थो की विस्तृत प्रस्तावनाओ में (जो अंग्रेजी मे लिखी गई है) सम्पादकजी ने प्राकृत एव अपभ्रंश के पद्य-विकास का बहुत पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया है। इन ग्रन्थो के अध्ययन से अपभ्रंश और प्राचीन राजस्थानी-गुजराती, हिन्दीभाषा के विविध छदो का किस क्रम से विकास हुआ है वह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है।

विगत वर्ष में हमने इसी ग्रन्थमाला के ६९ वे मणि के रूप मे 'वृत्तमुक्तावली' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया–जिसके रचयिता जयपुर के राज्यपण्डित श्रीकृष्ण भट्ट थे; महाराजा सवाई जयसिंह ने उनको बड़ा सम्मान दिया था। वृत्तमुक्तावली मे वैदिक छन्दो का भी निरूपण किया गया है, जो उपर्युक्त ग्रन्थो मे आलेखित नही है। वृत्तमुक्तावली में वैदिक छन्द तथा प्राचीन संस्कृत एवं प्राकृत-साहित्य मे सुप्रचलित वृत्तों के अतिरिक्त उन अनेक देश्यभाषा-निबद्ध वृत्तो का भी निरूपण किया गया है जो उक्त प्राचीन ग्रन्थकारों के बाद होने वाले अन्यान्य कवियो द्वारा प्रयुक्त हुए है। श्रीकृष्ण भट्ट सस्कृत-भाषा के प्रौढ

पण्डित थे। सस्कृत काव्य-रचना मे उनकी गति प्रखर और अबाध थी इसलिये उन्होने उक्त प्रकार के सब छन्दों के उदाहरण स्वरचित पद्यो द्वारा ही प्रदर्शित किये है। प्राकृत, अपभ्रंश और प्राचीन देशी भाषा के प्रधानवृत्तो के उदाहरण-स्वरूप पद्य भी उन्होने सस्कृत मे ही लिखे। हिन्दी-राजस्थानी-गुजराती भाषा मे बहुप्रचलित और सर्वविश्रुत दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त और छप्पय जैसे छन्द भी उन्होने सस्कृत मे ही अवतारित किये।

इन ग्रथो से विलक्षण एक ऐसा छन्द-विषयक अन्य बडा ग्रन्थ भी हमने ग्रन्थमाला मे गुम्फित किया है जो 'रघुवरजसप्रकास' है। इसका कर्त्ता चारण कवि किसनाजी आढा है, वह उदयपुर के महाराणा भीमसिह जी का दरबारी कवि था। वि० स० १८८०-८१ मे उसने इस ग्रन्थ की राजस्थानी भाषा में रचना की। जिसको कवि 'मुरधर भाखा' के नाम से उल्लिखित करता है। यह छन्दोवर्णन-विषयक एक बहुत ही विस्तृत और वैविध्य-पूर्ण ग्रन्थ है। कर्त्ता ने इस ग्रन्थ में छन्द शास्त्र-विषयक प्राय सभी बाते अकित कर दी हैं। वर्णवृत्त और मात्रावृत्तों के लक्षण दोहा छन्द मे बताये है। उदाहरणभूत सब पद्य अर्थात् वृत्त कवि ने अपनी 'मुरधरभाखा' अर्थात् मरुभाषा में स्वय ग्रथित किये हैं। इस प्रकार सस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा के सुप्रसिद्ध सभी छंदो के उदाहरण उसने 'मरुभाखा' मे ही लिखकर अपनी देशभाषा के भाव-सामर्थ्य और शब्दभडार के महत्त्व को बहुत उत्तम रीति से प्रकट किया है। इसके अतिरिक्त उसने इस ग्रंथ में राजस्थानी भाषाशैली में प्रचलित उन सैकड़ो गीतों के लक्षण और उदाहरण गुम्फित किये है जो अन्य भाषा-ग्रन्थित छदग्रन्थो मे प्राप्त नही होते।

प्रस्तुत 'वृत्तमौक्तिक' ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला का छद शास्त्र विषयक ६ठा ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ भी वृत्तमुक्तावली के समान सस्कृत मे गुम्फित है। वृत्तमुक्तावली के रचना काल से कोई एक शताब्दी पूर्व इसकी रचना हुई होगी। इसमे भी वृत्तमुक्तावली की तरह सभी वृत्तो या पद्यो के उदाहरण ग्रन्थकार के स्वरचित हैं। वृत्तमुक्तावली की तरह इसमें

वैदिक छदों का निरूपण नही है पर सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य मे प्रयुक्त प्राय: सभी छदो का विस्तृत वर्णन है। जितने छदों अर्थात् वृत्तों का निरूपण इस ग्रन्थ मे किया गया है उतनों का वर्णन इसके पूर्व निर्मित किसी भी संस्कृत छंदोग्रन्थ मे नही मिलता है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ छंद.शास्त्र की एक परिपूर्ण रचना है।

सस्कृत-साहित्य में पद्य-रचना के अतिरिक्त अनेक विशिष्ट गद्य-रचनाये भी है जो काव्य-शास्त्र मे वर्णित रस और अलकारों से परिपूर्ण हैं, परन्तु गद्यात्मक होने से पद्यों की तरह उनका गेय स्वरूप नही बनता। तथापि इन गद्य-रचनाओ मे कही कही ऐसे वाक्यविन्यास और वर्णन-कण्डिकाएँ, कविजन ग्रथित करते रहते है जिनमे पद्यों का अनुकरण-सा भासित होता है और उन्हे पढने वाले सुपाठी मर्मज्ञ जन ऐसे ढग से पढते है जिसके श्रवण से गेय-काव्य का सा आनन्द आता है। ऐसे गद्यपाठ के वाक्यविन्यासों को छन्द.शास्त्र के ज्ञाताओ ने पद्यानुगन्धी अथवा पद्याभासी गद्य के नाम से उल्लेखित किया है और उसके भी कुछ लक्षण निर्धारित किये है। प्रस्तुत ग्रन्थ मे वृत्तमौक्तिक-कार ने ऐसे विशिष्ट गद्याशो का विस्तृत निरूपण किया है और इस प्रकार के शब्दालंकृत गद्य की कुछ विद्वानो की विशिष्ट स्वतत्र रचनाये भी मिलती है जो विरुदावली और खण्डावली आदि के नाम से प्रसिद्ध है। ऐसी अनेक विरुदावलियो तथा कुछ खण्डावलियो का निरूपण इस वृत्तमौक्तिक मे मिलता है जो इसके पूर्व रचे गये किसी प्रसिद्ध छन्दोग्रन्थ मे नही मिलता। इस प्रकार की छन्द:शास्त्र-विषयक अनेक विशेषताओ के कारण यह वृत्तमौक्तिक यथानाम ही मौक्तिक स्वरूप एक रत्न-ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ की विशिष्ट मूल-प्रति राजस्थान के बीकानेर मे स्थित सुप्रसिद्ध अनूप सस्कृत पुस्तकालय मे सुरक्षित है। मूल-प्रति ग्रन्थकार के समय मे ही लिखी गई है—अर्थात् ग्रन्थ की समाप्ति के बाद १४ वर्ष के भीतर। यह प्रति आगरा मे रहने वाले लालमणि मिश्र ने वि सं. १६६० मे लिख कर पूर्ण की।

ग्रन्थ की रचना कहाँ हुई इसका उल्लेख कहीं नही किया गया। परन्तु ग्रन्थकार तलगदेशीय भट्ट वश के ब्राह्मण थे और उनकी वंश-परम्परा सुप्रसिद्ध वैष्णव सम्प्रदाय के धर्माचार्य श्री वल्लभाचार्य के वश से अभेद स्वरूप रही है। प्रस्तुत रचना में कर्त्ता ने सर्वत्र श्रीकृष्ण-भक्ति का और मथुरा वृन्दावन के गोप-गोपीजनो के रस-विहार का जो वर्णन किया है उससे यह कल्पना होती है कि ग्रन्थकार मथुरा-वृन्दावन के रहने वाले हों !

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री विनयसागरजी महोपोध्याय ने बहुत परिश्रम-पूर्वक बडी उत्तमता के साथ किया है। ग्रन्थ से सम्बद्ध सभी विचारणीय विषयो का इन्होंने अपनी विद्वत्तापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना और परिशिष्टो में बहुत विशद रूप से विवेचन किया है जिसके पढने से विद्वानों को यथेष्ट जानकारी प्राप्त होगी।

ग्रन्थमाला के स्वर्णसूत्र मे इस मौक्तिक-स्वरूप रत्न की पूर्ति करने निमित्त हम श्री विनयसागरजी के प्रति अपनो हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते है और आशा रखते हैं कि ये अपनी विद्वत्ता के परिचायक इस प्रकार के और भी ग्रन्थ-सम्पादन के कार्य द्वारा ग्रन्थमालो की सेवा और शोभावृद्धि करते रहेगे।

जन्माष्टमी सं. २०२२;
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर
दि० २०-८-६५

मुनि जिनविजय
सम्मान्य सञ्चालक

समर्पण

यः सूरीश्वर - वंश-सागर - मणिर्वादीभपञ्चाननः ,
तं श्रीजैनविधौ गणे दिनमणिं ध्यायामि हृद्ध्वान्तहम् ।
हिन्द्यामागमसंप्रसारमणिना प्रोद्धारि येन श्रुतं ,
भव्यानामुपदेशदानमणये तस्मै नमः सर्वदा ॥

यस्मात्प्रादुरभून्मणेः शुभविधा श्रीगौतमाद्वागिव ,
वागीशानिव वादिनो जितवती वादेषु संवादिनः ।
सौमत्यम्बुनिधेर्मणे. समुदयात् सज्ज्ञानमालोकते ,
ग्रन्थं मौक्तिकनामकं गुरुमणौ भक्त्या मया ह्यर्प्यते ॥

चारुचरणचञ्चरीक
विनय

क्रमपञ्जिका

भूमिका

१. प्रथमखंड

द्वितीय खंड

टीकाद्वय - क्रम - पञ्जिका

परिशिष्ट - क्रमपञ्जिका

भूमिका



छन्दःशास्त्र का उद्भव और विकास

किसी पदार्थ के आयतन को उसका छन्द कहा जाता है । छन्द के बिना किसी भी वस्तु की अवस्थिति इस ससार में सभव नही है। मानव-जीवन को भी छन्द कहा जाता है। सात छन्दो या मर्यादाओ से जीवन मर्यादित है। छन्द या मर्यादा के कारण ही मनुष्य स्व और पर की सीमाओ मे बधा हुआ है। स्वच्छन्दत्व उसे प्रिय होता है परच्छन्दत्व नही। मनुष्य स्वकीय छन्दो या सीमाओ को विस्तृत करता हुआ, स्वतन्त्रता के मार्ग का अनुशीलन करता हुआ अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर लेता है।

छन्द पद का निर्वचन—

छन्द और छन्दस् पदो की निरुक्ति क्षीरस्वामी ने 'छद' धातु से बतलाई है। अन्य व्युत्पत्तियो के अनुसार छन्द शब्द 'छदिर् ऊर्जने, छदि सवरणे, चदि आह्लादने दीप्तौ च, छद सवरणे, छद अपवारणे' धातुओ से निष्पन्न है।[1] वस्तुत. इन धातुओ से निष्पन्न शब्द विभिन्न अर्थो मे पृथक्-पृथक् रूप से प्रयुक्त होते रहे होगे। कालातर मे ये शब्द छन्द और छन्दस् शब्द-रूपो मे खो गये। यास्क ने 'छन्दासि छादनात्'[2] कह कर आच्छादन के अर्थ मे प्रयुक्त छन्द शब्द का अस्तित्व माना है। सायण ने ऋग्वेद-भाष्यभूमिका मे 'आच्छादकत्वाच्छन्दः' कथन द्वारा यास्क का समर्थन किया है। छान्दोग्योपनिषद् की एक गाथा के अनुसार देव मृत्यु से डर कर त्रयी-विद्या मे प्रविष्ट हुए। वे छदो से आच्छादित हो गये। आच्छादन करने से ही छदो का छदत्व है।[3] ऐतरेय आरण्यक के अनुसार स्तोता को आच्छादित करके छद पापकर्मो से रक्षित करते हैं।[4] इन स्थानो पर आच्छादन अर्थ वाला छद शब्द प्रयुक्त हुआ है। असीम चैतन्य-सत्ता को सीमाओ या मर्यादाओ मे बांध कर ससीम बना देने वाली प्रकृति भी आच्छादन करने के कारण ही छन्द कही जाती है। वैदिक-दर्शन के अनुसार छन्द 'वाक्-विराज्' का भी नाम है जो साख्य की प्रकृति या वेदात की माया के

१–वैदिक छन्दोमीमासा, —प० युधिष्ठिर मीमासक, पृ० ११-१३

२–निरुक्त ७।१२

३–छान्दोग्योपनिषद् १।४।२; तुलनीय गार्ग्य का उपनिदान सूत्र ८।२

४–ऐतरेय आरण्यक २।२

समकक्ष है। सारा विश्व इसी से विकसित होता है। आच्छादनभाव को स्पष्ट करने के लिए 'छदिच्छन्द' नाम का विशेष रूप से इसमे उल्लेख किया गया है।[१] यह एक छन्द ही विविध रूपो मे एक से अनेक हो जाता है। इन विभिन्न छन्दो मे आत्मा आच्छादित हो कर व्याप्त हो जाती है। आत्मा 'छन्दोमा' के रूप मे विविध छन्दो को प्रकाशित करती है।[२] छन्द से छन्दित छन्दोमा स्वय छन्द है और ज्योतिस्वरूप होने से उसका सम्बन्ध दीप्ति से तथा आनन्दस्वरूप होने से आह्लाद से भी जुड जाता है। चदि धातु से निष्पन्न छन्द (मूल रूप चन्द) का प्रयोग ऐसे प्रसगो मे होता रहा ज्ञात होता है। प्राण (प्राणा वै छन्दासि)[३], सूर्य (छन्दासि वै व्रजो गोस्थानः)[४] और सूर्य रश्मियो (ऋग्वेद १।९२।६) को छन्द कहने का कारण भी दीप्तियुक्त होना ही ज्ञात होता है। लोक मे भी गायत्री आदि पद्य, वेद, आर्षग्रन्थ, सहिता, इच्छा, अनियन्त्रित आचार आदि[५] अर्थों मे प्रयुक्त छन्द शब्द देखा जाता है। ये सब एक छन्द शब्द के विविध अर्थ नही हैं, वरन् इन-इन अर्थों मे प्रयुक्त अलग-अलग शब्द हैं। किसी समय इनका सूक्ष्म भेद सुविज्ञात था। स्वर आदि द्वारा यह भेद स्पष्ट कर दिया जाता था। कालान्तर मे अन्य शब्दो की तरह[६] ये सारे शब्द एक छन्द शब्द मे श्लिष्ट हो गये और उनके स्वर-चिह्नो ने भी उदात्तादि प्रबल स्वरो मे अपना अस्तित्व खो दिया।

साहित्य मे छन्द—

ऊपर छन्द के विविध अर्थो मे एक गायत्री आदि छन्द का भी उल्लेख किया गया है। वाङ्मय मे छन्द का विशिष्ट महत्त्व है। कात्यायन के अनुसार सारा वाङ्मय छन्दोरूप है - छन्दोमूलमिद सर्वं वाङ्मयम्।[७] छन्द के बिना वाक् उच्चरित नही होती।[८] कोई शब्द छन्द रहित नही होता।[९] इसीलिए गद्य और पद्य दोनो को छन्दोयुक्त माना जाता है।[१०]

१–वैदिक दर्शन —डॉ० फतहसिंह, पृष्ठ १८२-१८३
२–वैदिक दर्शन पृ० १८४ तथा उसमे उद्धृत ताण्ड्य महाब्राह्मण १४।११।१४
३–कौषीतकि ब्राह्मण ७।९, ११।८, १७।२
४-तैत्तिरीय ब्राह्मण ३।२।९।३
५–वैदिक छन्दोमीमासा, पृ० ७-८
६–शब्दो के विकास की ऐसी प्रवृत्ति के लिए देखें—'ऋग्वेद मे गोतत्त्व'—बद्रीप्रसाद पचोली
७–ऋग्यजुप परिशिष्ट ५, तुलनीय छन्दोऽनुशासन-जयकीर्ति, १।२
८–नाच्छन्दसि वागुच्चरति इति —निरुक्त ७।२, दुर्गवृत्ति
९–छन्दोहीनो न शब्दोऽस्ति —नाट्यशास्त्र १४।१५
१०–वैदिक छन्दोमीमांसा, पृ० ८

छन्द की परिभाषा करते हुए कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी मे अक्षर के परिमाण को छन्द कहा है—यदक्षरपरिमाण तच्छन्दः । अन्यत्र अक्षर-सख्या का नियामक छद कहा गया है ।[1] छन्द का महत्व केवल अक्षर-ज्ञान कराना मात्र नही हैं । ऊपर के निर्वचनो पर विचार करने पर भावो को आच्छादित करके अपने मे सीमित करने वाली शब्द-सघटना को साहित्य मे छन्द कह सकते हैं । अर्थ को प्रकाशित करके अर्थचेता को आह्लादयुक्त कर देने मे छन्द का छदत्व प्रकट होता है ।

वैदिक छद मत्रो के अर्थ प्रकट करने की विशेष शैली प्रक्रिया के द्योतक हैं। वेदो के व्याख्याकारो ने इस बात पर जोर दिया है कि ऋषि, देवता और छद के ज्ञान के बिना मत्रो के अर्थ उद्भासित नही होते। देवता मत्रो के विषय है, ऋषि वे सूत्र हैं जिनसे अर्थ सरलतया प्रकट हो जाते हैं और छद अर्थप्राप्ति की प्रक्रिया का नाम है ।[2] छदो की अर्थ प्रकट करने की विशिष्ट प्रक्रिया के कारण ही वैदिक-शैली को 'छादस्' कहा गया है । पारसी धर्म-ग्रथ 'जेन्द अवस्ता' का जेन्द नाम भी छद का अपभ्रष्ट रूप ज्ञात होता है ।

ब्राह्मण-ग्रन्थो मे छादस्-प्रक्रिया का बडा ही सूक्ष्म व रहस्यात्मक वर्णन देखने को मिलता है । वहाँ छदो के नामो द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि-प्रक्रिया को समझाने का प्रयत्न किया गया है। सब से अधिक रहस्यात्मक वर्णन गायत्री छद का है जो सूर्यलोक से प्राप्त होने वाले सावित्री प्राण का प्रतीक बन गया है । छदो का रहस्यात्मक वर्णन स्वतत्र रूप से अनुसधान का विषय है । यहाँ छद के व्यावहारिक रूप पर ही विचार किया जा रहा है ।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से छद अक्षरो के मर्यादित प्रक्रम का नाम है । जहाँ छद होता है वही मर्यादा आ जाती है ।[3] मर्यादित जीवन मे ही साहित्यिक छद जैसी स्वस्थ-प्रवाहशीलता और लयात्मकता के दर्शन होते हैं । मर्यादित इच्छा की अभिव्यक्ति प्राचीन गणराज्यो की जीवन्त छद परम्परा Voting System[4] कही जाती है ।

भावो का एकत्र सवहन, प्रकाशन तथा आह्लादन छद के मुख्य लक्षण हैं । इस दृष्टि से रुचिकर और श्रुतिप्रिय लययुक्त वाणी ही छद कही जाती है—

१–छन्दोऽक्षरसख्यावच्छेदकमुच्यते —अथर्ववेदीय वृहत्सर्वानुक्रमणी

२–ऋग्वेद के मत्रद्रष्टा ऋषि —बद्रीप्रसाद पचोली, वेदवाणी, बनारस। १५।१

३–वेदविद्या —डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, पृ० १०२

४–प्राचीन भारत मे गणतान्त्रिक व्यवस्था —बद्रीप्रसाद पचोली, शोधपत्रिका, उदयपुर, १५।१

'छदयति पृणाति रोचते इति छद' ।' जिस वाणी को सुनते ही मन आह्लादित हो जाता है वह वाणी ही छद है—'छदयति आह्लादयति छद्यते अनेन इति छद ।'[१]

स्पष्ट है कि छद के रूप मे अक्षर-मर्यादा का निर्वाह करने का सम्बन्ध शब्द-सघटना से है और प्रकाशन एव आह्लादन का सम्बन्ध अर्थ के साथ है। इसी तरह छद के प्रथम दो लक्षणो का सबध वक्ता से होता है और तृतीय का श्रोता से। इस दृष्टि से छद, श्रोता और वक्ता के बीच मे प्रभावशाली सेतु का काम करता है। शतपथब्राह्मण मे 'रसो वै छदासि'[२] कह कर छद की रागात्मिका अनुभूति और अभिव्यक्ति की ओर स्पष्ट सकेत किया गया है।

छन्दःशास्त्र—

छदःशास्त्र मे छदो का विवेचन किया जाता है। भारतवर्ष मे वैदिक तथा लौकिक सस्कृत भाषा के छदो पर विचार अत्यन्त प्राचीन काल से ही प्रारम्भ हो गया था। वैदिक छन्दोमीमांसा मे छदःशास्त्र का आदि मूल वेद माना गया है।[३] छद शास्त्र के प्राचीन सस्कृत-वाङ्मय मे प्रयुक्त अनेक नामो का उल्लेख भी इसमे है। यथा—

(१) छदोविचिति, (२) छदोमान, (३) छदोभाषा, (४) छदोविजिनि, (५) छदोनाम, (६) छदोविजिति, : छदोविजित, (७) छदोव्याख्यान, (८) छदसा विचय, (९) छदसा लक्षणम्, (१०) छद:शास्त्र, (११) छदोऽनुशासन, (१२) छदोविवृत्ति, (१३) वृत्त, (१४) पिंगल।[४]

छदोविचिति पद का अर्थ है—वह ग्रन्थ जिसमे छदो का चयन किया गया हो। यह पद पाणिनि के गणपाठ, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, सरस्वतीकण्ठाभरण, गणरत्नमहोदधि आदि मे प्रयुक्त हुआ है। पिंगलप्रोक्त छदोविचिति, पतजलि-प्रोक्त छदोविचिति, जनाश्रयप्रोक्त छदोविचिति, दण्डिप्रोक्त छदोविचिति तथा एक अन्य पालिभाषा के छदोविचिति का नामोल्लेख श्रीमीमासकजी ने किया है।[५]

छदोमान नाम भी ग्रथवाची है। पाणिनि के गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि मे यह नाम प्रयुक्त हुआ है, परन्तु अभी तक इस नाम का कोई ग्रथ नही

१–सस्कृत साहित्य का इतिहास —वाचसपति गेरोला, पृ० ११०
२–शतपथ ब्राह्मण, ७।३।१।३७
३–वैदिक छंदोमीमांसा, प० युधिष्ठिर मीमासक, पृ० ४३
४– " " ३५
५– " " ३६

मिला है। जिस ग्रंथ मे छदो का भाषण या व्याख्यान मिलता हो उसे छदोभाषा कहा गया है। गणपाठो मे यह नाम आया है।[1] ऐसी भी मान्यता है कि छदोभाषा नाम प्रातिशाख्यो के लिए प्रयुक्त हुआ है।[2] विष्णुमित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वृत्ति मे छदोभाषा शब्द का अर्थ वैदिक भाषा किया है। कुछ अन्य लोगो ने छद का अर्थ छंदःशास्त्र तथा भाषा का अर्थ व्याकरण या निरुक्त किया है।[3] परन्तु प० युधिष्ठिर मीमासक ने इन मतो को निराकृत करके छदोभाषा-नामक छद शास्त्र के ग्रथो का अस्तित्व माना है उन्होने भी इस नाम को चरण-व्यूह आदि मे प्रातिशाख्य के लिए प्रयुक्त माना है।[4]

जिस ग्रथ द्वारा छदो पर विजय प्राप्त हो सके उसे छंदोविजिति कहा जाता है। चाद्र गणपाठ, जैनेन्द्र गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि मे यह नाम प्रयुक्त हुआ है। छदोनाम के लिए मीमांसकजी ने सभावना प्रकट की है कि यह छदोमान का अपभ्रश हो सकता है। छदोव्याख्यान, छदसा विचय, छदसा लक्षण, छंदोऽनुशासन, छद शास्त्र आदि भी छदोविषयक ग्रथों के नाम हैं। वृत्त पद के आधार पर वृत्तरत्नाकर आदि ग्रथो के नामकरण किए गये हैं। हमारे विवेच्य ग्रथ वृत्तमौक्तिक का नाम भी इसी परम्परा मे उल्लेखनीय है।

छन्द शास्त्र के लिए पिंगल-नाम छद.शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल के कारण ही प्रयुक्त हुआ ज्ञात होता है।[5] पिंगल-नाम के अनेक प्राकृतभाषा के ग्रथ प्रसिद्ध हैं।

छन्द शास्त्र की प्राचीनता—

वैदिक छदो के नाम सर्वप्रथम वैदिक-सहिताओ मे ही प्रयुक्त हुए हैं। वैदिक षडगों मे छद शास्त्र का नाम भी आता है। वेदमत्रो के साथ उनके छदो का नामोल्लेख भी हुआ है। उनका विशुद्ध और लयबद्ध उच्चारण छद शास्त्र के ज्ञान से ही सम्भव है। इसलिए वेदार्थ के विषय मे विवेचन करने वाले सभी ग्रथो मे छदो का भी प्रसगवश उल्लेख मिल जाता है।

पाणिनि ने गणपाठ मे छद शास्त्र-सम्बन्धी ग्रथो का उल्लेख किया है। उनके समय मे तो लौकिक सस्कृत-भाषा मे महाकाव्यो की रचनाए लिखी जाने लगी

१–वैदिक छन्दोमीमासा पृ० ३७

२–सस्कृत-साहित्य का इतिहास —गैरोला, पृ० १६१

३–अन्य मतो के लिए देखो —वैदिक छदोमीमामा, पृ० ३७-३६

४–वैदिक छदोमीमासा, पृ० ३६-४०

५– ,, ४२

थी । इसलिए वैदिक छंदो के अतिरिक्त लौकिक छदो पर भी विवेचना होने लगी होगी और इस विपय के अनेक ग्रथ विद्यमान होगे । विद्वानो की मान्यता है कि छदःशास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल पाणिनि के समकालीन थे । छंद शास्त्र के विकास मे पिंगल का वही स्थान है जो व्याकरण-परम्परा मे पाणिनि का है । तण्डी, यास्क, क्रौष्टुकि, सैतव, काश्यप, रात, माण्डव्य आदि आचार्य पिंगल से भी प्राचीन हैं ।[1] इससे छद.शास्त्र की अतिप्राचीनता के विषय मे किसी प्रकार कोई सदेह नही रह जाता है ।

छन्दःशास्त्र के प्राचीन आचार्य—

वेदागो के प्रवक्ता शिव और बृहस्पति माने जाते हैं । महाभारत के एक उल्लेख के अनुसार वेदागो का प्रवचन बृहस्पति ने[2] तथा एक दूसरे उल्लेख के अनुसार शिव ने[3] किया । परवर्ती ग्रथकारों ने छदःशास्त्र के प्रवक्ता आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है । छद सूत्र-भाष्य के अन्त मे यादवप्रकाश ने छद.शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यो की परम्परा का उल्लेख किया है .—

छदोज्ञानमिद भवाद् भगवतो लेभे सुराणा गुरु,
तस्माद् दुश्च्यवनस्ततो सुरगुरुर्माण्डव्यनामा तत ।
माण्डव्यादपि सैतवस्तत ऋपिर्यास्कस्तत. पिगल,
तस्येद यशसा गुरोर्भुवि धृत प्राप्यास्मदाद्यै क्रमात् ॥

इसी ग्रथ के अन्त मे किसी का एक अन्य श्लोक भी दिया हुआ है —

छन्द शास्त्रमिद पुरा त्रिनयनाल्लेभे गुहोऽनादितः,
तस्मात् प्राप सनत्कुमारमुनितस्तस्मात् सुराणा गुरु ।
तस्माद्देवपतिस्तत फणिपतिस्तस्माच्च सत्पिगल
तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिरयो मह्य प्रतिष्ठापितम् ॥[4]

पं० युधिष्ठिर मीमांसक ने इनमे से प्रथम परम्परा को अधिक विश्वसनीय माना है । उन्होने राजवार्तिक मे उल्लिखित —

शिवगिरिजानन्दिफणीन्द्रबृहस्पतिच्यवनशुक्रमाण्डव्या ।
सैतवपिंगलगरुडप्रमुखा आद्या जयन्ति गुरुचरणा ॥

१–वैदिक छन्दोमीमासा पृ० ४६
२–वेदांगानि तु बृहस्पतिः —महाभारत, शान्तिपर्व २१२।३२
३–वेदात् पडंगान्युद्धृत्य —महाभारत, शान्तिपर्व २८४।६२
४–उपर्युक्त मतो के लिए द्रष्टव्य, वैदिक छदोमीमासा, पृ० ५७

तथा यति के प्रसग मे छद:शास्त्र-प्रवक्ता जयकीर्ति द्वारा उल्लिखित—

वाछन्ति यतिं पिंगलवसिष्ठकौडिन्यकपिलकम्बलमुनय ।
नेच्छन्ति भरतकोहलमाण्डव्याश्वतरसैतवाद्या: केचित् ॥

परम्पराओ का उल्लेख भी किया है।[1]

पिंगल-छद सूत्र मे उल्लिखित आचार्यो का नाम ऊपर आ चुका है। इससे प्रकट है कि आचार्य पिंगल से पहले छद शास्त्र के प्रवक्ताओ की एक व्यवस्थित एव अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी।

वैदिक और लौकिक छन्द:शास्त्र

छद दो प्रकार के कहे गये हैं—वैदिक और लौकिक।[2] वेद-सहिताओ मे प्रयुक्त गायत्री, अनुष्टुप्, त्रिष्टुप्, जगती, पक्ति, उष्णिक्, बृहती, विराट् आदि छद वैदिक कहे जाते हैं। छद शास्त्र के प्रारभिक ग्रथो में केवल वैदिक छदो और उनके भेद-प्रभेदो पर ही विचार किया जाता था। बाद मे वाल्मीकि ने लौकिक साहित्य मे भी छद का प्रयोग किया। उन्हे आदि-कवि होने का श्रेय मिला। इतिहास, पुराण, काव्य आदि मे छदो का प्रभूत रूप से प्रयोग होने लगा। बाद मे इन छदो के लक्षणादि के विषय मे छद शास्त्र मे विचार प्रारम्भ हुआ। सस्कृत-छद शास्त्रो के आधार पर परवर्ती काल मे प्राकृत और अपभ्रश भाषाओ मे छदो के लक्षण-ग्रथ भी लिखे गये।

छन्द के विषय मे उपलब्ध प्राचीनतम सामग्री

वैदिक-सहिताओ मे गायत्री आदि छदो के नाम अनेकधा उल्लिखित हैं परन्तु उनका विवेचन वहाँ प्राप्त नही होता। वस्तुत: उन स्थलो पर छन्दो के नामो द्वारा आधिदैविक और आध्यात्मिक रहस्यो की ओर ही सकेत किया गया ज्ञात होता है। मत्रो के ऐसे सकेतो का ब्राह्मण-ग्रथो मे विस्तार से स्पष्टीकरण किया गया है। विराट् छद का सबध विराज-गौ (प्रकृति) से बतलाते हुए ताण्ड्य-महाब्राह्मण मे उसे छदो मे ज्योतिस्वरूप कहा गया है—विराड् वै छन्दसा ज्योति ।[3] विराट् को दशाक्षरा भी कहा गया है।[4] अन्य छदो के विषय मे भी ऐसे ही रहस्यमिश्रित विचार ब्राह्मण-ग्रथो मे मिलते हैं।

१—जयकीर्त्तिकृत छन्दोनुशासन, १।१३ एवं वैदिक छदोमीमासा पृ० ५८

२—नारदपुराण —पूर्व भाग २।५७।१

३—ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ६।३।६, १०।२।२

४—दशाक्षरा वै विराट् —शतपथब्राह्मण, १।१।१।२२, ऐतरेयब्राह्मण, ६।२०; गोपथब्राह्मण पूर्वार्ध ४.२४, उत्तरार्ध, १।१८, ६।२, ६।१५; ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ३।१३।२

ऋग्वेद-प्रातिशाख्य को छद शास्त्र की प्राचीनतम रचना माना जाता है। यह महर्षि शौनक की रचना है। इसका विवेच्यविषय व्याकरण है परन्तु प्रसगवश छदो की भी चर्चा की गई है। यह चर्चा नितात अधूरी है। छदो का ज्ञान प्राप्त किये विना मत्रो का उच्चारण ठीक तरह से नही हो सकता। इसीलिए इस ग्रथ मे छदों का विवरण दिया गया है।[1]

ऋग्वेद तथा यजुर्वेद की सर्वानुक्रमणियो मे भी छदो का विवरण मिलता है। छदोऽनुक्रमणी में दस मडल है और उसमे ऋग्वेद के समस्त छदों का क्रमश विवरण दिया गया है। यह भी शौनक की रचना है। शाखायन श्रौतसूत्र मे भी प्रसगवश छदो पर विचार किया गया है।

पतजलि ने निदानसूत्र मे छदो का उल्लेख करते हुए कुछ प्राचीन छद-शास्त्र के प्रवक्ताओ के नामो का उल्लेख भी किया है। ये पतजलि महाभाष्कार पतजलि से भिन्न कोई प्राचीन आचार्य थे। एक अन्य गार्ग्य नामक आचार्य ने उपनिदानसूत्र मे इन पतंजलि के अतिरिक्त तण्डिब्राह्मण, पिंगल आदि आचार्यो तथा उक्थशास्त्र का उल्लेख किया है। उक्थशास्त्र, सभव है छन्द शास्त्र के लिए प्रयुक्त कोई प्राचीन नाम रहा हो। कीथ ने हलायुधकोश की साक्षी से इन वैदिक-परम्परा के प्राचीन ग्रथो को वेदाग छन्दस् कहा है।[2]

यास्क ने अपने निरुक्त मे वैदिक छदो के नामो का निर्वचन किया है। यथा —

गायत्री गायते स्तुतिकर्मणः। त्रिगमना वा विपरीता। गायतो मुखात् उदपतत् इति च ब्राह्मणम्। उष्णिगुत्स्नाता भवति। स्निह्यतेर्वा स्यात्कान्तिकर्मणः। उष्णीषिणी वेत्यौपमिकम्। उष्णीष स्नायतेः। ककुप्ककुभिनी भवति। ककुप्च कुब्जश्च कुजतेर्वा। उब्जतेर्वा। अनुष्टुबनुष्टोभनात्। गायत्रीमेव त्रिपदा सतीं चतुर्थेन पादेनानुष्टोभतीति इति च ब्राह्मणम्। बृहती परिवर्हणात्। पंक्ति पंचपदा। त्रिष्टुब्स्तोभत्युत्तरपदा। का तु त्रिता स्यात्। तीर्णतम छन्द। त्रिवृद्वज्रस्तस्य स्तोभतीति वा। यत् त्रिरस्तोभत्तत्त्रिष्टुभस्त्रिष्टुप्त्वम्—इति विज्ञायते। जगती गततम छन्द। जलचरगतिर्वा। जल्गल्यमानोऽसृजत् इति च ब्राह्मणम्। विराड् विराजनाद्वा। विराधनाद्वा। विप्रापणाद्वा। विराजनात्सम्पूर्णाक्षरा। विराधनादूनाक्षरा। विप्रापणादधिकाक्षरा। पिपीलिकामध्येत्यौपमिकम्। पिपीलिका पेलतेर्गतिकर्मण।[3]

१—वैदिक-साहित्य —रामगोविंद त्रिवेदी, पृ० २४०

२—संस्कृत-साहित्य का इतिहास —कीथ (हिंदी अनुवाद, चोखम्बा) पृ० ४९२

३—निरुक्त, ७।१२

यास्क ने गायत्री को अग्नि के साथ, त्रिष्टुप् को इन्द्र के साथ तथा जगती को आदित्य के साथ भाग लेने वाला कहा है।[1]

छदों का देवो के साथ सबध तो वाजसनेयी-सहिता आदि मे भी मिलता है।[2] वैदिक छदो के इस प्रकार के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रहस्यमिश्रित वर्णन से भी छदो के स्वरूप पर प्रकाश पडता है और वेदार्थ-ज्ञान में उनकी उपयोगिता भी कम नही है। पाणिनि ने तो छंद को वेद का पाद कहा है —'छन्दः पादौ तु वेदस्य'।[3]

पिंगल के पूर्ववर्त्ती छन्द शास्त्र के आचार्य—

पिंगल से पूर्व का कोई ग्रथ छदो के विषय मे प्राप्त नही है, परन्तु उनके पूर्ववर्त्ती अनेक ग्रथकारो के नाम मिलते है। इससे पता चलता है कि उनके पूर्व छद शास्त्र की एक अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी। उनके पहले के कुछ आचार्यों का परिचय यहां दिया जा रहा हैं—

१ शिव व उनका परिवार—

शिव को छद शास्त्र के प्रवर्त्तक आदि आचार्य के रूप मे यादवप्रकाश और राजवार्त्तिककार ने स्मरण किया है। व्याकरण के आदि आचार्य भी शिव माने जाते हैं। सभव है ये केवल शैव-सम्प्रदाय मे ही प्रवर्त्तक माने जाते हो। वेदांगो के शैव या माहेश्वर-सम्प्रदाय का प्राचीन काल मे महत्वपूर्ण स्थान रहा ज्ञात होता है। शिव के साथ उनके पुत्र गुह व पत्नी पार्वती का नाम भी छद शास्त्र के प्रवक्ता के रूप मे लिया जाता है। नन्दी शिव का वाहन माना जाता है। सभव है यह किसी शिव-भक्त आचार्य का नाम रहा हो। राजवार्तिककार के अनुसार ये पतजलि के गुरु तथा पार्वती के शिष्य थे। वात्स्यायन ने कामशास्त्र के आचार्य के रूप मे भी नन्दी के नाम का उल्लेख किया है जो शिव के अनुचर थे।[4]

२ सनत्कुमार—

यादवप्रकाश के भाष्य के अन्त मे दी हुई अज्ञात लेखक की परम्परा मे

१–निरुक्त ७।८-११

२–वाजसनेयी-सहिता १४।१८-१९; मैत्रायणी-सहिता ५।११९; काठक-सहिता १७।३-४; जैमिनीय-ब्राह्मण ९९

३–पाणिनीय-शिक्षा ४१

४–कामसूत्रम्, १।१।८

इनका नाम भी उल्लिखित है। कालक्रम से ये बृहस्पति के पूर्ववर्ती रहे होगे। उपर्युक्त साक्षी से तो ये बृहस्पति के गुरु ठहरते हैं। परन्तु, इस बात की पुष्टि किसी अन्य सूत्र से होती नही जान पडती।

३ बृहस्पति—

इनका नाम उपर्युक्त तीनों परम्पराओ मे आया है। व्याकरण के बार्हस्पत्य-सम्प्रदाय का अस्तित्व प० युधिष्ठिर मीमासक ने माना है।[1] महाभारत की ऊपर दी हुई साक्षी से वेदागो के प्रवर्तक बृहस्पति हैं। ये माहेश्वर सम्प्रदाय से भिन्न परम्परा के प्रवर्तक ज्ञात होते हैं। बृहस्पति को भारतीय परम्परा मे देव-गुरु माना गया है और इन्द्र इनके शिष्य कहे गये हैं।

४ इन्द्र—

ऐन्द्र-व्याकरण के प्रवक्ता इन्द्र का छन्द.शास्त्र के प्रवक्ता के रूप मे भी उल्लेख किया जाता है। यादवप्रकाश के भाष्य की दोनो परम्पराओ में इन्द्र का नाम आया है। राजवार्तिक के अनुसार फणीन्द्र ही इन्द्र ज्ञात होता है। प० युधिष्ठिरजी ने फणीन्द्र को पतजलि का नाम माना है और च्यवन को दुश्च्यवन मान कर इन्द्र से अभिन्न मानने की सम्भावना प्रकट की है।[2] इस विषय मे अभी निश्चय-पूर्वक कुछ भी कहना सभव नही है।

६. शुक्र—

यादवप्रकाश व राजवार्तिक दोनो मे शुक्र का नाम आया है। सम्भव है शुक्रनीति के प्रवक्ता आचार्य शुक्र और छद:शास्त्र के प्रवक्ता शुक्र अभिन्न हो।

७ कपिल—

इनको मीमांसकजी ने कृतयुग का अन्तिम आचार्य माना है। जयकीर्ति के छद शास्त्र मे यति चाहने वाले आचार्य के रूप मे इनका नामोल्लेख किया गया है। साख्यदर्शन के आचार्य कपिल और ये अभिन्न ज्ञात होते हैं।

८ माण्डव्य—

माण्डव्य के नाम का उल्लेख पिंगल, जयकीर्ति, यादवप्रकाश, चन्द्रशेखर भट्ट आदि द्वारा किया गया है। इनको मीमासक जी ने त्रेतायुगीन माना है।

१–वैदिक-छन्दोमीमांसा, पृ० ५३-५४

२– ,, ,, ५८-५६

९. वसिष्ठ—

जयकीर्ति ने इनका नाम छंद:शास्त्र के आचार्य के रूप मे लिया है ।

१० सैतव—

इनका नाम सभी परम्पराओं में आया है । ऐसा ज्ञात होता है कि ये बहुत प्रसिद्ध आचार्य रहे होगे ।

११. भरत—

ये नाट्यशास्त्र-कर्त्ता भरत से अभिन्न ज्ञात होते हैं। जयकीर्ति ने छन्द.शास्त्र के प्रवक्ता के रूप मे इनके नाम का स्मरण किया है। नाट्यशास्त्र के १४वें तथा १५वें परिच्छेद मे भरत ने छन्दो पर विचार किया है । सम्भव है इनका कोई पृथक् ग्रथ भी इस विषय पर रहा हो।

१२. कोहल—

कोहल का नामोल्लेख भी जयकीर्ति ने ही किया है ।

द्वापरयुगीय अन्य छन्द:प्रवक्ता—

मीमांसकजी ने यास्क, रात, क्रौष्टुकि, कौण्डिन्य, ताण्डी, अश्वतर, कम्बल, काश्यप, पाचाल (बाभ्रव्य) तथा पतजलि को द्वापरकालीन छद:शास्त्र के आचार्य के रूप मे विभिन्न साक्षियो के आधार पर स्वीकार किया है।[1] यास्क के किसी पृथक्-छद सबधी ग्रंथ का पता नही चलता । अन्य आचार्यों के मतो का ही यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है ।

कलियुग के प्रारम्भ मे होने वाले छद:प्रवक्ता—

मीमासकजी ने उक्थशास्त्रकार, कात्यायन, गरुड, गार्ग्य, शौनक आदि का कलियुग के प्रारम्भ मे होने वाले छद शास्त्र-प्रवक्ताओं के रूप मे नामोल्लेख किया है। पिंगल का काल भी उन्होने यही माना है ।

उपर्युक्त छंद:शास्त्र-प्रवक्ताओ के कोई ग्रथ इस समय प्राप्त नही हैं, परतु उनके मतो के उद्धरण अन्य ग्रथो मे मिल जाते हैं। परवर्ती विद्वानो को सबसे अधिक प्रभावित करने वाले आचार्य पिंगल रहे हैं ।

आचार्य पिंगल और पिंगल-छन्द:सूत्र—

पिंगल को कीथ ने प्राकृत-छदो-विषयक-ग्रथ "प्राकृत-पैंगलम्" के रचयिता

१–वैदिक-छन्दोमीमासा ५९

से भिन्न अत्यन्त प्राचीन आचार्य माना है ।[1] पिंगलसूत्र ही छदों के विषय मे हमारे सामने सब से प्राचीन ग्रथ है। कुछ लोगो ने पिंगल को पाणिनि से पूर्ववर्त्ती ग्रंथकार माना है। ऐसे लोगो मे से कुछ पिंगल को पाणिनि का मामा मानते हैं, परन्तु युधिष्ठिर मीमासक तथा गैरोला ने पिंगल को पाणिनि का अनुज, अत· समकालीन ग्रन्थकार माना है ।[2]

पिंगल का महत्व इस बात से समझा जा सकता है कि बाद मे छन्दःशास्त्र का नाम ही पिंगल-शास्त्र हो गया। इनका ग्रन्थ सर्वाधिक प्राचीन होने के साथ ही प्रौढ तथा सर्वाङ्गपूर्ण है ।[3] इसमे वैदिक-छदो के साथ ही लौकिक छदो पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है। "प्राकृत-पिंगल" का आधार भी इनका पिंगल-सूत्र ही है। परवर्ती सभी छन्दःशास्त्रकार पिंगल के ऋणी हैं।

पुराणों में छन्दो का विवेचन—

नारदपुराण तथा अग्निपुराण भी छन्दो के विवेचन करने वाले ग्रथ हैं। अग्निपुराण को भारतीय-साहित्य का विश्वकोश कहा जाता है। उसमे ३२८ से ३३५ तक ८ अध्यायो मे छदो का विवेचन किया गया है। अग्निपुराण मे छदो के विवेचन का आधार पिंगलरचित छद:सूत्र-ग्रथ ही रहा है—

छन्दो वक्ष्ये मूलजैस्तै पिंगलोक्तं यथाक्रमम् ।[4]

इसमे वैदिक व लौकिक दोनो प्रकार के छन्दो का विवेचन है।

नारदपुराण मे पूर्व भाग के द्वितीय पाद के ५७वें अध्याय मे वेदागो का विवेचन करते हुए प्रसगवश छदो के लक्षण भी बताये गये हैं। वहाँ एकाक्षर-पाद छदो से लेकर दण्डक-छदो तक का वर्णन मिलता है। प्रस्तार-प्रक्रिया से छदो के विविध भेदो की ओर भी सकेत किया गया है।

परवर्ती छन्द-सम्बन्धी ग्रन्थ तथा ग्रन्थकार—

परवर्ती छद शास्त्र-प्रवक्ताओ मे कतिपय आचार्य ऐसे है जिनका नामोल्लेख-मात्र प्राप्त है और जिनके ग्रन्थो के नाम और ग्रन्थ अद्यावधि अनुपलब्ध है। यथा —

१-संस्कृत साहित्य का इतिहास —कीथ (हिन्दी) पृ० ४६३
२- „ „ --गैरोला, पृ० १६१-६२ तथा सस्कृत-व्याकरणशास्त्र का इतिहास पृ० १३२
३- „ „ —गैरोला, पृ० १६२
४-अग्निपुराण, ३२८।१

नाम	काल	नाम	काल
१ पूज्यपाद[1] (देवनन्दी)	४७०-५१२ वि.	२. भामह[2]	६ शती
३ दण्डी[3]	७०० वि.	४ पाल्यकीर्त्ति[4]	८७१-९२४ वि
५. दमसागर मुनि[5]	१०५० वि.	६. वृद्धकवि[6]	
७. सालाहण[7]		८. हाल[8]	
९ मनोरथ[9]		१०. अर्जुन[10]	
११ गोसल[11]		१२ गोविन्द[12]	
१३. चतुर्मुख[13]			

छद.शास्त्र के परवर्ती ग्रथो मे से प्रसिद्ध कतिपय ग्रन्थ निम्नलिखित है :—

१. **बृहत्सहिता** :—यह वराहमिहिर की ज्योतिष विषयक रचना हैं। प्रसग-वश इसके चौदहवे अध्याय मे ग्रह-नक्षत्रो की गति-विधि के साथ छदो का विवेचन भी मिलता है। कीथ के अनुसार वराहमिहिर का स्वतन्त्र छंद:शास्त्र का ग्रथ भी होना चाहिए किन्तु ऐसा कोई ग्रथ अभी तक देखने मे नही आया।

२ **जानाश्रयी-छन्दोविचिति** :—जनाश्रय (?) नामक कवि ने इसकी रचना विष्णुकुण्डीन (कृष्णा और गोदावरी का जिला) के अधिपति माधववर्मन् प्रथम के राज्य मे—जिसका समय ६ शताब्दी A D पूर्व माना जाता है—की है। यह ग्रथ ६ अध्यायो मे विभक्त है। इसका प्राकृत-छन्दो का अन्तिम अध्याय महत्वपूर्ण है। गणशैली स्वतन्त्र है। युधिष्ठिर मीमासकजी[14] ने गणस्वामी को ही इसका कर्त्ता माना है।

३ **जयदेवच्छन्दस्**—जयदेव की रचना होने से यह 'जयदेवच्छन्दस्' के नाम से

१—जयकीर्त्ति-छदोनुशासन, ८,१९

२—कीथ : ए हिस्ट्री आव सस्कृत लिटरेचर

३,४,५—वैदिक-छदोमीमासा, पृ० ६०-६१

६—विरहाक -वृत्तजातिसमुच्चय २।८-९ तथा ३।१२

७— ,, ,, २।८-९

८— ,, ,, ३।१२

९—कविदर्पण—राजस्थान प्राच्य विद्या, प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

१०-११—रत्नशेखर : छन्द.कोश (कविदर्पण गत) ,, ,, ,,

१२-१३—स्वयम्भूछन्द— ,, ,, ,,

१४—वैदिक-छदोमीमासा पृ० ६१

प्रसिद्ध है। प्रो० एच० डी० वेल्हणकर[1] ने इनका समय ६००-९०० वि० स० का मध्य माना है। जयदेव जैन कवि थे। इन्होने अपना यह ग्रंथ पिंगल के अनुकरण पर लिखा है। लौकिक-छदो की निरूपण शैली पिंगल से भिन्न है। छन्दो का विवेचन सस्कृत-परम्परा के अनुकूल और अत्यन्त व्यवस्थित है।

इसमे आठ अध्याय है। द्वितीय और तृतीय अध्याय मे वैदिक-छन्दो का निरूपण है। सभवत. जैन लेखक होने के कारण ही इस ग्रन्थ का विशेष प्रसार न हो सका।

४ **गाथालक्षण**—जैन कवि नन्दिताढ्य की यह रचना हैं। श्री वेल्हणकर[2] के मतानुसार इनका समय ईसा की आरम्भिक शताब्दियो मे माना जा सकता है। प्राकृत-अपभ्र श परम्परा के छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थो मे यह प्राचीनतम ग्रथ है। नन्दिताढ्य द्वारा इस ग्रथ मे जिन छदो का चयन किया गया है वे केवल जैनागमो मे ही उपलब्ध हैं। ग्रथकार ने गाथावर्ग के विविध छन्दो का विस्तार से वर्णन किया है। लेखक के दृष्टिकोण से अपभ्र श-भाषा हेय है।[3] ग्रथ की भाषा प्राकृत है।

५. **वृत्तजातिसमुच्चय**—विरहांक की यह रचना है। डॉ० वेल्हणकर[4] के के मतानुसार इनका समय ९वी, १०वी शताब्दी या इससे भी पूर्व माना जा सकता है। पिंगल के पश्चात् मात्रिक-छदो का सर्वाधिक विवेचन इसी ग्रथ मे प्राप्त है। इसमे ६ परिच्छेद हैं। भाषा प्राकृत है किन्तु पाचवे परिच्छेद मे वणिकवृत्तो के लक्षण सस्कृत मे हैं। ग्रथ मे यति का उल्लेख नही है अतः सम्भव है ये यति-विरोधी सम्प्रदाय के हो। इस ग्रथ मे मगणादि गणो के स्थान पर पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग है जो कि पूर्ववर्त्ती ग्रथो मे प्राप्त नही है।

६ **छन्दोनुशासन**—इसके प्रणेता कवि जयदेव कन्नड प्रान्तीय दिगम्बर जैन थे। डॉ० वेल्हणकर[5] ने इनका समय १००० ई० के लगभग माना है। पिंगल एव जयदेव की परम्परा के अनुसार यह ग्रथ भी आठ अध्यायो मे विभक्त है। इसमे अपभ्र श के मात्रिक-छन्दो का विवेचन भी प्राप्त है। छदो के लक्षण कारिका-शैली मे हैं, उदाहरण स्वतन्त्ररूप से प्राप्त नही है।

१–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला, बम्बई
२–देखें, कविदर्पण —गाथालक्षण की भूमिका–रा प्रा वि प्र जोधपुर, सन् १९६२
३–गाथालक्षण पद्य ३१
४–देखें, वृत्तजातिसमुच्चय की भूमिका–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२
५–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला, बम्बई

७. **स्वयम्भूछन्द**—इसके प्रणेता कविराज स्वयम्भू जैन है। कर्त्ता के संबध मे विद्वानो के अनेक मत[1] है किन्तु डॉ० वेल्हणकर[2] ने इनका समय १०वी शती का उतरार्द्ध माना है। स्वयभू अपभ्रश-भाषा के श्रेष्ठ कवि हैं। अपभ्रश छन्द-परम्परा की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है। कवि ने मगणादि गणो का प्रयोग न करके 'छ प च त द'[3] पारिभाषिक शब्दो के आधार से छन्दो के लक्षण कहे है। इस ग्रथ मे छदो के उदाहरण-रूप मे विभिन्न प्राकृत-कवियो के २०६ पद्य उद्धृत हैं। लेखक ने कवियो के नाम भी दिये हैं।

८ **रत्नमञ्जूषा**—अज्ञातकर्त्तृक जैन-कृति है। वेल्हणकर[4] ने इसका समय हेमचन्द्र से पूर्व स्वीकार किया है, अतः ११-१२वी शती माना जा सकता है। इसमे आठ अध्याय है लेखक ने वर्णिकवृत्तो का समान प्रमान और वितान शीर्षक से विभाजन किया है। मगणादि-गणो की परिभाषा भी लेखक की स्वतन्त्र है। यह पारिभाषिक शब्दावली सम्भवत पूर्ववर्त्ती एव परवर्त्ती कवियो ने स्वीकार नही की है।

९ **वृत्तरत्नाकर**—इसके प्रणेता कश्यपवशीय पव्वेकभट्ट के पुत्र केदार-भट्ट है। कीथ[5] ने इनका समय १५वी शती माना है किन्तु ११९२ की हस्त-लिखित प्रति प्राप्त होने से एव ११वी शती की इसी ग्रथ की त्रिविक्रम की प्राचीन टीका प्राप्त होने से वेल्हणकर[6] ने इनका सत्ताकाल ११वी शताब्दी ही स्वीकार किया है। पिंगल के अनुकरण पर इसकी रचना हुई है। जयदेवच्छन्दस् की तरह इसमे भी छन्दो के लक्षण लक्ष्य-छदो मे ही देकर लक्षण और उदाहरण का एकीकरण किया गया है। इस ग्रथ का प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१०. **सुवृत्ततिलक**—इसके प्रणेता क्षेमेन्द्र का समय कीथ[7] ने हेमचन्द्र के पूर्व अथवा ११वी शती माना है। मेकडानल[8] के अनुसार क्षेमेन्द्र की बृहत्कथामंजरी

१–डॉ० भोलाशकर व्यास प्राकृतपैंगलम् भा० २, पृ० ३६५; डॉ० शिवनन्दनप्रसाद. मात्रिक छन्दो का विकास पृ० ४५-४६

२–देखें, स्वयम्भूछन्द की भूमिका–राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

३–तुलना के लिये देखें, इसी ग्रथ का प्रथम परिशिष्ट

४–देखें, रत्नमञ्जूषा की भूमिका–भारतीय ज्ञानपीठ काशी, १९४९ ई०

५–कीथ : ए हिस्ट्री आव् सस्कृत लिटरेचर पृ० ४१७

६–देखें, जयदामन् की भूमिका–हरितोषमाला वम्बई

७–कीथ : ए हिस्ट्री आव् संस्कृत लिटरेचर, पृ० १३५

८–आर्थर ए मेकडॉनल : हिस्ट्री आव् सस्कृत लिटरेचर, पृ० ३७६

की रचना १०३४ ई० में हुई थी। अतः क्षेमेन्द्र का समय ११वी शती निश्चित है। क्षेमेन्द्र ने इस ग्रथ मे पहले छन्द का लक्षण दिया है और तदुपरात अपने ग्रथो से उदाहरण दिये है। छदो के नाम दो बार आये हैं, एक वार लक्षण मे और दूसरी बार उदाहरण मे। यह ग्रन्थ तीन विन्यासो मे विभक्त है। क्षेमेन्द्र के विचार मे विशेष रसो या प्रसगो के लिए विशेष छद ही उपयुक्त और पर्याप्त प्रभावशाली होते है। ग्रथकार के अनुसार उपजाति पाणिनि का, मन्दाक्राता कालिदास का, वशस्थ भारवि का और शिखरिणी भवभूति का प्रिय छद रहा है।

११. **श्रुतबोध**—इसके लेखक कालिदास कहे जाते है। कीथ ने इस बात का कोई आधार नही माना। कुछ लोग वररुचि को भी इसका लेखक मानते है[1]। कृष्णमाचारी[2] नौ कालिदासो मे से तीसरा कालिदास मानते है। गैरोला के अनुसार ये ७ या ८वी शताब्दी के कोई अन्य कालिदास होगे। युधिष्ठिर मीमासक[3] के अनुसार इस कालिदास का समय १२वी शती था। सभव है यह मान्यता उचित हो और यह कालिदास राजा भोज के सखा के रूप में लोक-कथाओ मे ख्याति प्राप्त कालिदास हो। लक्षण मे ही उदाहरण का गतार्थ हो जाना इस ग्रथ की सब से बडी विशेषता है। इसका भी प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१२. **छन्दोऽनुशासन**—इसके प्रणेता कलिकाल-सर्वज्ञ हेमचन्द्र पूर्णतलगच्छीय श्रीदेवचद्रसूरि के शिष्य हैं। अणहिलपुर पत्तन के नृपति सिद्धराज जयसिंह की सभा के ये प्रमुखतम विद्वान् थे और महाराजा कुमारपाल के ये धर्मगुरु थे। इनका समय वि० स० ११४५-१२२९ माना जाता है। ये बहुमुखी प्रतिभा वाले लेखक और वैज्ञानिक-दृष्टि-सम्पन्न आचार्य एव शास्त्र-प्रणेता थे। हेमचन्द्र ने अपने इस ग्रथ को पिंगल, जयदेव और जयकीर्त्ति के अनुकरण पर ही आठ अध्यायो मे ग्रथित किया है। वैतालीय और मात्रासमक के कुछ नये भेद जिनका उल्लेख पिंगल, जयदेव, विरहाक, जयकीर्त्ति आदि पूर्ववर्ती आचार्यों ने नही किया, हेमचन्द्र ने प्रस्तुत किये है। इसमे लगभग सातसौ आठसौ छदो का निरूपण प्राप्त है। नवीन मात्रिक-छदो की दृष्टि से इस ग्रथ का सर्वाधिक महत्त्व है।

हेमचन्द्र ने इस ग्रथ पर स्वोपज्ञ टीका[4] भी बनाई है। इस टीका मे हेमचन्द्र ने

१–कीथ ए हिस्ट्री आव् सस्कृत लिटरेचर, पृ० ४१६
२–एम० कृष्णमाचारी . ए हिस्ट्री आव् क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर, पृ० ९०८
३–देखें, वैदिक-छन्दोमीमासा पृ० ६२
४–डॉ० एच० डी० वेलहणकर-सम्पादित टीकासहित यह ग्रथ सिंघी जैनग्रथमाला मे प्रकाशित है।

छदो के नामान्तर देते हुये 'इति भरत' कह कर जो नामभेद दिये हैं उनमें से निम्नलिखित छद वर्तमान मे प्राप्त भरत के नाट्यशास्त्र मे उपलब्ध नही हैं, और यति-विरोधी आचार्यो मे गणना होने से सभव है कि नाट्यशास्त्र मे निरूपित छदो के अतिरिक्त भरत ने छद शास्त्र पर कोई स्वतन्त्र ग्रथ भी लिखा हो। भरत के नाम से उल्लिखित अनुपलब्ध छदो की तालिका निम्न है :—

३ अक्षर	धू	६ अक्षर	गिरा
,, ,,	तडित्	७ ,,	शिखा
४ ,,	ललिता	,, ,,	भोगवती
,, ,,	जया	,, ,,	द्रुतगति
५ ,,	भ्रमरी	१० ,,	पुष्पसमृद्धि:
,, ,,	वागुरा	,, ,,	रुचिरा
,, ,,	कुन्तलतन्वी	११ ,,	अपरवक्त्रम्
,, ,,	शिखा	,, ,,	द्रुतपदगति
,, ,,	कमलमुखी	,, ,,	रुचिरमुखी
६ ,,	नलिनी	१३ ,,	मनोवती
,, ,,	वीथी		

१३. **कविदर्पण**—यह अज्ञात जैन-कर्तृक कृति है। छदो के उदाहरणो मे जिनसिंहसूरि-रचित चूडाल-दोहक[1] का उदाहरण है। जिनसिंहसूरि खरतर-गच्छीय द्वितीय जिनेश्वरसूरि के शिष्य हैं, इनका शासनकाल १३००-१३४१ तक का है। कविदर्पण का सर्वप्रथम उल्लेख स० १३६५ मे रचित अजितशाति-स्तव की टीका मे जिनप्रभसूरि ने किया है जो कि जिनसिंहसूरि के शिष्य हैं। अत यह अनुमान किया जा सकता है कि इसके प्रणेता जिनसिंहसूरि के शिष्य और जिनप्रभसूरि के गुरुभ्राता ही होगे।

यह ग्रथ प्राकृतभाषा मे ६ उद्देश्यो मे विभक्त है। छन्दो के वर्गीकरण तथा लक्षण निर्देश से इसकी मौलिकता प्रकट होती है। प्राकृत-अपभ्र श की परम्परा मे इसका यथेष्ट महत्त्व है।

१४. **छन्द.कोष**—इसके प्रणेता रत्नशेखरसूरि हेमतिलकसूरि के शिष्य हैं। इनका समय १५वी शती है। यह ग्रथ प्राकृतभाषा मे है। इसमे कुल ७४ पद्य हैं। इस ग्रथ के छदो का विवेचन छदो व्यवहार के अधिक निकट है और तद्युगीन छदो के स्वरूप-विकास के अध्ययन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है।

१—कविदर्पण, पृ० २४

१५ प्राकृत-पिंगल—इसके प्रणेता के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतभेद है किन्तु डॉ० भोलाशकर व्यास[1] के अनुसार हरिब्रह्म या हरिहर इसका कर्त्ता माना जा सकता है और प्राकृतपिंगल का सकलन-काल १४वी शती का प्रथम चरण मान सकते हैं। इसमे मात्रिक और वर्णिकवृत्त नाम से दो परिच्छेद हैं। लक्षणो मे ग्रन्थकार ने टादिगण, प्रस्तारभेद, नाम, पर्याय एव मगणादिगणो की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया है।

अपभ्र श और हिन्दी मे प्रयुक्त मात्रिक-छदो के अध्ययन के लिए यह ग्रथ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है । वर्णिकवृत्तो के लिए सस्कृत-साहित्य मे जो स्थान पिंगलकृत छद सूत्र का है, मात्रिक-छदो के लिए वही स्थान प्राकृतपिंगल का है।

१६ वाणीभूषण—इसके प्रणेता दामोदर मिश्र दीर्घघोषकुलोत्पन्न मैथिली ब्राह्मण है। डॉ० भोलाशकर व्यास[2] ने प्राकृतपिंगल के सग्राहक हरिहर को पितामह और रविकर को दामोदर का पिता या पितृव्य स्वीकार किया है। विद्वानो के मतानुसार दामोदर मिथिलापति कीर्त्तिसिंह के दरबार मे थे। अतः दामोदर मिश्र और कविवर विद्यापति सम-सामयिक होने चाहिये। दामोदर मिश्र का समय १४३१ से १४६६ तक माना जाता है।

यह ग्रथ सस्कृत-भाषा मे है। इसमे दो परिच्छेद है। लक्षणो का गठन पारिभाषिक शब्दावली मे है और उदाहरण स्वरचित हैं। वस्तुतः यह ग्रथ प्राकृत-पिंगल का सस्कृत मे रूपान्तर मात्र है।

१७ छन्दोमञ्जरी—गैरोला[3] ने लेखक का नाम दुर्गादास माना है किन्तु यह भ्रामक है। ग्रन्थ के प्रथम पद्य मे ही लेखक ने स्वय का नाम गगादास और पिता का नाम गोपालदास वैद्य एव माता का नाम सतोषदेवी लिखा है।[4] इनका समय १५वी या १६वी शताब्दी है। ग्रथकार ने स्वरचित 'अच्युतचरित महाकाव्य' और 'कसारिशतक' एव 'दिनेशशतक' का भी उल्लेख किया है।[5] छदो-

१–देखे, प्राकृतपैंगलम् भा० २, पृ० ६-२६

२– ,, ,, ,, ,, १६-१८

३–गैरोला . सस्कृत-साहित्य का इतिहास पृ० १६३

४–देव प्रणम्य गोपाल वैद्यगोपालदासज ।
सन्तोपातनयश्छन्दो गङ्गादासस्तनोत्यद ॥१॥

५–सर्ग. षोडशभि समुज्ज्वलपदैर्नव्यार्थभव्याशयं—
यॆनाकारि तदच्युतस्य चरित काव्य कविप्रीतिदम् ।
कसारे शतक दिनेशशतकद्वन्द्व च तस्यास्त्वसौ,
गगादासकवे श्रुतौ कुतुकिना सच्छन्दसा मञ्जरी ॥६।६।

मञ्जरी की शैली वृत्त रत्नाकर से मिलती-जुलती है। इसमे ६ स्तबक हैं। छठे स्तबक मे गद्य-काव्य और उनके भेदो पर विचार है जो कि इसकी विशेषता है।

१८. **वृत्तमुक्तावली**[1]—इसके प्रणेता तैलगवशीय कवि-कलानिधि देवर्षि कृष्णभट्ट हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल १७८८ से १७९९ के मध्य का है। इसमे तीन गुम्फ है:—१ वैदिक छन्द, २ मात्रिक छद, और ३ वर्णिक वृत्त। पिंगल और जयदेव के पश्चात् प्राप्त एव प्रसिद्ध ग्रन्थो मे वैदिक-छंदो का निरूपण न होने से इस ग्रथ का महत्त्व बढ जाता है। मात्रिक-गुम्फ प्राकृतपिंगल और वाणीभूषण से अनुप्राणित है। इसमे ४२ दण्डक-छदो के लक्षण एव उदाहरण प्राप्त हैं।

१९. **वाग्वल्लभ**—इसके प्रणेता कवि दु:खभजन शर्मा हैं जो कि काशी-निवासी कान्यकुब्जवशीय प्रताप शर्मा के पौत्र और चूडामणि शर्मा के पुत्र हैं। इसकी 'वरवर्णिनी' नामक टीका की रचना दुःखभजन कवि के ही पुत्र महोपाध्याय देवीप्रसाद शर्मा ने वि० स० १९८५ मे की है, अत: इसका रचना समय १९५० से १९७० वि० सं० का मध्य माना जा सकता है। गैरोला ने इनका समय १६वी शती माना है जो कि भ्रामक है।[2] कवि दु:खभजन ज्योतिर्विद् तो थे ही; इसीलिए जहाँ आज तक के प्राप्त छद शास्त्रो मे प्रयुक्त छद प्रायशः ग्रहण किये हैं तो वहाँ प्रस्तार का आधार लेकर सैकडो नवीन छद भी निर्मित किये हैं। इस ग्रथ मे कुल १५३९ छन्दो का निरूपण है। शैली वृत्त-रत्नाकर की है। प्रत्येक वर्णिकवृत्त प्रस्तार-सख्या के क्रम से दिया है।

इनके अतिरिक्त छद शास्त्र के सैकडो ग्रथ और उनकी टीकाये प्राप्त होती हैं जिनकी सूची मैंने इसी ग्रथ के ८वें परिशिष्ट मे दी है।

वृत्तमौक्तिक भी छदःशास्त्र का बडा ही प्रौढ और महत्त्वपूर्ण ग्रथ है। चन्द्रशेखर भट्ट ने अपने इस ग्रथ मे जिस पाडित्य का परिचय दिया है, वह केवल उन ही तक सीमित नही था। उनकी वश-परम्परा मे जैसा कि हम देखेंगे बडे बड़े माने हुए प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् हुए, और इसमे सदेह नही कि ऐसी ज्ञान-समृद्ध परम्परा मे जिसका व्यक्तित्व विकसित हुआ हो वह अपने कृतित्व और व्यक्तित्व के लिये उन पूर्वजो का सब से अधिक ऋणी होगा। इसीलिये कवि के परिचय से पूर्व ग्रन्थ के माहात्म्य की पृष्ठभूमि को समझने के लिए सर्वप्रथम कवि के पूर्वजो का परिचय प्राप्त कर लेना भी वाछनीय है।

१—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित

२—गैरोला : सस्कृत साहित्य का इतिहास पृ. १९३

कवि-वंश-परिचय

चन्द्रशेखर भट्ट वासिष्ठ-वंशीय[1] लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं। ग्रंथकार ने अपने पूर्वजों में वृद्धप्रपितामह रामचन्द्र भट्ट[2], पितामह रायभट्ट[3] और पितृचरण लक्ष्मीनाथ भट्ट का उल्लेख किया है।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने प्राकृतपिंगलसूत्र की टीका 'पिंगलप्रदीप' में अपना वंश-परिचय इस प्रकार दिया है —

> भट्ट श्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेहः श्रुतो यः
> श्रीमान्नारायणाख्यः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट।
> तत्पुत्रो रायभट्ट[4] सकलकविकुलख्यातकीर्तिस्तदीयो
> लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिरं पिंगलार्थप्रदीपम्॥

[मंगलाचरण पद्य ५]

इस आधार से ग्रंथकार का वंशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—

रामचन्द्र भट्ट
|
नारायण भट्ट
|
राय भट्ट
|
लक्ष्मीनाथ भट्ट
|
चन्द्रशेखर भट्ट

१–लक्ष्मीनाथ सुभट्टवर्य्य इति यो वासिष्ठवंशोद्भव—
स्तत्सूनुः कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्त्तिर्भुवि।

[वृत्तमौक्तिक प्रशस्ति ५]

२–अस्मद्वृद्धप्रपितामहमहाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते ।

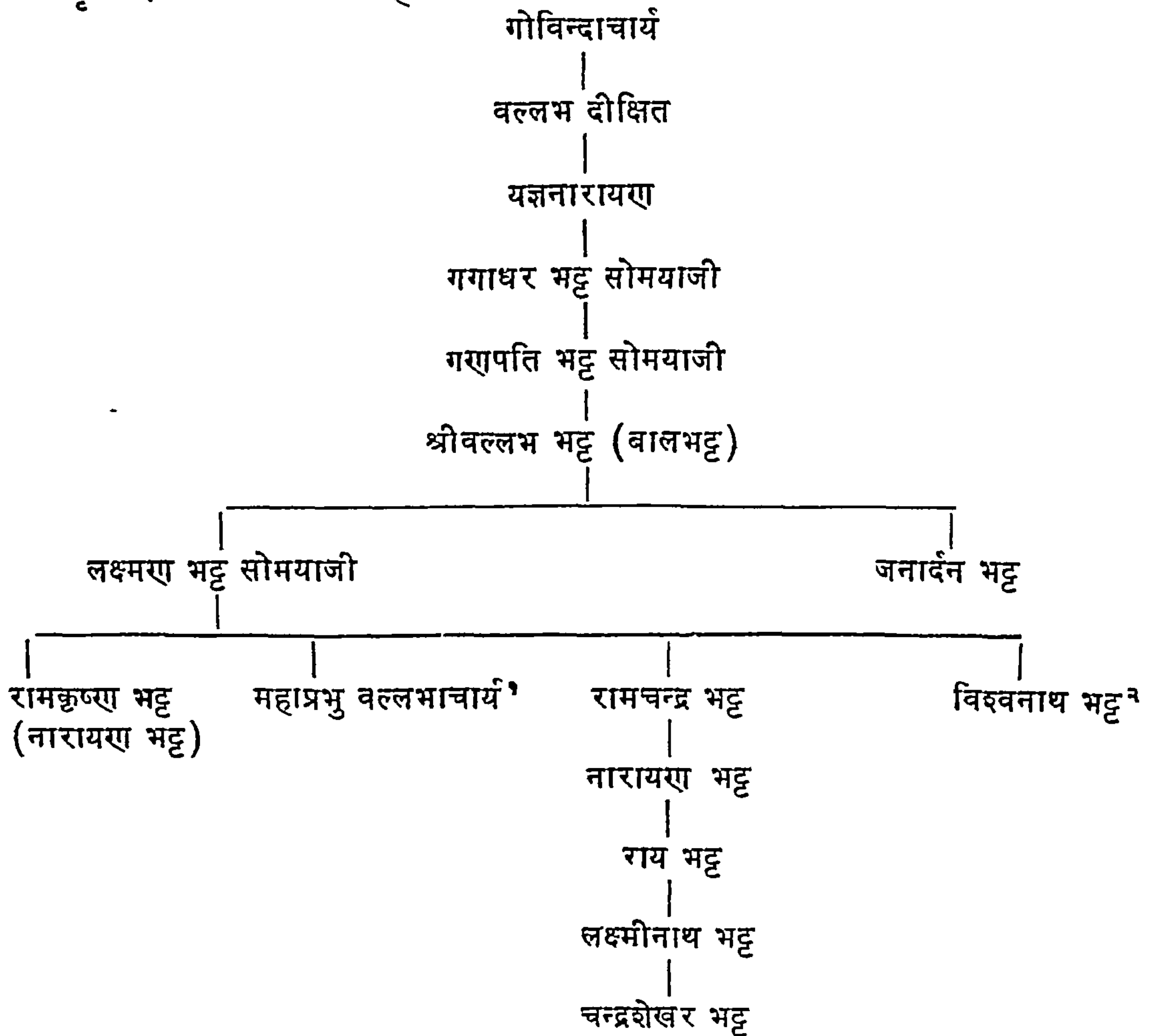
[वृत्तमौक्तिक पृ० १०७]

३–अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते ··· ।

[वृत्तमौक्तिक पृ० १२१]

४–निर्णयसागर संस्करण और प्राकृतपैङ्गलम् भा० १ में 'रामभट्ट' मुद्रित है, जो कि अशुद्ध है।

ग्रथकार के वृद्धप्रपितामह श्रीरामचन्द्र भट्ट वस्तुत. तैलगदेशीय वेलनाट यजुर्वेदान्तर्गत तैत्तिरीयशाखाध्यायी आपस्तम्ब त्रिप्रवरान्वित आगिरस बार्हस्पत्य भारद्वाजगोत्रीय श्री लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी के पुत्र हैं, जोकि वसिष्ठवशीय ननिहाल मे मातुल के यहाँ दत्तकरूप मे चले गये थे। अत. भारद्वाजीय गोत्रापेक्षया वशवृक्ष इस प्रकार बनता है .—



वासिष्ठ एव भारद्वाज दोनो गोत्रो का उल्लेख होने से यहाँ यह विचारणीय है कि रामचन्द्र भट्ट भारद्वाज-गोत्रीय थे या वसिष्ठ-गोत्रीय ? या नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट एक ही व्यक्ति हैं अथवा भिन्न-भिन्न ? और, यदि एक ही व्यक्ति है तो गोत्रभेद का क्या कारण है ? तथा रामचन्द्र भट्ट यदि वल्लभाचार्य के अनुज है तो वल्लभ-साहित्य एव परम्परा मे रामचन्द्र एव इनकी परम्परा का उल्लेख क्यो नही है ? आदि प्रश्न उपस्थित होते है। अत इन पर यहाँ विचार करना असंगत न होगा।

१–देखें, काकरोली का इतिहास, द्वितीय भाग, एव वल्लभवशवृक्ष ।
२–देखें, वल्लभवशवृक्ष ।

रामचन्द्र भट्ट ने स्वप्रणीत 'गोपाललीला-महाकाव्य', 'रोमावलीशतक' एव 'रसिकरञ्जन' की पुष्पिकाओ मे स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र स्वीकार किया है :—

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कस-वधो नाम एकोनविश सर्ग ।'

[गोपाललीला महाकाव्य की पुष्पिका][1]

'इतिश्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृत रोमावलीश्रृङ्गारशतक सम्पूर्णम् ।'

[रोमावलीशतक की पुष्पिका][2]

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनुश्रीरामचन्द्रकविकृत सटीकं रसिकरञ्जन नाम श्रृङ्गारवैराग्यार्थसमान काव्य सम्पूर्णम् ।'

[रसिकरञ्जन की पुष्पिका][3]

कवि ने 'कृष्णकुतूहल' महाकाव्य मे स्वय को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र और वल्लभाचार्य का अनुज स्वीकार किया है .—

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवशतिलक' श्रीवल्लभेन्द्रानुज. ।'

[कृष्णकुतूहलमहाकाव्य-प्रशस्तिपद्य][4]

रोमावलीशतक मे कवि ने स्वय को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र, वल्लभ का अनुज और विश्वनाथ का ज्येष्ठभ्राता लिखा है .—

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुज श्रीवल्लभ. श्रीगुरो:,
अध्येतु' सममग्रजो गुणिमणे: श्रीविश्वनाथस्य च ।'

[रोमावलीशतक-पद्य १२५]

इन उल्लेखो मे भारद्वाजगोत्र का कही भी उल्लेख न होने पर भी लक्ष्मण-भट्ट एव वल्लभाचार्य का उल्लेख होने से यह स्पष्ट है कि ये भारद्वाज-गोत्रीय थे ।

रामचन्द्र भट्ट ने 'कृष्णकुतूहल-महाकाव्य' के अष्टम सर्ग के प्रात मे स्वय का वसिष्ठगोत्र स्वीकार किया है :—

१—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सन् १९२९ मे प्रकाशित
२—राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, ग्र न० ११२३५
३—काव्यमाला चतुर्थ गुच्छक मे प्रकाशित
४—गोपाललीला-भूमिका

'विद्यानिष्ठवसिष्ठगोत्रजनुषा तेन प्रणीते महा—
काव्ये कृष्णकुतूहलेंबरहुतिः सर्गोऽजनिष्टाष्टमः ।'

अतः यह स्पष्ट है कि रामचद्र भट्ट स्वय को लक्ष्मण भट्ट का पुत्र और वल्भभ का अनुज मानते हुए भी अपना वासिष्ठ-गोत्र स्वीकार करते है।

चन्द्रशेखर भट्ट वृत्तमौक्तिक[1] में कृष्णकुतूहल-महाकाव्य के प्रणेता रामचद्र भट्ट को 'प्रवृद्धपितामह' शब्द से सम्बोधित करते है। अतः यह निर्विवाद है कि नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट पृथक्-पृथक् व्यक्ति नही है अपितु वही वल्लभानुज ही हैं। ऐसी अवस्था मे गोत्रभेद क्यो ? इस सम्वन्ध मे कोई प्राचीन प्रमाण तो उपलब्ध नही है, किन्तु गोपाललीला-महाकाव्य के सम्पादक श्री बेचनराम शर्मा सम्पादकीय-उपसहार[2] मे लिखते है :—

'इय वसिष्ठगोत्रोद्भवत्वोक्तिर्मातामहगोत्राभिप्रायेण ऊहनीया।'

इसी बात को स्पष्ट करते हुये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीय सर्वस्व'[3] में लिखते है :—

'लक्ष्मण भट्टजी के मातुल वसिष्ठ-गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इनको (रामचन्द्र को) अपने घर ले गये थे।'

इससे स्पष्ट है कि लक्ष्मण भट्ट के मामा जो अपुत्र थे, उन्होने लक्ष्मणभट्ट से अपने नाती रामचद्र को दत्तक रूप मे ले लिया। दत्तक रूप मे जाने के पश्चात् उत्तर भारत की परम्परा के अनुसार गोत्र-परिवर्तन हो ही जाता है। लक्ष्मण भट्ट के मातुल वसिष्ठगोत्रीय थे अत. रामचद्र का गोत्र भी भारद्वाज न हो कर वसिष्ठ हो गया। यही कारण है कि रामचद्र भट्ट ने स्वय का गोत्र वसिष्ठ ही स्वीकार किया है।

वसिष्ठ-गोत्र का उल्लेख करते हुए भी धर्म (दत्तक) पिता का नाम न देकर सर्वत्र लक्ष्मणभट्ट-तनुज और वल्लभानुज का उल्लेख करना अप्रासगिक सा प्रतीत होता है किन्तु तत्त्वतः विरोध न होकर विरोधाभास ही है। इसका मुख्य कारण यह है कि रामचद्र भट्ट ने पुरुषोत्तम-क्षेत्र मे वल्लभाचार्य के सहवास मे रह कर

१—देखें, पृष्ठ १०५, १०७

२—देखें, गोपाललीला पृ० २५५

३—भारतेन्दु ग्रथावली भाग ३, पृ० ५६८

सर्वशास्त्र और सर्व दर्शनो का अध्ययन आचार्यश्री से ही किया था।[1] अतः पितृ-भक्ति, भ्रातृ-प्रेम एवं भक्तिवश ही इनका सर्वत्र स्मरण किया जाना स्वाभाविक ही है।

अतएव यह तो स्पष्ट ही है कि रामचन्द्र भट्ट गोत्रापेक्षया पृथक्-पृथक् व्यक्ति न हो कर लक्ष्मण भट्ट के पुत्र एव वल्लभ के लघुभ्राता थे और दत्तकरूप मे वसिष्ठ-वंश में जाने के कारण भारद्वाजगोत्रीय न रह कर वसिष्ठगोत्रीय हो गये थे। सभव है इसी कारण से पुष्टिमार्गप्रवर्त्तक वल्लभाचार्य के जीवनवृत्त-सम्बन्धी समग्र-साहित्य मे रामचद्र भट्ट एव इनकी परम्परा का कोई उल्लेख नही हुआ हो। अस्तु।

वंश-परिचय गोविन्दाचार्य से न देकर ग्रथकार-सम्मत वसिष्ठगोत्रापेक्षया रामचन्द्र भट्ट से दिया जा रहा है।

रामचन्द्र भट्ट

इनके पिताश्री का नाम लक्ष्मण भट्ट[2] और मातुश्री का नाम इल्लम्मागारू था। इनका जन्म अनुमानतः वि० स० १५४०[3] मे काशी मे हुआ था। लक्ष्मण भट्ट का स्वर्गवास वि० स० १५४६ चैत्र कृष्णा नवमी को दक्षिण मे वेंकटेश्वर बालाजी नामक स्थान पर हुआ था। स्वर्गवास के पूर्व ही लक्ष्मण भट्ट ने अपने मातामह की सपूर्ण चल और अचल सपत्ति इनको प्रदान कर अयोध्या भेज दिया था। इस सम्बन्ध मे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र 'वल्लभीयसर्वस्व'[4] मे लिखते हैं —

'लक्ष्मण भट्टजी साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के धाम अक्षरब्रह्म शेषजी के स्वरूप हैं, इससे आपको त्रिकाल का ज्ञान है। सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब काकरवार से बडे पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बालाजी मे बुलाया और वही आपने डेरा किया। पुत्रो को अनेक शिक्षा देकर श्री रामकृष्ण भट्टजी को श्री

१—'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभस्य प्रियः,
शिष्यस्सच्चरणप्रसादशरणो यो रामचन्द्रः कविः।'

[भारतेन्दु हरिश्चन्द्रः गोपाललीला-भूमिका]

'पुरुषोत्तमक्षेत्रे समागत्य ज्येष्ठभ्रातुः श्रीवल्लभाचार्यात्.... .. ... सकाशात् सर्वाणि शास्त्राणि मतानि च समधीत्य।'

[वेचनराम शर्मा गोपाललीला-उपक्रमवर्णन]

२—लक्ष्मण भट्ट जी के परिचय के लिए देखें, काकरोली का इतिहास भाग २

३—कृष्णमाचारी हिस्टोरी ऑफ दी क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर, पृ० २९१

४—भारतेन्दु ग्रथावली भाग ३, पृ० ५७५

यज्ञनारायण के समय के श्रीरामचन्द्रजी पधराय दिए और कहा कि देश मे जा कर सब गाव और घर आदि पर अधिकार और बेल्लिनाटि तैलंग जाति की प्रथा और अपने कुल अनुसार सब धर्म पालन करो। ऐसे ही श्रीयज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्रामजो और मदनमोहनजी श्रीमहाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी मे दिग्विजय करके वैष्णवमत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचन्द्रजी को, जिनका काशी मे जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर-जगम-सपत्ति दिया।'

यहाँ लक्ष्मण भट्ट के वसिष्ठगोत्रीय मातामह और मातुल का नाम प्राप्त नही है। सम्भवत ये अयोध्या मे ही रहते हो और इनकी स्थावर एव जङ्गम सम्पत्ति भी अयोध्या मे ही हो। पो० कण्ठमणि शास्त्री[1] ने लक्ष्मण भट्ट का ननिहाल धर्मपुरनिवासी बह्वृच् मौद्गल्यगोत्रीय काशीनाथ भट्ट के यहाँ स्वीकार किया है जब कि प्रस्तुत ग्रथकार चन्द्रशेखर भट्ट एव भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[2] वसिष्ठगोत्र मे स्वीकार करते हैं। मेरे मतानुसार सभव है कि लक्ष्मण भट्ट के पिता बालभट्ट ने दो शादियाँ की हो। एक बह्वृच् मौद्गल्यगोत्रीया 'पूर्णा' के साथ और दूसरी वसिष्ठगोत्रीया के साथ। फिर भी यह प्रश्न तो रह ही जाता है कि लक्ष्मण भट्ट बह्वृच् मौद्गल्यगोत्रीया पूर्णा के पुत्र थे या वसिष्ठगोत्रीया के ? इसका समाधान तो इस वश-परम्परा के विद्वान् ही कर सकते हैं।

कवि रामचन्द्र आदि चार भाई थे। नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट और वल्लभाचार्य बड़े भाई थे और विश्वनाथ छोटे भाई थे। रामकृष्ण भट्ट काकरवाड मे ही रहते थे और पिताश्री लक्ष्मण भट्ट के स्वर्गारोहण के कुछ समय पश्चात् ही सन्यासी हो गये थे।[3] केशवपुरी के नाम से ये प्रसिद्ध थे और दक्षिण-भारत के किसी प्रसिद्ध मठ के अधिपति थे। डॉ० हरिहरनाथ टडनलिखित 'वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन'[4] के अनुसार गोविन्दरायजी (सत्ताकाल

१–काकरोली का इतिहास, भाग २, पृ० ५

२–भारतेन्दु-ग्रथावली, भाग ३, पृ० ५६८

३–'ये काकरवाड मे ही रहते थे। ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये तब केशवपुरी नाम पडा। ये ऐसे सिद्ध थे कि खडाऊ पहिने गगा पर स्थल की भांति चलते थे।'
भारतेन्दु ग्रथावली भा० ३, पृ० ५६८

४–'हरिरायजी के प्रागट्य के सम्बन्ध मे सम्प्रदाय के ग्रथो मे यह प्रसिद्ध है कि जब श्री कल्याणरायजी दस वर्ष के थे, तब एक दिन श्रीआचार्यजी के छोटे भाई केशवपुरी जो सन्यासी हो गए थे और दक्षिणभारत के किसी बडे मठ के अधिपति थे वहा आए और उन्होने श्रीगुसाईंजी से अपनी गद्दी के लिये एक बालक मागा, जिस पर आपने कहा कि जिस बालक के पास ठाकुरजी नही होगे उन्हें दे दिया जायगा। श्रीकल्याणरायजी के पास ठाकुरजी नही थे। इसलिये उन्हे देना निश्चित हुआ।'
वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० ३६७

१५६६-१६५०) के प्रथम पुत्र कल्याणरायजी (जन्म स० १६२५) दस वर्ष की अवस्था मे केशवपुरी गुसाईंजी से मिले थे। अत. 'शतायु' से अधिक ये विद्यमान रहे यह निश्चित ही है। वि० स० १५६८ मे रचित 'बद्रिकाश्रमवृत्तिपत्रक'[1] नामक एक पत्र आपका प्राप्त होता है ; जिसका आद्यन्त इस प्रकार है —

गोभिर्वृ त प्रकृतिसुन्दरमन्दहास-
भाषासमुल्लसितमञ्जुलवक्त्रबिम्बम् ।
श्रीनन्दनन्दनमखण्डितमण्डलाभं,
बालार्यमिश्रय(क)मद्य हृदि भावयामि ॥१॥

× × ×

विद्वद्भिः किल कृष्णदासकमुखै. शिष्यैरनेकैर्वृ त ,
सोऽहं श्रीबद्री(दरी)वनान्तमगम शुक्रे(ज्येष्ठ)शकाब्दे तथा ।
देवाम्भ पतिभूमिते (१४३३) सह नर नारायण वीक्षितु,
तत्र व्यासमुनीशसङ्गतिरभूदाकस्मिकी मे शुभा ॥९॥

× × ×

श्रीवल्लभाचार्यमहाप्रभूणा नियोगतो बुद्धिमता विभाव्य ।
श्रीरामकृष्णाभिधभट्ट एतल्लेख व्यतानीत् पुरतश्च तेषाम् ॥११॥

द्वितीय बृहद्भ्राता महाप्रभु वल्लभाचार्य भारत के प्रसिद्धतम आचार्यो मे से है। इनका प्रतिपादित पुष्टिमार्ग आज भी भारत के कोने-कोने मे फैला हुआ है। इनही के साहचर्य मे रह कर रामचन्द्र भट्ट ने समग्र शास्त्रो का अध्ययन किया था और वे इन्हे केवल बडा भाई ही नही अपितु अपना गुरु भी मानते थे।

रामचन्द्र भट्ट वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य-शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् थे। न केवल विद्वान् ही अपितु वादजेता भी थे। अहर्निश शास्त्रार्थ मे रत रहने के कारण कई पराजित वादी आपके विरोधी भी हो गये थे और इसी विरोध-स्वरूप आपको विष भी दे दिया गया था।[2] इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये अल्पायु में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो गए थे।

महाकवि रामचन्द्र भट्ट ने अनेक ग्रथो का निर्माण किया होगा। वर्तमान मे इनके रचित निम्नलिखित ग्रथ प्राप्त होते हैं। जिनका सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है —

१–यह पत्र वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० १४५ पर प्रकाशित है।
२–भारतेन्दु ग्रंथावली, भाग ३, पृष्ठ ५६८

१ **गोपाललीला महाकाव्य** :—कवि ने इस काव्य मे भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म से लेकर कस-वध पर्यन्त भगवल्लीला का वर्णन १९ सर्गों मे किया है। प्रत्येक सर्ग की पद्यसंख्या इस प्रकार है .—७०, ५८, ७८, ७१, ५१, ७६, ७६, ५२, ६२, ७५, ६१. ६०, ५१, ६१, ५९, ६१, ६९, ५७, ७६। इसमें रचना-सवत् का उल्लेख नही है। प्रसाद एव माधुर्यगुण युक्त रचना है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसका प्रकाशन वि० स० १९२९ मे किया है; जो अब अप्राप्त है। इस काव्य का सपादन काशिक राजकीय पाठशाला के साख्यशास्त्र के प्रधानाध्यापक प० वेचनराम शर्मा ने किया है। इस काव्य का आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— शुभममितमचिन्त्यचिद्विचित्र श्रुतिशतमूर्धनि केशपाशकल्पम्।
दिशतु किमपि धाम कामकोटि-प्रतिभटदीधिति वासुदेवसज्ञम् ॥१॥
वहति शिरसि नागसम्भव यः स्फुटमनुरागमिवात्मभक्तियुक्ते।
कटतटविगलन्मदाम्बुदम्भ-श्रितकरुणारसमाश्रये गणेशम् ॥२॥
कविजनरसनाग्रतुङ्ग रङ्ग-स्थलकृतलास्यकलाविलासकाम्या।
कृतिषु सपदि वाञ्छित यथेच्छ मयि ददती करुणा करोतु वाणी ॥३॥
इह विदधति भव्यकाव्यबन्धान् भुवि यशसे कवयस्तदाप्नुवन्ति।
इति भवति ममापि काव्यबन्धे व्रजन इवाधिगिरि स्पृहाति पङ्गो ॥४॥
मयि विदधति काव्यबन्धमन्धा स्तवमथवा पिशुना सृजन्तु निन्दाम्।
अहमिह न बिभेमि कीर्त्तनीय कथमपि कृष्णकुतूहल मया यत् ॥५॥

अन्त— विप्रैराद्योप्यजादेर्विधिवदुपनयादेत्य जन्म द्वितीय,
हृद्गायत्र्याः स्वय ता निजहृदि निदधद् ब्रह्मविच्चित्रकृत्यः।
साङ्गे वेदेऽप्यधीती सपदि किल ऋचो यस्य विश्वासरूपा-
स्तत्राभिर्व्यक्तमूर्त्तिर्विभुरपि स मम श्रीधर श्रेयसेऽस्तु ॥७६॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते **गोपाललीलाख्ये** महाकाव्ये कस-वधो नाम एकोनविंश सर्ग।

२. **कृष्णकुतूहल महाकाव्य** .—कवि ने इस काव्य की रचना वि स १५७७ मे अयोध्या मे रहते हुए की है।[1] इसका भी प्रतिपाद्य विषय श्रीकृष्णलीला का

१–अब्दे गोत्रमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७७) माघस्य पक्षे सिते-
ऽयोध्यायां निवसन् सता परगुणप्रीत्यात्मना सेवकः।
श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवंशतिलकः श्रीवल्लभेन्द्रानुजः,
काव्यं कृष्णकुतूहलाख्यमकृत श्रीरामचन्द्र कवि।
[गोपाललीला पृ० २५५]

वर्णन ही है। श्रीगोपाललीला काव्य की अपेक्षा इसकी रचना अधिक प्रौढ और प्राञ्जल है।[1] यह काव्य अद्यावधि अप्राप्त है। वेचनराम शर्मा ने गोपाललीला के सम्पादकीय उपसहार मे अवश्य उल्लेख किया है कि आरम्भ के दो पत्ररहित इसकी प्रति मुझे प्राप्त हुई है।[2] विशेष शोध करने पर सभव है इस महाकाव्य की अन्य प्रतियाँ भी प्राप्त हो जायँ।

प्रस्तुत ग्रन्थ मे चन्द्रशेखर भट्ट ने भी मत्तमयूर, प्रहर्षिणी, वसन्ततिलका, प्रहरणकलिका, मालिनी, पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के प्रत्युदाहरण कृष्णकुतूहल काव्य के दिये है। इन कतिचित् पद्यो का रसास्वादन करने से यह स्पष्ट है कि वस्तुत यह काव्य महाकाव्य की श्रेणि का ही है।

३. रोमावलीशतकम् :—१२५ पद्यो का यह खण्ड-काव्य है। वि० स० १५७४ मे इसकी रचना हुई है। यह लघुकाव्य आलकारिक-भाषा मे शृगार-रस से ओत-प्रोत है। इसमे कवि ने अनेक छन्दो का प्रयोग किया है। इसका आद्यत इस प्रकार है :—

आदि— श्रीलावण्याब्धिवेलाकलितनववयोवासशालाविशाला,
लीला नानाकलाना त्वरितमपसरद्वाल्यचेलाञ्चलश्रीः।
ह्लीलाभस्याग्रदूतीविहितपतिवशीभावशीलादिशिक्षा—
भीलास्य रोमराजी हरतु हरिरुचिर्वाच्यवाचा श्रिया न ॥१॥

व्यासस्यादिकवे सुबन्धुविदुषो बाणस्य चान्यस्य वा,
वाचामाश्रितपूर्वपूर्ववचसामासाद्य काव्यक्रमम्।
अर्वाञ्चो **भवभूति-भारविमुखा** श्रीकालिदासादय,
सञ्जाताः कवयो वय तु कविता के नाम कुर्वीमहि ॥२॥

इत्थ जातविकत्थनेऽपि कवितामार्गे कथ सञ्चर—
न्नञ्चेय कविकीर्त्तिमित्यतितरा जागर्त्ति चिन्ता चिरात्।
तत्कि काव्यमुपक्रमेयकविभि प्राङ्मर्द्दिते वाङ्मये,
भारत्या विभवेऽथवाऽतिसुलभ किं कस्य नाभ्यस्यत ॥३॥

---

[1]—'गोपाललीला की अपेक्षा कृष्णकुतूहल विशेष चमत्कृति वना है।'
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र. गोपाललीला भूमिका।

[2]—'इद च कृष्णकुतूहलाख्य काव्यमारम्भे द्वितीयपत्ररहित मयासादि।' पृ० २५५

अतिशस्तवस्तुवृत्तिर्बहुशस्तन्यस्तनवरसोपाधिः ।
अर्वाचीनकवीनामुपमाता **कालिदासो**ऽभूत् ॥४॥

प्रभवति परनेकः पञ्चषाणा समाजे,
निजमतगुणजातिर्दुर्ज्जनस्त्याज्यमूर्तिः ।
श्रवणरसनचक्षुर्घ्राणिहृत्त्वक्कदम्बे,
प्रथममिह मनीषी वेत्तु दृष्टान्तमन्तः ॥५॥

श्रितभूपचेतसि सतां जातु न वक्रादिभावविदम् ।
भुवि कविभिरसुलभादो विदित. सदृश. सतां सदालोड्यः ॥६॥

कृतेराद्यश्लोके मतिमुपयता कर्त्तुमधुना,
न शक्यं केनापि क्वचन शतशो वर्णनमिति ।
मुहुः श्रुत्वा लोकाञ्जनितकृतिकौतूहलहृदा,
मयोपक्रम्यान्यस्सपदि विहितं साहसमिदम् ॥७॥

अस्पृष्टपूर्वकविताच्छविता दधान,
उर्वीधरेश्वरमनोतिविनोदनाय ।
श्लोकैः शतेन कुतुकात् **कविरामचन्द्रो,**
रोमावलेः किमपि वर्णनमातनोति ॥८॥

× × ×

अन्त— **श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुजः श्रीवल्लभश्रीगुरो-**
रध्येतुः सममग्रजो गुणिमणेः **श्रीविश्वनाथस्य** च ।
अब्दे वेदमुनीषुचन्द्रगणिते (१५७४) **श्रीरामचन्द्रः** कृती,
रोमालीशतक व्यधात् सकुतुकादुर्वीधरप्रीतये ॥१२५॥

इति **श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृत रोमावलीशृङ्गारशतकं** सम्पूर्णम् ।

× × ×

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी एक पूर्ण प्रति विद्याविभाग सरस्वती भडार, काकरोली मे है,[1] और दो अपूर्ण प्रतियें राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर[2] एव शाखा-कार्यालय जयपुर[3] मे है।

---

१ बध ६६।१२, पत्र सख्या १२, प्रथमपत्र लिखित परिचय—"पुस्तकमिद पञ्चनदि-मधुसूदनभट्टस्य। शृङ्गारशतके रामचन्द्रकविकृते।"–किनारे पर–"लक्ष्मीनाथभट्टीयम्।"

२. ग्रन्थ न० ११२३५ पत्र सख्या १७

३. विश्वनाथ शारदानन्दन संग्रह, ग्रंथांक ३३५।

४ **रसिकरञ्जन स्वोपज्ञटीका-सहित** :— इस लघुकाव्य का दूसरा नाम 'शृङ्गारवैराग्यशतम्' भी है। इस काव्य की यह विशेषता है कि प्रत्येक पद्य शृङ्गार और वैराग्य दोनो अर्थों का समानरूप से प्रतिपादन करता है अर्थात् इसे द्व्याश्रय काव्य या द्विसन्धान काव्य भी कह सकते हैं। इसमे कुल १३० पद्य हैं। टीका की रचना स्वय कवि ने वि० स० १५८०, अयोध्या मे की है। ग्रथ का आद्यत इस प्रकार है :—

आदि— शुभारम्भे दम्भे महितमतिडिम्भेङ्गितशत ,
मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम् ।
अनालम्बे लम्बे पथि पदविलम्बेऽमितसुख ,
तमालम्वे स्तम्बेरमवदनमम्बेक्षितमुखम् ॥१॥

× × ×

एकश्लोककृतौ पुर· स्फुरितया सत्तत्त्वगोष्ठ्या सम ,
साधूना सदसि स्फुटा विटकथा को वाच्यवृत्त्या नयेत् ।
इत्याकर्ण्य जनश्रुतिं वितनुते श्रीरामचन्द्र कविः ,
श्लोकाना सह पञ्चविंशतिशत शृङ्गारवैराग्ययो ॥३॥

अन्त— प्रख्यातो य. पदार्थैरमृतहरिगजश्रीसखैः श्लोकशाली ,
स्फीतातिस्फूर्तिरुद्यद्बुधमुदनुगिर क्षीरधी **रामचन्द्रः** ।
भ्रान्तोऽस्मिन् मन्दराग. फणिपतिगुणभृज्जातुमज्जेत्कथ न,
स्यादाधारोऽमुना चेदिह न विरचितः श्रीमता वाङ्मुखेन ॥१३०॥

× × ×

टीका का उपसहार—
शृङ्गारवैराग्यशत सपञ्चविंशत्य**योध्यानगरे** व्यधत्त ।
अव्दे वियद्वारणबाणचन्द्रे (१५८०), श्री**रामचन्द्रो**ऽनु च तस्य **टीकाम्** ॥

श्रीरामचन्द्रकविना काव्यमिदं व्यरचि विरतिबीजतया ।
रसिकानामपि रतये शृङ्गारार्थोऽपि सगृहीतोऽत्र ॥

पुष्पिका—इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनु-श्रीरामचन्द्रकविकृत **सटीक रसिकरञ्जन** नाम शृङ्गारवैराग्यार्थसमान काव्य सम्पूर्णम् ।

यह काव्य वि० स० १७०३ की लिखित प्रति के आधार से सपादित होकर सन् १८८७ मे काव्यमाला के चतुर्थगुच्छक मे प्रकाशित हो चुका है, जो कि अब प्राय अप्राप्य है।

५. **शृङ्गारवेदान्त**—इसका उल्लेख केवल भारतेन्दु हरिश्चन्द्र[1] ने ही किया है, अन्य किसी भी सूचीपत्र मे इसका उल्लेख नही है। अप्राप्त ग्रथ है। मेरे विचारानुसार सम्भव है रसिकरजन के अपरनाम 'शृङ्गारवैराग्यशत' को 'शृङ्गारवेदान्त' मान कर भारतेन्दुजी ने लिख दिया हो !

६. **दशावतार-स्तोत्रम्**—यह स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य वृत्तमौक्तिक[2] मे पञ्चचामर छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे उद्धृत हुआ है जो निम्नलिखित है :—

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन—
क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम रामहैहय—
क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ॥

७. **नारायणाष्टकम्**—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। मदालस छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये चन्द्रशेखरभट्ट[3] ने यह पद्य इस रूप मे दिया है—

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू—
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुबिभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत—
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृति हृदि भजे ॥

कवि की प्राप्त रचनाओ मे स. १५८० तक का उल्लेख है। अत. अनुमान किया जा सकता है कि इसके कुछ समय पश्चात् ही विषप्रयोग से कवि स्वर्ग-लोक को प्रयाण कर गया हो।

नारायण भट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पुत्र नारायण भट्ट के सम्बन्ध मे कोई विशिष्ट उल्लेख प्राप्त नही है और न इनके द्वारा रचित किसी कृति का उल्लेख ही प्राप्त होता है।

रायभट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पौत्र रायभट्ट के सम्बन्ध मे भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नही है। इनका बनाया हुआ शृङ्गारकल्लोल नामक १०४ पद्यो का खण्ड-

---

१-भारतेन्दु ग्रन्थावली, भाग ३, पृ० ५६८
२-वृत्तमौक्तिक पृष्ठ १२६
३- „ १६७

काव्य अवश्य प्राप्त होता है। इस लघुकाव्य मे पार्वती और शकर का शृङ्गार-वर्णन किया गया है। इस का उपसहार और पुष्पिका इस प्रकार है:—

उपसहार—गुम्फो वाचा मसृणमधुरो मालतीनामिव स्यात्,
अर्थो वाच्य. प्रसरणपरः सम्मितः सौरभस्य।
भावयग्यो रस इव रसस्तद्विदाह्लादहेतु.-
र्मलिवाऽसौ सुकविरचना कस्य भूषां न धत्ते ॥१०४॥

पुष्पिका—इति श्रीविद्यागरिष्ठ-वसिष्ठ-नारायणभट्टात्मजेन महाकविपण्डित-रायभट्टेन विरचित शृङ्गारकल्लोलनाम खण्डकाव्यम्।

चन्द्रशेखरभट्ट[1] ने मालिनी छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है:—
"अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीना रागिणी वारुणीय,
हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्वं हरन्ति।
भवनमिव मदीय नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा॥"

इस पद्य को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि काव्य-साहित्य पर आपका अच्छा अधिकार था और यह लघु रचना आपकी सफल रचना है। यह खण्ड-काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इनकी १६९५ की लिखित[2] एकमात्र १२ पत्रो की प्रति विद्याविभाग सरस्वती भडार काकरोली में सं. कां बध ६६।१० पर सुरक्षित है। इस प्रति का द्वितीय पत्र अप्राप्त है।

केटलॉग केटलोगरम् भा १ पृ ४७१ के अनुसार रायम्भटरचित 'यति-सस्कार-प्रयोग' नामक ग्रन्थ भी प्राप्त है। रायभट्ट यही है या अन्य कोई विद्वान्? इसका निर्णय प्रति के सम्मुख न होने से नही किया जा सकता।

लक्ष्मीनाथ भट्ट—

चन्द्रशेखर भट्ट के पिता एव कवि रामचन्द्र भट्ट के प्रपौत्र लक्ष्मीनाथ भट्ट के सम्बन्ध मे भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नही है। प्राप्त रचनाओ मे पिङ्गल-प्रदीप का रचनाकाल १६५७ है, अत' इनका आविर्भाव-काल १६२० से १६३० के मध्य का माना जा सकता है। इनकी प्राप्त रचनाओ को देखते हुए यह

१ देखें, वृत्तमौक्तिक पृ. १२६.
२. भूतांकपट्विधुमिते (१६९५) वर्षे वारे निशेशस्य।
चैत्रकृष्णप्रतिपदि लिखितं हरिशङ्करेणेदम्॥

नि.संदेह कहा जा सकता है कि इनका अलङ्कार-शास्त्र, छन्द:शास्त्र और काव्य-साहित्य पर एकाधिपत्य था। 'सकलोपनिषद्‌रहस्यार्णवकर्णधार'[1] विशेषण से संभव है कि इन्होने किसी उपनिषद् पर या उपनिषद्-साहित्य पर लेखिनी अवश्य ही चलाई हो! वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार की रचना १६८७ मे हुई है, अत: अनुमान है कि यह रचना इनकी अन्तिम रचना हो! इनके द्वारा सर्जित प्राप्त साहित्य का सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

१. **सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका**—धाराधिपति भोजनरेन्द्र-प्रणीत इस ग्रन्थ की टीका का नाम 'दुष्करचित्रप्रकाशिका' है। टीकाकार ने इसमे रचना सवत् नही दिया है। टीका के नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यह विस्तृत परिमाणवाली टीका न होकर दुर्गम स्थलो का विवेचन मात्र है। इसकी एकमात्र ४९ पत्रो की कीटभक्षित प्रति एशियाटिक सोसायटी, कलकता के संग्रह मे सुरक्षित है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— स्मार स्मारमुदारदारविरहव्याधिव्यथाव्याकुल,
राम वारिधिबन्धबन्धुरयश:सम्पृष्टदिङ्‌मण्डलम् ।
श्रीमद्‌भोजकृतप्रबन्धजलधौ सेतु: कवीना मुदो
हेतुं संरचयामि बन्धविविधव्याख्यातकौतुहलै: ॥१॥

अन्त— श्री**रायभट्ट**तनयेन नयान्वितेन,
धाराधिनाथनृपते सुमते प्रबन्धे ।
प्रोचे यदेव वचन रचन गुणानां,
वाग्देवताऽपि परितुष्यति तेन माता ॥१॥

कुर्वन्तु कवय: कण्ठे दुष्करार्थसुमालिकाम् ।
लक्ष्मीनाथेन रचितां **वाग्देवीकण्ठभूषणे** ॥२॥

पुष्पिका— इति श्रीमद्‌रायभट्टात्मज-श्री**लक्ष्मीनाथ**भट्टविरचिता **सरस्वती-कण्ठाभरणा**लङ्कारे दुष्करचित्रप्रकाशिका समाप्ता।

२ **प्राकृतपिङ्गल-टीका**—इस टीका का नाम पिङ्गलप्रदीप या छन्द.प्रदीप है। इसकी रचना सं. १६५७ मे हुई है। प्रौढ एवं प्राञ्जल भाषा मे विशद शैली मे विवेचन होने से यह टीका छन्द शास्त्रियो के लिये सचमुच प्रदीप के समान ही है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

---

१. देखें, वृत्तमौक्तिक पृ. २९१, २९४, २९६, २९९, ३०१ आदि

आदि— गोपीपीनपयोधरद्वयमिलच्चेलाञ्चलाकर्षण-
क्ष्वेलिव्यापृतचारुचञ्चलकराम्भोजं व्रजत्कानने ।
द्राक्षामञ्जुलमाधुरीपरिणमद्वाग्विभ्रम तन्मना-
गद्वैत समुपास्महे यदुकुलालम्ब विचित्र महः ॥१॥

लम्बोदरमवलम्बे स्तम्बेरमवदनमेकदन्तवरम् ।
अम्बेक्षितमुखकमल यं वेदो नापि तत्त्वतो वेद ॥२॥

गङ्गाशीतपयोभयादिव मिलद् भालाक्षिकीलादिव,
व्यालक्ष्वेलजफूत्कृतादिव सदा लक्ष्म्यापवादादिव ।
स्त्रीशापादिव कण्ठकालिमकुहूसान्निध्ययोगादिव,
श्रीकण्ठस्य कृश' करोतु कुशल शीतद्युतिः श्रीमताम् ॥३॥

विहितदया मन्देष्वपि दत्त्वानन्देन वाङ्मयं देहम् ।
शब्देऽर्थे सन्देहव्ययाय वन्दे चिर गिर देवीम् ॥४॥

भट्टश्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेह' श्रुतो य.,
श्रीमान्नारायणाख्य कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
तत्पुत्रो रायभट्ट सकलकविकुलख्यातकीर्त्तिस्तदीयो,
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिर पिङ्गलार्थप्रदीपम् ॥५॥

श्रीरायभट्टतनयो लक्ष्मीनाथ समुल्लसत्प्रतिभः ।
प्राय पिङ्गलसूत्रे तनुते भाष्य विशालमतिः ॥६॥

जलौकसां तुल्यतमै खलैः किं रम्येपि दोषग्रहणस्वभावै ।
सता परानन्दनमन्दिराणा चमत्कृतिं मत्कृतिरातनोतु ॥७॥

यन्न सूर्येण सभिन्न नापि रत्नेन भास्वता ।
तत्पिङ्गलप्रदीपेन नाश्यतामान्तर तमः ॥८॥

यद्यस्ति कौतुक वश्छन्द सन्दर्भविज्ञाने ।
सन्त पिङ्गलदीप लक्ष्मीनाथेन दीपित पठत ॥९॥

किञ्च मत्कृतिरिय चमत्कृतिं चेन्न चेतसि सता विधास्यति ।
भारती व्रजतु भारतीव्रया लज्जया परमसौ रसातलम् ॥१०॥

अन्त— इत्यादि गद्यकाव्येपु मया किञ्चित्प्रदर्शितम् ।
विशेपस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तरशङ्कया ॥१॥

मन्द कथ ज्ञास्यसि सत्पदार्थमित्याकलय्याशु मया प्रदीप्तम् ।
छन्द प्रदीप कवयो विलोक्य छन्द समस्त स्वयमेव वित्त ॥२॥

अब्दे भास्करवाजिपाण्डवरसक्ष्मा (१६५७) मण्डलोद्भासिते,
भाद्रे मासि सिते दले हरिदिने वारे तमिस्रापतेः ।
श्रीमत्पिङ्गलनागनिर्मितवरग्रन्थप्रदीपं मुदे,
लोकानां निखिलार्थसाधकमिम लक्ष्मीपतिर्निर्ममे ॥३॥
विशिष्टस्नेहभरित सत्पात्रपरिकल्पितम् ।
स्फुरद्वृत्तदशं छन्दःप्रदीप पश्यत स्फुटम् ॥४॥
छन्दःप्रदीपकः सोऽयमखिलार्थप्रकाशक ।
लक्ष्मीनाथेन रचितस्तिष्ठत्वाचन्द्रतारकम् ॥५॥

पुष्पिका—इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणिश्रीमद्रायभट्टात्मजश्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिते पिङ्गलप्रदीपे वर्णवृत्ताख्यो द्वितीय परिच्छेदः समाप्तः ।

डा भोलाशकर व्यास द्वारा सम्पादित प्राकृतपैङ्गलम्, भा १ मे यह टीका प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी वाराणसी द्वारा सन् १९५९ मे प्रकाशित हो चुकी है ।

३ **उदाहरणमञ्जरी**—यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है । लक्ष्मीनाथ भट्ट की यह स्वतन्त्र कृति प्रतीत होती है । इस ग्रन्थ मे केवल छन्दो के ही नही, अपितु विपुल सख्या मे प्राप्त छन्द-भेदो के उदाहरण भी दिये गये हैं । यही कारण है कि स्वय लक्ष्मीनाथ ने पिंगलप्रदीप[1] मे और भट्ट चन्द्रशेखर ने वृत्तमौक्तिक[2] मे गाथा, स्कन्धक, दोहा आदि छन्द-भेदो के उदाहरणो के लिये 'उदाहरणमञ्जरी' देखने का आग्रह किया है । स० १६५७ मे रचित पिंगलप्रदीप मे उल्लेख होने से यह निश्चित है कि इसकी रचना १६५७ के पूर्व ही हो चुकी थी ।

केटलॉगस् केटलॉगरम्, भाग २ पृष्ठ १३ पर इसका नाम उदाहरणचन्द्रिका दिया है, जो कि भ्रमवाचक है ।

४ **वृत्तमौक्तिक-द्वितीयखण्ड का अश**—प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम-खण्ड की रचना चन्द्रशेखर भट्ट ने १६७५ में पूर्ण की है और द्वितीय-खण्ड की समाप्ति होने के पूर्व ही चन्द्रशेखर इस लोक से प्रयाण कर गये । प्रयाण करने के पूर्व इन्होने अपनी आन्तरिक अभिलाषा अपने पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट को बतलाई कि मेरे इस ग्रथ को आप पूर्ण कर दे । सुयोग्य, प्रतिभाशाली, पाण्डवचरित आदि महाकाव्यो के प्रणेता, विनयशील पुत्र की अन्तिम अभिलाषा के अनुसार ही शोकसन्तप्त लक्ष्मीनाथ भट्ट ने अपने पुत्र की कीर्त्ति को अक्षुण्ण रखने के लिये तत्काल ही स० १६७६ कार्त्तिकी पूर्णिमा के दिन इस ग्रथ को पूर्ण कर दिया ।

१–देखें, पृष्ठ ३९२, ३९५, ३९७, ४०६, ४०९,
२–देखें, पृष्ठ १०, १३, १४, १६, १७, २१, २४,

याते दिव सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्धः ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥८॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिद लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥६॥

× × ×

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैक्रमेब्दे,
सितदलकलितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
अतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्वितेने,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिक वृत्तपूर्वम् ॥६॥

यहाँ यह विचारणीय है कि द्वितीय-खड का कितना अंश चन्द्रशेखरभट्ट ने लिखा है और कितने अश की पूर्त्ति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है ? इसका निर्णय करने के लिये वृत्तमौक्तिक का अतरग आलोडन आवश्यक है ।

ग्रथकार की शैली सूत्रकार की तरह सक्षिप्त शैली नही है, प्रत्येक छन्द का लक्षण कारिकारूप मे न देकर उसी लक्षणयुक्त पूर्ण पद्य मे दिया है जिससे छन्द का लक्षण और विराम स्पष्ट हो जाते हैं और वह लक्षण उदाहरण का भी कार्य दे सकता है। पश्चात् स्वय रचित उदाहरण और प्राचीन महाकवियों के प्रत्युदाहरण दिये हैं। और दूसरी बात, तत्समय मे या प्राचीन छन्द शास्त्रो मे प्रयोग-प्राप्त प्रत्येक छन्द का लक्षण देने का प्रयत्न किया है। इस प्रकार की शैली हमे द्वितीय-खण्ड के प्रथमवृत्तनिरूपण प्रकरण तक ही प्राप्त होती है । द्वितीय प्रकरण से छन्दो का सक्षिप्तीकरण दृष्टिगोचर होता है। कतिपय स्थलो पर छन्दो के लक्षण उदाहरण-स्वरूप न होकर कारिका-सूत्ररूप मे प्राप्त होते हैं। और, उस कारिका को स्पष्ट करने के लिये स्वोपज्ञ टीका प्राप्त होती है, जो कि प्रथम प्रकरण तक प्राप्त नही है। साथ ही, पीछे के प्रकरणो मे छन्द शास्त्रो के प्रचलित छन्दो के भी लक्षण न देकर अन्य ग्रथ देखने का सकेत किया है एवं कई उदाहरणो के लिये 'ऊह्यम्' कह कर या प्रथमचरण मात्र ही दिया है । अतः यह अनुमान कर सकते हैं कि प्रथम प्रकरण तक की रचना चद्रशेखर भट्ट की है और द्वितीय प्रकरण से १२वे प्रकरण तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की है । किन्तु, तृतीय प्रकरण मे 'प्रचितक' दण्डक का लक्षण छन्द सूत्रकार आचार्य

पिङ्गल-सम्मत दो नगण, आठ रगण[1] का प्राप्त है; जब कि लक्ष्मीनाथ भट्ट ने 'पिंगलप्रदीप'[2] मे प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। दो नगण, सात यगण के लक्षण को 'वृत्तमौक्तिक मे 'सर्वतोभद्र' दण्डक का लक्षण माना है और मतान्तर का उल्लेख करते हुए लिखा है—'एतस्यैवान्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्।'[3] अत. मेरे मतानुसार चतुर्थ अर्द्धसम-प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और पचम विषमवृत्त-प्रकरण से अन्त तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की होनी चाहिये। अस्तु

५. **वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार**—चन्द्रशेखरभट्ट रचित वृत्तमौक्तिक-प्रमथ खण्ड के प्रथम गाथा-प्रकरणस्थ पद्य ५१ से ८६ तक के ३६ पद्यो पर यह टीका है। टीकाकार ने इसे ११ विश्रामो मे विभक्त किया है। मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तस्थ लघुगुरुसख्या-ज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी नामक विश्राम हैं। छन्द.शास्त्र मे यदि कोई कठिनतम विषय है तो वह है प्रस्तार। इसी प्रस्तार-स्वरूप का टीकाकार ने बहुत ही रोचक शैली मे विशद वर्णन किया है, जिससे तज्ज्ञगण सरलता के साथ इस दुष्कर प्रस्तार का अवगाहन कर सकते है। इस टीका की रचना स० १६८७ कार्तिककृष्णा पचमी[4] को हुई है। यह टीका प्रस्तुत ग्रथ मे पृ० २९२ से ३२६ तक मे मुद्रित है।

६ **शिवस्तुति**—यह शायद भगवान् शिव का स्तोत्र है या अष्टक या कविकृत किसी ग्रथ का अश हैं निश्चयपूर्वक नही कहा जा सकता। वृत्तमौक्तिक[5] मे मदनगृह नामक मात्रिक छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है.— 'यथा वाऽस्मत्पितु शिवस्तुतौ'। अत सभवत यह स्तोत्र ही होना चाहिए। पद्य निम्नलिखित है:—

करकलितकपाल धृतनरमाल
भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुकदन।
भवभयहरण गिरिजारमण
सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम्।

१–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८४

२–'अथ प्रचितको दण्डक:—प्रचितकसमभिधो धीरधीभिः स्मृतो दण्डको न द्वयादुत्तरै.सप्तभिर्यैः। नगणद्वयादुत्तरै सप्तभिर्यगणैर्धीरधीभिः सप्तविंशतिवर्णात्मकचरण प्रचितकाख्यो दण्डक· स्मृत·।' [प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०९]

३–देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८५

४– ,, पृ० ३२६ ५– ,, पृ० ४५

कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसार
दक्षमखक्षयसक्षुब्ध रमणीलुब्ध ।
गलराजितगरल गङ्गाविमल
कैलाशाचलधामकर्म प्रणमामि हरम् ।।

यह पूर्ण स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है ।

७. **नन्दनन्दनाष्टक**—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है:—

"यथा वा, अस्मत्तातचरणाना श्रीनन्दनन्दनाष्टके—[1]

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवन्द्यपदाम्बुज,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारुलसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुंकुमपङ्करूषितवक्षस ,
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करिः ।

८. **सुन्दरीध्यानाष्टकम्**—यह अष्टकस्तोत्र भी अप्राप्त है । इसका भी केवल एक पद्य चर्चरो छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है—

"यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके[2]—

कल्पपादपनाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे ,
रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजिविराजिते ।
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां ,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ।।

९ **देवीस्तुति**—यह देवीस्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ मे 'हीर छन्द' के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है.[3]—

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भदलनपण्डिते ।
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते !
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि सकलनन्दिते !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ।

१० **खड्गवर्णन**—इसका एक पद्य स्रग्धराछन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्रस्तुत ग्रन्थ मे प्राप्त है । सभवत. कविरचित यह स्फुट पद्य हो, या हो सकता

१, २ वृत्तमौक्तिक पृ १४४ .
३ वृत्तमौक्तिक पृ ४३

है कि कोई लघुकाव्य का अंश हो ! पद्य निम्न है:—

संग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी ,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी ,
स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥[1]

चन्द्रशेखरभट्ट—

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रणेता चन्द्रशेखर भट्ट लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं। इनकी माता का नाम लोपामुद्रा[2] है। इन्होने अपनी अन्तिम रचना वृत्तमौक्तिक (स० १६७५-७६) मे स्वप्रणीत पाण्डवचरित महाकाव्य और पवनदूत खण्डकाव्य का उल्लेख किया है अतः ये दोनो रचनायें स० १६७५ के पूर्व की हैं। महाकाव्य की रचना के लिए कम से कम २५-३० की अवस्था तो अपेक्षित है ही। इस अनुमान से इनका जन्म १६४० और १६४५ के मध्य माना जा सकता है। स० १६७५ की वसन्त पंचमी और सं० १६७६ की कार्तिकी पूर्णिमा के मध्य मे इनका अल्पावस्था में ही स्वर्गवास हो गया था। अनुमान के अतिरिक्त इनके सम्बन्ध में कोई भी ज्ञातव्य वृत्त प्राप्त नही है। चन्द्रशेखर लक्ष्मीनाथ भट्ट के एकाकी पुत्र थे या इनके और भी भाई थे ? और चन्द्रशेखर के भी कोई सन्तान थी या नही ? इनकी वंश-परपरा यही लुप्त हो गई या आगे भी कुछ पीढियो तक चली ? आदि प्रश्न तिमिराछन्न ही हैं। इस सम्बन्ध मे तो एतद्देशीय भट्ट-वश के विद्वान् ही प्रकाश डाल सकते हैं ।

ग्रन्थकार द्वारा सर्जित साहित्य इस प्रकार है--

१. **पाण्डवचरित महाकव्य**—स्वय ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ मे 'द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के उदाहरण एव प्रत्युदाहरण देते हुये 'मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये, ममैव पाण्डवचरिते,' लिखा है। अत उल्लिखित पद्य यहाँ दिये जा रहे हैं—

मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे[3] —

नृषु विलक्षणमस्यपुनर्वपुस्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
सकललक्षणलक्षितमद्भुत न घटते रथकारकुलोचितम् ॥

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १६०

२ छन्द शास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापति पितरम् ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथ सकलागमपारग वन्दे ॥ पृ. २६०

३. वृत्तमौक्तिक पृ. ९२,

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

भिदुरमानसमाशुचिचक्षुष स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
सकलबालपराक्रमवर्णनैः सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ॥

× × ×

यथा वा, पाण्डचरिते[1] —

भवनमिव ततस्ते बाणजालैरकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षाः ।
विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥

× × ×

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्[2] —

ज्ञान यस्य ममात्मजादपि जनाः शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं,
पार्थः सोऽर्जुनसज्ञकोऽत्र सकलैः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ॥

× × ×

यथा, ममैव पाण्डवचरिते[3]

तुष्टेनाऽथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञ ,
कर्णोऽपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्वन्द्वयुद्धार्थमागात् ।
जम्भारातिः स्वसूनोरुपरि जलधरैस्सव्यधादातपत्र,
चण्डाशुश्चापि कर्णोपरि निजकिरणानातताना तिशीतात् ॥

इन पाचो पद्यो की रचनाशैली, शब्दयोजना, लाक्षणिकता और आलंकारिक योजना को देखते हुये नि सदेह कह सकते है कि यह काव्य गुणो से परिपूर्ण महाकाव्य ही है । लघुवयस्क की रचना होते हुये भी इसमे भावों की प्रौढता और भाषा की प्राजलता परिलक्षित होती है । खेद है कि यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है । सभव है शोधकर्ताओ को शोध करते हुये यह महाकाव्य प्राप्त हो जाय तो ग्रन्थकार के जीवन और दर्शन पर अधिक प्रकाश डाला जा सके ।

१–वृत्तमौक्तिक पृ. १२१, २–पृष्ठ १५१, ३–पृ १६०

२ पवनदूतम्—यह खण्डकाव्य है। इसको 'दूतम्' शब्द से मेघदूत या किसी दूत-काव्य की पादपूर्तिरूप तो नही समझना चाहिए किन्तु रचना इसकी मेघदूत के अनुकरण पर ही हुई है। कृष्ण के मथुरा चले जाने पर राधा पवन के द्वारा सदेश भेजती है और स्वयं की मानसिक-अवस्था का दिग्दर्शन कराती है। यह खण्डकाव्य भी अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ मे शिखरिणी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप मे प्राप्त है—

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये[1] —

> यदा कसादीना निधनविधये यादवपुरी,
> गत. श्रीगोविन्दः पितृभवनतोऽक्रूरसहित. ।
> तदा तस्योन्मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
> पपात श्रीराधा कलिततदसाधारणगतिः ॥

३. प्राकृतपिङ्गल-'उद्योत' टीका—प्राकृतपिङ्गल मे दो परिच्छेद हैं—१ मात्रावृत्त परिच्छेद और २. वर्णिकवृत्त परिच्छेद। यह उद्योत नामक टीका प्रथम परिच्छेद पर है। इसकी रचना स १६७३ मे हुई है। वैसे तो इस पर बीसो टीकाये है जिनमे रविकर, पशुपति, लक्ष्मीनाथभट्ट, वशीधर आदि की मुख्य है, किन्तु इस टीका की विशेषता यह है कि प्रस्तार और मात्रिक-छदो का विवेचन लालित्यपूर्ण भाषा मे होते हुये भी सरलीकरण को लिये हुये है। पाण्डित्य-प्रदर्शन की अपेक्षा वर्ण्यविषय का अधिक स्पष्टता के साथ प्रतिपादन किया है। इसकी १८वी शती की लिखित ४५ पत्रो की एकमात्र-प्रति अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर मे ग्रन्थ न. ५४१२ पर सुरक्षित है। यह कृति प्रकाशन-योग्य है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

आदि— अहितहृदयकील गोपनारीसुलील,
सजलजलदनील लोकसंत्राणशीलम् ।
उरसि निहितमाल भक्तवृन्दस्य पाल,
कलय दनुजकाल नन्दगोपालबालम् ॥१॥

तातसरचितपिङ्गलदीपध्वस्तचितघनमोहनसततिः (?)
अर्थभारयुतपिङ्गलभावोद्योतमाचरति चन्द्रशेखर. ॥२॥

श्रीमत्पिङ्गलनागोक्त सूत्राणा विशदार्थिका ।
शिष्यावबोधसिद्ध्यर्थं सक्षिप्ता वृत्तिरुच्यते ॥३॥

१–वृत्तमौक्तिक पृ १३६

अन्त— श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तमात्रावृत्तप्रकाशकम् ।
पिङ्गलोद्योतममलमविस्तृतमपि स्फुटम् ॥
हराक्षिमुनिशास्त्रेन्दुमितेऽब्दे (१६७३) मासि चाश्विने ।
सिते '' मिते चन्द्रशेखरः सव्यरीरचत् ॥

पुष्पिका— इति महामहोपाध्यायालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्द शास्त्रप्रस्थानपरमाचार्य-वेदान्तार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकात्मज-चन्द्रशेखरभट्टविरचिताया पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ मात्रावृत्ताख्य. प्रथम. प्रकाश समाप्तः । समाप्तश्चाय सूत्रवृत्तौ प्रथम खण्ड ।

सयोज्य पाणियुगल याचे साधूनह किमपि ।
मत्सररहितैर्यत्नात् सशोध्य मे क्वचित् स्खलितम् ॥

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करोद्धार[1] मे इस पिगलोद्योत टीका के उद्धरण दिए हैं ।

४. वृत्तमौक्तिकम्—छन्द शास्त्र का प्रस्तुत ग्रन्थ है । इसमे दो खड हैं । प्रथम मात्रावृत्त खड, जिसकी १६७५ मे रचना हुई है और द्वितीय वर्णवृत्त खड है, जिसकी रचना १६७६ मे हुई है । इस ग्रन्थ का विशेष परिचय आगे दिया जायगा ।

केटलॉगस केटलॉगरम् भाग १, पृष्ठ १८१ पर भट्ट चन्द्रशेखर रचित गगादासीय छन्दोमजरी की टीका 'छन्दोमञ्जरीजीवन' का भी उल्लेख है । इसकी एकमात्र प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन[2] मे है; यह प्रति बगला लिपि मे लिखी हुई है । इस टीका का मगलाचरण निम्न है—

वाणी कमलामभितो दोर्भ्यामालिङ्गितो योऽसौ ।
त नारायणमादि सुरतरुकल्प सदा वन्दे ॥१॥
छन्दसा मञ्जरी तप्ताभिधेया स्फुटभानुना ।
तस्या. कि जीवन न स्याच्चन्द्रशेखरभारती ॥२॥

किन्तु, इस टीका के मगलाचरण मे टीकाकार ने अपना नाम चन्द्रशेखर

१–वृत्तमौक्तिक पृ० २०६, ३१३

२–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के उपसचालक श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन के कार्यवाहको से सम्पर्क करके इस प्रति के आद्यन्त भाग की फोटोकॉपी मँगवा कर उपलब्ध की उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ ।—स०

भारती दिया है न कि चन्द्रशेखर भट्ट । चन्द्रशेखर भट्ट ने अपनी कृतियो मे अपने नाम के साथ कही भी 'भारती' शब्द का प्रयोग नही किया है। अपने नाम के साथ सर्वत्र भट्ट एव लक्ष्मीनाथात्मज का प्रयोग किया है। अत. यह स्पष्ट है कि छन्दोमञ्जरीजीवन के कर्ता चन्द्रशेखर भट्ट नही है, अपितु कोई चन्द्रशेखर भारती हैं। सभव है चन्द्रशेखर नाम-साम्य से भ्रमवशात् सम्पादक ने लिख दिया हो!

वृत्तमौक्तिक का सारांश

नामकरण—

कवि चन्द्रशेखर भट्ट ने प्रस्तुत ग्रथ का नाम 'वृत्तमौक्तिकम्'[1] रखा है, किन्तु द्वितीय-खण्ड के ग्यारहवे प्रकरण मे 'वार्त्तिक वृत्तमौक्तिकम्'[2] तथा प्रथम खण्ड एव द्वितीय-खण्ड की पुष्पिका मे 'वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके[3] और प्रथम-खण्ड के १,३,४,५वें प्रकरणो की तथा द्वितीय-खण्ड के प्रकरण ५, ७ से १० की पुष्पिकाओ मे 'वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके'[4] का उल्लेख है। लक्ष्मीनाथ भट्ट ने इस ग्रथ का नाम 'वृत्तमौक्तिक-वार्तिक' ही स्वीकार किया है, इसीलिए टीका का नाम भी 'वृत्तमौक्तिवार्त्तिकदुष्करोद्धार'[5] रखा है। वस्तुत प्राकृतपिंगल, छन्द:-सूत्र एव प्राकृतपिंगल के टीकाकार पशुपति और रविकर की टीकाओ और शम्भु[6] प्रणीत छन्दश्चूडामणि (?) के आधार एव अनुकरण पर पिंगल के वार्त्तिक-रूप मे ग्रन्थकार ने इसकी स्वतन्त्र रचना की है। अत वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक नाम स्वीकार कर सकते हैं, किन्तु मूलत अधिकांश स्थानों पर ग्रन्थकार ने एव टीकाकार महोपाध्याय मेघविजयजी ने 'वृत्तमौक्तिकम्' मौलिक नाम ही ग्रहण किया है; जो कि अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

ग्रन्थ का सारांश—

प्रस्तुत ग्रन्थ दो खण्डो मे विभक्त है। प्रथम-खण्ड मात्रावृत्त खण्ड[7] और द्वितीय-खण्ड वर्णिकवृत्त खड[8] है।

१–श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम्। पृ० १,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रथ मुदा निर्ममे। पृ० २६०
श्रीवृत्तमौक्तिकमिदम्। पृ० २६१

२–पृ० २७२ ३–पृ० ५६ एवं २६१

४–देखें पृ० १३, ३०, ४६, ४६, १६४, २०६, २१०, २६७, २७१

५–देखें, वार्त्तिक-दुष्करोद्धार का मगलाचरण एव प्रत्येक विश्राम की पुष्पिका।

६–रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धात्। पृ० २७३

७–तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमे। पृ० २७३

८–अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य। पृ० २७६

प्रथम खड मे छह प्रकरण हैं :—१ गाथाप्रकरण, २. षट्पदप्रकरण, ३. रड्डाप्रकरण, ४. पद्मावतीप्रकरण, ५. सवैयाप्रकरण और ६. गलितक-प्रकरण।

द्वितीय-खण्ड मे बारह प्रकरण हैं :—१ वर्णवृत्त प्रकरण, २. प्रकीर्णक-वृत्त-प्रकरण, ३ दण्डक प्रकरण, ४. अर्ध-समवृत्त-प्रकरण, ५. विषमवृत्त प्रकरण, ६. वैतालीय प्रकरण, ७. यतिनिरूपण प्रकरण, ८. गद्य-निरूपण प्रकरण, ९ विरुदावली-प्रकरण, १०. खण्डावली-प्रकरण, ११. विरुदावली-खण्डावली का दोषप्रकरण और १२. दोनो खण्डो की अनुक्रमणिका।

द्वितीय-खण्ड के नवम विरुदावली प्रकरण मे चार अवान्तर प्रकरण हैं— १. कलिका-प्रकरण, २. चण्डवृत्त-प्रकरण, ३. त्रिभङ्गीकलिका-प्रकरण और ४ साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण।

इस प्रकार दोनो खण्डो के १८ प्रकरण होते हैं और नवम प्रकरण के चारों अवान्तर प्रकरण सम्मिलित करने पर कुल २२ प्रकरण[१] होते हैं।

प्रथम खण्ड का सारांश

१. गाथा प्रकरण :

कवि मगलाचरण एवं ग्रथ-प्रतिज्ञा करके वर्णों की गुरु-लघु स्थिति का उदाहरण सहित वर्णन और लक्षण रहित काव्य का अनिष्ट फल का प्रतिपादन करता है। मात्राओ की टगणादि गणो की व्यवस्था और उनके प्रस्तार का निरूपण करते हुए मात्रिक-गणो के नाम तथा उनके पर्यायो की पारिभाषिक-साकेतिक शब्दो की तालिका[२] देता है। पश्चात् वर्णिकवृत्तो के मगणादि गण,गणदेवता, गणो की मैत्री और गणदेवो का फलाफल प्रदर्शित है।

प्रस्तार का वर्णन करते हुये मात्रोद्दिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्दिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तद्वयस्थ गुरु-लघुज्ञान, वर्णमर्कटी और मात्रामर्कटी का दिग्दर्शन कराते हुये प्रस्तारपिंड-सख्या का निर्देश किया है, जिसके अनुसार समग्रवृत्तो की प्रस्तार सख्या १३,४२,१७,७२६ होती है।

गाथा के विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक आर्या-भेदो का नामोल्लेख कर गाथा का लक्षण और आर्या[1] का सामान्य लक्षण उदाहरण सहित दिया है। प्राचीन परम्परा के अनुसार आर्या का विशिष्ट भेद दिखाया है जिसके अनुसार एक जगणयुक्त आर्या कुलीना, दो जगणयुक्त आर्या अभिसारिका, तीन जगणयुक्त आर्या रण्डा और अनेक जगणयुक्त आर्या वेश्या कहलाती है।[2] गाथा छन्द के २५ भेदो के नाम और लक्षण देकर उदाहरणो के लिये स्वपिता लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमजरी' देखने का सकेत किया है।

विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिंहिनी और स्कन्धक छन्दो के उदाहरण सहित लक्षण दिये हैं और स्कन्धक छन्द के २८ भेदो के नाम और लक्षण देते हुये उदाहरणो के लिये 'उदाहरणमजरी' का उल्लेख किया है।

इस प्रकार प्रथम प्रकरण मे छन्दसख्या की दृष्टि से गाथादि ७ छद और गाथा के २५ भेद एवं स्कन्धक के २८ भेदो का प्रतिपादन है।

२. षट्पद प्रकरण :

इस प्रकरण मे दोहा, रसिका, रोला, गन्धानक, चौपैया, घत्ता, घत्तानन्द, काव्य, उल्लाल और षट्पद छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये है। इसमे उल्लाल छन्द का उदाहरण नहीं है। साथ ही दोहा के २३ भेद, रसिका के ८ भेद, रोला के १३ भेद, काव्य के ४५ भेद और षट्पद के ७१ भेदों के नाम और लक्षण दिये हैं तथा इन समस्त भेदो के उदाहरणो के लिए कवि ने 'उदाहरण-मजरी' देखने का सकेत किया है। इसमे काव्य के प्रथम भेद शक्रछन्द का उदाहरण भी दिया है।

चौपैया छन्द के एक चरण मे ३० मात्रायें होती हैं। ग्रथकार ने चार चरणों का अर्थात् १२० मात्राओ का एक पाद स्वीकार कर चार पदो की ४८० मात्रा स्वीकार की है।

प्रकरण के अन्त में काव्य और षट्पद के प्राकृत और सस्कृत साहित्य के अनुसार दोषो का निरूपण है।

१–सस्कृत साहित्य में जिसे आर्या कहते है, उसे प्राकृत और अपभ्रश साहित्य मे गाथा कहते हैं। "आर्यैव सस्कृतेतरभाषासु गाथासज्ञेति।" हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, पत्र १२८।

२–एकस्मात्तु कुलीना, द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति।
नायकहीना रण्डा, वेश्या बहुनायका भवति॥ पृ० ६

३. रड्डा प्रकरण :

इस प्रकरण में पज्झटिका, अडिल्ला, पादाकुलक, चौबोला और रड्डा छन्द के लक्षण एव उदाहरण हैं। अन्त मे रड्डा छन्द के सात भेद :—करभी, नन्दा, मोहिनी, चारुसेना, भद्रा, राजसेना और तालकिनी के लक्षण मात्र दिये है और इनके उदाहरणों के सिए "सुबुद्धिभि. स्वयमूह्यम्" कह कर प्रकरण समाप्त किया है।

४ पद्मावती प्रकरण :

इस प्रकरण मे पद्मावती, कुण्डलिका, गगनागण, द्विपदी, झुल्लणा, खञ्जा, शिखा, माला, चुलिआला, सोरठा, हाकलि, मधुभार, आभीर, दण्डकला, कामकला, रुचिरा, दीपक, सिंहविलोकित, प्लवगम, लीलावती, हरिगीतम्, त्रिभगी, दुर्मिलका, हीर, जनहरण, मदनगृह और मरहठा छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। हरिगीत छन्द के १ हरिगीतम्, २. हरिगीतकम्, ३. मनोहर हरिगीत और ४, ५, यतिभेद से लक्षण-द्वय सहित हरिगीता के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

सोरठा, हाकलि, दीपक, हीर और मदनगृह छद के प्रत्युदाहरण भी हैं।

५. सवैया प्रकरण :

इस प्रकरण मे मदिरा, मालती, मल्ली, मल्लिका, माधवी और मागधी सवैयो के लक्षण देकर क्रमशः इनके उदाहरण दिये हैं। अन्त मे घनाक्षर छन्द का लक्षण एव उदाहरण दिया है।

६ गलितक प्रकरण :

इस प्रकरण मे गलितकम्, विगलितकम्, सगलितकम्, सुन्दरगलितकम्, भूषणगलितकम्, मुखगलितकम्, विलम्बितगलितकम्, समगलितकम्, अपर समगलितकम्, अपर सगलितकम्, अपर लम्बितागलितकम्, विक्षिप्तिकागलितकम्, लम्बितागलितकम्, विषमितागलितकम्, मालागलितकम्, मुग्धमालागलितकम् और उद्गलितकम् छन्दो के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं।

प्रथमखण्ड के छन्द एव भेदो का प्रकरणानुसार वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्रकरण संख्या	छन्द सख्या	छन्द भेद नाम	भेद सख्या	मूलभेद की न्यूनता	कुल
१	७	गाथा	२५	१	५८
		स्कन्धक	२८	१	

प्रकरण संख्या	छन्द सख्या	छन्द भेद नाम	भेद सख्या	मूल भेद की न्यूनता	कुल
२	६	दोहा	२३	१	१६४
		रसिका	८	१	
		रोला	१३	१	
		काव्य	४५	१	
		षटपदी	७१	१	
३	१२	रड्डा		१	११
४	२७	हरिगीत	५	१	३१
५	७		०	०	७
६	१७		०		१७
६	७९		२१८	९	२८८

छन्द का मूल भेद, छन्द-भेद-सख्या मे सम्मिलित होने से ९ भेद कम होते हैं। अत. भेद सख्या २१८ मे से ९ कम करने पर २०९ होते हैं और ७९ छद सख्या सम्मिलित करने पर कुल २८८ छन्द होते हैं। अर्थात् मूल छद ७९ और भेद २०९ हैं।

इस प्रकार कवि चद्रशेखर भट्ट ने वि. स १६७५ वसत पचमी को इसका प्रथम-खण्ड पूर्ण किया है।

द्वितीय-खण्ड का सारांश

१. वर्णिकवृत्त प्रकरण :

कवि चद्रशेखर 'गौरीश' का स्मरण कर वर्णिक छन्द कहने की प्रतिज्ञा करता है और एकाक्षर से छब्बीस अक्षरो तक के वर्णिकवृत्तो के लक्षण एव उदाहरण देता है; जो इस प्रकार हैं :—

१ अक्षर—श्री और इः छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

२ अक्षर—काम, मही, सार और मधु नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

३ अक्षर—ताली, शशी, प्रिया, रमण, पञ्चाल, मृगेन्द्र, मन्दर और कमल नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। ताली छन्द का नाम-भेद नारी दिया है।

४ अक्षर—तीर्णा, धारी, नगाणिका और शुभ नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। तीर्णा छन्द का नामभेद कन्या दिया है।

५ अक्षर—सम्मोहा, हारी, हस, प्रिया और यमक नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। यमक का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

६ अक्षर—शेषा, तिलका, विमोह, चतुरस, मन्थान, शखनारी, सुमालतिका, तनुमध्या और दमनक नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के मतानुसार विमोह का विज्जोहा, चतुरस का चतुरसा, मन्थान का मन्थाना और सुमालतिका का मालती नामभेद भी दिये हैं।

७ अक्षर—शीर्षा, समानिका, सुवासक, करहञ्चि, कुमारललिता, मधुमती, मदलेखा और कुसुमतति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

८ अक्षर—विद्युन्माला, प्रमाणिका, मल्लिका, तुङ्गा, कमल, माणवकक्रीडितक, चित्रपदा, अनुष्टुप् और जलद नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण है। मल्लिका का नाम-भेद समानिका दिया है।

९ अक्षर—रूपामाला, महालक्ष्मिका, सारग, पाइन्त, कमल, बिम्ब, तोमर, भुजगशिशुसृता, मणिमध्य, भुजङ्गसङ्गता और सुललित नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सारग का सारंगिका और पाइन्त का पाइन्ता नामभेद दिये हैं। भुजगशिशुसृता के लिये लिखा है कि यह नाम आचार्य शम्भु एव प्राचीनाचार्यों द्वारा सम्मत है और आधुनिक छन्दःशास्त्री इसका नाम भुजगशिशुभृता मानते हैं। सारग का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

१० अक्षर—गोपाल, सयुत, चम्पकमाला, सारवती, सुषमा, अमृतगति, मत्ता, त्वरितगति, मनोरम, और ललितगति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण है। प्राकृतपिंगल के अनुसार सयुत का सयुता, चम्पकमाला का रुक्मवती एव रूपवती तथा मनोरम का मनोरमा नामभेद दिये हैं। सयुत और त्वरितगति छन्दो के प्रत्युदाहरण भी दिये है।

११ अक्षर—मालती, बन्धु, सुमुखी, शालिनी, वातोर्मी, शालिनी-वातोर्म्युपजाति, दमनक, चण्डिका, सेनिका, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रोपजाति, रथोद्धता, स्वागता, भ्रमरविलसिता, अनुकूला, मोटनक, सुकेशी, सुभद्रिका और वकुल नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। बन्धु का दोधक, चण्डिका का सेनिका और श्रेणी नामभेद दिये हैं। रथोद्धता का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

शालिनी-वातोर्मी-उपजाति और इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति के ग्रन्थकार ने १४-१४ भेद प्रस्तार-दृष्टि से स्वीकार किये हैं किन्तु इन प्रस्तार-भेदो

के लक्षण एव उदाहरण नही दिये हैं। इनके उदाहरणो के लिये स्वपितृ-रचित ग्रन्थ[1] को देखने का सकेत किया है।

१२ अक्षर—आपीड, भुजङ्गप्रयात, लक्ष्मीधर, तोटक, सारगकं, मौक्तिकदाम, मोदक, सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, वंशस्थविला, इन्द्रवशा, वंशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति, जलोद्धतगति, वैश्वदेवी, मन्दाकिनी, कुसुमविचित्रा, तामरस, मालती, मणिमाला, जलधरमाला, प्रियवदा, ललिता, ललितं, कामदत्ता, वसन्तचत्वर, प्रमुदितवदना, नवमालिनी और तरलनयन नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं।

आपीड का विद्याधर, लक्ष्मीधर का स्रग्विणी, वशस्थविला का वशस्थविल और वशस्तनित, मन्दाकिनी का प्रभा, मालती का यमुना, ललिता का सुललिता, ललित का ललना और प्रमुदितवदना का प्रभा, ये नामभेद दिये हैं।

सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवशा, मन्दाकिनी और मालती के प्रत्युदाहरण भी दिये है, जिसमे द्रुतविलबित और मालती के प्रत्युदाहरण दो-दो हैं।

१३ अक्षर—वाराह, माया, तारक, कन्द, पङ्क्तावली, प्रहर्षिणी रुचिरा, चण्डी, मञ्जुभाषिणी, चन्द्रिका, कलहस, मृगेन्द्रमुख, क्षमा, लता, चन्द्रलेख, सुद्युति, लक्ष्मी और विमलगति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। माया का मत्तमयूर, मञ्जुभाषिणी का सुनन्दिनी तथा प्रबोधिता, चन्द्रिका का उत्पलिनी, कलहस का सिंहनाद तथा कुटज, और चन्द्रलेख का चन्द्रलेखा नामभेद दिये हैं। माया के ५, तारक, प्रहर्षिणी और चन्द्रिका के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१४ अक्षर—सिंहास्य, वसन्ततिलका, चक्र, असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरणकलिका, वासन्ती, लोला, नान्दीमुखी, वैदर्भी, इन्दुवदन, शरभी, अहिधृति, विमला, मल्लिका और मणिगण छन्द के लक्षण एव उदाहरण हैं। इन्दुवदन का इन्दुवदना नामभेद दिया है। वसन्ततिलका, चक्र और प्रहरणकलिका के प्रत्युदाहरण भी दिये है।

---

१. भेदाश्चतुर्दशैतस्याः क्रमतस्तु प्रदर्शिता।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्रातिस्फुटस्तत ॥ पृ ८१

इससे संभवतः ग्रन्थकार का सकेत लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमंजरी' ग्रथ की ओर ही हो।

१५ अक्षर—लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहंस, शरभ, निशिपालक, विपिनतिलक, चन्द्रलेखा, चित्रा, केसर, एला, प्रिया, उत्सव और उडुगण नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। लीलाखेल का सारगिका चामर का तूणक, भ्रमरावलिका का भ्रमरावली, शरभ का शशिकला तथा यतिभेद से मणिगुणनिकर एव स्रग्, चन्द्रलेखा का चण्डलेखा, चित्रा का चित्रं और प्रिया का यतिभेद से अलि नामभेद दिये हैं।

लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहस, मणिगुणनिकर, स्रग् निशिपालक, और विपिनतिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमे मालिनी के ३ प्रत्युदाहरण है।

१६ अक्षर—राम, पञ्चचामर, नील, चञ्चला, मदनललिता, नन्दिनी, प्रवरललित, गरुडरुत, चकिता, गजतुरगविलसित, शैलशिखा, ललित, सुकेसर, ललना और गिरिवरधृति नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये है। राम का ब्रह्मरूपक, पञ्चचामर का नराच, चञ्चला का चित्रसग, गजतुरगविलसित का ऋषभगजविलसित और गिरिवरधृति का अचलधृति नामभेद दिये है। पञ्चचामर तथा चञ्चला के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१७ अक्षर—लीलाधृष्ट, पृथ्वी, मालावती, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता वशपत्रपतित, नर्द्दटक, यतिभेद से कोकिलक, हारिणी, भाराक्रान्ता, मतङ्गवाहिनी, पद्मक और दशमुखहर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। मालावती का प्राकृतपिंगल के अनुसार मालाधर, वशपत्रपतित का वशपत्रपतिता और आचार्य शम्भु के मतानुसार वशवदन नामान्तर दिये हैं। पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, वशपत्रपतित, नर्द्दटक और कोकिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमे शिखरिणी के तीन तथा हरिणी के चार प्रत्युदाहरण हैं।

१८ अक्षर—लीलाचन्द्र, मञ्जीरा, चर्चरी, कीडाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन, नाराच, चित्रलेखा, भ्रमरपद, शार्दूलललित, सुललित और उपवनकुसुम नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। नाराच का मञ्जुला नामान्तर दिया है। मञ्जीरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन और नाराच के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमे चर्चरी के पाच और नन्दन के दो प्रत्युदाहरण है।

१९ अक्षर—नागानन्द, शार्दूलविक्रीडित, चन्द्र, धवल, शम्भु, मेघविस्फूर्जिता, छाया, सुरसा, फुल्लदाम, और मृदुलकुसुम नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगलानुसार चन्द्र का चन्द्रमाला, और धवल का

धवला नामभेद दिये हैं। शार्दूलविक्रीडित के दो, चन्द्र, धवल, शम्भु और मेघविस्फूर्जिता के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये है।

२० अक्षर—योगानन्द, गीतिका, गण्डका, शोभा, सुवदना, प्लवङ्गभगमंगल, शशाङ्कचलित, भद्रक, और अनवधिगुणगण नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। गण्डका का चित्रवृत्त एव वृत्त नामभेद दिया है। गीतिका के दो, गण्डका और सुवदना के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२१ अक्षर—ब्रह्मानन्द, स्रग्धरा, मञ्जरी, नरेन्द्र, सरसी, रुचिरा और निरुपमतिलक नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। सरसी का सुरतरु और सिद्धक नामान्तर दिया है। स्रग्धरा और मञ्जरी के दो-दो, नरेन्द्र और सरसी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२२ अक्षर—विद्यानन्द, हसी, मदिरा, मन्द्रक, शिखर, अच्युत, मदालस, और तरुवर नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण है। हसी का एक और मदालस के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२३ अक्षर—दिव्यानन्द, सुन्दरिका, यतिभेद से पद्मावतिका, अद्रितनया, मालती, मल्लिका, मत्ताक्रीड और कनकवलय नामक छन्दो के लक्षण एवं उदाहरण हैं। अद्रितनया का अश्वललित नामान्तर दिया है। अद्रितनया और अश्वललित के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२४ अक्षर—रामानन्द, दुर्मिलका, किरीट, तन्वी, माधवी और तरलनयन नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण हैं। दुर्मिलका और तन्वी के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२५ अक्षर—कामानन्द, क्रौंचपद, मल्ली और मणिगणनामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। क्रौंचपदा का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

२६ अक्षर—गोविन्दानन्द, भुजङ्गविजृभित, अपवाह, मागधी और कमलदल नामक छन्दो के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। तथा भुजगविजृभित और अपवाह के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

उपसहार मे कवि कहता है कि इस प्रकरण मे लक्ष्य-लक्षण-सयुक्त २६५ छन्दो का निरूपण किया है और प्रत्युदाहरण के रूप मे प्राचीन कवियो के क्वचित् उदाहरण भी लिये है। अन्त मे लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप के अनुसार समस्त वृत्तो की प्रस्तारपिंड-सख्या १३,४२,१७,७२६ बतलाई है।

इस प्रकरण के वर्णाक्षरो के अनुसार प्रस्तारसख्या, छन्दसख्या, उदाहरण सख्या, प्रत्युदाहरण सख्या और नामभेदो की तालिका इस प्रकार है:—

वर्णाक्षर	प्रस्तार सख्या	छन्द सख्या	उदाहरण संख्या	प्रत्युदाहरण सख्या	नामभेद सख्या
१	२	२	२	×	×
२	४	४	४	×	×
३	८	८	८	×	१
४	१६	४	४	×	१
५	३२	५	५	१	×
६	६४	९	९	×	४
७	१२८	८	८	×	×
८	२५६	९	९	×	१
९	५१२	११	११	१	३
१०	१०२४	१०	१०	२	३
११	२०४८	२०	२०	१	२
१२	४०९६	३०	२९	९	८
१३	८१९२	१८	१८	८	६
१४	१६,३८४	१६	१६	३	१
१५	३२,७६८	१५	१५	११	७
१६	६५,५३६	१५	१५	२	५
१७	१,३१,०७२	१३	१३	१२	२
१८	२,६२,१४४	१२	१२	११	१
१९	५,२४,२८८	१०	१०	६	२
२०	१०,४८,५७६	९	९	४	१
२१	२०,९७,१५२	७	७	६	१
२२	४१,९४,३०४	८	८	३	×
२३	८३,८८,६०८	७	८	२	१
२४	१,६७,७७,२१७	६	६	२	×
२५	३,३५,५४,४३२	४	४	१	×
२६	६,७१,०८,८६४	५	५	२	×
		२६५	२६५	८७	५०

इस प्रकार तालिकानुसार उक्त प्रकरण मे कुल २६५ छन्द है, उदाहरण २६५ है, प्रत्युदाहरण ८७ है और नामभेद ५० है ।

२. प्रकीर्णक-वृत्त-प्रकरण :

इस प्रकरण मे ग्रन्थकार ने पिपीडिका, पिपीडिकाकरभ, पिपीडिकापणव और पिपीडिकामाला-नामक छन्दो के लक्षण की एक प्राचीन आचार्यों की सग्रह-कारिका दी है। स्वयं के स्वतन्त्र लक्षण एव उदाहरण नही है। पश्चात् द्वितीय त्रिभगी और शालूर नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये है ।

३. दण्डक-प्रकरण :

इस प्रकरण में चण्डवृष्टिप्रपात, प्रचितक, अर्ण, सर्वतोभद्र, अशोकमञ्जरी, कुसुमस्तबक, मत्तमातङ्ग और अनङ्गशेखर नामक दण्डक-वृत्तो के लक्षण सहित उदाहरण दिये है। ग्रन्थविस्तार-भय से अन्य प्रचलित दण्डकवृत्तो के लिये लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप देखने के लिये आग्रह किया है ।

प्रचितक दण्डक का लक्षण ग्रन्थकार ने छन्द.सूत्रानुसार दो नगण और ८ रगण दिया है जो कि छन्द.सूत्र और वृत्तमौक्तिक के अनुसार 'अर्ण' दण्डक का भी लक्षण है। छन्द सूत्र के अतिरिक्त समस्त छन्दःशास्त्रियो ने प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। ग्रन्थकार ने इस लक्षण के दण्डक को सर्वतोभद्र दण्डक लिखा है। यही कारण है कि आचार्यो के मतो को ध्यान मे रख कर ही 'एतस्यैव अन्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्'[1] लिखा है ।

४ अर्धसमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द मे चारो चरणो के लक्षण समान हो वह समवृत्त कहलाता है; जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक सदृश हो वह अर्धसमवृत्त कहलाता है और जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण विभिन्न हो वह विषमवृत्त कहलाता है ।

इस अर्धसमवृत्त प्रकरण मे पुष्पिताग्रा, उपचित्र, वेगवती, हरिणप्लुता, अपरवक्त्र, सुन्दरी, भद्रविराट्, केतुमती, वाङ्मती और षट्पदावली नामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। पुष्पिताग्रा के तीन, अपरवक्त्र और सुन्दरी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। षट्पदावली का उदाहरण नही दिया है।

---

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १८५।

५. विषमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण भिन्न-भिन्न हों उसे विषमवृत्त कहते हैं। विषमवृत्तो मे उद्गता, उद्गताभेद, सौरभ, ललित, भाव, वक्त्र, पथ्यावक्त्र और अनुष्टुप्-नामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उद्गताभेद का ग्रन्थकार का स्वोक्त उदाहरण नही है किन्तु भारवि और माघ के दो उदाहरण हैं।

अनुष्टुप् के लिये लिखा है कि कतिपय आचार्य इसे भी 'वक्त्र' छन्द का ही लक्षण मानते हैं और अनेक पुराणो मे नानागणभेद से यह प्राप्त होता है। अत: इसे विषमवृत्त ही मानना चाहिये। पदचतुरूर्ध्वादि और उपस्थित-प्रचुपित आदि विषमवृत्तो के लिये छन्द·सूत्र की हलायुध की टीका देखने का सकेत किया है।

६. वैतालीय-प्रकरण :

वैतालीय, औपच्छन्दसक, आपातलिका, नलिन, द्वितीय नलिन, दक्षिणान्तिका वैतालीय, उत्तरान्तिका-वैतालीय, प्राच्यवृत्ति, उदीच्यवृत्ति, प्रवृत्तक, अपरातिका और चारुहासिनी नामक वैतालीय छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं। दक्षिणान्तिका-वैतालीय का एक, प्राच्यवृत्ति के दो, उदीच्यवृत्ति का एक प्रवृत्तक का एक, अपरान्तिका के दो और चारुहासिनी के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

इस प्रकरण मे वृत्तों के लक्षण पूर्ण पद्यो मे न होकर सूत्र-कारिका रूप मे प्राप्त हैं और साथ ही इन कारिकाओ को स्पष्ट करने के लिये टीका भी प्राप्त है।

७. यतिनिरूपण-प्रकरण :

पद्य मे जहा पर विच्छेद हो, विभजन हो, विश्राम हो, विराम हो, अवसान हो उसे यति कहते हैं। समुद्र, इन्द्रिय, भूत, इन्दु, रस, पक्ष और दिक् आदि शब्द साकाक्षी होने से यति से सम्बन्ध रखते हैं। ग्रथकार मूल-शास्त्र अर्थात् छन्द·सूत्र का आलोडन कर उदाहरण सहित इस प्रकरण पर विवेचन करता है।

पद्य ४ से ७ तक प्राचीन आचार्यों की सग्रह-कारिकाये और इनकी व्याख्या दी गई हैं। ये चारो पद्य और इनकी उदाहरणसहित व्याख्या छन्द·सूत्र की हलायुध टीका मे प्राप्त है। किंचित् परिवर्तन के साथ यह स्थल यहा पर ज्यो का त्यो उद्धृत किया गया है। अन्त मे आचार्य भरत, आचार्य पिङ्गल, जयदेव, श्वेतमाण्डव्य,

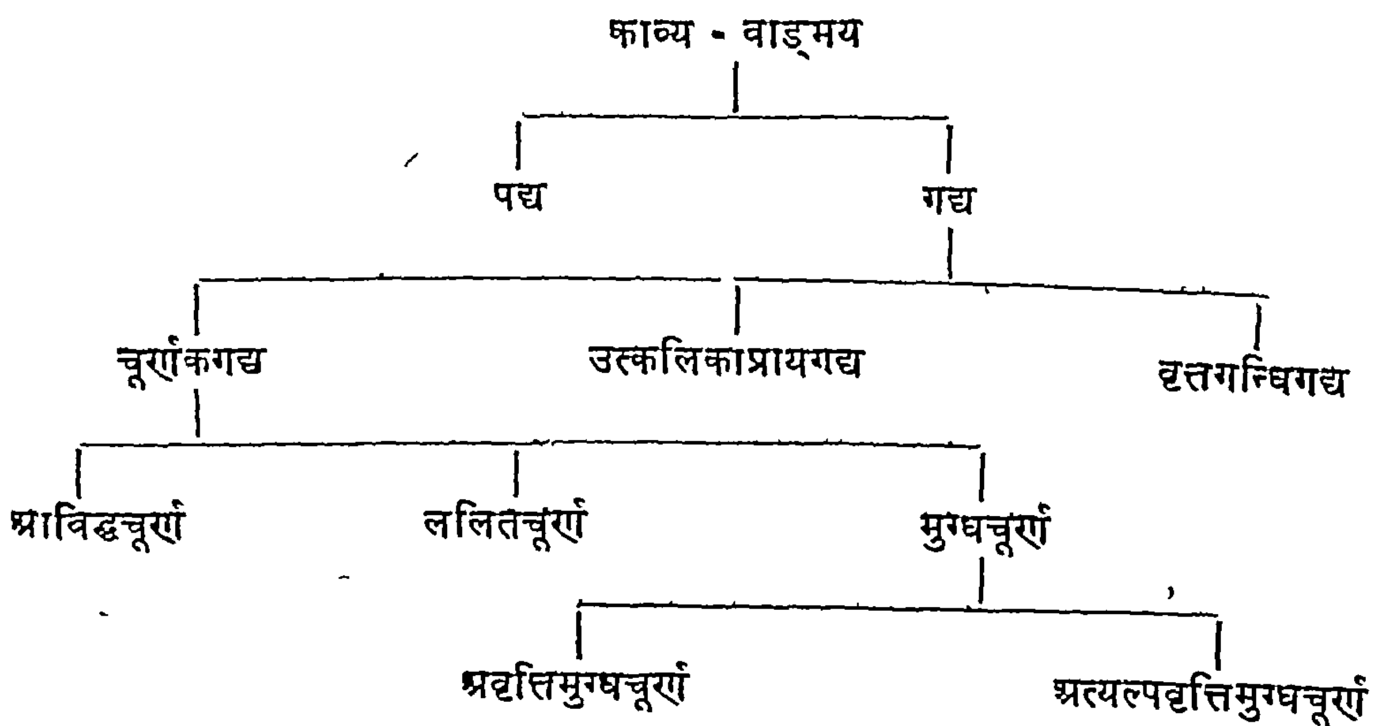
मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गंगादास आदि के मतो का उल्लेख करते हुये यतिभंग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है।

८. गद्य-प्रकरण

वाङ्मय दो प्रकार का है—१. पद्यात्मक और २. गद्यात्मक। पद्य-वाङ्मय का वर्णन प्रारंभ के प्रकरणो मे किया जा चुका है। अत. यहाँ इस प्रकरण मे गद्य-वाङ्मय का विवेचन है। गद्य के प्रमुख तीन भेद हैं—१. चूर्णगद्य, २. उत्कलिकाप्राय-गद्य और ३. वृत्तगन्धि-गद्य।

चूर्णकगद्य के तीन भेद है—१. आविद्धचूर्ण, २. ललितचूर्ण और ३. मुग्धचूर्ण। मुग्धचूर्ण के भी दो भेद हैं—१. अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २ अत्यल्प-वृत्तिमुग्धचूर्ण।

इस प्रकार इन समस्त गद्य-भेदो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा :—



अन्य ग्रन्थकारो ने गद्य के चार भेद स्वीकार किये हैं :—१. मुक्तक, २. वृत्तगन्धि, ३. उत्कलिकाप्राय और ४ कुलक। इन चारो भेदो के लक्षण एवं उदाहरण भी ग्रथकार ने दिये है। उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है।

९ विरुदावली-प्रकरण :

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदों की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणो मे विभाजित है :—

१. कलिका-प्रकरण, २. चण्डवृत्त-प्रकरण, ३. त्रिभगीकलिका-प्रकरण, ४ साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण और ५ विरुदावली ।

(१) द्विगादिकलिका-अवान्तर-प्रकरण

कलिका के नव भेद माने हैं :—१ द्विगा-कलिका, २. रादिकलिका, ३. मादिकलिका, ४. नादिकलिका, ५. गलादिकलिका, ६. मिश्राकलिका, ७. ७ मध्याकलिका, ८ द्विभङ्गीकलिका और ९. त्रिभङ्गीकलिका । ७ मध्या-कालिका के दो भेद है ।

त्रिभगी-कलिका के भी ९ भेद माने है :—१ विदग्धत्रिभङ्गी-कलिका, २. तुरगत्रिभङ्गी-कलिका, ३. पद्यत्रिभगी-कलिका, ४. हरिणप्लुतत्रिभगी-कलिका, ५. नर्त्तकत्रिभगी-कलिका, ६ भुजगत्रिभगी-कलिका, ७. त्रिगतात्रिभगी-कलिका, ८ वरतनुत्रिभगी-कलिका और ९ द्विपादिका-युग्मभगा कलिका ।

त्रिगतात्रिभगी-कलिका के दो भेद हैं —१. ललिता-त्रिगता-त्रिभगी-कलिका और २ वलिगता-त्रिगता-त्रिभगी-कलिका । वरतनु-त्रिभगी-कलिका के भी दो भेद माने हैं ।

द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका के ६ भेद माने हैं :—१ मुग्धा-द्विपादिका युग्मभगा-कलिका, २. प्रगल्भा-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ३ मध्या-द्विपा-दिका-युग्मभगा-कलिका, ४. शिथिला-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ५ मधुरा द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका और ६ तरुणी-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका । इसमे मध्या-द्विपादिका-युग्मभगा कलिका के भी चार भेद माने हैं ।

इस प्रकार मूलभेद ९ और प्रतिभेद २५ कुल ३४ कलिकाओ के लक्षण और उदाहरण ग्रथकार ने दिये है । लक्षण पूर्णपद्यो मे नही है किन्तु पद्य के टुकडो मे कारिका रूप मे है । इन लक्षणो को स्पष्ट करने के लिये टीका भी दी है। उदाहरण के भी पूर्णपद्य नही है किन्तु प्रत्येक उदाहरण के लिये केवल एक चरण दिया है । मध्याकलिका का उदाहरण नही दिया है । यथा—

कलिका विरुदावली

- द्विगा
- रादि
- मादि
- नादि
- गलादि
- मिश्रा
- मध्या (दो भेद)
- द्विभगी
- त्रिभगी
  - विदग्ध
  - तुरग
  - पद्म
  - हरिणलुप्त
  - नर्त्तक
  - भुजग
  - त्रिगता
  - वरतनु (दो भेद)
    - ललिता
    - वलिगता
  - द्विपादिका
    - मुग्धा
    - प्रगल्भा
    - मध्या (चार भेद)
    - शिथिला
    - मधुरा
    - तरुणी

(२) चण्डवृत्त-अवान्तर-प्रकरण

महाकलिकाचण्डवृत्त के दो भेद है :—१ सलक्षण और २. साधारण।

सलक्षण चण्डवृत्त के तीन भेद है :—१. शुद्धसलक्षण, २. सकीर्णसलक्षण और ३. गर्भितसलक्षण।

शुद्ध सलक्षण चण्डवृत्त के २० भेद है :—१ पुरुषोत्तम, २. तिलक, ३. अच्युत, ४ वर्द्धित, ५ रण, ६ वीर, ७. शाक, ८ मातङ्गखेलित, ९ उत्पल, १० गुणरति, ११ कल्पद्रुम, १२ कन्दल, १३ अपराजित, १४. नर्त्तन, १५ तरत्समस्त, १६. वेष्टन, १७. अस्खलित, १८. पल्लवित, १९ समग्र और २० तुरग।

सकीर्णसलक्षण-चण्डवृत्त के ५ भेद है :—१ पङ्केरुह, २. सितकञ्ज, ३ पाण्डूत्पल, ४. इन्दीवर और ५. अरुणाम्भोरुह।

गर्भितसलक्षण-चण्डवृत्त के ९ भेद है :—१. फुल्लाम्बुज, २ चम्पक, ३ वजुल, ४. कुन्द, ५ बकुलभासुर, ६. बकुलमगल, ७ मञ्जरीकोरक; ८. गुच्छक और ९ कुसुम।

भेदकथन के पश्चात् रचना-वैशिष्टच मे प्रयुक्त मधुर, श्लिष्ट, सश्लिष्ट, शिथिल और ह्रादि की परिभाषा और इनका विवेचन करते हुये उपर्युक्त ३४ महाकलिका-चण्डवृत्तो के क्रमश. लक्षण एव उदाहरण दिये है। लक्षण पूर्ण पद्यो मे न होकर खण्डपद्यो में करिका-रूप मे है और इन लक्षणो को स्पष्ट करने के लिये व्याख्या भी दी है। ग्रथकार ने ग्रथ-विस्तार के भय से प्रत्येक चण्डवृत्त के उदाहरण मे एक-एक चरणमात्र दिया है।

श्रीरूपगोस्वामिप्रणीत गोविन्दविरुदावली से निम्नलिखित चण्डवृत्तो के प्रत्युदाहरण दिये हैं :—१ तिलक, २ अच्युत, ३ वर्द्धित, ४ रण, ५ वीर, ६ मातगखेलित, ७ उत्पल, ८ गुणरति, ९ पल्लवित, १० तुरग, ११. पकेरुह, १२ सितकज, १३ पाण्डूत्पल, १४ इन्दीवर, १५. अरुणाम्भोरुह, १६ फुल्लाम्वुज, १७ चम्पक, १८ वजुल, १९. कुन्द, २०. बकुलभासुर, २१. बकुल-मगल, २२ मञ्जरीकोरक, २३ गुच्छ और २४ कुसुम।

वीर का वीरभद्र, रण का समग्र और तुरग का तुरग नामभेद भी दिया है।

(३) त्रिभगी-कलिका-अवान्तर-प्रकरण

विरुदसहित दण्डक-त्रिभगी-कलिका, विरुदसहित सम्पूर्णा विदग्धत्रिभगी-कलिका और मिश्रकलिका के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं। लक्षण-कारिकाओ

की टीका भी है। उदाहरण के एक-एक चरण है । तीनो ही विरुदावलियो के प्रत्युदाहरण दिये हैं जो कि रूपगोस्वामिकृत गोविन्दविरुदावली के हैं । ग्रथकार ने तीनो ही भेद चण्डवृत्त के ही प्रभेद माने हैं।

(४) साधारण-चण्डवृत्त-अवान्तर-प्रकरण

इस प्रकरण मे साधारण चण्डवृत्तो के लक्षण एव उदाहरण दिये गये हैं।

(५) विरुदावली-प्रकरण

साप्तविभक्तिकी कलिका, अक्षमयी कलिका और सर्वलघु कलिका के लक्षण देकर इन कारिकाओ की व्याख्या दी है। इन तीनो के स्वय के उदाहरण नही हैं। तीनो ही कलिकाओ के उदाहरण गोविन्दविरुदावली से उद्धृत हैं । अन्त मे समग्र कलिकाओ मे प्रयुक्त विरुदो के युगपद् लक्षण कहे हैं।

देव, भूपति एवं तत्तुल्यवर्णनो मे धीर, वोर आदि विरुदो का प्रयोग होता है। संस्कृत-प्राकृत के श्रव्यकाव्यो मे शौर्य, वीर्य, दया, कीर्ति और प्रतापादि प्रधान विषयो मे कलिकादि का प्रयोग होता है। गुण, अलङ्कार, रीति, मैत्र्यनुप्रास एव छन्दाडम्बर से युक्त कलिका और विरुद का निरूपण करते हुए समग्र विरुदावलियो के सामान्य लक्षण दिये हैं। इसके अनुसार कलिका-श्लोकविरुद न्यूनातिन्यून पन्द्रह होते है और अधिक से अधिक नव्वे होते हैं। नव्वे कलिका-श्लोक विरुद युक्त विरुदावली अखडा विरुदावली या महती विरुदावली कहलाती है। मतान्तर के अनुसार किसी कलिका के स्थान पर केवल गद्य होता है या विरुद होता है और कलिका एव विरुद आशीर्वादात्मक पद्यो से युक्त होता है। प्रत्येक विरुदावली मे तीन या पाच कलिकायें और इतने ही श्लोको की रचना ऐच्छिक होती है। अंत मे विरुदावली का फल-निर्देश है।

१०. खण्डावली-प्रकरण

विरुदावली के समान ही खडावली होती है किन्तु इतना अतर है कि आदि और अत मे आशीर्वादात्मक पद्य विरुदरहित होते हैं । तामरसखडावली और मञ्जरी-खडावली के लक्षणसहित उदाहरण दिये हैं। लक्षणकारिकाओ की टीका भी है। अत मे कवि कहता है कि खडावली के हजारो भेद सम्भव है किंतु ग्रथ विस्तारभय से मैंने इसके भेदो के उल्लेख नही किये है; केवल सुकुमारमतियो के लिये मार्ग-प्रदर्शन किया है।

११. दोष-प्रकरण

इस प्रकरण मे विरुदावली और खण्डावली के दोषो का दिग्दर्शन कराया

है। अमैत्री, अनुप्रासाभाव, दौर्बल्य, कलाहति, असाम्प्रत, हतौचित्य, विपरीतयुत, विश्रृखल और स्खलत्तालनामक ६ दोषो के लक्षण एव उदाहरण देते हुये कहा है कि इन नव दोषो को जो विद्वान् नही जानता है और काव्य रचना करता है वह तमोलोक मे उलूक होता है अर्थात् काव्य मे इन दोषो का त्याग अनिवार्य है।

१२. अनुक्रमणी-प्रकरण

रविकर, पशुपति, पिंगल एव शम्भु के छद·शास्त्रो का अवलोकन कर चद्र-शेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक की रचना की है।

यह प्रकरण दो विभागो मे विभक्त है। प्रथम विभागो ४० पद्यो का है जिसमे प्रथम-खण्ड की अनुक्रमणिका दी है और द्वितीय विभाग १८८ पद्यो का है जिसमे द्वितीय-खड की अनुक्रमणिका दी है।

प्रथम खण्डानुक्रम—इसमे मात्रावृत्त नामक प्रथम खड के छहो प्रकरणो की विस्तृत सूची है। प्रत्येक छद का क्रमश नाम दिया है और अत मे छद-सख्या भेदो सहित २८८ दिखलाई है।

द्वितीय खण्डानुक्रम·—प्रथम प्रकरण मे प्ररूपित अक्षरानुसार अर्थात् एक से छब्बीस अक्षर पर्यन्त छदो के क्रमशः नाम, नामभेद और प्रस्तारभेद के साथ सूची दी है और अत मे प्रस्तारपिंड की सख्या देते हुये उल्लिखित २६५ छदो की सख्या दी है। द्वितीय प्रकरण से छठे प्रकरण तक की सूची मे छदनाम और नामभेद दिये है। सप्तम यतिप्रकरण का उल्लेख करते हुये आठवें गद्य प्रकरण के भेदो का सूचन किया है और नवम तथा दसवे प्रकरण के समस्त छदो के नाम और नामभेद दिये हैं एव ग्यारहवे दोप प्रकरण का उल्लेख किया है।

अत मे दोनो खडो के प्रकरणो की सख्या देते हुये उपसहार किया है।

ग्रन्थकृत्प्रशस्ति—

वि०स० १६७६ कार्तिकी पूर्णिमा को वसिष्ठवशीय लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र चद्रशेखर भट्ट ने इसकी (द्वितीय खड) रचना पूर्ण की है। प्रशस्तिपद्य ८ एव ६ मे लिखा है कि चद्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास हो जाने के कारण इस ग्रथ की पूर्णाहुति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है।

ग्रन्थ का वैशिष्टय

प्रस्तुत ग्रथ का छंद शास्त्र की परम्परा मे एक विशिष्ट स्थान है। इसी ग्रथ के पृष्ठांक ४१४ मे उल्लिखित छद शास्त्र के १६ ग्रथ और दो टीका-ग्रथो के साथ

तुलनात्मक अध्ययन करने पर इस ग्रंथ का महत्त्व कई दृष्टियो से आंका जा सकता है। न केवल सस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से ही अपितु हिन्दी छद-परम्परा की दृष्टि से भी इस ग्रथ को छद शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रथ मान सकते हैं। इस ग्रथ की प्रमुख-प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं :—

१ पारिभाषिक शब्द और गण

इस ग्रथ में मात्रिक और वर्णिक दोनो छदो का विधान होने से ग्रथकार ने सस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश की मगणादिगण एव टगणादिगणो की दोनो प्रणालिओ का साधिकार प्रयोग किया है। स्वयभू छद, छदोनुशासन और कवि-दर्पण आदि ग्रथो मे षट्कल, पञ्चकल, चतुष्कल आदि कलाओ का ही प्रयोग मिलता है किंतु इनके प्रस्तार-भेद, नाम और उसके कर्ण, पयोधर, पक्षिराज आदि पर्यायो का प्रयोग हमे प्राप्त नही होता है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग हमे कवि विरहांक कृत वृत्तजातिसमुच्चय मे प्राप्त होता है। इसके पश्चात् तो इसका प्रयोग प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ आदि अनेक ग्रथो मे प्राप्त होता है।

वृत्तमौक्तिक मे ट = षट्कल, ठ = पञ्चकल ड = चतुष्कल, ढ = त्रिकल, ण = द्विकल गण स्थापित कर इनके प्रस्तारभेद, नाम और प्रत्येक के पर्याय विशदता के साथ प्राप्त हैं। साथ ही पृथक् रूप से मगणादि आठ गण भी दिये है। इस पारिभाषिक शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन के साथ परिचय मैंने इसी ग्रथ के प्रथम परिशिष्ट मे दिया है, अत. यहाँ पर पुन विष्टपेषण अनावश्यक है, किंतु रत्नमञ्जूषा और जानाश्रयी छन्दोविचिति में हमे एक नये रूप मे पारिभाषिक शब्दावली प्राप्त होती है जिसका कि पूर्ववर्त्ती और परवर्ती किसी भी ग्रथ में प्रयोग नही मिलता है अतः तुलना के लिये दोनो की सकेत सूची यहाँ देना अप्रासगिक न होगा।

रत्नमञ्जूषा		वृत्तमौक्तिक
क् और आ	ऽ ऽ ऽ	मगण, हर
च् ,, ए	। ऽ ऽ	यगण, इन्द्रासन आदि
त् ,, ओ	ऽ । ऽ	रगण, सूर्य, वीणा आदि
प् ,, ई	। । ऽ	सगण, करतल, कर आदि
श् ,, अ	ऽ ऽ ।	तगण, हीर
ष् ,, उ	ऽ । ऽ	जगण, पयोधर, भूपति आदि
स् ,, ऋ	ऽ । ।	भगण, दहन, पितामह आदि

ह् और इ	।।।	नगण, भाव, रस, भामिनी आदि
य्	SS	कर्ण, सुरतलता, आदि
र्	।S	ध्वज, चिह्न, चिरालय आदि
व्	।।	सुप्रिय, परम
म्	S	हार, ताटक, नूपुर आदि
न्	।	शर, मेरु, कनक, दण्ड आदि

× × × ×

जानाश्रयी छन्दोविचिति		वृत्तमौक्तिक
भ	S	ग, हार, ताटक आदि
ह	।	ल, शर, मेरु आदि
गङ्गास्	SS	गुरुयुगल, कर्ण, रसिक आदि
नदीज्	।S	वलय, तोमर, पवन आदि
ननुर्	।।	सुप्रिय, परम,
नूनसाग्	SSS	मगण, हर,
कृशाङ्गीग्	।SS	यगण, कुञ्जर, रदन, मेघ आदि
धीवराश्	S।S	रगण, गरुड, भुजंगम, विहग आदि
कुरुतेल्	।।S	सगण, कमल, हस्त, रत्न आदि
तेश्रीःक्वव्	SS।	तगण, हीर,
विभातिक्	।S।	जगण, भूपति, कुच आदि
सातवत्	S।।	भगण, तात, पद, जघायुगल आदि
तरतिम्	।।।	नगण, रस, ताण्डव आदि
नचरतिद्	।।।।	विप्र, द्विज, वाण आदि
चन्द्रननु	S।।।	अहिगण
नदीननु	।S।।	कुसुम
ननुचन्द्र	।।S।	शेखर
कमलिनीय्	।।।S	चाप
लोलमालाप्	S।SS	...
रौतिमयूरोज्	S।।SS	...
धैर्यमस्तुतेट्	S।S।S	...
ननुतरति	।।।।।	पापगण
जयनरवरण्	।।।।।।	शालि

पारिभाषिक शब्दावली का ग्रन्थकार ने सफलता के साथ विविध रूपो मे प्रयोग किया है :—१. विशुद्ध टादिगण, २. टादि और मगणादि मिश्र, ३. टादि और पारिभाषिक मिश्र, ४ विशुद्ध पारिभाषिक, ५. विशुद्ध मगणादि और ६. पारिभाषिक एव मगणादि मिश्र। उदाहरण के तौर पर प्रत्येक प्रयोग का एक-एक पद्य प्रस्तुत है :—

१. विशुद्ध टगणादि का प्रयोग—

आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि।
ठगण डगण द्वयमपि **घत्तानन्दे** धेहि ॥३२॥ [पृ० १९]

अर्थात् घत्तानन्द नामक मात्रिक छद मे षट्कल = ६ मात्रा, डगणत्रय = चतुष्कल तीन १२ मात्रा, ठगण = पञ्चकल ५ मात्रा और डगणद्वय = चतुष्कलद्वय ८ मात्रा कुल ३१ मात्रा होती है।

२ टादि और मगणादि मिश्र का प्रयोग—

डगण कुरु विचित्रमन्ते जगणमत्र।
मध्ये द्विलमवेहि दीपकमिति विधेहि ॥३६॥ [पृ० ३८]

अर्थात् **दीपक** नामक मात्रिक छद मे डगण = चतुष्कल ४ मात्रा, द्विल = दो लघु २ मात्रा और जगण = ४ मात्रा, कुल १० मात्रा होती है।

३. टादि और पारिभाषिक-मिश्र का प्रयोग—

यदि योगडगणकृत - चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा।
नायक-विरहितपद - कविजनकृतमदपठनादपि मानसहरणा।
इह दशवसुमनुभि क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला।
सा **पद्मावतिका** फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥१॥
[पृ० ३०]

अर्थात् पद्मावतीनामक मात्रिक छद मे 'योगडगण' डगण = चतुष्कल, योग = आठ अर्थात् ३२ मात्राये होती हैं जिनमे द्विज = ।।।। चार मात्रा, गुरु-युग = ऽऽ चार मात्रा, कर = ।।ऽ सगण ४ मात्रा, वसुचरण = ऽ।। भगण चार मात्रा का प्रयोग अपेक्षित है और नायक = ।ऽ। जगण चार मात्रा का प्रयोग निषिद्ध है। इस छद मे यति १०, ८, १४ मात्रा पर होती है।

४ विशुद्ध पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग—

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगतं पुष्प हार तथा दधती मुदा।

विरुतललितं संबिभ्राणं पदान्तगनूपुर
रसजलनिधिच्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥४१८॥
[पृ० १३७]

हरिणी नामक छंद १७ वर्णों का होता है। इसमे द्विज = । । । ।, रस = ।, कर्णद्वन्द्व = ऽ ऽ ऽ ऽ, कुण्डल = ऽ , कुच = । ऽ ।, पुष्प = ।, हार = ऽ, विरुत = ।, नूपुर = ऽ होते हैं अर्थात् इस छंद मे, नगण, सगण मगण, रगण, सगण, लघु और गुरु होते हैं। ६, ४ और ७ पर यति होती है।

५. **विशुद्ध मगणादिगणों का प्रयोग—**

कुरु नगणयुग धेहि तं भगण ततः,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्तत.।
मुनिरचितयतिर्नागराजफणिप्रिया,
सकलतनुभृता मानसे लसति **प्रिया** ॥३६६॥ [पृ० १२७]

१५ वर्ण के प्रियाछन्द का लक्षण है—नगण, नगण, तगण, भगण और रगण। ७ और ८ पर यति होती है।

६. **पारिभाषिक और मगणादिमिश्र का प्रयोग—**

पूर्वं कर्णत्रित्वं कारय पश्चाद्धेहि भकारं दिव्यं,
हारं वह्निप्रोक्तं धारय हस्तं देहि मकारं चान्ते।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्रामं कुरु पादे नागमहाराजोक्तं,
मञ्जीराख्यं वृत्तं भावय शीघ्रं चेतसि कान्ते स्वीये ॥४४३॥
[पृ० १४३]

१८ अक्षरो के मञ्जीराछन्द का लक्षण है.—कर्णत्रित्व = ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ, भकार = ऽ । ।, हार वह्नि = ऽ ऽ ऽ, हस्त = । । ऽ, और मकार = ऽ ऽ ऽ; अर्थात् इसमे मगण, मगण, भगण, मगण, सगण और मगण होते है। यति ९-९ पर है।

इस पारिभाषिक शब्दावली के कारण यह सत्य है कि वृत्तरत्नाकर, छंदोमञ्जरी और श्रुतबोध की तरह वह बाल-सरलता अवश्य ही नही रही किन्तु इसके सफल प्रयोग से इस ग्रंथ में जैसा शब्दमाधुर्य, भाषा की प्राञ्जलता, रचनासौष्ठव और लालित्य प्राप्त होता है वैसा उन ग्रंथो मे कहाँ है ?

२ **विशिष्ट छन्द—**

वृत्तमौक्तिक मे जिन छंदो के लक्षण एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं उनमे से कतिपय छंद ऐसे हैं जिनका पृष्ठ ४१४ पर दी हुई सन्दर्भ-ग्रथ-

सूची के प्रसिद्ध छद.शास्त्र के २१ ग्रन्थो मे भी उल्लेख नही हैं और कतिपय छद ऐसे हैं जो केवल हेमचन्द्रीय छदोनुशासन, पिंगलकृत छद सूत्र, हरिहरकृत प्राकृतपिंगल और दु खभञ्जनकृत वाग्वल्लभ में ही प्राप्त होते हैं। इन विशिष्ट छंदो की वर्गीकृत तालिका इस प्रकार है :—

वृत्तमौक्तिक के विशिष्ट छन्द—

मात्रिक छन्द .—कामकला, हरिगीतकम्, मनोहर हरिगीतम्, अपरा हरिगीता, मदिरा सवया, मालती सवया, मल्ली सवया, मल्लिका सवया, माधवी सवया, मागधी सवया, घनाक्षर, अपर समगलितक और अपर सगलितक।

वर्णिक छन्द —१४ अक्षर – शरभी, अहिधृति; १६ अक्षर – सुकेसरम्, ललना, १७ अक्षर – मतगवाहिनी; १९ अक्षर – नागानन्द, मृदुलकुसुम; २० अक्षर – प्लवगभगमगल, अनवधिगुणगण, २१ अक्षर – ब्रह्मानन्द, निरुपमतिलक, २२ अक्षर – विद्यानन्द, शिखर, अच्युत, २३ अक्षर – दिव्यानन्द; कनकवलय; २४ अक्षर – रामानन्द, तरलनयन, २५ अक्षर–कामानन्द, मणिगुण, २६ अक्षर–कमलदल और विषमवृत्तो मे भाव तथा वैतालीय छदो मे नलिन और अपर नलिन।

इस प्रकार मात्रिक छंद १३ और वर्णिक छद २४ कुल ३७ छन्द ऐसे है जिनका अन्य छद·शास्त्रो मे उल्लेख नही है।

निम्नलिखित ११ छद केवल हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन एव वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है —

मात्रिक छन्द :—विगलितक, सुन्दरगलितक, भूषणगलितक, मुखगलितक, विलम्बितगलितक, समगलितक, विक्षिप्तिकागलितक, विषमितागलितक और मालागलितक।

वर्णिक छन्द—१३ अक्षर – सुद्युति और २१ अक्षर – रुचिरा।

१८ वर्ण का लीलाचन्द्र नामक छन्द प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है।

निम्नांकित १७ वर्णिक छंद वृत्तमौक्तिक और दु खभजन कवि रचित वाग्वल्लभ मे ही प्राप्त हैं।

८ अक्षर – जलद, ९ अक्षर – सुललित, १० अक्षर – गोपाल, ललितगति, ११ अक्षर – शालिनी-वातोर्म्युपजाति, बकुल; १३ अक्षर – वाराह, विमलगति; १४ अक्षर – मणिगण; १५ अक्षर – उडुगण; १७ अक्षर – लीलाधृष्ट; १८

अक्षर – उपवनकुसुम, २३ अक्षर – मल्लिका; २४ अक्षर – माधवी, २५ अक्षर – मल्ली, २६ अक्षर – गोविन्दानन्द और मागधी ।

दो नगण और आठ रगणयुक्त प्रचितक-नामक दण्डक का प्रयोग केवल छद.सूत्र और वृत्तमौक्तिक मे ही है ।

चौपैया नामक मात्रिक छद अन्य ग्रथो मे भी प्राप्त है । किन्तु जहाँ अन्य ग्रथो मे १२० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है वहाँ इस ग्रन्थ मे १२० मात्रा का एक पद और ४८० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है ।

इस वर्गीकरण से स्पष्ट है कि अन्य ग्रथो की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक मे छदो का वैशिष्टय और बाहुल्य है ।

३. छन्दो के नाम-भेद

प्रस्तुत ग्रथ मे ५० छद ऐसे हैं जिनका ग्रथकार ने प्राकृतपिंगल, आचार्य शभु एव तत्कालीन आधुनिक छदःशास्त्रियो के मतानुसार नाम-भेद दिये हैं । इन नामभेदो की तालिका ग्रथ के साराश मे और चतुर्थ परिशिष्ट (ख) मे देखी जा सकती है । इस प्रकार की नामभेदो की प्रणाली अन्य मूलग्रन्थो मे उपलब्ध नही है । हाँ, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञ टीका और वृत्तरत्नाकर की नारायणभट्टी टीका आदि कतिपय टीका-ग्रन्थों में यह प्रणाली अवश्य लक्षित होती है किन्तु इतनी विपुलता के साथ नही ।

इससे यह तो स्पष्ट है कि ग्रन्थकार ने प्राचीन एव अर्वाचीन अनेक छन्द शास्त्रो का आमन्थन कर प्रस्तुत ग्रन्थ द्वारा नवनीत रखने का प्रयास किया है ।

४ विरुदावली और खण्डावली

ग्रन्थ के द्वितीय-खण्ड के नवम प्रकरण मे विरुदावली, दसवे प्रकरण मे खण्डावली और ग्यारहवे प्रकरण मे इन दोनो के दोपो का वर्णन है । विरुदावली मे ३४ कलिका, ४० विरुदावली और २ खण्डावली के लक्षण एव उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं । यह विरुदावली कवि की मौलिक-सर्जना प्रतीत होती है, क्योकि अन्य छन्द-ग्रथों मे विरुदावली के भेद और लक्षण तो दूर रहे किन्तु इसका नामोल्लेख भी नही है । हाँ, इतना अवश्य है कि कवि ने २६ विरुदावलियो के उदाहरण रूपगोस्वामी प्रणीत गोविन्दविरुदावली से दिये हैं, अत. यह अनुमान किया जा सकता है कि रूपगोस्वामी के पूर्व भी इसकी परम्परा विविध-रूपो में अवश्य विद्यमान थी, अन्यथा इतने भेद और प्रभेद कैसे प्राप्त

हो सकते थे ? संभव है, इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ भी अवश्य रहा हो। कतिपय स्फुट विरुदावलियां अवश्य प्राप्त होती हैं तथा शोध करने पर और भी प्राप्त होना संभव है किन्तु इनके भेद, प्रभेद उदाहरणो के साथ सकलन अद्यावधि अप्राप्त है। कवि ने इस विच्छिन्नप्राय परम्परा को अक्षुण्ण रख कर जो साहित्य जगत् को अमूल्य देन दी है वह श्लाघ्य ही नही महत्त्वपूर्ण भी है।

अद्यावधि जो सस्कृत-वाङ्मय प्रकाश मे आया है उसमे विरुदावली-साहित्य पर नही के समान प्रकाश पडा है। अतः शोध-विद्वानो का कर्त्तव्य है कि वे इस अछूते और वैशिष्टयपूर्ण विरुदावली-साहित्य पर अनुसधान कर इसके महत्त्व पर प्रकाश डालें।

५. यति एव गद्य प्रकरण—

समग्र छन्द.शास्त्रियो ने मात्रिक और वर्णिक पद्य के पदान्त और पदमध्य मे यतिविधान आवश्यक माना है। वृत्तमौक्तिककार ने भी यति प्रकरण मे इस का सुन्दर विश्लेषण और विवेचन किया है। इनके मत से काव्य मे मधुरता के लिये यति का बन्धन आवश्यक है। यति से काव्य मे सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। यति के बिना काव्य श्रेष्ठतर नही हो सकता[1]।

ग्रन्थकार के मत से भरत, पिंगल और जयदेव सस्कृत-साहित्य मे यति आवश्यक मानते हैं और श्वेतमाण्डव्य आदि मुनिगण यति का बन्धन स्वीकार नही करते हैं[2]। जयकीर्त्ति के मतानुसार पिंगल वसिष्ठ, कौण्डिन्य, कपिल, कम्बलमुनि यति को अनिवार्य मानते है और भरत, कोहल, माण्डव्य, अश्वतर, सैतव आदि कतिपय आचार्य यति को अनावश्यक मानते हैं—

> वाञ्छन्ति यतिं पिङ्गल-वसिष्ठ-कौण्डिन्य-कपिल-कम्बलमुनयः।
> नेच्छन्ति भरत-कोहल-माण्डव्याश्वतरसैतवाद्या. केचित्॥
>
> [छन्दोनुशासन, १ १३]

स्वयम्भूछन्द मे लिखा है—

> जयदेवपिंगला सक्कयमि दुच्चिय जइ समिच्छति।
> मडव्वभरहकासवसेयवपमुहा न इच्छति॥१,७१॥
>
> [जयदेवपिंगलौ सस्कृते द्वावेव यतिं समिच्छन्ति।
> माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुखा न इच्छन्ति॥]

अर्थात् जयदेव और पिंगल यति मानते हैं और माण्डव्य, भरत, काश्यप, सैतव आदि नही मानते हैं।

१–पृ. २०४ पद्य ८ २–पृ २०४ पद्य १०

भरत के नाट्यशास्त्र के छन्द-प्रकरण मे पादान्त यति तो प्राप्त है ही साथ ही पदमध्ययति भी प्राप्त है।[1] ऐसी अवस्था मे जयकीर्त्ति एव स्वयम्भू-छन्दकार ने भरत को यतिविरोधी कैसे माना, विचारणीय है! वृत्तमौक्तिककार ने भरत को यतिसमर्थक ही माना है।

यति का सागोपाग विश्लेषण छन्दःसूत्र की हलायुधटीका, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की स्वोपज्ञटीका और वृत्तमौक्तिक मे ही प्राप्त है। अन्य छन्द-शास्त्रो मे कतिपय छन्द-शास्त्रियो ने इसका सामान्य-वर्णन सा ही किया है।

गद्य काव्य-साहित्य का प्रमुख अग है। प्रस्तुत ग्रन्थ मे इसके भेद, प्रभेदो के लक्षण और प्रत्येक के उदाहरण प्राप्त हैं। साथ ही अन्य आचार्यो के मतो का उल्लेख कर उनके मतानुसार ही उदाहरण भी ग्रथकार ने दिये हैं। इस प्रकार गद्य-काव्य का विवेचन अन्य छदग्रथो मे प्राप्त नही है। सभव है इसे काव्य का अग मानकर साहित्य-शास्त्रियो के लिये छोड दिया हो!

६. रचना-शैली—

छन्दशास्त्र की प्राचीन और अर्वाचीन रचनाशैली अनेक रूपो मे प्राप्त होती है जिनमे तीन शैलिया मुख्य हैं:—१. गद्य सूत्र रूप, २ कारिका-शैली (लक्षण सम्मत चरण रूप) और ३. पूर्णपद्य-शैली।

गद्यसूत्ररूप शैली मे छन्द.सूत्र, रत्नमञ्जूषा, जानाश्रयी छन्दोविचिति और हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की रचनाये आती है।

कारिकारूपशैली मे जयदेवछन्दस्, स्वयम्भूछन्द, कविदर्पण, जयकीर्त्ति-कृत छन्दोनुशासन, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमजरी और वाग्वल्लभ की रचनाये हैं।

पूर्णपद्यशैली मे प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण, श्रुतबोध और वृत्तमुक्तावली की रचनाये हैं।

भरत-नाट्यशास्त्र मे लक्षण अनुष्टुप् छन्द मे है, वृत्तमुक्तावली मे मात्रिक छन्दो के लक्षण गद्य मे हैं और वाग्वल्लभ मे मात्रिक-छन्दो के लक्षण पूर्ण पद्यो मे है।

छन्द सूत्र, रत्नमञ्जूषा, जानाश्रयी छन्दोविचिति, जयदेवछन्दस्, जयकीर्त्तीय छन्दोनुशासन, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन, कविदर्पण, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमञ्जरी एव वाग्वल्लभ मे लक्षणमात्र प्राप्त है, स्वरचित उदाहरण प्राप्त नही है। स्वयम्भूछद, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की टीका और प्राकृतपिंगल मे कतिपय

१-नाट्यशास्त्र (१६, ३६)

स्वरचित एवं अन्य कवियो के उदाहरण प्राप्त है। नाटयशास्त्र, वाणीभूषण और वृत्तमुक्तावली मे ग्रन्थकार रचित उदाहरण प्राप्त हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना-शैली हमे दो रूपो मे प्राप्त होती है—१. पूर्णपद्य-शैली और २. कारिकाशैली। प्रारम्भ से द्वितीय-खण्ड के विषमवृत्तप्रकरण तक मात्रिक एव वर्णिक छन्दो के लक्षण पूर्णपद्यशैली मे हैं जिससे छन्द का लक्षण और यति आदि का विश्लेषण विशद और सरल रूप मे हो गया है। वैतालीय छन्द तथा विरुदावली-खण्डावली-प्रकरण कारिकाशैली मे होने से विषय को स्पष्ट करने के लिये ग्रन्थकार ने व्याख्या का आधार लिया है। यह हम पहले ही कह आये हैं कि ग्रन्थ के मूललेखक चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास द्वितीय-खण्ड के रचनाकाल के मध्य में हो गया था और तदुपरान्त उसकी इच्छा के अनुसार उनके पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट ने ग्रन्थ को पूर्ण करने का कार्य पूर्ण मनोयोग के साथ अपने हाथ मे लिया था। पचम प्रकरण मे तो उन्होने जैसे तैसे ही लक्षण स्पष्ट करने के लिये पद्यशैली को अपनाये रखनेका प्रयास किया प्रतीत होता है परन्तु छठे प्रकरण (वैतालीय) पर आते ही दोनो लेखको के व्यक्तित्व की भिन्नता का प्रतिबिम्ब हमे शैलीगत भिन्नता मे मिल जाता है, क्योकि यहा से लेखक ने कारिका-शैली को इस कार्य के लिये सुविधाजनक समझ कर अपना लिया है और अन्त तक उसी का निर्वाह उन्होने किया है।

कवि ने स्वप्रणीत मुक्तक पद्यो के माध्यम से ही समग्र छन्दो के उदाहरण दिये हैं। प्रत्युदाहरणो में अवश्य ही पूर्ववर्ती कवियो के पद्य उद्धृत किये हैं। हा, विरुदावलीप्रकरण में स्वप्रणीत उदाहरण एक-एक चरण के ही दिये हैं।

लक्षणो के सीमित दायरे में बद्ध रहने पर भी पारिभाषिक शब्दावली के माध्यम से छन्दो के अनुरूप ही शब्दो का चयन कर कवि ने जो लयात्मक सौन्दर्य, माधुर्य और चमत्कार का सृजन किया है वह अनूठा हैं। यथा—

पूर्णपद्यशैलो का उदाहरण—

हारद्वय स्फुरदुरोजयुतं दधाना,
हस्त च गन्धकुसुमोज्ज्वलकंकणाढ्यम्।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥२९७॥ [पृ० ११३]

कारिकाशैली का उदाहरण—

अस्य युग्म रचिताऽपरान्तिका ॥२७॥

[व्या.] अस्य-प्रवृत्तकस्य समपादकृता'—'समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादै रचिताऽपरान्तिका ।

उदाहरण मुक्तक पद्यो मे हैं। इसमें छन्द-नामो के अनुरूप ही शृंगार, वीर, रौद्र और शान्त आदि रसो के अनुकूल जिस शाब्दिक गठन, आलकारिकता और लाक्षणिकता का कवि ने प्रयोग किया है वह भी दर्शनीय है । उदाहरण के तौर पर दो पद्य प्रस्तुत हैं—

मनोहस-नामानुरूप उदाहरण—

तनुजाग्निना सखि मानस मम दह्यते,
तनुसन्धिरुग्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधरं च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृह कृपया सदा वनमालिमत् ॥३४४॥ [पृ० १२३]

सिंहास्यछन्द के अनुरूप उदाहरण—

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
भिद्यद् ब्रह्माण्ड व्याकुर्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रैः ।
दत्तालीकान्युन्मिश्रं निर्यद् विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माक रक्षां कुर्याद् घोर (वीरः) सिंहास्यः ॥२९६॥
[पृ० ११३]

स्पष्ट है कि उल्लिखित ग्रन्थो की अपेक्षा इस ग्रन्थ की रचनाशैली विशद, स्पष्ट, सरल और विविधता को लिये हुये है ।

७. छन्दजाति—

अद्यावधि उपलब्ध समस्त छन्दःशास्त्रियो ने एक अक्षर से छब्बीस अक्षर-पर्यन्त के वर्णिक छन्दो की निम्नजाति-सज्ञा स्वीकार की है—

उक्ता	=	१ अक्षर	बृहती	=	९ अक्षर
अत्युक्ता	=	२ अक्षर	पंक्ति	=	१० अक्षर
मध्या	=	३ अक्षर	त्रिष्टुप्	=	११ अक्षर
प्रतिष्ठा	=	४ अक्षर	जगती	=	१२ अक्षर
सुप्रतिष्ठा	=	५ अक्षर	अतिजगती	=	१३ अक्षर
गायत्री	=	६ अक्षर	शक्वरी	=	१४ अक्षर
उष्णिक्	=	७ अक्षर	अतिशक्वरी	=	१५ अक्षर
अनुष्टुप्	=	८ अक्षर	अष्टि	=	१६ अक्षर

अत्यष्टि	=	१७ अक्षर	आकृति	=	२२ अक्षर
धृति	=	१८ अक्षर	विकृति	=	२३ अक्षर
अतिधृति	=	१९ अक्षर	सस्कृति	=	२४ अक्षर
कृति	=	२० अक्षर	अतिकृति	=	२५ अक्षर
प्रकृति	=	२१ अक्षर	उत्कृति	=	२६ अक्षर

किन्तु प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक मे यह परम्परा दृष्टि-गोचर नही होती है। इन तीनो ग्रन्थो मे एकाक्षर, द्वयक्षर, त्र्यक्षर आदि संज्ञा का ही प्रयोग मिलता है। सभवतः मध्ययुगीन हिन्दी-परम्परा के निकट आ जाने के कारण ही इन ग्रन्थकारो ने वैदिक-परम्परा का त्याग कर सामान्य प्रणालिका अपनाई है।

८. विषयसूची—

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड के बारहवें प्रकरण मे दोनों खण्डों के प्रत्येक प्रकरणस्य प्रतिपाद्य विषय की विस्तृत अनुक्रमणिका ग्रन्थकार ने दी है। वर्ण्य विषय के साथ साथ छन्द-नाम, नामभेद और प्रत्येक अक्षर की प्रस्तारसख्या का भी उल्लेख है। इस प्रकार की अनुक्रमणिका अन्य छन्द-ग्रन्थो में प्राप्त नही है, केवल प्राकृतपिंगल मे प्रथम परिच्छेद के अत मे मात्रिक-छन्द-सूची और द्वितीय परिच्छेद के अन्त में वर्णिकवृत्त-सूची गद्य मे प्राप्त है। इस प्रकार की वृहत्सूची जिस विधिवत् ढग से दी गई है उससे यह प्रमाणित होता है कि लेखक का ज्ञान बहुत विस्तृत रहा है और उसने छन्द शास्त्र के प्रतिपादन मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया है और वह इसमें सफल भी हुआ है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त छन्द-ग्रन्थो के साथ तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि सभी दृष्टियो से अन्य ग्रन्थो की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक छन्द.शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ एव प्रौढ ग्रन्थ है। साथ ही मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य मे जो स्थान और महत्व प्राकृतपिंगल का है उससे भी अधिक महत्व इस ग्रन्थ का है क्यो कि जहां प्राकृतपिंगल मे सवैया छन्द के उद्भव के अंकुर प्राप्त होते हैं वहां वृत्तमौक्तिक मे सवैया (मदिरा, मालती आदि ६ भेद) और घनाक्षरी छन्द सोदाहरण प्राप्त है। मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य की दृष्टि से इसमे वे सब छन्द प्राप्त हैं जिनका प्राय. प्रयोग तत्कालीन कवि कर रहे थे। अत. सस्कृत और हिन्दी दोनो के साहित्यिक दृष्टिकोण से वृत्तमौक्तिक का छन्द.शास्त्र में विशिष्ट स्थान और महत्व सुनिश्चित ही है।

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल का आलोडन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक के मात्रावृत्तनामक प्रथम खण्ड मे न केवल प्राकृतपिंगल का आधार ही लिया है अपितु पाचवा और छठा प्रकरण तथा कतिपय स्थलो को छोड़ कर पूर्णत: प्राकृतपिंगल की छाया या अनुवाद के रूप मे ही रचना की है। मुख्य अतर है तो केवल इतना ही है कि प्राकृतपिंगल की रचना प्राकृत-अपभ्रंश मे है तो वृत्तमौक्तिक की रचना सस्कृत मे है। दोनों ही ग्रन्थो की समानतायें इस प्रकार हैं—

१. दोनो ही ग्रन्थ मात्रावृत्त और वर्णवृत्त-नामक दो परिच्छेदो मे विभक्त है। वृत्तमौक्तिक मे परिच्छेद के स्थान पर 'खण्ड' शब्द का प्रयोग किया गया है।

२ प्रारम्भ से अन्त तक विपयक्रम और छन्द क्रम एकसदृश हैं जो विषय सूची से स्पष्ट है।

३. रचनाशैली मे पारिभाषिक (साकेतिक) शब्दावली और उसका प्रयोग एक-सा ही है।

४ गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद-नामक छन्दो के प्रस्तारभेद और नाम एकसमान हैं। नामो मे यत्किंचित् अन्तर अवश्य है, जो चतुर्थ परिशिष्ट (क) मे द्रष्टव्य है। दोनो मे भेदो के लक्षणमात्र ही हैं, उदाहरण नही हैं। वृत्तमौक्तिक मे गाथा-छन्द के २७ के स्थान पर २५ भेद स्वीकार किये हैं।

५ रड्डा छन्द के सातो भेदो के उदाहरण दोनो मे प्राप्त नही हं।

६ लक्षणो की शब्दावली भी प्राय समान है। उदाहरण के लिये कुछ पद्य प्रस्तुत हैं—

प्राकृतपिंगल	वृत्तमौक्तिक
दीहो संजुत्तपरो	दीर्घ. सयुक्तपरः
बिंदुजुओ पाडिओ य चरणते ।	पादान्तो वा विसर्गविन्दुयुत. ।
स गुरू वंक दुमत्तो	न गुरुर्वक्रो द्विकलो
अण्णो लहु होय सुद्ध एककलो ॥२॥	लघुरन्य शुद्ध एककल. ॥६॥
× ×	× ×

जह दीहो वि अ वण्णो
लहु जीहा पढइ होइ सो वि लहू ।
वण्णोवि तुरिअपढिओ
दोत्तिण्णि वि एक्क जाणेहु ॥ ८ ॥

यद्यपि दीर्घं वर्णं
जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघु
वर्णास्त्वरित पठितान्
द्वित्रानेक विजानीत ॥ ११ ॥

+ +

जेम ण सहइ कणअतुला
तिलतुलिअ अद्धअद्धेण ।
तेम ण सहइ सवणतुला
अवछद छदभगेण ॥ १० ॥

कनकतुला यद्वन्न हि
सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्व—
च्छन्दोभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥

+ +

हर ससि सूरो सक्को
सेसो अहि कमल बभ कलि चदो ।
धुअ धम्मो सालिअरो
तेरह भेआ छमत्ताण ॥ १५ ॥

हर-शशि-सूर्या शक्र·
शेपोप्यहिकमलधातृकलिचन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसञ्ज्ञाः
षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा·॥१६॥

+ +

दिअवरगण धरि जुअल
पुण बिअ तिअ लहु पअल
इम विहि विहु छउ पअणि
जिम सुहइ सुससि रअणि
इह रसिअउ मिअणगणि
एअदह कल गअगमणि ॥८६॥

द्विजवरयुगलमुपनय
दहनलघुकमिह रचय
इति विधिशरभववदन-
चरणमिह कुरु सुवदन
इति हि रसिकमनुकलय
भुजगवर कथितमभय ॥१०॥

[द्वितीय प्रकरण]

+ +

सोलह मत्तह वे वि पमाणहु
वीअ चउत्थहिं चारिदहा ।
मत्तह सट्ठि समग्गल जाणहु
चारि पआ चउवोल कहा ॥१३१॥

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वमपि षष्टिकल विचारय,
चौवोलाख्य फणिकथितम्॥७॥

[तृतीय प्रकरण]

+ +

सगणा भगणा दिअगणइ
मत्त चउद्दह पअ पलई ।
सठइ वको विरइ तहा
हाकलि रूअउ एहु कहा ।।१७२।।

सगणैर्भगणैर्नलघुयुतैः
सकल चरण प्रविरचितम् ।
गुरुकेन च सर्वं कलित
हाकलिवृत्तमिद कथितम्।।२२।।
[चतुर्थ प्रकरण]

+ + + +

प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक मे निम्न असमानतायें हैं—

१. प्राकृतपिंगलकार ने छन्दो के उदाहरण पूर्ववर्ती कवियो के दिये हैं और वृत्तमौक्तिककार ने समग्र उदाहरण स्वरचित दिये हैं, प्रत्युदाहरण पूर्ववर्ती कवियो के अवश्य दिये हैं।

२ शिखा, कामकला, रुचिरा, हरिगीत के भेद, मदिरा सवैया, मालती सवैया, मल्ली सवैया, मल्लिका सवैया, माधवी सवैया, मागधी सवैया, घनाक्षर और गलितक प्रकरण के १७ छन्द विशिष्ट हैं जो प्राकृतपिंगल मे प्राप्त नही है।

३ प्रथम खण्ड छह प्रकरणो मे विभक्त है ।

वृत्तमौक्तिक के द्वितीय खड की रचना प्राकृतपिंगल के अनुकरण पर नही है। रचना-शैली, शब्दावली, प्रकरण आदि सब पृथक् हैं। प्राकृतपिंगल के द्वितीय परिच्छेद मे केवल १०४ वर्णिक छन्द हैं और वृत्तमौक्तिक मे २६५ वर्णिक छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्धसम, विषम, वैतालीय छन्द, यति-प्रकरण, गद्य-प्रकरण और विरुदावली आदि कई विशिष्ट प्रकरण हैं जो कि अन्यत्र दुर्लभ हैं।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण

प्राकृतपिंगलकार हरिहर के पौत्र, रविकर के पुत्र दामोदरप्रणीत वाणीभूषण प्राकृतपिंगल का सस्कृत रूपान्तर है और इस ग्रथ का वृत्तमौक्तिककार ने भी यथेच्छ प्रयोग किया है। प्रत्युदाहरणो मे सुन्दरी, तारक, चक्र, चामर, निशिपालक, चञ्चला, मञ्जीरा, चर्चरी, क्रीडाचन्द्र, चन्द्र, धवल, गण्डका एव दोपक (मात्रिक) के उदाहरणो का तो प्रयोग किया ही है किन्तु रुचिरा (मात्रिक) और किरीट (वर्णिक) छन्द के तो लक्षण एव उदाहरण भी ज्यो के त्यो उद्धृत कर दिये हैं। अत. यह निसकोच मानना होगा कि पूर्ववर्ती वाणीभूषण का वृत्तमौक्तिककार ने पूर्णतया अनुकरण किया है।

वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण दोनों की समानताओ का भी उल्लेख करना यहा अप्रासगिक न होगा ।

(१) दोनो ही ग्रथ मात्रिकवृत और वर्णिकवृत्त नामक दो परिच्छेदो मे विभक्त हैं ।

(२) विषयक्रम और छन्दक्रम दोनो का समान है ।

(३) पारिभाषिक शब्दावली का दोनो ने पूर्ण प्रयोग किया है ।

(४) दोनो ग्रथो मे छन्दो के लक्षण कारिका-रूप मे न होकर लक्षणसम्मत पूर्ण-पद्यो मे हैं ।

(५) लक्षण एव उदाहरण दोनो के स्वरचित है ।

(६) लक्षणो की शब्दावली भी एक-सदृश है । तुलना के लिये कुछ स्थल द्रष्टव्य है—

वाणीभूषण	वृत्तमौक्तिक
शिवशशिदिनपतिसुरपति- शेषाहिसरोजधातृकलिचन्द्रा. । ध्रुवधर्मौ शालिकर: षण्मात्रे स्युस्त्रयोदशविभेदा. ॥९॥	हरशशिसूर्या शक्र शेषोप्यहिकमलधातृकलिचन्द्रा· । ध्रुवधर्मशालिसज्ञा: षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा ॥१९॥
इन्द्रासनमथ शूर- श्चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् । अहिगणपापगणाविति पञ्चकलाना च नामानि ॥१०॥	इन्द्रासनमथ सूर्य:, चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् । अहिगणपापगणाविति पञ्चकलस्यैव सज्ञा स्यु ॥२०॥
+ +	+ +
तातपितामहदहना: पदपर्यायाश्च गण्डबलभद्रौ । जङ्घायुगल रतिरि- त्यादिगुरोश्चतुष्कले सज्ञा: ॥१७॥	दहनपितामहताता: पदपर्यायाश्च गण्डबलभद्रौ । जङ्घायुगलं रतिरि- त्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले सज्ञा: ॥२२॥
ध्वजचिह्नचिरचिरालय- तोमरतुम्बुरुकचूतमाला च । रसवासपवनवलया लघ्वादित्रिकलनामानि ॥१८॥	ध्वजचिह्नचिरचिरालय- तोमरपत्राणि चूतमाले च । रसवासपवनवलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥२३॥
+ +	+ +

रोलावृत्तमवेहि
नागपिङ्गलकविभणित,
प्रतिपदमिह चतुरधिक-
कलविंशतिपरिगणितम् ।
एकादशमधि विरति-
रखिलजनचिन्ताहरणं,
सुललितपदमदकारि
विमलकविकण्ठाभरणम् ॥५६॥

या चरणे कलानां
चतुरधिकविंशैर्गदिता,
सा किल रोला भवति
नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरति-
रखिलजनचिन्ताहरणा
सुललितपदकुलकलितं-
विमलकविकण्ठाभरणा ॥१६॥
[द्वितीय प्रकरण]

+ +

अक्षरगुरुलघुनियमविरहित
भुजगराजपिङ्गलपरिगणितम् ।
भवति सुगुम्फितषोडशकलक,
वाणीभूषणपादाकुलकम् ॥७५॥

+ +

गुरुलघुकृतगणनियमविरहित,
फणिपतिनायकपिंगलगदितम् ।
रसविधुकलयुतयमकितचरण
पादाकुलक श्रुतिसुखकरणम् ॥५॥
[तृतीय प्रकरण]

+ +

षट्कलमादौ तदनु
चतुस्तुरग परिसतनु,
शेषे द्विकल कलय
चतुष्पदमेव सचिनु ।
छन्द. षट्पदनाम
भवति फणिनायकगीत,
रुद्रे विरतिमुपैति
नृपतिसुखकरमुपनीतम् ।
उल्लालयुगलमत्र च
भवेदष्टाविंशतिकलमित,
शृणु पञ्चदशे विरतिस्थित-
पठनादपि पण्डितजनहितम् ॥७७॥

+ +

षट्पदवृत्त कलय
सरसकविपिंगलभणित,
एकादश इह विरति-
रथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु
चतुस्तुरग परिसतनु,
शेषे द्विकल रचय
चतुष्पदमेव सचिनु ।
उल्लालद्वयमत्र हि
भवेदष्टाविंशतिकलयुत,
यदि पञ्चदशे विरतिस्थित
पठनादपि गुणिगणहितम् ॥५३॥
[द्वितीय प्रकरण]

+ +

द्वितीय परिच्छेद
नरेन्द्रमुदेहि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२१॥
+ +

द्वितीय-खण्ड--१ वृत्तनिरूपण प्रकरण
नरेन्द्रविराजि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२५॥
+ +

द्विजगणमाहर, भगणमुपाहर ।
भणति सुवासकमिति गुणनायक ।।५६।।

द्विजमिह धारय, भमनु च कारय ।
भवति सुवासकमिति गुणलासक ।।७२।।

\+ +

विनिधेहि चतु. सगण रुचिर,
रविसख्यकवर्णकृत सुचिरम् ।
फणिनायकपिङ्गलसंभणित
कुरु तोटकवृत्तमिद गणितम् ।।१३५।।

यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमत
रविसम्मितवर्ण इह प्रमितः ।
अहिभूपतिना फणिना भणित
सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ।।१९६।।

\+ +

पादयुग कुरु नूपुरसयुत-
मत्र कर वररत्नमनोहर,
वज्रयुग कुसुमद्वयसगत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिद परिभावय ।।२२१।।

पादयुग कुरु नूपुरराजित-
मत्र कर वररत्नमनोहर,
वज्रयुग कुसुमद्वयसङ्गत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिंगलपन्नगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिदं परिभावय ।।५८१।।

\+ +

वाणीभूषण की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक मे निम्नलिखित विशेषताये पाई जाती हैं :—

(१) वाणीभूषण मे केवल ४३ मात्रिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक मे ७९ मूल छन्द और २०९ छन्द-भेद है। निम्न छन्दो का प्रयोग वाणीभूषणकार ने नही किया है .—

रसिका, काव्य, उल्लाल, चौबोला, झुल्लणा, शिखा, दण्डकला, कामकला, हरिगीत के भेद और पचम सवैया-प्रकरण तथा छठा गलितक-प्रकरण के पूर्ण छन्द ।

(२) गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य, और षट्पद के प्रस्तारभेद, नाम एव लक्षण तथा रड्डा छन्द के सातो भेदो के लक्षण वाणीभूषण मे नही हैं ।

(३) वाणीभूषण में ११२ समवर्णिक छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक मे २६५ छन्द है। इसका वर्गीकरण चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखा जा सकता है ।

(४) वृत्तमौक्तिक मे ७ प्रकीर्णक, ८ दण्डक, ८ विषम १२ वैतालीय, ७४ विरुदावली और २ खण्डावली छन्दो के लक्षण एव उदाहरण प्राप्त हैं जब कि वाणीभूषण मे इन छन्दो का उल्लेख भी नही है।

(५) वाणीभूषण मे अर्द्धसम छन्दो मे केवल पुष्पिताग्रा छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक मे १० छन्द हैं।

(६) वाणीभूषण मे यतिनिरूपण और गद्य-निरूपण-प्रकरण नही है।

(७) वृत्तमौक्तिक मे दोनो खण्डो के प्रकरणो की सूची है जिसमे छन्द-नाम, नामभेद एव प्रस्तार सख्या दी है; जब कि वाणीभूषण मे सूची नही है।

अत इस तुलना से स्पष्ट है कि वाणीभूषण एक लघुकाय छन्दोग्रन्थ है जब कि वृत्तमौक्तिक छन्दो का आकर और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविरुदावली

वृत्तमौक्तिक के नवम विरुदावली प्रकरण मे चण्डवृत्तो के प्रत्युदाहरण देते हुए ग्रथकार ने श्री रूपगोस्वामी कृत गोविन्दविरुदावली का मुक्त हृदय से प्रयोग किया है। गोविन्दविरुदावली के एक या दो ही उदाहरण ग्रहण नही किये हैं अपितु समग्र विरुदावली ही उद्धृत कर दी है, केवल गोविन्दविरुदावली का मगलाचरण और उपसहार मात्र ही अवशिष्ट रहा है।[1]

विरुदावली छन्द-क्रम मे दोनो में अन्तर है, जो तालिका से स्पष्ट है—

गोविन्दविरुदावली		वृत्तमौक्तिक		
क्रम-संख्या	नाम	क्रम-सख्या	नाम	पृष्ठाक
१	वर्द्धित	४	वर्द्धित	२२२
२	वीरभद्र	६	वीर (वीरभद्र)	२२५
३	समग्र	५	रण (समग्र)	२२४

१–आदि—इयं मङ्गलरूपा स्याद् गोविन्दविरुदावली।
यस्याः पठनमात्रेण श्रीगोविन्दः प्रसीदति॥
अन्त— व्युत्पन्नः सुस्थिरमतिर्गतग्लानिर्गलस्वनः।
भक्त कृष्णे भवेद् यः स विरुदावलिपाठकः॥
य. स्तौति विरुदावल्या मथुरामण्डले हरिम्।
अनया रम्यया तस्मै तूर्णमेष प्रसीदति॥

४	अच्युत	३	अच्युत	२२१
५	उत्पल	९	उत्पल	२२८
६	तुरङ्ग	२०	तुरग	२३४
७	गुणरति	१०	गुणरति	२२९
८	मातङ्गखेलित	८	मातङ्गखेलित	२२६
९	तिलक	२	तिलक	२२०
१०	पङ्केरुह	२१	पङ्केरुह	२३५
११	सितकञ्ज	२२	सितकञ्ज	२३८
१२	पाण्डूत्पल	२३	पाण्डूत्पल	२३९
१३	इन्दीवर	२४	इन्दीवर	२४०
१४	अरुणाम्भोरुह	२५	अरुणाम्भोरुह	२४२
१५	फुलाम्बुज	२६	फुल्लाम्बुज	२४३
१६	चम्पक	२७	चम्पक	२४५
१७	वञ्जुल	२८	वञ्जुल	२४६
१८	कुन्द	२९	कुन्द	२४७
१९	बकुलभासुर	३०	बकुलभासुर	२४८
२०	बकुलमगल	३१	बकुलमगल	२४९
२१	मञ्जरीकोरक	३२	मजरीकोरक	२५१
२२	गुच्छ	३३	गुच्छक	२५२
२३	कुसुम	३४	कुसुम	२५३
२४	दण्डकत्रिभगी कलिका	१	दण्डकत्रिभगी कलिका	२५५
२५	विदग्धत्रिभगी कलिका	२	संपूर्णा विदग्धत्रिभगी-कलिका	२५६
२६	मिश्रा कलिका	३	मिश्रकलिका	२५८
२७	साप्तविभक्तिकी कलिका	१	साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
२८	अक्षमयी कलिका	२	अक्षमयी कलिका	२६२
२९	सर्वलघुकलिका	३	सर्वलघुक-कलिका	२६४

गोविन्दविरुदावली के अतिरिक्त जिन चण्डवृत्तो के लक्षण वृत्तमौक्तिक में दिये गये हैं उनके उदाहरण एक-एक चरण के ही प्राप्त हैं, पूर्ण उदाहरण या प्रत्युदाहरण प्राप्त नही हैं। इन चण्डवृत्तो की तालिका इस प्रकार है—

१. पुरुषोत्तम, ७ शाक, ११, कल्पद्रुम, १२. कन्दल, १३. अपराजित, १४ नर्त्तन, १५ तरत्समस्त, १६. वेष्टन, १७ अस्खलित और १९. समग्र ।

पल्लवित-नामक विरुदावली गोविन्दविरुदावली मे नही है। चन्द्रशेखरभट्ट ने इसका प्रत्युदाहरण गोविन्दविरुदावली में प्रदत्त फुल्लाम्बुज के उदाहरणस्थ अश का दिया है।

वृत्तमौक्तिक मे चण्डवृत्त के ३४ भेद, त्रिभगी-कलिका के ३ भेद और विरुदावली के तीन भेद माने हैं जब कि गोविन्दविरुदावली मे इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

चण्डवृत्त-कलिका के दो भेद है—१ नख और २ विशिख ।

नख के ९ भेद है—१. वर्धित, २ वीरभद्र, ३. समग्र, ४. अच्युत, ५. उत्पल ६ तरङ्ग, ७ गुणरति, ८ मातगखेलित और ९. तिलक ।

विशिख के ११ भेद हैं—१ पङ्केरुह, २ सितकञ्ज, ३. पाण्डूत्पल, ४ इन्दीवर, ५ अरुणाम्भोरुह, ६ फुल्लाम्बुज, ७. चम्पक, ८. वञ्जुल, ९. कुन्द, १० बकुलभासुर और ११. बकुलमगल ।

द्विगादिगणवृत्त-कलिका मजरी के तीन भेद हैं—१ मञ्जरी-कोरक, २. गुच्छ और ३ कुसुम ।

त्रिभगी-कलिका के दो भेद हैं—१ दण्डकत्रिभगी-कलिका और २. विदग्ध-त्रिभगी-कलिका ।

मिश्रकलिका के ४ भेद हैं—१ मिश्राकलिका, २. साप्तविभक्तिकी कलिका, ३ अक्षमयी-कलिका और ४ सर्वलघु-कलिका ।

इस प्रकार गोविन्दविरुदावली मे विरुदावली के कुल २९ भेदो का दिग्दर्शन है तो वृत्तमौक्तिक में ४० विरुदावलियो और ३४ कलिकाओ का निरूपण है।

वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रंथ में चन्द्रशेखरभट्ट ने छन्दो के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन-जिन ग्रन्थकारो और जिन-जिन ग्रन्थो का उल्लेख किया है उनमे से कतिपय ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त हैं। अप्राप्त ग्रन्थो की अक्षरानुक्रम से तालिका इस प्रकार है—

सख्या	ग्रन्थ-नाम	ग्रन्थकार	उल्लेख-पृष्ठाङ्क
१	उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१०,१३,१६ आदि

२	कृष्णकुतूहल-महाकाव्य	रामचन्द्र भट्ट	१०५,१०७ आदि
३	दशावतारस्तोत्र	,,	१२९
४	नन्दनन्दनाष्टक	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१४४
५	नारायणाष्टक	रामचन्द्र भट्ट	१६७
६	पवनदूतम्	चन्द्रशेखर भट्ट	१३६
७	पाण्डवचरित-महाकाव्य	,,	९२,१२१ आदि
८	शिको-काव्य		१५६
९	शिवस्तुति	लक्ष्मीनाथ भट्ट	४५
१०	सुन्दरीध्यानाष्टक	,,	१४४

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थल हैं जिनमे केवल ग्रन्थकार के नाम हैं और वर्ण्य विषय का सकेत है किन्तु उनके ग्रन्थों का कोई उल्लेख नही मिलता।

१	राक्षसकवि	दक्षिणानिलवर्णन	१५३
२	लक्ष्मीनाथभट्ट	खड्गवर्णन	१६०
३	,,	देवीस्तुति	४३
४	शम्भु	छन्द:शास्त्र	१०९,१३९,१९७आदि

वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका मे (पृ. १४५) पर शम्भु-प्रणीत छन्दश्चूडामणि ग्रन्थ का उल्लेख है। सभवत यही शम्भु हो ! किन्तु ग्रन्थ अप्राप्त है।

मालती छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये भारवि रचित निम्न पद्य दिया है—

अयि विजहीहि दृढोपगूहन, त्यज नवसङ्गमभीरु वल्लभम्।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते, वरतनु सम्प्रवदन्ति कुक्कुटा.॥ पृ. १००

इसका उल्लेख छन्दोमञ्जरी (पृ ५६) मे भी है किन्तु भारवि कृत किरातार्जुनीय काव्य (मुद्रित) मे यह पद्य प्राप्त नही है। अतः भारवि कृत किस ग्रन्थ का यह पद्य है, अन्वेषणीय है।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें

ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ मे ६७१ छन्दो के लक्षण एव उदाहरणो का निरूपण किया है। इन छन्दो के अतिरिक्त मैंने ग्रथान्तरो से पाद-टिप्पणियो में ७७ और पंचम परिशिष्ट मे १३८१ छन्दो के लक्षण दिये हैं। अर्थात् इस सकलन मे २१२९ छन्दो का दिग्दर्शन है जो कि इस सस्करण की प्रमुख विशेषता है।

इस सस्करण मे मूल ग्रन्थ के पश्चात् दो टीकायें और ८ परिशिष्ट दिये हैं जिनका सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

(१) वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धार-टीका

इस टीका और टीकाकार लक्ष्मीनाथ भट्ट का परिचय प्रारंभ मे कवि-वश-परिचय मे दिया जा चुका है, अत: यहाँ पिष्टपेषण अनावश्यक है।

(२) वृत्तमौक्तिक-दुर्गमबोध-टीका

इस दुर्गमबोधटीका के प्रणेता महोपाध्याय मेघविजय १८ वी शताब्दी के बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न विशिष्टतम विद्वान हैं। इनका जन्म सवत्, जन्म स्थान और गार्हस्थ्य जीवन का ऐतिह्य परिचय अद्यावधि अप्राप्त है। श्रीवल्लभोपाध्याय प्रणीत 'विजयदेवमाहात्म्य' पर मेघविजयजी रचित विवरण की स १७०९ की लिखित हस्तलिखित[1] प्रति प्राप्त होने से यह निश्चित है कि विवरण की रचना १७०९ के पूर्व ही हो चुकी थी। अत. यह अनुमान सहज-भाव से लगाया जा सकता है कि इस रचना के समय इनकी अवस्था कम से कम २०-२५ वर्ष की अवश्य होगी! अतः १६८५ और १६९० के मध्य इनका जन्म-समय माना जा सकता है।

मेघविजयजी श्वेताम्बर-जैन-परम्परा मे तपागच्छीय अकबर-प्रतिबोधक जगद्गुरु हीरविजयसूरि की शिष्य-परम्परा मे कृपाविजयजी के शिष्य हैं[2]। विजयसिंहसूरि के पट्टधर विजयप्रभसूरि ने इनको उपाध्यायपद प्रदान किया था।[3]

मेघविजयजी-गुम्फित साहित्य को देखने पर यह साधिकार कहा जा सकता है कि ये एकदेशीय विद्वान् न होकर सार्वदेशीय विद्वान् थे। काव्य-साहित्य, पादपूर्ति, व्याकरण, छन्द, अनेकार्थ, न्यायशास्त्र, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, सामुद्रिक और अध्यात्मशास्त्र आदि प्रत्येक विषय के ये प्रगाढ पण्डित थे और इन्होने प्रत्येक विषय पर साधिकार वर्चस्वपूर्ण लेखिनी चलाई है। इनका साहित्य-सर्जना काल वि स १७०९ से १७६० तक का तो निश्चित ही है। वर्तमान समय मे प्राप्त इनकी रचित साहित्य-सामग्री की सूची निम्न है—

१—विजयदेवमाहात्म्य प्रान्तपुष्पिका

२—युक्तिप्रबोध प्रशस्ति

३—देवानन्द महाकाव्य प्रशस्ति

१	सप्तसन्धान-महाकाव्य	र सं. १७६०[1]	प्रकाशित
२	दिग्विजय-महाकाव्य		,,
३	शान्तिनाथचरित्र (नैषधीय-पादपूर्ति)		,,
४	देवानन्द-महाकव्य (माघ-पादपूर्ति)		,,
५	किरातसमस्यापूर्ति[2]		अप्रकाशित
६	मेघदूत-समस्यालेख (मेघदूत-पादपूर्ति)		प्रकाशित
७	लघुत्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित्र		अप्रकाशित
८	भविष्यदत्तचरित्र		प्रकाशित
९	पञ्चाख्यान		अप्रकाशित
१०	पाणिनिद्वयाश्रयविज्ञप्तिलेख[3]		,,
११	,, [4]		,,
१२	विज्ञप्तिका		प्रकाशित[5]
१३	गुरुविज्ञप्तिलेखरूप-चित्रकोशकाव्य		अप्रकाशित[6]
१४	विज्ञप्तिपत्र		,,[7]
१५	,, अपूर्ण[8]		,,
१६	,,		,,[9]
१७	,, अपूर्ण[10]		,,
१८	चन्द्रप्रभा-व्याकरण (हैमकौमुदी)	र० सं० १७५७[11]	प्रकाशित
१९	हैमशब्दचन्द्रिका		,,
२०	हैमशब्दप्रक्रिया[12]		अप्रकाशित

१–वियद्रसमुनीन्दूना प्रमाणात् परिवत्सरे। [सप्तसन्धान प्रशस्ति]

२–देखें, दिग्विजय-महाकाव्य-प्रस्तावना

३-४ भाण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्ट्रीटयूट पूना २९९A, १८८२-८३

५–विज्ञप्तिलेखसग्रह प्रथम भाग (सिंघी जैन ग्रन्थमाला, वम्वई)

६–अभयजैन-ग्रंथालय, बीकानेर

७–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं० २०४१५

८,९,१०–,, ,, ,, शाखा कार्यालय बीकानेर, मोतीचद खजांची-सग्रह, 'श' २८४

११–विजयन्ते ते गुरवः शैलशर्षीन्दुवत्सरे। [चन्द्रप्रभाप्रशस्ति ७]

१२–भाण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्सटीटयूट, पूना

२१	चिन्तामणि-परीक्षा[1] (नव्यन्यायप्रवर्तक गगेशोपाध्याय-कृत तत्त्वचिन्तामणि का परीक्षण)	अप्रकाशित
२२	युक्तिप्रबोध	प्रकाशित
२३	धर्ममञ्जूषा	अप्रकाशित
२४	मेघमहोदयवर्षप्रबोध	प्रकाशित
२५	हस्तसजीवन स्वोपज्ञ-टीका-सहित	,,
२६	रमलशास्त्र	उल्लेख, मेघमहोदय-वर्षप्रबोध
२७	उदयदीपिका, र० स० १७५२	अप्रकाशित
२८	प्रश्नसुन्दरी	,,
२९	वीसायन्त्रविधि	प्रकाशित
३०	मातृकाप्रसाद र० सं० १७४७[2]	अप्रकाशित
३१	ब्रह्मबोध	अप्राप्त[3]
३२	अर्हद्गीता	प्रकाशित
३३	विजयदेवमाहात्म्यविवरण	,,
३४	वृत्तमौक्तिक-'दुर्गमबोध' टीका	(प्रस्तुत)
३५	पञ्चतीर्थीस्तुति सटीक[4]	अप्रकाशित
३६	भक्तामरस्तोत्र-टीका[5]	,,
३७	चतुर्विंशतिजिनस्तव[6]	,,
३८	आदिनाथस्तोत्र[7] अपूर्ण	,,

गुर्जर-भाषा में रचित कृतियें

३९	विजयदेवसूरिनिर्वाणरास[8]	अप्रकाशित
४०	कृपाविजयनिर्वाणरास[9]	,,
४१	जैनधर्मदीपकस्वाध्याय[10]	,,
४२	जैनशासनदीपकस्वाध्याय[11]	,,

१–इसका मैं सम्पादन कर रहा हूँ जो राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित होगा।

२–सवत्सरेऽश्ववार्ध्यश्वभूमिते पोष उज्ज्वले ।
श्रीधर्मनगरे ग्रथ पूर्णश्रियमशिश्रयत् । [मातृकाप्रसाद प्रशस्ति]

३,४,५–देखें दिग्विजयमहाकाव्य – प्रस्तावना

६–महोपाध्याय विनयसागर-सग्रह, कोटा

७–राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं. २०४१५

८-११–देखें, दिग्विजय-महाकाव्य – प्रस्तावना

४३ आहारगवेषणा-स्वाध्याय[1] अप्रकाशित
४४ चौवीस जिनस्तवन[2] "
४५ पार्श्वनाथस्तवन[3] "
४६ मक्षोपार्श्वनाथस्तवन[4] "

वृत्तमौक्तिक की दुर्गमबोध नामक टीका की रचना मेघविजयजी ने अपने शिष्य भानुविजय के पठनार्थ स० १६५५ मे की है। भट्ट लक्ष्मीनाथीय 'दुष्करोद्धार' टीका के समान ही यह टीका भी वृत्तमौक्तिक के प्रथम खण्ड, प्रथम गाथा-प्रकरण के पद्य ५१ से ८६ तक अर्थात् ३६ पद्यों पर रची गई है। पूर्व टीका की तरह यह भी ९ प्रकरणो मे विभक्त है। इसमें वर्णोद्दिष्ट और वर्णनष्ट एक-साथ दे दिये हैं और वृत्तस्थ गुरु-लघु-ज्ञान का स्वतन्त्र प्रकरण नही है। प्रस्तार जैसे गहन विषय को मेघविजयजी ने अपनी लेखिनी द्वारा सरलतम बना दिया है। प्राकृत-पिंगल, वाणीभूषण और छन्दोरत्नावली आदि ग्रन्थो के उद्धरण और अनेको चित्र देकर प्रत्येक प्रकरण के वर्ण्य विषय का विशदता के साथ स्पष्टीकरण किया है। भाषा मे प्रवाह और सरलता है। कही-कही देश्य शब्दो का प्रयोग भी मिलता है।

यह टीका अद्यावधि अज्ञात और अप्राप्त थी। इसकी स्वय टीकाकार द्वारा लिखित एक मात्र प्रति मेरे निजी सग्रह मे है।

परिशिष्टों का परिचय

प्रथम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे वृत्तमौक्तिककार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक-शब्दावली दी गई है। टगणादि गण, इनका प्रस्तारभेद, नाम तथा उनके पर्याय यहाँ क्रमश. दिये हैं और अन्त मे इस पद्धति से मगणादि ८ गणो के पर्याय दिये हैं।

पाद-टिप्पणियो मे स्वयम्भूछन्द, वृत्तजातिसमुच्चय, कविदर्पण, हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ के साथ इस पद्धति की तुलना की है अर्थात् इन ग्रन्थकारो ने इस प्रणाली को किस रूप मे स्वीकार किया है, कौन-कौन से शब्द स्वीकृत किये हैं, कौन-कौन से शब्द इन ग्रन्थो मे नही हैं और कौन-कौन से नये पारिभाषिक शब्दो को स्वीकृत किया है; इन सब का दिग्दर्शन है।

---

१ - ३– देखें, दिग्विजय-महाकाव्य – प्रस्तावना.
४–महोपाध्याय विनयसागर-सग्रह, कोटा.

द्वितीय परिशिष्ट—

(क) मात्रिक छन्दो का अकारानुक्रम—इसमे मात्रिक छन्द ७९ और गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद आदि के २१८ भेदो के नामो को अकारानुक्रम से दिया है।

(ख) वर्णिक छन्दो का अकारानुक्रम—इसमे वर्णिक सम-छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दो का एव टिप्पणियो में उद्धृत छन्दो का अकारानुक्रम दिया है। छन्दो के आगे ( ) कोष्ठक मे प्रकीर्णक का प्र, दण्डक का द, अर्द्धसम का अ, विषम का वि, वैतालीय का वै और टिप्पणी का टि दिया है। संकेत-कोष्ठक में ग्रन्थकार ने जो छन्दो के नाम-भेद दिये हैं वे भी अकारानुक्रम में सम्मिलित हैं, वे नाम-भेद भी ( ) कोष्ठक में दिये हैं।

(ग) विरुदावली-छन्दो का अकारानुक्रम – इसमे कलिका-विरुदावली, चण्डवृत्त-विरुदावली आदि समस्त विरुदावली-छन्दो का अकारानुक्रम दिया है।

तृतीय परिशिष्ट—

(क) पद्यानुक्रम—इसमे प्रतिपाद्य विषय के पद्यो और छन्द के लक्षण-पद्यो को अकारानुक्रम से दिया है। वैतालीय-प्रकरण की लक्षण-कारिकाये भी इसी मे अकारानुक्रम से सम्मिलित कर दी गई हैं।

(ख) उदाहरण-पद्यानुक्रम—इसमे ग्रन्थकार द्वारा स्वरचित-उदाहरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रत्युदाहरण, गद्याश के उदाहरण और टिप्पणियो मे उद्धृत उदाहरण अकारानुक्रम से दिये हैं। गद्याश के लिये कोष्ठक ( ) मे ग, और टिप्पणी के लिये टि. का सकेत दिया है। यति-प्रकरण मे उद्धृत और विरुदावली मे प्रयुक्त एक-एक चरण के पद्यो को भी अकारानुक्रम मे सम्मिलित किया गया है।

चतुर्थ परिशिष्ट—

क. (१) मात्रिक छन्दो के लक्षण एव नाम-भेद—प्रारभ मे सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और सकेत देकर वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और उसके टगणादि में लक्षण एव प्रतिचरण की मात्रायें दी हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २२ ग्रन्थो के साथ छन्द-नाम और लक्षणो की तुलना की गई है। जिन-जिन ग्रन्थो मे वृत्तमौक्तिक-लक्षण-सम्मत छन्द का वही नाम है तो उन ग्रन्थो के अंक दे दिये हैं और लक्षण यही होते हुये भी नाम यदि पृथक् है तो वह नाम-भेद देकर

उन-उन ग्रन्थो के अक लगा दिये हैं। ग्रन्थ-विस्तार-भय से यहां पर ग्रन्थो के नाम न देकर उनके अक दिये हैं।

क (२) गाथादि छन्द-भेदो के लक्षण एव नामभेद—इसमे गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद नामक छन्दो के प्रस्तार-सख्या-क्रम से लक्षण, छन्द-नाम और नामभेद दिये हैं। इन छन्दो के प्रस्तारभेद कुछ ही ग्रन्थो मे प्राप्त हैं, समग्र ग्रन्थो मे नही है, इसलिये अको का प्रयोग न करके ग्रन्थनाम-शीर्षक से ही दिये है।

ख. वर्णिक-छन्दो के लक्षण एव नामभेद—इसमे वर्णिक-सम, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वैतालीय-छन्दो के वृत्तमौक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और लक्षण दिये हैं। लक्षण मगणादिगणो के सक्षिप्त रूप 'म य र. स त. ज. भ. न ल ग.' रूप मे दिये हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थो के अक, नामभेद और अक दिये हैं। यह प्रणालिका 'क. १ मात्रिक-छन्दो के लक्षण एव नामभेद' के अनुसार ही है।

केवल २६५ वर्णिक सम-छन्दो मे से ६१ छन्द ही ऐसे हैं जिनके कि नाम-भेद प्राप्त नही है। एक ही छन्द के एक से लेकर आठ तक नामभेद प्राप्त होते हैं। नामभेदो की तुलना से यह स्पष्ट है कि इसका प्रयोग कितना व्यापक था ! ऐसा प्रतीत होता है कि नाम-निर्वाचन के लिये छन्द शास्त्रियो के सम्मुख कोई निश्चित परिपाटी नही थी, वे स्वेच्छा से छन्दो का नाम-निर्वाचन कर सकते थे, अन्यथा इतने नामभेद प्राप्त नही होते !

ग छन्दो के लक्षण एव प्रस्तार-सख्या—इसमे वृत्तमौक्तिक मे प्रयुक्त एकाक्षर से षड्विंशाक्षर तक के सम-वर्णिक छन्दो के क्रमश. नाम देकर 'ऽ, ।' गुरु-लघुरूप मे लक्षण दिये हैं पश्चात् उसकी प्रस्तारसख्या दिखाई है कि यह भेद प्रस्तारसख्या की दृष्टि से कौन सा है। मैंने यथासाध्य समग्र छन्दो की प्रस्तार-सख्या देने का प्रयत्न किया है, फिर भी कतिपय छन्द ऐसे हैं जिनकी प्रस्तार-सख्या प्राप्त नही हुई है। तज्ज्ञो से निवेदन है कि इसकी पूर्ति करने का वे प्रयत्न करें।

प्रकीर्णक, दण्डक, अर्धसम और विषम छन्दो के नाम और लक्षण 'ऽ,।' प्रणालिका से ही दिये हैं।

पञ्चम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में जिन छन्दो का वृत्तमौक्तिक में उल्लेख नही है और जो सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २१ ग्रन्थो मे प्रयुक्त हैं उन छन्दो को भी छन्दःशास्त्रविषयक

जिज्ञासुओं के लिये प्रस्तार-सख्या के क्रम से दिये हैं। प्रारभ मे प्रस्तार-सख्या, छन्द-नाम, लक्षण और सन्दर्भग्रन्थ के अक, नामभेद तथा अक दिये हैं। यह पद्धति 'क. (१) मात्रिक-छन्दो के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है।

इसमे अक्षरानुक्रम से इतने विशिष्ट छन्द प्राप्त हैं:—

४ अक्षर	१२	छन्द		१६ अक्षर	३६	छन्द
५ ,,	२७	,,		१७ ,,	२७	,,
६ ,,	५५	,,		१८ ,,	३३	,,
७ ,,	१२०	,,		१९ ,,	२५	,,
८ ,,	८९	,,		२० ,,	१६	,,
९ ,,	५७	,,		२१ ,,	१८	,,
१० ,,	९८	,,		२२ ,,	२०	,,
११ ,,	१०३	,,		२३ ,,	१८	,,
१२ ,,	११२	,,		२४ ,,	२१	,,
१३ ,,	९०	,,		२५ ,,	२०	,,
१४ ,,	७७	,,		२६ ,,	२७	,,
१५ ,,	३८	,,				

इस प्रकार वर्णिक-सम के ११३९, प्रकीर्णक वृत्त २४, दण्डक-वृत्त ६६ तथा अर्धसमवृत्त १५२ अर्थात् कुल १३८१ अवशिष्ट प्राप्त-छन्दो का इसमे सकलन है।

विषमवृत्त के भी सैकडो छन्द और वैतालीय के प्रस्तार-भेद से अनेकों भेद प्राप्त होते है जिनका सकलन इस सग्रह में समयाभाव से नही किया जा सका।

षष्ठ परिशिष्ट—

वृत्तमौक्तिक मे गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद के प्रस्तार-भेद से भेदो के नाम एव सक्षेप मे लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इनके उदाहरण प्राप्त नही हैं। ग्रन्थान्तरो में भी इनके उदाहरण प्राप्त नही हैं। केवल कविदर्पण मे गाथा-भेदो के उदाहरण और वाग्वल्लभ मे गाथा और दोहा-भेदो के लक्षणयुक्त उदाहरण प्राप्त होते हैं। अतः गाथा और दोहा-भेदो के स्वरूप का दिग्दर्शन कराने के लिये इस परिशिष्ट मे वाग्वल्लभ से गाथा और दोहा-भेदो के लक्षण-युक्त उदाहरण उद्धृत किये हैं।

सप्तम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे ग्रन्थकार चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक मे छन्दो के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन ग्रन्थकारो और ग्रन्थो के उद्धरण दिये हैं उनकी अकारानुक्रम से सूची दी है। कतिपय स्थलो पर 'अन्ये च' 'यथा वा' कह कर जो उद्धरण दिये है, उनका भी मैंने इस सूची मे उल्लेख कर दिया है।

अष्टम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट मे मैंने अनेक सूचीपत्रो के आधार से 'छन्द. शास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकाये' शीर्षक से ग्रन्थो की अकारानुक्रम से विस्तृत सूची दी है। इसमे ग्रन्थ का नाम, उसकी टीका, ग्रन्थकार एव टीकाकार का नाम तथा यह ग्रन्थ कहा प्राप्त है या किस सूची मे इसका उल्लेख हैं, सकेत किया है। शोध करने पर और भी अनेको ग्रन्थ प्राप्त हो सकते हैं। मैं समझता हूं कि छन्दः शास्त्रियो और शोधकर्त्ताओ के लिये यह सूची अवश्य ही उपादेय एव मार्ग दर्शक सिद्ध होगी।

प्रति–परिचय

मूल ग्रन्थ का सम्पादन पाच प्रतियो के आधार से किया गया है जिसमे तीन प्रतियां प्रथम खण्ड की हैं और दो प्रतिया द्वितीय खण्ड की हैं। इन पांचो प्रतियो का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक, प्रथम खण्ड

१ क सज्ञक, आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर: सख्या ५५२७

माप—२६ ५ c.m. × ११.३ c.m.

पत्र सख्या ४१, पक्ति ७, अक्षर ३६

लेखन-काल १८वी शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

२. ख सज्ञक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२८

माप—२५ २ c m × १०.६ c m.

पत्र सख्या २३ ; पक्ति १०. ; अक्षर ४२

लेखन काल १६९० के लगभग, संभवतः लालमनि मिश्र की ही लिखी हुई है।

अपूर्ण प्रति। शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

३ ग सज्ञक प्रति

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर सख्या ५८३

माप—२५ ८ cm × १०.७ c.m

पत्र सख्या १० ; पक्ति १८. ; अक्षर ५६

लेखनकाल अनुमानतः १८वी शती का प्रथम चरण; लिपि सुन्दर है किन्तु अशुद्ध है।

इसमे रचना और लेखन-प्रशस्ति नही है।

वृत्तमौक्तिक द्वितीय खण्ड

१ क सज्ञक. आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५३०

माप—२५ २ cm.×१०.६ cm.

पत्र सख्या १६६ ; पक्ति ७. ; अक्षर ३९

लेखनकाल १६९०. वि० लेखक—लालमनि मिश्र

लेखनस्थान—अर्गलपुर (आगरा)

शुद्धतम एव सशोधित प्रति है। लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है—

"।।सवत् १६९० समये श्रावणवदि ११ रवौ शुभदिने लिखित शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण। शुभम्। इद ग्रथसख्या ३८५०।"

२ ख सज्ञक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२९

माप २६ ५ cm. × ११ ३ cm.

पत्रसख्या १९१, पक्ति ७; अक्षर ३६

लेखनकाल १८वी शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धप्रति लेखन प्रशस्ति नही है।

दोनो टीकाओ की अद्यावधि एक-एक ही प्रति प्राप्त होने से उन्ही के आधार से सम्पादन किया है। दोनो टीकाओ की प्रतियो का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करोद्धार

टी० लक्ष्मीनाथ भट्ट

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर. सख्या ५५३३

माप २७ ५ cm × ११ ५ cm.

पत्र संख्या ३८; पक्ति ७; अक्षर ३७
लेखनकाल १६९० वि० लेखक - लालमनि मिश्र
लेखन स्थान - अर्गलपुर (आगरा)
शुद्ध एव सशोधित पूर्णप्रति एकमात्र प्रति

लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है :—

"।। संवत् १६९० समये भाद्रपदशुदि३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखितं लालमनिमिश्रेण । शुभं भूयात् । श्रीविष्णवे नमः ।।"

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

टी० महोपाध्याय मेघविजय

महोपाध्याय विनयसागर संग्रह, कोटा, पोथी २३, प्र.न. ११
माप २५ ५ c.m.× १०.७ c.m.
पत्रसख्या १०; पक्ति २१; अक्षर ६०
लेखनकाल १८वी शती. टीकाकार - महोपाध्याय मेघविजय द्वारा स्वय लिखित शुद्ध एव सशोधित एकमात्र प्रति पत्र २-५ तक प्रस्तार चित्र

सम्पादन-शैली

सम्पादन मे प्रथम खण्ड की तीनो प्रतियो को क, ख, ग और द्वितीय-खण्ड की दोनो प्रतियो को क, ख, सज्ञा प्रदान की है ।

प्रथमखण्ड की ख. सज्ञक प्रति और द्वितीयखण्ड की क संज्ञक प्रति एक ही व्यक्ति की लिखी हुई और प्रथमखण्ड की क सज्ञक और द्वितीयखण्ड की ख. सज्ञक प्रति सभवत. .इसी प्रति की प्रतिलिपि हो, क्योकि दोनो मे अतीव सामीप्य होने से विशेष पाठ-भेद प्राप्त नही होते ।

दोनो खण्डों की क संज्ञक प्रति को मैंने आदर्श माना है और अन्य प्रतियो के पाठभेदो को मैने टिप्पणी मे पाठान्तर-रूप मे दिये हैं । कतिपय स्थलो पर प्रतिलिपिकार के भ्रम से जो अश या पक्तिया क सज्ञक प्रति मे छूट गई हैं वे ख सज्ञक प्रति से मूल मे सम्मिलित कर दी गई हैं और कतिपय शब्द ख. प्रति के शुद्ध होने से उसे मूल मे रखकर क. प्रति के पाठ को पाठान्तर में दे दिया है ।

ग्रंथकार ने प्रत्युदाहरणो और नामभेदो मे जिन ग्रथो का उल्लेख किया है उन ग्रथो के स्थल, सर्गसंख्या और पद्यसंख्या टिप्पणी में दी गई है और जिन प्रत्यु-

दाहरणो के कही-कही पूर्णपद्य न देकर एक-एक चरण-मात्र दिये हैं उन्हे पूर्णरूप मे टिप्पणी मे दे दिये है ।

इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा-उपजाति, वशस्थविला-इन्द्रवंशा-उपजाति और शालिनी-वातोर्मी-उपजाति के ग्रथकार ने १४-१४ भेद स्वीकार किये है किन्तु उनके नाम, लक्षण एव उदाहरण न होने से मैने टिप्पणी मे इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति और वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति के १४-१४ भेदो के नाम, लक्षण एव उदाहरण अन्य ग्रथो के आधार से दिये हैं तथा शालिनी-वातोर्मी-उपजाति एव रथोद्धता-स्वागता-उपजाति के टिप्पणी मे लक्षणमात्र दिये हैं क्योकि अन्य ग्रथो मे इनके नाम और उदाहरण पूर्णरूप मे मुझे प्राप्त नही हुये ।

कतिपय स्थलो पर लक्षण स्पष्ट न होने से एव उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी मे लक्षणो को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया हैं, साथ ही अन्य ग्रथो से प्राप्त उदाहरण भी दिये हैं । गाथादि छदभेदो के लक्षण और नाम टिप्पणी में देकर इन भेदो को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है ।

प्रतियो मे छन्द के प्रारम्भ मे कही 'अथ' का प्रयोग है और कही नही है, कही नाम के साथ 'वृत्त' या 'छन्द' का प्रयोग है और कही नही है तथा छन्द के अत मे केवल नाम ही प्राप्त है, किन्तु मैंने ग्रथ मे एकरूपता रखने के लिये प्रारभ मे 'अथ' और छन्द का नाम और अत मे 'इति' और छन्द नाम का सर्वत्र प्रयोग किया है । इसी प्रकार श्लोक-सख्या मे भी एकरूपता की दृष्टि से मैंने प्रत्येक प्रकरण की श्लोक-सख्या पृथक्-पृथक् दी है ।

गोविन्दविरुदावली के पाठान्तर मैंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ग्रन्थाक २३४८०. पत्र ८ पक्ति १६. अक्षर ४१ की प्रति से दिये हैं ।

पाठान्तर, टिप्पणियां और परिशिष्टो द्वारा मैंने यथासम्भव इस ग्रन्थ को श्रेष्ठ बनाने का प्रयास किया है किन्तु मै इसमे कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो एतद्विपय के विद्वान् ही कर सकेंगे ।

आभार प्रदर्शन—

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के सम्मान्य सञ्चालक, मनीषी पद्मश्री मुनि श्री जिनविजयजी पुरातत्त्वाचार्य ने इस ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य प्रदान कर मुझे जो साहित्य-साधना का अवसर दिया तथा प्रतिष्ठान के उपसचालक, सम्माननीय श्री गोपालनारायणजी बहुरा, एम ए ने जिस आत्मीयता

के साथ समय-समय पर परामर्श एव सहयोग देकर कृतार्थ किया, उसके लिये मै इन दोनो का हार्दिक अभिनन्दन करता हू।

श्री अगरचन्दजी नाहटा के सत्प्रयत्न से अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर के संरक्षक बीकानेर के महाराजा एव व्यवस्थापको ने वृत्तमौक्तिक की प्रतियां सम्पादनार्थ प्रदान की; अत मैं इन सब का आभारी हूँ।

पो० श्री कण्ठमणिशास्त्री कांकरोली, श्री गगाधरजी द्विवेदी जयपुर, श्री भवरलालजी नाहटा कलकत्ता, डॉ० श्री नारायणसिंहजी भाटी एम ए, पी.एच डी, सचालक राजस्थानी शोध सस्थान जोधपुर, श्रीबद्रीप्रसाद पचोली एम ए, एव इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी, लन्दन, के व्यवस्थापक आदि ने परामर्श देकर एव ग्रन्थो की आद्यन्त-प्रशस्तियां भेज कर जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये मै इन सब का उपकृत हूँ।

मेरे परममित्र श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी का अभिनन्दन मैं किन शब्दो मे करूं! इस ग्रन्थ को शुद्ध एव श्रेष्ठ बनाने का सारा श्रेय ही इन्ही को है।

साधना प्रेस जोधपुर के संचालक श्री हरिप्रसादजी पारीक भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होने इसके मुद्रण मे पूर्ण सहयोग दिया है।

अन्त मे, मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्रीजिनमणिसागरसूरिजी महाराज का अत्यन्त ही ऋणी हूँ कि जिनकी कृपा और आशीर्वाद से आज मैं इस ग्रन्थ का सम्पादन करने योग्य बन सका!

श्रीमर्ता सन्तोषकुमारी जैन (मेरी धर्मपत्नी) के सहयोग और प्रेरणा से मै इस कार्य मे सलग्न रहा इसके लिये उसको भी साधुवाद।

आनन्द निवास, जोधपुर. —म. विनयसागर

२४-५-६५

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-संख्या	पद्य-संख्या
रूप	।	४	३८
ल, लघु	।		
लहलहित	ऽ ऽ	३	२८
वक्र	ऽ	३	२६
वज्र	। । ऽ	३	२९
वलय	। ऽ	३	२३
वलय	ऽ	३	२६
वसुचरण	ऽ । ।	३	२२
वास	। ऽ	३	२३
विप्र	। । । ।	३	२२
विराट्	ऽ । ऽ	४	३५
विहग	ऽ । ऽ	४	३५
वीणा	ऽ । ऽ	४	३५
शक्र	ऽ । । ऽ	३	१९
शङ्ख	।	४	३८
शब्द	।	४	३८
शर	।	४	३७
शशि	। । ऽ ऽ	३	१९
शालि	। । । । । ।	३	१९
शिखर	। । । ।	४	३३
शेखर	। । ऽ ।	३	२०
शेष	। । । । ऽ	३	१९
सगण	। । ऽ	४	३९
सागर	ऽ ।	३	२४
सात्त्विकभाव	। । ।	३	२५
सुनरेन्द्र	। ऽ ऽ	४	३४
सुप्रिय	। ।	३	२७
सुमतिलम्बित	ऽ ऽ	३	२८
सुरतलता	ऽ ऽ	३	२८
सुरपति	ऽ ।	३	२४
सूर्य	। ऽ ऽ ।	३	१९
सूर्य	ऽ । ऽ	३	२०
हर	ऽ ऽ ऽ	३	१९
हस्त	। । ऽ	३	२९
हस्तायुध-पर्याय	। । ऽ	३	३०
हार	ऽ	४	३७
हारावलि	ऽ	३	२६
हीर	ऽ ऽ ।	३	२०

॥१॥

॥ ६०॥ श्रीगणेशायनमः॥ श्रीगुरुभ्योनमः॥ यस्मान्न्यायचिरंतनेकिमपितत्सत्यं चि
दकात्मकप्रोतंयत्रचराचरात्मकमिदंवाकेतसोयेतरम्यायस्माद्विश्वमुदेतिभातिव
यतोयस्मिंस्तुतल्लीयतेयंहिक्षीतिनगतंशात्मनसामानन्दकन्दंमहः॥ १॥ श्रीमु
ष्पिन्मेदर्वीकरकलितउर्वीविषमिषमीतिश्च छन्दःशास्त्रेन्यदीपन्नरिपुनास्तिकिंचुला
तथायाराध्यश्रीपितृचरणसेवासुमतिनातदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथगम्यातङ्
हा॥२॥ श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्यपितुर्नत्वापदांबुजम्॥ श्रीचंद्रशेखरकविस्तनुतेवृत्तमौ
क्तिकम्॥३॥ श्रीमत्पिंगलनागोक्तछन्दःशास्त्रमहोदधिः॥ पितृप्रसादादभवन्मम
गोष्पदसन्निभः॥४॥ अलसाःप्राकृतकेचिज्जल्पन्तिसुधियःक्वचित्तत्सन्तोषायभवतुवा

॥राम॥
॥१॥

५७३
१

चंद्रशेखरी पिंगलवृत्ती
का
४१॥

कंरुचिरम्॥ माघेवलक्षपक्षेपंचम्यांचन्द्रशेखरस्यकृतौ॥३४॥ इत्यालङ्कारिकच
क्रचूडामणिछन्दःशास्त्रपरमाचार्यसकललोपनिषद्रहस्यार्णवकर्णधारश्रील
क्ष्मीनाथभट्टात्मजकविशेखरश्रीचन्द्रशेखरभट्टविरचितेश्रीवृत्तमौक्तिकेपिङ्ग
लवार्त्तिकमात्राख्यःप्रथमःपरिच्छेदः॥ ॥श्रीरस्तु॥ ॥शुभमस्तु॥ ॥

मात्रापरिच्छेद

॥राम॥
४१॥

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त प्रथमखण्ड, क. संज्ञक प्रति के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

परिभाषिक-शब्द

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-सख्या	पद्य-सख्या
अधिप	।ऽऽ	४	३४
अमृत	ऽ।ऽ	४	३५
अहि	।ऽ।ऽ	३	१९
अहिगण	ऽ।।।	३	२०
आनन्द	ऽ।	३	२४
इन्द्रासन	।ऽऽ	३	२०
ऐरावत	।ऽऽ	४	३४
कङ्कण	ऽ	८४	१७६
कनक	ऽ	३	२६
कनक	।	४	३७
कमल	ऽ।ऽ।	३	१९
कमल	।।ऽ	३	२९
कर	।।ऽ	३	२९
करतल	।।ऽ	३	२१
करताल	ऽ।	३	२४
कर्ण	ऽऽ	३	२१
कर्णपर्याय	ऽऽ	३	३०
कर्णसमान	ऽऽ	३	२८
[illegible]	ऽऽ।।	३	१९
काहल	।	४	३८
[illegible]-पर्याय	।ऽ।	४	३१
[illegible]-पर्याय	।ऽऽ	४	३४
[illegible]	ऽ	३	२६
[illegible]	ऽऽ	६५	९४
[illegible]	।ऽ।।	३	२०
[illegible]	।	९०	[illegible]
[illegible]	ऽ	४	[illegible]
[illegible]	ऽ		
[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
गजपति	।ऽ।	४	३१
गजाभरण	।।ऽ	३	२९
गण्ड	ऽ।।	४	३२
गन्ध	।	४	३८
गरुड पर्याय	ऽ।ऽ	४	३५
गुरुयुगल	ऽऽ	३	२८
गोपाल	।ऽ।	४	३१
चन्द्र	।।ऽ।।	३	१९
चाप	।।।ऽ	३	२०
चामर	ऽ	३	२६
चित्त	ऽ	१२५	३५८
चिर	।ऽ	३	२३
चिरालय	।ऽ	३	२३
चिह्न	।ऽ	३	२३
चूतमाला	।ऽ	३	२३
जगण	।ऽ।	४	३६
जङ्घायुगल	ऽ।।	४	३२
जोहल	ऽ।ऽ	४	३५
टगण	षण्मात्रा	२	१५
ठगण	पञ्चमात्रा	२	१५
डगण	चतुर्मात्रा	२	१५
ढगण	त्रिमात्रा	२	१५
णगण	द्विमात्रा	२	१५
तगण	ऽऽ।	४	३९
ताटङ्क	ऽ	४	३७
ताण्डव	।।।	३	२५
तान	ऽ।।	४	३२
तारापति	।ऽऽ	४	३४
ताल	ऽ।	३	२४

शब्द	गण कला-मात्रा	पृष्ठ-सख्या	पद्य-सख्या
तुम्बुरु	।ऽ	१६१	५२६
तुरङ्गम	चतुर्मात्रा	४	३६
तूर्य-पर्याय	ऽ।	३	२४
तोमर	।ऽ	३	२३
दण्ड	।	४	३७
दहन	ऽ।।	४	३२
द्विजजाति	।।।।	४	३३
द्विजवर	।।।।	४	३३
धर्म	ऽ।।।।	३	१६
धातृ	।।।ऽ।	३	१६
ध्रुव	।ऽ।।।	३	१६
ध्वज	।ऽ	३	२३
नगण	।।।	४	४०
नरेन्द्र-पर्याय	।ऽ।	४	३१
नायक	।ऽ।	४	३१
नारी	।।।	३	२५
निर्वाण	ऽ।	३	२४
नूपुर	ऽ	३	२६
पक्षी	ऽ।ऽ	३३	६१
पक्षिराज	ऽ।ऽ	५४	६४
पञ्चशर	।।।।	४	३३
पटह	ऽ।	३	२४
पत्र	।ऽ	३	२३
पदपर्याय	ऽ।।	४	३२
पदाति	चतुर्मात्रा	४	३६
पयोधर	।ऽ।	३	२१
परम	।।	३	२७
पवन	।ऽ	३	२३
पवन	।ऽ।	४	३१
पाणि	।।ऽ	३	२६
पापगण	।।।।।	३	२०
पितामह	ऽ।।	४	३२
पुष्प	।	४	३८
प्रहरण	।।ऽ	३	२६

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ-सख्या	पद्य-सख्या
प्रहरणनामानि	पञ्चमात्रा	४	३६
फणि	ऽ।	३	२६
बाण	।।।।	४	३३
बाण	।	४	३८
बलभद्र	ऽ।।	४	३२
बाहु	।।ऽ	३	२६
भगण	ऽ।।	४	४०
भामिनी-पर्याय	।।।	३	२५
भाव	।।।	३	२५
भुजङ्ग	ऽ।ऽ	४	३५
भुजदण्ड	।।ऽ	३	२६
भुजाभरण	।।ऽ	३	२६
भूपति	।ऽ।	४	३१
मगण	ऽऽऽ	४	३६
मनोहर	ऽऽ	३	२८
मानस	ऽ	३	२६
मुग्धाभरण	ऽ	३	२६
मुनिगण	।।।।	४४	६३
मृगेन्द्र	ऽ।ऽ	४	३५
मेघ	।ऽऽ	४	३४
मेरु	।	४	३७
यक्ष	ऽ।ऽ	४	३५
यगण	।ऽऽ	४	३६
रगण	ऽ।ऽ	४	३६
रज्जु	।ऽ।	४	३१
रति	ऽ।।	४	३२
रत्न	।।ऽ	३	२६
रथ	चतुर्मात्रा	४	३६
रदन	।ऽऽ	४	३४
रस	।ऽ	३	२३
रस	।	४	३८
रसना	ऽ	३	२६
रसलग्न	ऽऽ	३	२८
रसिक	ऽऽ	३	२८

[illegible]

योनिधितो पाशुपतिपिंगलतरम्॥ श्रीमल्लक्ष्मीनाथसकलागमपारगचन्द्रे गाया
तद्वसुतनयो वनयोपपन्ने श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबंधे॥ विच्छन्दमाय [illegible]
वृत्तं च मेव [illegible] श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं ल
क्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् [illegible] जीवलोकस्य॥ ॥ इति
[illegible] सकलोपनिषद् [illegible]
[illegible] श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मजकविशेखरश्रीचन्द्रशेखरभट्टविरचिते
श्रीवृत्तमौक्तिके [illegible] द्वितीयः परिच्छेदः॥ २॥ समाप्तश्चा
यं [illegible] द्वितीयखण्डः॥ ग्रंथसंख्या [illegible] खंडद्वय॥ ॥शुभमस्तु॥

पिंगलवा
र्तिक

॥राम॥

अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त द्वितीय खण्ड, ग संज्ञक प्रति के प्रथम पत्र और ग संज्ञक प्रति के अन्तिम पत्र की प्रतिकृति

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रणम्य जगदाधारविश्वरूपिणमीश्वरं । श्रीचन्द्रशेखरकृतो वार्त्तिके वृत्तमौ-
क्तिके ॥१॥ अनेकस्थाने मया लोचनदृष्टादिदुष्करमा । श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन दुष्करी क्रियते तरां
॥२॥ अथानन्तरं छान्दसिकपरीक्षार्थं कौतुकार्थं च मात्राणामुद्दिष्टमुच्यते । तत्र त्रयोदशविभेदभिन्ने
[illegible] प्रस्तारणे [illegible] तिमद्रूपमिति लिखित्वा [illegible] । प्रथमप्रत्ययस्वरूपं तत्प्रका-
रमाह । [illegible] केनाद्यादिति । [illegible] रूपरिगमस्य [illegible] भयतः ॥ [illegible]
[illegible] ॥५१॥ [illegible] विजानीयात् । तस्मिन्नाले [illegible]
ते [illegible] ॥ तत्र [illegible] । [illegible]

[illegible] एकमात्रादि [illegible] प्रस्तारोद्दिष्टेन [illegible]
[illegible] ॥ ॥ समाप्तश्चायं वृत्तमौक्तिकवार्त्तिके दुष्करोद्धारः ॥ ॥ शुभमस्तु ॥ ॥
[illegible] ॥ संवत् १६८० समये भाद्रपद शुदि ३ [illegible] शुभदिने [illegible] स्थाने लि-
खितं [illegible] मनि मिश्रेण ॥ ॥ शुभं भूयात् ॥ ॥ श्री [illegible] नमः ॥ ॥ ॥

राम
२८

[illegible] वृत्तमौक्तिक [illegible]

अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर से प्राप्त वृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धार टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

महोपाध्याय विनयसागर संग्रह, कोटा से प्राप्त वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध टीका के आद्यन्त पत्रों की प्रतिकृति

कविशेखर-भट्टश्रीचन्द्रशेखरप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

प्रथमः खण्डः



प्रथमं गाथाप्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

युष्मान् पातु चिरन्तनं किमपि तत्सत्य चिदेकात्मक,
प्रोतं यत्र चराचरात्मकमिदं वाक्चेतसोर्यत्परम् ।
यस्माद् विश्वमुदेति भाति च यतो यस्मिन्पुनर्लीयते,
यद्वित्त श्रुतिशान्तदान्तमनसामानन्दकन्द मह ॥ १ ॥
अमुष्मिन् मे दर्वी करकलितदुर्बोधविषमे,
मति. छन्द.शास्त्रे यदपि चरित नास्ति विपुला ।
तथाप्याराध्यश्रीपितृचरणसेवा[1] सुमतिना,
तदीयाभिर्वाग्भिर्विरचितपथे गम्यत इह ॥ २ ॥
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदाम्बुजम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम् ॥ ३ ॥
श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तच्छन्द शास्त्रमहोदधि. ।
पितृप्रसादादभवन् मम गोष्पदसन्निभ.[2] ॥ ४ ॥
अलसा प्राकृते केचिद् भवन्ति सुधिय क्वचित् ।
तत्सन्तोषाय भवतु वार्त्तिक वृत्तमौक्तिकम् ॥ ५ ॥
यो नानाविधमात्राप्रस्तारात् सागर प्राप्य ।
गरुडमवञ्चयदतुल स हि नाग. पिङ्गलो जयति ॥ ६ ॥

गुरुलघुस्थिति·

दीर्घ. सयुक्तपर पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुत ।
स गुरुर्वक्रो द्विकलो लघुरन्य शुद्ध एककल. ॥ ७ ॥

---

१. ग सेवा । २. ग सन्निभो ।

यथा –

गौरीवरं भस्मविभूषिताङ्ग, इन्दुप्रभाभासितभालदेशम् ।
गङ्गातरङ्गावलिभासमानमूर्द्धानमानन्दितमानमामि ॥ ८ ॥

रेफहकारव्यञ्जनसयोगात् पूर्वसस्थितस्य भवेत् ।
वैकल्पिक लघुत्व वर्णस्योदाहरन्ति विद्वास· ॥ ९ ॥

यथा –

जयति प्रदीपितकामो मम मानसह्रदनिमज्जनान्नित्यम् ।
यस्य गलगरलदम्भान् मालिन्यमन्तरस्थितं[1] लग्नम् ॥ १० ॥

विकल्पस्थिति

यद्यपि दीर्घं वर्णं जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघु ।
वर्णांस्त्वरित पठितान् द्वित्रानेकं विजानीत[2] ॥ ११ ॥

यथा –

अरे रे* ! कथय वार्त्तां दूति तस्यातिचित्रा
मम सविधमुपैष्यत्येष कृष्णः कदा नु ।
इति चटु कथयन्त्या राधिकाया तदानी-
मति-डगमगदेह केशवोप्याऽऽविरासीत् ॥ १२ ॥

काव्यलक्षणेऽनिष्टफलवेदनम्

कनकतुला यद्वन्नहि सहते परमाणुवैषम्यम् ।
श्रवणतुलो नहि तद्वच्छन्दोभङ्गेन वैषम्यम् ॥ १३ ॥
लक्षणविकल काव्य पण्डितसंसत्सु यो बुध पठति ।
हस्ताग्रलग्नखङ्गं कृत्त शीर्षं न जानाति ॥ १४ ॥

मात्राणां गणव्यवस्थाप्रस्तारश्च

रसबाणवेददहनै पक्षाभ्या चैव सम्मिता मात्रा. ।
येषा ते प्रस्ताराष्ट-ठ-ड-ढ-णेत्येव सज्ञका प्रोक्ता ॥ १५ ॥
ट-त्रयोदशभेदा स्युरष्टौ भेदाष्ठकारजा ।
डस्य भेदा पञ्च ढस्य त्रयो द्वावन्तिमस्य तु[3] ॥ १६ ॥
गुरो आद्यस्याधो[4] लघुकमवधेहि प्रथमत-
स्तत शेपान् वर्णानुपरितनतुल्यान् घटयत[5] ।

---

१ क ख मेन्तरस्थितं । अन्त स्थितमिति पाठः समीचीन (स०) । २ ग विजानीयात् ।
३ ग त्रय णस्य द्वय स्मृतम् । ४ ग. पूर्वस्याधो । ५. ख ग विरचय ।
*अत्र 'रे रे' इति लघुपठनीये स्त ।

स्थले शून्ये तद्वद् घटय[1] गुरुमेवेति नियमो,
लघुं सर्वो वर्णो भवति पदमध्ये च शिशुका:[2] ॥ १७ ॥
मात्राप्रस्तारे खलु यावद्भिः स्यात् कलापूर्ति ।
तावन्तो गुरुलघवो देया इत्यनियमः प्रोक्त ॥ १८ ॥

मात्रागणानां नामानि

हर-शशि-सूर्या शक्रः शेषोप्यहि-कमल-धातृ-कलि-चन्द्राः ।
ध्रुव-धर्म-शालिसंज्ञा. षण्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा[3] ॥ १९ ॥
इन्द्रासनमथ सूर्यश्चापो हीरश्च शेखरः कुसुमम् ।
अहिगण-पापगणाविति पञ्चकलस्यैव सज्ञा स्यु ॥ २० ॥
गुरुयुग्म. किल कर्णो गुर्वन्त· करतलो भवति ।
गुरुमध्यम पयोधर इति विज्ञेयस्तृतीयोऽपि ॥ २१ ॥
आदिगुरुर्वसुचरणो विप्रो लघुभिश्चतुर्भिरेव स्यात् ।
इति हि चतुष्कलभेदाः पञ्चैव भवन्ति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २२ ॥
ध्वज-चिह्न-चिर-चिरालय-तोमर-पत्राणि चूतमाले च ।
रस-वास-पवन-वलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥ २३ ॥
करताल-पटह-ताला सुरपतिरानन्दतूर्यपर्याया ।
निर्वाण-सागरावपि गुर्वादित्रिकलनामानि ॥ २४ ॥
सात्त्विकभावास्ताण्डवनारीणा भामिनीना च ।
नामानि यानि लोके त्रिलघुगणस्यैव तानि जानीत ॥ २५ ॥
नूपुर-रसना-चामर-फणि-मुग्धाभरण-कनक-कुण्डलकम् ।
वक्रो मानस-वलयौ हारावलिरिति गुरोश्च नामानि ॥ २६ ॥
सुप्रिय-परमौ कथितौ द्विलघोरिति नाम सक्षेपात् ।
अथ कथयामि चतुष्कलनामान्यन्यानि पिङ्गलोक्तानि* ॥ २७ ॥
सुरतलता गुरुयुगल कर्णसमानेन रसिक-रसलग्नौ ।
लम्बित-सुमति-मनोहर-लहलहितानां च नाम्नापि[4] ॥ २८ ॥
कर-पाणि-कमल-हस्ता. प्रहरण-भुजदण्ड-बाहु-रत्नानि ।
वज्र[5] गजभुजयोरप्याभरण स्याच्चतुष्कले संज्ञा. ॥ २९ ॥
कर्णपर्यायिन. शब्दा. गुरुयुग्मस्य वाचका. ।
हस्तायुधस्य पर्याया गुर्वन्तस्यैव बोधका ॥ ३० ॥

१ ग. पूर्व रचय । २. ख नियत । ३ ग भेद । ४ ख. ग. नामानि । ५. ग वज्रो ।
* टि. द्रष्टव्य -प्राकृतपैंगलम् । (परि० १, गाथा २३–३२) ।

भूपति-नायक-गजपति-नरेन्द्र-कुचवाचका. शब्दा ।
गोपाल-रज्जु-पवना मध्यगुरोर्बोधका[1] ज्ञेया. ॥ ३१ ॥
दहन-पितामह-ताता: पदपर्यायश्च गण्ड[2]-वलभद्रौ ।
जङ्घायुगल रतिरित्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले सञ्ज्ञा ॥ ३२ ॥
द्विज-जाति-शिखर-विप्रा परमोपायेन[3] पञ्चशर-बाणौ ।
द्विजवर इत्यपि कथिता[4] लघुकचतुष्कले गणे सञ्ज्ञा ॥ ३३ ॥
सुनरेन्द्राधिप-कुञ्जरपर्याया रदन-मेघयोश्चापि ।
ऐरावत-तारापतिरित्यादि लघोश्च पञ्चमात्रस्य ॥ ३४ ॥
वीणा-विराट्-मृगेन्द्रामृत-विहगा गरुडपर्याया. ।
जोहल[5]-यक्ष-भुजङ्गा मध्यलघो पञ्चमात्रस्य ॥ ३५ ॥
विविधप्रहरणनामा पञ्चकल पिङ्गलेनोक्त ।
गज-रथ-तुरङ्गम-पदातिसञ्ज्ञक: स्याच्चतुर्मात्र ॥ ३६ ॥
ताटङ्क-हार-नूपुर-केयूरकमिति भवन्ति गुरुभेदा. ।
शर-मेरुदण्ड-कनक लघुभेदा इति विजानीत ॥ ३७ ॥
शब्द-रूप-रस-गन्ध-काहलै पुष्प-शङ्ख-बाणनामभि ।
सत्प्रबन्ध इह **वृत्तमौक्तिके** ज्ञायता लघुकनाम पण्डिता ॥ ३८ ॥

वर्णवृत्तानां गणसञ्ज्ञा

मस्त्रिगुरुरादिलघुको यगणो रगणश्च लघुमध्य ।
अन्तगुरु. सस्तगणोऽप्यन्तर्लघुमध्यगुरुको ज: ॥ ३९ ॥
आदिगुरुर्भगणोऽपि च नगणस्त्रिलघुर्मत सद्भि: ।
इति पिङ्गलप्रकाशित गणसञ्ज्ञा वर्णवृत्तानाम् ॥ ४० ॥

गणदेवता

पृथ्वी-जल-शिखि-पवना गगन द्युमणीन्दु-पन्नगान् क्रमत[6] ।
इत्यष्टौ गणदेवान् पिङ्गलकथितान् विजानीत ॥ ४१ ॥

गणानां मैत्री

मगणस्त्रिलघू[7] मित्रे भृत्यौ भयगणौ स्मृतौ ।
उदासीनौ जतगणावरी रसगणौ मतौ ॥ ४२ ॥

गणदेवानां फलाफलम्

मगणो ऋद्धिकार्यं यगण मुखसम्पदो धत्ते ।
रगणो ददाति रमण 'सगणोदेशाद् विवासयति'[8] ॥ ४३ ॥

---

१ ग बोधिका । २ ग गण्डु । ३ ग. परमोपासनेन । ४ ग. नास्ति पाठ । ५ ग योहल । ६ ख ग पृथिवीजलशिखिकाला गगन सर्यश्च चन्द्रमा नाग. । ७. ग. त्रिगुरु । ८ '-' ग जगणो रुजमादधात्येव ।

*तगण शून्य[1] तनुते जगणो रुजमादधात्येव ।
भगणो मङ्गलदायी नगण सकल फल दिशति* ॥ ४४ ॥
इति पिङ्गलेन कथितो गणदैवानां फलाफलविचार ।
ग्रन्थस्यादौ कविना बोद्धव्य. सर्वथा यत्नात् ॥ ४५ ॥
मित्रद्वयेन ऋद्धि स्थिरकार्यं भृत्ययोर्भवति ।
मित्रोदास्ताभ्यामपि कार्याभावश्च बन्धोऽपि ॥ ४६ ॥
मित्रारिभ्या बान्धवपीडा कार्यं च मित्रभृत्याभ्याम् ।
भृत्याभ्यामुग्रो[2]ऽसुख[3]-मुदास्तभृत्यौ धन हरत. ॥ ४७ ॥
भृत्योदासीनाभ्यां भृत्यारिभ्या[4] च हाक्रन्द[5]· ।
अल्प कार्यमुदास्तान् मित्रात् सजायतेप्युदास्ताभ्याम् ॥ ४८ ॥
सम्यगसम्यङ् न भवत्युदास्तशत्रू च वैरिण[6] कुरुत ।
शत्रोर्मित्रान्न फल स्त्रीनाश शत्रुभृत्ययोर्भवति ॥ ४९ ॥
शत्रूदासीनाभ्यां धननाश सर्वथा भवति ।
शत्रुभ्या नायकमृतिरिति फलमफल गणद्वये कथितम् ॥ ५० ॥

मात्रोद्दिष्टम्

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयत ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उर्वरितैश्च[7] तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

मात्रानष्टम्

अथ मात्राणा नष्टं यददृष्ट[8] पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
यत्कलकप्रस्तारो लघव कार्याश्च तावन्त ।
दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्क[9] लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
उर्वरितोवरितानामङ्कानां यत्र[10] लभ्यते भाग ।
परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

वर्णोद्दिष्टम्

द्विगुणानङ्कान् दत्वा वर्णोपरि लघुशिर स्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीत ॥ ५५ ॥

- ग. पतो – त्याजयति सोऽपि देशं, तगणः शून्यफल च विदधाति ।
मगल भगणो दायी, नगणात् सर्वं समीचीनम् ।

१. ख. शून्य फलेन विदधति । २. ख ग. मग्रे । ३ फ सख । ४ ग भृत्यादिभ्यां । ५ ग महाक्रन्द । ६. ग वैरिणां । ७. ग उच्चरितैश्च । ८ ग यिद्वृङ्कि-यंत्र । ९. ग प्रश्नाङ्क । १० ग नास्ति पाठ ।

वर्णनष्टम्

नष्टे पृष्ठे भाग कर्त्तव्य पृष्ठसंख्याया ।
समभागे ल[1] कुर्यात् विषमे दत्वैकमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

वर्णमेरु

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णे[2] कुर्यादाद्यन्तयो पुन ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यात्(न्?)प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
वर्णमेरुरय सर्वगुर्वादिगणवेदकम्[3] ।
प्रस्तारसख्याज्ञानञ्च फलं तस्योच्यते वुधै. ॥ ५८ ॥

वर्णपताका

दत्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेदपरान् ।
अङ्क पूर्वं यो वै भृतस्तत पक्तिसञ्चार ॥ ५९ ॥
अङ्का पूर्वं भृता येन तमङ्क भरणे[4] त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं य सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत् ॥ ६० ॥
प्रस्तारसख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेय विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

मात्रामेरु.

एकाधिककोष्ठाना द्वे द्वे पक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्क पूर्वभागे तु ॥ ६२ ॥
एकाङ्कमयुक्पक्ते समपङ्क्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पङ्क्ति प्रपूर्ति स्यात् ॥ ६३ ॥
आद्याङ्केन तदीयै शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थै ।
उपरिस्थितेन कोष्ठ विषमायां पूरयेत् पक्तौ ॥ ६४ ॥
समपक्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसस्थैर्वामस्थितैरङ्कै ॥ ६५ ॥
मात्रामेरुरय प्रोक्त पूर्वोक्तफलभागिति ।

मात्रापताका

अथ मात्रापताकाऽपि कथ्यते कवितुष्टये ॥ ६६ ॥
दत्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये[5] ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततो भवेत्[6] पक्तिसञ्चार ॥ ६७ ॥
एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
द्वित्र्यादीना विलोपे तु पक्तिर्द्वित्र्यादिवोधिनी ॥ ६८ ॥

---

१. ग लघु ।　२ ख वर्णान् । ३ ख. ग. वेदनम् । ४. ग. भरण । ५. ग. अन्त्यैः ।
६ ग नास्ति पाठ ।

वृत्तद्वयस्थगुरुलघुज्ञानम्

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णांस्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते[1] ॥ ६९ ॥

वर्णमर्कटी

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसख्यातं[2] पक्ती[3] रचय षट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपराया तु द्विगुणान् अक्षरसङ्ख्येषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपक्तिस्थितैरङ्कैर्विभाव्यापरपक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्थपक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
[4]पूरयेत् षष्ठ-पञ्चम्याव(म)र्द्धैस्तुर्याङ्कसम्भवै ।
एकीकृत्य चतुर्थस्थ-पञ्चमस्थाङ्ककान् सुधी ॥ ७३ ॥
कुर्यात् पक्तितृतीयस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेय पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्त भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य[5] षडेते ज्ञायन्ते पक्तितः क्रमत ॥ ७५ ॥

मात्रामर्कटी

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पक्तिषट्क[6],
कुर्यान् मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो. ।
तेषु द्व्यादोनादिपक्ति(क्ता)वथाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥
दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्या-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपक्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥
प्रथमे द्वितीयमङ्क द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
हत्वा बाणद्विगुण तद् द्विगुण नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चमपक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्वा तथैकमङ्क कुर्यात्तेनैव पञ्चम[7] पूर्णम्[8] ॥ ७९ ॥

---

१. ग. विशिष्यते । २. ग. सज्ञातं । ३ ग. पंक्ति । ४. ग. पूरयत्यष्टपञ्चभ्या वेधैः ५ ग प्रस्तारश्च । ६. ग षट्के । ७. ग पञ्चमां । ८ ग पूर्णाम् ।

त्यक्त्वा पञ्चममङ्क पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।
दत्वा तथैवमङ्क षष्ठ[1] कोष्ठ प्रपूरयेद्[2] विद्वान् ॥ ८० ॥
कृत्वैक्य चाङ्काना पञ्चमपक्तिस्थिताना च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्क हित्वैक पूरयेन् मुने[3] कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
एव निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।
[4]प्रकृतानुपयोगवशान्न कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥
एव पञ्चमपक्ति कृत्वा पूर्णां च प्रथममेकाङ्कम्[5] ।
दत्वा पञ्चमपक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-षष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपक्ति पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्त प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पक्तित पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

नष्टादिफलम्

नष्टोद्दिष्ट यद्वन् मेरुद्वितय तथा पताका च ।
मर्कटिकाऽपि तद्वत् कौतुकहेतुर्निबध्यते तज्ज्ञै. ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसख्या

षड्विंशति. सप्तशतानि चैव,
　　तथा सहस्राण्यपि सप्तपक्ति. ।
लक्षाणि[6] दृग्वेदसुसम्मितानि,
　　कोटचस्तथा रामनिशाकरैः स्यु ॥ ८७ ॥

१३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिषडधिकविंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।
उक्ता समस्तसख्या लक्ष्यन्ते जातयश्चार्या[7] ॥ ८८ ॥

गाथाभेदा.

मुनिबाणकला गाथा विगाथापि तथा भवेत् ।
वेदबाणकला गाहू[8] षष्टचो(यु)द्गाथा भवेत् पुन. ॥ ८९ ॥
गाहिनी स्याद् द्विषष्ट्या तु मात्राणा सिंहिनी तथा ।
चतु.षष्टया कलाना तु स्कन्धक कथ्यते बुधैः ॥ ९० ॥

---

१ ग नास्ति पाठः । २. ग षं पूरयेद् । ३ ग नास्ति पाठः । ४. ग. प्रकृतोपयोगवशते । ५ ग एकैकम् । ६. ख. ग. लक्षाणि पञ्चाशदष्टाष्टसख्या, हीनानि कोटचो नवपक्तिसख्या । ७ ग न लक्षा जानयश्चार्या । ख. चार्या. । ८ ग दूणा ।

१ गाथा

प्रथमे द्वादशमात्रा मात्रा ह्यष्टादश द्वितीये तु[1] ।
दहने द्वादशमात्रास्तुर्ये दशपञ्च सम्प्रोक्ताः ॥ ९१ ॥
इति गाथाया लक्षणमार्यासामान्यलक्षणं चाऽथ ।
षष्ठे जो वा विप्रो विषमे न हि जो गणाश्च गुर्वन्ताः ॥ ९२ ॥
सप्त हरय सहारा. षष्ठे रज्जुर्द्विजोऽपि वा भवति ।
चरमदले लघु षष्ठ विषमे पवनस्तु नैव स्यात् ॥ ९३ ॥

यथा–

गोकुलहारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरिः पायात् ॥ ९४ ॥

एकस्मात्तु कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।
नायकहीना रण्डा वेश्या बहुनायका भवति ॥ ९५ ॥

गाथायाः पञ्चविंशतिभेदाः

सर्वस्या गाथाया. मुनिबाणसमाख्यया कला ज्ञेयाः ।
प्रथमे दले खरामैरपरेऽपि दलेऽश्वपक्षाभ्याम्[2] ॥ ९६ ॥
नखमुनिपरिमितहारा वह्निमिता यत्र लघव. स्यु. ।
सा गाथाना गाथा प्रथमा खाग्न्यक्षरा लक्ष्मी. ॥ ९७ ॥[3]
एकैकगुरुवियोगाल्लघुद्वयस्यापि सयोगात् ।
अस्या भवन्ति भेदा शरपक्षाभ्या मिता एव ॥ ९८ ॥[4]
मुनिपक्षाभ्यां हारा लघवो दहनैश्च स. प्रथमः ।
विधुबाणैर्लघव. स्युर्गुरवो दहनैश्च सोऽन्त्य. स्यात् ॥ ९९ ॥
त्रिंशद्वर्णा लक्ष्मी वदते सर्वपण्डिता. कवय. ।
नश्यत्येकैको यद्वर्ण. कथयामि तानि नामानि ॥ १०० ॥[5]
लक्ष्मीऋर्द्धिर्बुद्धि[6]र्लज्जा विद्या क्षमा च वै देही[7] ।
गौरी धात्री चूर्णा[8] छाया कान्तिर्महामाया ॥ १०१ ॥
कीर्ति. सिद्धिर्मानी[9] रामा विश्वा च वासिता च मता ।
शोभा हरिणी चक्री कुररी[10] हसी च सारसी च मता ॥ १०२ ॥

---

१. ग. ऽपि । २ ग प्रथमदले च खराम. स्वरपक्षाभ्यां मिता एव । ख. स्वरपक्षाभ्याम् । ३-४. ग पद्यद्वयं ९७-९८ नास्ति । ५. ख ग. पद्यमेकं १०० नास्ति । ६. ग. वृद्धि । ७. ख ग. देही च । ८ ग. पूर्णा । ९ ग. मानिनी । १० ग. तुरगी ।

इति भेदाभिधा. पित्रा रचितायामतिस्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्या बोध्यैतासामुदाहृति * ॥ १०३ ।

इति गाथा

२. विगाथा

यस्या द्वितीयचरणे मात्रा शरभूमिभि प्रोक्ता. ।
सैव विगाथा तुर्ये चरणे वसुभूमिसङ्ख्यकाश्च कला ॥ १०४ ॥

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचिताया पिङ्गलप्रदीपाख्याया प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गाथाच्छन्दसः सप्तविंशतिभेदा —

यथा–

तरणितनूजातीरे चीरेऽपहृतेऽपि वीरेण ।
हिमनीरे रमणीनामकुटिलधारेव मनसि संजज्ञे ॥ १०५ ॥

इति विगाथा

३. गाहू[1]

पूर्वार्द्धे च परार्द्धे सप्ताधिकविंशतिर्मात्राः ।
अर्द्धद्वयेऽपि यस्या. षष्ठो ल. सैव गाहू स्यात् ॥ १०६ ॥

यथा–

अतिचटुलचन्द्रिकाञ्चितचञ्चलनवकुन्तल किमपि ।
राधावितनुज[2]वाधासाधारणमौषधं जयति ॥ १०७ ॥

यथा वा –

कलशीगतदधिचोर रदजितहीरं स्फुरच्चीरम् ।
राधावदनचकोर नन्दकिशोरं नमस्यामः ॥ १०८ ॥

इति गाहू ।

४. उद्गाथा

यस्या द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे भवन्ति वै मात्राः ।
वसुविधुसख्यायुक्ता. सोद्गाथा पिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ १०९ ॥

यथा –

उपवनमध्यादभिनवविलोकनासक्तराधिकाकृष्णौ ।
अन्योन्यगमनवेलामपेक्षमाणौ[3]न जग्मतु. क्वापि ॥ ११० ॥

इत्युद्गाथा

५. गाहिनी

यस्या द्वितीयचरणे वसुविधुमात्रा भवन्ति तुर्ये तु ।
पादे विंशतिमात्राः सा गाहिनिका तु सिंहिनी विपरीता ॥ १११ ॥

---

१. ग. गाहा । २. ग. वितन । ३. ख. प्रवेक्ष्यमाणौ, ग. प्रवेक्ष्यमाणो ।

यथा–

स जयति मुरलीवादनकेलिकलाभिर्विमोहयन् गोपीः ।
वृन्दावनान्तभूमौ रासरसाक्षिप्तविबुध[1]विधिरुद्रमुख. ।। ११२ ।।

इति गाहिनी ।

६. सिंहिनी

यस्या द्वितीयचरणे विंशतिमात्रा मनोहराकारगुणा ।
सा सिंहिनी प्रदिष्टा नागाधिपपिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ।। ११३ ।।

यथा –

वन्देऽरविन्दनयनं वृन्दारकवृन्दवन्दितपदाम्भोजम् ।
नन्दानन्दनिधान नवजलधररुचिरमन्दिरारमणम् ।। ११४ ।।

इति सिंहिनी

७. अथ स्कन्धकम्

यस्य द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे च विंशतिर्मात्रा स्यु. ।
स स्कन्धक[2] इति कथितो यस्मिन्नष्टौ गणाश्चतुर्मात्राभि. ।। ११५ ।।

यथा–

राधामुखाब्जतरणि. तरणिः संसारसागरोत्तरणविधौ ।
स जयति निजभक्तानां कामितदाता दुरन्तशक्तिसहाय. ।। ११६ ।।

स्कन्धकस्याऽष्टाविंशतिभेदाः

नन्दो[3] भद्र शिवः शेष. सारङ्ग-ब्रह्म-वारणा[4] ।
वरुणो मदनो नील तालाङ्क शेखर. शर ।। ११७ ।।
गगन शरभो विमतिः क्षीरं नगरं नर. स्निग्ध ।
स्नेहलु-मदकल-भूपा[5] शुद्ध कुम्भः सरिः कलश. ।। ११८ ।।
शशीति सञ्ज्ञका भेदा. स्कन्धकस्य प्रकीर्तिताः ।
वसुपक्षमितास्ते स्यु गुरुह्रासाल्लवृद्धित ।। ११९ ।।
त्रिंशद्गुरवो यस्मिन् वेदा लघवश्च स प्रथम ।
वसुशरलघवो यस्मिन् गुरुत्रय चैव सोऽन्त्य. स्यात् ।। १२० ।।

---

१ ग. विबुध इति पाठो नास्ति । २ ग. स्कन्ध । ३ ग मन्दो । ४ ग चारिण ।
५ ग स्नेहलुकमलभूपाला. ।

द्वितीयं षट्पद-प्रकरणम्

१. दोहा

त्रिदशकला विषमे रचय सम एकादश धेहि ।
दोहालक्षणमेतदिति कविभिः कथितमवेहि ।। १ ।।
टगण-डगण-ढगणा. क्रमत इति विषमे च पतन्ति ।
समपादान्ते चैककलमिति दोहा कथयन्ति ।। २ ।।

यथा–

गौरीविरचिततनुशकल मस्तकराजितगङ्ग ।
जय वृषभध्वज पुरमथन महादेव नि सङ्गः ।। ३ ।।

दोहाया त्रयोविंशतिभेदा

यस्या. प्रथमतृतीये पादे जगणा भवन्ति सा कर्त्तु[1] ।
श्वपचगृहीतस्त्रीवद्[2] दोहादोष प्रकाशयति ।। ४ ।।
भ्रमर-भ्रामर-शरभाः श्येनो मण्डूक[3]-मर्कटौ करभः ।
मदकल-पयोधर-चला. नरो मराल[4]स्तथा त्रिकल ।। ५ ।।
वानर-कच्छौ मत्स्य. शार्दूलोप्यहिवरो व्याघ्र ।
उन्दुर-शुनक-बिडालाः सर्पश्चैते प्रभेदा स्युः ।। ६ ।।
रसपक्षवर्णयुक्तो द्वाविंशतिगुरुक-वेदलघुसहित ।
कथित प्रथमो भेद. गुरुशून्य सर्वलघुकोऽन्त्य ।। ७ ।।[5]
एकैकस्य गुरोर्लोपाल्लघुद्वयविवृद्धितः ।
दोहाभेदस्समुद्दिष्टास्त्रयोविंशतिसंख्यका. ।। ८ ।।
स्फुटतरमेते भेदाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः पित्रा ।
स्वनिबन्धे* कविवर्यैस्तत एव विलोकनीयास्ते ।। ९ ।।

इति दोहा ।

---

१. ग. कर्तुं । २. ग. तावद् । ३. ग. सद्धूक । ४. ग. रसाल । ५. ग पद्यद्वय ६–७. नास्ति ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुह्रास-लघुवृद्धयनुपातेन दोहा–द्विपथाच्छन्दसः त्रयोविंशभेदाना वर्गीकरणम्—

१ भ्रमर·	२२ गुरु	४ लघु	२६ अक्षर
२ भ्रामर.	२१ गुरु	६ लघु	२७ अक्षर
३ शरभ	२० गुरु	८ लघु	२८ अक्षर

२. रसिका

द्विजवरयुगलमुपनय,
दहनलघुकमिह रचय ।
इति विधिशरभववदन–
चरणमिह कुरु सुवदन ।
इति हि रसिकमनुकलय,
भुजगवर कथितमभय ॥ १० ॥

यथा –

जय जय हर वृषगमन,
तरणिदहन विधुनयन ।
नयनदहन जितमदन,
निजशरकृतपुरकदन ।
मम हृदयगतमपनय–
मविनयमधिकमपनय ॥ ११ ॥

---

४ श्येन.	१९ गुरु	१० लघु	२९ अक्षर
५ मण्डूक·	१८ गुरु	१२ लघु	३० अक्षर
६ मर्कट.	१७ गुरु	१४ लघु	३१ अक्षर
७ करभ.	१६ गुरु	१६ लघु	३२ अक्षर
८ नर	१५ गुरु	१८ लघु	३३ अक्षर
९ मराल·	१४ गुरु	२० लघु	३४ अक्षर
१० मदकल.	१३ गुरु	२२ लघु	३५ अक्षर
११ पयोधर.	१२ गुरु	२४ लघु	३६ अक्षर
१२ चलः	११ गुरु	२६ लघु	३७ अक्षर
१३ वानरः	१० गुरु	२८ लघु	३८ अक्षर
१४ त्रिकलः	९ गुरु	३० लघु	३९ अक्षर
१५ कच्छपः	८ गुरु	३२ लघु	४० अक्षर
१६ मत्स्य	७ गुरु	३४ लघु	४१ अक्षर
१७ शार्दूल·	६ गुरु	३६ लघु	४२ अक्षर
१८ अहिवर.	५ गुरु	३८ लघु	४३ अक्षर
१९ व्याघ्र·	४ गुरु	४० लघु	४४ अक्षर
२० विडालः	३ गुरु	४२ लघु	४५ अक्षर
२१ शुनकः	२ गुरु	४४ लघु	४६ अक्षर
२२ उन्दुर·	१ गुरु	४६ लघु	४७ अक्षर
२३ सर्प	० गुरु	४८ लघु	४८ अक्षर

रसिकाया अष्टौ भेदा.

यस्याश्चतुष्कलद्वयमादौ स्यात् पुनरपि त्रिकल: ।
एव षट्पदयुक्ता या सौक्कच्छा[1] भुजङ्गमप्रोक्ता ॥ १२ ॥
अत्र लघुयुगवियोगादेकैकगुरोश्च सयोगात् ।
अष्टौ भवन्ति भेदा. शेषा. स्युर्दण्डकन्यायात् ॥ १३ ॥
रसिका हसी रेखा तालाङ्का कम्पिनी च गम्भीरा ।
काली कलरुद्राणी इत्यष्टौ भेदनामानि ॥ १४ ॥
उदाहरणमञ्जर्यामुदाहृतिरतिस्फुटा. ।*
एतेषामपि भेदानां द्रष्टव्या कविपण्डितै·[2] ॥ १५ ॥

इति रसिका

३. रोला

या चरणे कलाना चतुरधिकविंशैर्गदिता,
सा किल रोला भवति नागकविपिङ्गलकथिता ।
एकादशकलविरतिरखिलजनचिन्ताहरणा,
सुललितपदकुलकलितविमलकविकण्ठाभरणा ॥ १६ ॥

यथा–

अरिगणमभितापयति विबुधलोकानुपगच्छति,
धरणिविवरगतभुजगनिकरमभितापेनर्च्छति ।
सकलदिगीशपुरमभिनिजतापैरभियोजयति,
भूप कथं प्रतापस्तव[3] कीर्त्ति न शोषयति ॥ १७ ॥

---

१. ग यासौ कुच्छा । ख. या सा कच्छी । २. ग. केचिद् पण्डितै. । ३. ग प्रस्तावस्तव ।
*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुवृद्धि-लघुह्रासानुक्रमेण रसिकाया अष्टौ भेदा.—

१ रसिका	६६ लघु	० गुरु	६६ मात्रा
२ हसी	६४ लघु	१ गुरु	,, ,,
३ रेखा	६२ लघु	२ गुरु	,, ,,
४ तालङ्किनी	६० लघु	३ गुरु	,, ,,
५ कम्पिनी	५८ लघु	४ गुरु	,, ,,
६ गम्भीरा	५६ लघु	५ गुरु	,, ,
७ काली	५४ लघु	६ गुरु	,, ,,
८ कलरुद्राणी	५२ लघु	७ गुरु	,, ,,

रोलायाः त्रयोदशभेदाः

कुन्द· करतल-मेघौ तालाङ्को रुद्र-कोकिलौ कमलम् ।
इन्दु शम्भुश्चमरो गणेश-शेषौ सहस्राक्ष ॥ १८ ॥
त्रयोदशगुरुर्यत्र सप्ततिर्लघवस्तथा ।
स आद्यभेदो[1] विज्ञेयस्सोऽन्त्य एकगुरुर्यत्त ॥ १९ ॥
एकैकस्य गुरोर्नाशा[2] ल्लघुद्वयनिवेशत[3] ।
भेदास्त्रयोदश ज्ञेया रोलायाः[4] कविशेखरैः ॥ २० ॥
त्रयोदशैव भेदानामुदाहृतिरुदीरिता ।
उदाहरणमञ्जर्यां* द्रष्टव्या तत एव हि ॥ २१ ॥

इति रोला ।

४. गन्धानकम्

रचय प्रथमं पदं मुनिविधुवर्णरचित,
तथा द्वितीयमपि वसुविधुवर्णैर्यमकचितम्[5] ।
तथान्यदलमपि यतिगणनियमरहित,
गन्धानकवृत्तमवधेहि कविपिङ्गलगदितम् ॥ २२ ॥

---

१. ग आदिभेदो । २. ग ह्रासात् । ३. ग. विवृद्धितः । ४ ग रोलायां । ५ ग. युतम् ।

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे रोलाया त्रयोदशभेदाना गुरुह्रास-लघुवृद्ध्यनुसारेण प्रदर्शनम्.—

१ कुन्द	१३ गुरु	७० लघु	९६ मात्रा
२ करतलः	१२ गुरु	७२ लघु	,, ,,
३ मेघ	११ गुरु	७४ लघु	,, ,,
४ तालाङ्क	१० गुरु	७६ लघु	,, ,,
५ कालरुद्रः	९ गुरु	७८ लघु	,, ,,
६ कोकिलः	८ गुरु	८० लघु	,, ,,
७ कमलम्	७ गुरु	८२ लघु	,, ,,
८ इन्दु.	६ गुरु	८४ लघु	,, ,,
९ शम्भुः	५ गुरु	८६ लघु	,, ,,
१० चामरः	४ गुरु	८८ लघु	,, ,,
११ गणेश्वरः	३ गुरु	९० लघु	,, ,,
१२ सहस्राक्षः	२ गुरु	९२ लघु	,, ,,
१३ शेषः	१ गुरु	९४ लघु	,, ,,

यथा–

लक्ष्मण दिशि दिशि विलसति घनमनु शम्पा,
इयमपि चञ्चलतरङ्गचलजलरुहपम्पा ।
दयितोदन्त सम्प्रति[1] कथमपि न ह्यवगतं,
सोढु शक्यो विरह. कथमिह हि मयकानुगतः[2] ।। २३ ।।

यथा वा–

गर्जति जलधरः परिनृत्यति शिखिनिवहः,
नीपवनीमवधूय वहति दक्षिणगन्धवह. ।
दूरे दयित. कथय सखि ! किमिह हि[3] करवै,
प्रज्वालय दहन कटिति[4] शलभमनुकरवै ।। २४ ।।

इति गन्धानकम् ।

५. चौपैया छन्द

चौपैया छन्द कविकुलचन्द्र कथयति पिङ्गलनाग,
कुरु सप्तचतुष्कलगणमिह पुष्कलमधिगुरुचरणविभाग ।
इह दिग्वसुसूर्यै पण्डितवर्यैर्यतिरिह मात्रास्त्रिशत्,
यस्मिन् किल[5] कथिते कविजनमथिते राजति नृपवरससत् ।।२५।।
या विंशत्यधिकशतैर्मात्राणामेकपादेषु ।
सा चौपैया न्यस्यादशीत्यधिकशतचतुष्टयकलाका ।। २६ ।।

यथा–

चेत स्मरमहित कमलासहित दारितदारुणकस,
हतधेनुकदानवमिच्छामानवमृषिजनमानसहसम् ।
यमुनावरतीरे तरलसमीरे कारितगोपीरास,
भवबाधाहरण राधारमण कुन्दकुसुमसमहासम् ।।

व्रजजनकुलपाल लालितवाल वादितमृदुरववश,[6]
रोचनयुतभाल धृतवनमाल शोभिततरलवतसम् ।
दितिजव्रजकाल वादितताल कृतसुरमुनिगणशस,
रुचिकलिततमाल जितघनजाल भासितयादववंशम् ।।

सरसीरुहनयन जगतामयन कण्ठतलस्थितहार,
धृतगोपसुवेष कुञ्चितकेशं स्मितजितनवघनसारम् ।

---

१ ग दयितोदन्तमिदानीं । २. ख ग न सहनमिदं दुःखं मरण शरणमनुगत । ३. ग नास्ति पाठ. । ४ ख. ग झटिति । ५. ग कल । ६ ग मृदुतरवश ।

जितनयनचकोरं नन्दकिशोर गोपीमानसचोर,
कृतराधाधार सज्जनतार दितिसुतनाशकठोरम् ॥
नवकलितकदम्ब जगदवलम्व सेवितयमुनातीर,
नन्दितसुरवृन्दं जगदानन्द गोपीजनहृतचीरम् ।
धृतधरणीवलय करुणानिलयं दन्तविनिर्जितहीर,
भवसागरपार भुवनागार नन्दसुत यदुवीरम् ॥ २७ ॥

इति चौपैया

६. घत्ता

पिङ्गलकविकथित्ता त्रिभुवनविदिता घत्ता द्विरसकला भवति ।
कुरु सप्तचतुष्कल-मन्त्यत्रिकल-त्रिलघुकमेतदपि द्विपदि ॥ २८ ॥
प्रथम दशसु यति. स्याद् वसुमात्राभिर्द्वितीयाऽपि ।
दहनावनिभिः पुनरपि यतिरिह(य)मेकार्द्धघत्तायाः ॥ २९ ॥

यथा–

भववाधाहरण राधारमण नन्दकिशोर स्मर हृदय ।
यमुनायास्तीरे तरलसमीरे कृतमनुरास त्वमनुसर[1] ॥ ३० ॥

इति घत्ता ।

७. घत्तानन्दम्

अहिपतिपिङ्गलकथितमयुतगुणयुतमिह भवति घत्तानन्दम् ।
यद्येकादशविरतिर्मुनिषु च भवति यतिरधिकजनितानन्दम् ॥ ३१ ॥
आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि ।
ठगण डगण द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥ ३२ ॥

यथा[2]–

दितिसुतनिवहगञ्जनमसुखभञ्जनमनुगतजनतापहरणम् ।
निखिलमानसरञ्जनमतिनिरञ्जनमस्तु किमपि महः शरणम् ॥ ३३ ॥

इति घत्तानन्दम्

८[१] काव्यम्

अथ षट्पदहेतुत्वात् काव्य सम्यङ् निरूप्यते ।
लक्ष्यलक्षणसयुक्तं प्रोल्लाल[3] सप्रभेदकम् ॥ ३४ ॥

---

१. ग. तमनुसर । २. ग. तद्यथा । ३. ख. ग. प्रोल्लासम् । उल्लालस्थाने ख ग प्रतौ सर्वत्रापि उल्लासं विद्यते ।

टगणमिहादौ कलय जलधिकलत्रयमनु च कुरु ।
टगण चान्ते रचय दहनयुतविप्र ज कुरु ॥ ३५ ॥
एकादशकलविरतिरथ दहनविधुभिरपि भवति ।
काव्य भुजगकविरिति बुधजनसुखकरमनुवदति ॥ ३६ ॥

यथा–

मुकुटविराजितचन्द्र चन्द्रकलोपमतिलकवर,
तिलकदहनवरनयन नयनजितमदनमनोहर ।
अमरनिकरकृतमनन मननिरवधिकरुणाकर,
करधृतमनुजकपाल विबुधजनतिमिरविभाकर ॥ ३७ ॥

६. उल्लालम्

आदौ त्रयस्तुरगास्तदनु त्रिकलो रसस्तथा तुरग ।
त्रिकलश्चान्ते यस्मिन्नुल्लाल त विजानीयात् ॥ ३८ ॥
षट्पदवृत्त द्वाभ्या वृत्ताभ्या जायते यस्मात् ।
काव्योल्लालौ तस्मान्निरूपितौ **वृत्तमौक्तिके** स्फुटत. ॥ ३९ ॥
प्रस्तारस्तु द्विधा प्रोक्तो गुरुलघ्वादिभेदत ।
अत्र लघ्वादिभेदेन प्रस्तारपरिकल्पना ॥ ४० ॥
चतुरधिका इह चत्वारिंशद् गुरवो भवन्ति काव्येऽस्मिन् ।
यद् गुरुहीन वृत्त शक्रं तन्नामतो वृत्तम्[1] ॥ ४१ ॥

यथा –

अभिनवजलधरपटलसदृशतर कनकवसनधर,
परिणतशशधरवदन समरविधिकरणचतुरतर ।
अविरतवितरणनिपुण सकलरिपुकुलवनकरिवर,
विदलितगजदलतुरग विगतभय जय जय यदुवर ॥ ४२ ॥

काव्यस्य पञ्चचत्वारिंशद्भेदाः

यथा यथाऽस्मिन् वलयो विवर्द्धते,
तथा तथा नाम विधिर्विधीयताम् ।
पठन्तु[2] शम्भु प्रथम ततो बुधा,
भृङ्ग तदन्ते श्रुतियुग्मसम्भवम् ॥ ४३ ॥

---

१ ग वित्त । २ ख ग पठन्ति ।

आदाय गुरुविहीन शक्रं भेदान् बुधाः पठत ।
इन्द्रियवेदैर्गणितान् नागाधिपपिङ्गलप्रोक्तान् ।। ४४ ।।
अथ लघुयुग्मविलोपा[1]देकैकगुरोर्विवृद्धित क्रमश. ।
बाणाम्बुधिपरिगणिता भेदाः सम्यक् प्रदर्श्यन्ते ।। ४५ ।।

यथा–

शक्रः शम्भु सूर्यो गण्ड. स्कन्धस्तथा विजयः ।
तालाङ्क-दर्प-समराः सिंह. शेषस्तथोत्तेजा. ।। ४६ ।।
प्रतिपक्ष. परिधर्मो मराल-दण्डौ मृगेन्द्रश्च ।
मर्कट-मदनौ राष्ट्रो वसन्त-कण्ठौ मयूरोऽपि ।। ४७ ।।
बन्धो भ्रमरोऽपि तथा भिन्नोऽय स्यान्महाराष्ट्रः ।
बलभद्रोऽपि च राजा वलितो रामस्तथा च मन्थान. ।। ४८ ।।
मोहो बली तत स्यात् सहस्रनेत्रस्तथा वालः ।
दृप्त शरभो दम्भो दिवसोद्दम्भौ तथा च वलिताङ्क. ।। ४९ ।।
तुरगो हरिणोऽप्यन्धो भृङ्गश्चैते प्रसख्याताः ।
वास्तुकाख्ये छदसि बाणाम्बुधिभिर्मिता भेदा. ।। ५० ।।
पादे यत्यनुरोधात् तृतीयजगणानुरोधाच्च ।
वेदाङ्कलघुकयुक्तश्चन्द्रगुरुर्य स आद्य स्यात् ।। ५१ ।।
शरवेदमिता भेदा. काव्यवृत्तस्य दर्शिता ।
उदाहरणमञ्जर्यां बोध्यैतेषामुदाहृति ।। ५२ ।।*

इति काव्यम् ।

---

१. ग. ह्रासाद ।

टिप्पणी.– भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे काव्यवृत्तस्य गुरुवृद्धि-लघुह्रासक्रमेण पञ्चचत्वारिंशद्भेदाना वर्गीकरणम्—

१ शक्र	० गुरु	९६ लघु	९६ अक्षर
२ शम्भु	१ गुरु	९४ लघु	९५ अक्षर
३ सूर्य.	२ गुरु	९२ लघु	९४ अक्षर
४ गण्ड.	३ गुरु	९० लघु	९३ अक्षर
५ स्कन्ध	४ गुरु	८८ लघु	९२ अक्षर
६ विजयः	५ गुरु	८६ लघु	९१ अक्षर
७ दर्प	६ गुरु	८४ लघु	९० अक्षर
८ तालाङ्कः	७ गुरु	८२ लघु	८९ अक्षर
९ समर	८ गुरु	८० लघु	८८ अक्षर
१० सिंह	९ गुरु	७८ लघु	८७ अक्षर

११ शेष	१० गुरु	७६ लघु	८६ अक्षर
१२ उत्तेजा	११ गुरु	७४ लघु	८५ अक्षर
१३ प्रतिपक्षः	१२ गुरु	७२ लघु	८४ अक्षर
१४ परिधर्म	१३ गुरु	७० लघु	८३ अक्षर
१५ मरालः	१४ गुरु	६८ लघु	८२ अक्षर
१६ मृगेन्द्र.	१५ गुरु	६६ लघु	८१ अक्षर
१७ दण्डः	१६ गुरु	६४ लघु	८० अक्षर
१८ मर्कट.	१७ गुरु	६२ लघु	७९ अक्षर
१९ मदन	१८ गुरु	६० लघु	७८ अक्षर
२० महाराष्ट्रः	१९ गुरु	५८ लघु	७७ अक्षर
२१ वसन्त.	२० गुरु	५६ लघु	७६ अक्षर
२२ कण्ठ	२१ गुरु	५४ लघु	७५ अक्षर
२३ मयूर	२२ गुरु	५२ लघु	७४ अक्षर
२४ वन्ध	२३ गुरु	५० लघु	७३ अक्षर
२५ भ्रमर,	२४ गुरु	४८ लघु	७२ अक्षर
२६ द्वितीयो महाराष्ट्रः	२५ गुरु	४६ लघु	७१ अक्षर
२७ वलभद्रः	२६ गुरु	४४ लघु	७० अक्षर
२८ राजा	२७ गुरु	४२ लघु	६९ अक्षर
२९ वलित.	२८ गुरु	४० लघु	६८ अक्षर
३० राम	२९ गुरु	३८ लघु	६७ अक्षर
३१ मन्थान	३० गुरु	३६ लघु	६६ अक्षर
३२ वली	३१ गुरु	३४ लघु	६५ अक्षर
३३ मोहः	३२ गुरु	३२ लघु	६४ अक्षर
३४ सहस्राक्ष	३३ गुरु	३० लघु	६३ अक्षर
३५ वालः	३४ गुरु	२८ लघु	६२ अक्षर
३६ दृप्त	३५ गुरु	२६ लघु	६१ अक्षर
३७ शरभ	३६ गुरु	२४ लघु	६० अक्षर
३८ दम्भ	३७ गुरु	२२ लघु	५९ अक्षर
३९ अह.	३८ गुरु	२० लघु	५८ अक्षर
४० उद्दम्भ.	३९ गुरु	१८ लघु	५७ अक्षर
४१ वलिताङ्क	४० गुरु	१६ लघु	५६ अक्षर
४२ तुरङ्ग	४१ गुरु	१४ लघु	५५ अक्षर
४३ हरिण	४२ गुरु	१२ लघु	५४ अक्षर
४४ अन्ध	४३ गुरु	१० लघु	५३ अक्षर
४५ भृङ्ग	४४ गुरु	८ लघु	५२ अक्षर

१० षट्पदम्

षट्पदवृत्त कलय सरसकविपिङ्गलभणित ,
एकादश इह विरतिरथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
षट्कलमादौ तदनु चतुस्तुरग परिसतनु ,
शेषे द्विकल रचय चतुष्पदमेव सचिनु ॥
उल्लालद्वयमत्र हि भवेदष्टाविंशतिकलयुतम् ।
यदि पञ्चदशे विरतिस्थितं पठनादपि गुणिगणहितम् ॥ ५३ ॥

दहनगणनियमविरहितकाव्य सोल्लालचरणयुगलेन ।
कथयति पिङ्गलनाग: षट्पदवृत्त मनोहारि ॥ ५४ ॥

यथा–

जय जय नन्दकुमार मारसुन्दर वरलोचन ,
लोचनजितनवकज कञ्जनिभशय भवमोचन ।
नूतनजलधरनील शीलभूषित गतदूषण ,
दूषणहर धृतभाल भालभूषितवरभूषण ॥
दूषणगणमिह[1] मम निखिलमपि कुरु दूरे नन्दकिशोर ।
तव चरणकमलयुगलमनुदिनमनुसेवे नयनचकोर ॥ ५५ ॥

षट्पदवृत्तस्यैकसप्ततिर्भेदा

वेदयुग्मगुरून् काव्यादुल्लालाद् रसपक्षकान् ।
आदाय तस्य स्थाने तु लघुद्वयनिवेशत[2] ॥ ५६ ॥
भेदा स्युर्भूमिमुनिभिर्गृहीत्वान्त्य तु सर्वलम् ।
आद्यस्तु रविलो बिन्दुर्मुनिग सोऽजय: स्मृत ॥ ५७ ॥
विजय-बलि-कर्ण-वीरा वैताल-बृहन्नरौ मर्क्क ।
हरि-हर-विधीन्दु-चन्दन-शुभङ्करा. श्वा च सिंहश्च ॥ ५८ ॥
शार्दूल-कूर्म-कोकिल-खर-कुञ्जर-मदन-मत्स्य-तालाङ्का. ।
शेष सारङ्गोऽपि च पयोधर. कुन्द-कमले च ॥ ५९ ॥
वारण-जङ्गम-शरभास्तथा द्युतीष्टोऽपि दाता च ।
शर-सुशर-समर-सारस-शारद-मद-मदकरा मेरु ॥ ६० ॥
सिद्धिर्बुद्धि करतल-कमलाकर-धवल-मानस-ध्रुवका: ।
कनक कृष्णो रञ्जन-मेघकर-ग्रीष्म-गरुड-शशि-सूर्या ॥ ६१ ॥

---

१. ग दूषणमिह । २. ग. निवेशित ।

मल्यो नवरङ्ग-मनोहरौ गगन-रत्न-नर-हीरा.
भ्रमरः शेखर-कुसुमाकरौ ततो दीप्त-शङ्ख-वसु-शब्दाः ॥ ६२ ॥
इति भेदाभिधा पित्रा रचितायामपि स्फुटम् ।
उदाहरणमञ्जर्यामुक्तानामुदाहृति.* ॥ ६३ ॥

इतिषट्पदम् ।

---

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे षट्पदच्छन्दस गुरुह्रास-लघुवृद्धिपरिपाट्या एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

७० गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
६९ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
६६ गुरु	२० लघु	८६ अक्षर
६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
६२ गुरु	२८ लघु	९० अक्षर
६१ गुरु	३० लघु	९१ अक्षर
६० गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
५६ गुरु	४० लघु	९६ अक्षर
५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
५२ गुरु	४८ लघु	१०० अक्षर
५१ गुरु	५० लघु	१०१ अक्षर
५० गुरु	५२ लघु	१०२ अक्षर
४९ गुरु	५४ लघु	१०३ अक्षर
४८ गुरु	५६ लघु	१०४ अक्षर
४७ गुरु	५८ लघु	१०५ अक्षर
४६ गुरु	६० लघु	१०६ अक्षर
४५ गुरु	६२ लघु	१०७ अक्षर
४४ गुरु	६४ लघु	१०८ अक्षर

काव्यषट्पदयोर्दोषा·

काव्यषट्पदयोश्चापि दोषा· पन्नगभाषिता ।
वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्य कर्त्तुमिहार्हति ।। ६४ ।।
पददुष्टो भवेत्पङ्गु कलाहीनस्तु खञ्जक· ।
कलाधिको वातूलः स्यात् तेन शून्यफलश्रुतिः ।। ६५ ।।
अन्धोऽलङ्काररहितो बधिरो फलवर्जित· ।
प्राकृते सस्कृते चाऽपि विज्ञेय पददूषणम् ।। ६६ ।।
गणोट्टवणिका यस्य पञ्चत्रिकलका भवेत् ।
स मूक कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ।। ६७ ।।

---

२८ कुन्द	४३ गुरु	६६ लघु	१०९ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६८ लघु	११० अक्षर
३० वारण·	४१ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४० गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३९ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ ज्युतीष्टम्	३८ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७८ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुशर·	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समरः	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेरु	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मदः	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि·	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ वुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्ण	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

हठात्कृष्टाऽक्षरैश्चापि कठोर केकरोऽपि च ।
श्लेष. प्रसादादिगुणैर्विहीन काण उच्यते ॥ ६८ ॥
सर्वैरङ्गै समः शुद्ध स लक्ष्मीक. स रूपवान् ।
काव्यात्मा पुरुष कोऽपि राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ६९ ॥
दोषानिमानविज्ञाय यस्तु काव्य चिकीर्षति ।
न ससदि स मान्य स्यात् कवीनामतदर्हण ॥ ७० ॥
एते दोषा समुद्दिष्टा सस्कृते प्राकृतेऽपि च ।
विशेषतश्च तत्रापि केचित्प्राकृत एव हि ॥ ७१ ॥

इति शाल्मलीप्रस्तारे द्वितीय षट्पदप्रकरण समाप्तम् ।

---

५२ रञ्जनम्	१९ गुरु	११४ लघु	१३३ अक्षर
५३ मेघकर	१८ गुरु	११६ लघु	१३४ अक्षर
५४ ग्रीष्म	१७ गुरु	११८ लघु	१३५ अक्षर
५५ गरुड'	१६ गुरु	१२० लघु	१३६ अक्षर
५६ शशी	१५ गुरु	१२२ लघु	१३७ अक्षर
५७ सूर्य	१४ गुरु	१२४ लघु	१३८ अक्षर
५८ शल्य	१३ गुरु	१२६ लघु	१३९ अक्षर
५९ नवरङ्ग	१२ गुरु	१२८ लघु	१४० अक्षर
६० मनोहरः	११ गुरु	१३० लघु	१४१ अक्षर
६१ गगनम्	१० गुरु	१३२ लघु	१४२ अक्षर
६२ रत्नम्	९ गुरु	१३४ लघु	१४३ अक्षर
६३ नर	८ गुरु	१३६ लघु	१४४ अक्षर
६४ हीर	७ गुरु	१३८ लघु	१४५ अक्षर
६५ भ्रमरः	६ गुरु	१४० लघु	१४६ अक्षर
६६ शेखर	५ गुरु	१४२ लघु	१४७ अक्षर
६७ कुसुमाकर.	४ गुरु	१४४ लघु	१४८ अक्षर
६८ दीप	३ गुरु	१४६ लघु	१४९ अक्षर
६९ शङ्ख	२ गुरु	१४८ लघु	१५० अक्षर
७० वसु	१ गुरु	१५० लघु	१५१ अक्षर
७१ शब्द	० गुरु	१५२ लघु	१५२ अक्षर(१५२मात्रा)

तृतीयं रड्डा-प्रकरणम्

१. पज्झटिका

डगणाश्चतुर पादे विधेहि,
अन्ते गणमिह मध्यगमवेहि ।
इति पज्झटिका निखिलचरणेषु,
षोडशमात्रा सर्वचरणेषु ॥ १ ॥

यथा–

गाङ्ग वन्द्य परिजयति वारि,
निखिलजनानां दुरितविनिवारि[1] ।
भवमुकुटविराजिजटाविहारि,
मज्जज्जनमानसतापहारि ॥ २ ॥

इति पज्झटिका ।

२. अडिल्ला[2] [अरिल्ला]

सर्वे डगणा अरिल्ला छन्दसि,
नायकमत्र नयति तं नन्दसि ।
षोडशमात्रा विदिता यस्मि-
न्नन्ते सुप्रियमपि कुरु तस्मिन् ॥ ३ ॥

यथा–

हरिरुपगत इति सखि ! मयि वेदय,
कुञ्जगृहोदरगतमपि खेदय ।
इह यदि सपदि सविधमुपयास्यति,
रदवसनामृतमिदमनुपास्यति ॥ ४ ॥

इति अरिल्ला ।

३. पादाकुलकम्

गुरुलघुकृतगण[3]-नियमविरहितं,
फणिपतिनायकपिङ्गलगदितम् ।
रसविधुकलयुतयमकितचरण,
पादाकुलकं श्रुतिसुखकरणम् ॥ ५ ॥

---

१. ग विनिवासव । २ ग. अडल्ला । ३. ग. गुण ।

यथा–

जलभरदान[1]-हरितवनभाग,
शीतलमारुतकृतपरभाग[2]।
चञ्चलचपलाधृतवनमाल,
समुपागत इह जलधरकाल. ॥ ६ ॥

इति पादाकुलकम् ।

४. चौबोला

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
सममपि वेदविधूपमितम् ।
सर्वमपि षष्टिकल विचारय,
चौबोलाख्य फणिकथितम् ॥ ७ ॥

यथा–

दिशि दिशि विलसति जलधरगर्जित-
मथ ताकेका राजयते ।
सा मम चेन कुरुते तर्जित-
मपि कां कान्तो भासयते ॥ ८ ॥

इति चौबोला ।

५. रड्डा[3]

विषमचरणेषु ढगण[4]मुपनय
डगणत्रयमनुविरचय
जगणमुत[5] विप्रमन्त्यमुपनय
डगणत्रयमपि रचय
समेऽन्ते[6] सर्वलघु विरचय ।
दोहाचरणचतुष्टय तेषामन्ते धेहि ।
फणिपतिपिङ्गलभाषित रड्डा[7]वृत्तमवेहि ॥ ९ ॥

विषम· शरविधुमात्रो द्वादशमात्रास्तथा द्वितीयोऽपि ।
तुर्यो रुद्रकलाक प्रथमान्ते जगणविप्रनियम. स्यात् ॥ १० ॥

---

१. जलधरदाव । २. परिभाम· । ३. म. प्रवरज । ४. ग. टगण । ५ ग. मनु । ६ ख ग. सम ते । ७. ग. रण्डा । ग. प्रतौ रड्डाया स्थाने सर्वत्रापि रण्डायाः प्रयोगो विद्यते ।

अपरान्ते लघुयुगवियम स्यात् कलाद्वयम् ।
समादौ स्याच्चतुर्थान्ते त्रिलघुर्गण ईरित ॥ ११ ॥

यथा–

पिकरुतमिदमनुविलसति　दिक्षु
किंशुककलिका　विकसति[1]
वहति मलयमरुदयमपि सुलघु
विरुतमलिरपि　कलयति
विकसति मञ्जुल[2]मञ्जरिरपि च ।
इति मधुरनुवनमनुसरति बहुलीभूय सुकेशि !
हरिरपि विनमति चरणयुगमनुसर त हृदयेशि ! ॥ १२ ॥

रड्डाया सप्तभेदाः

अथैतस्या. सप्तभेदा कथ्यन्ते पिङ्गलोदिता ।
यान् विधाय कविः काव्यगोष्ठ्या बहुमतो भवेत् ॥ १३ ॥
प्रथमा करभी प्रोक्ता ततो नन्दा च मोहिनी ।
चारुसेना चतुर्थी स्यात्तथा[3] भद्रापि पञ्चमी ॥ १४ ॥
राजसेना तु षष्ठी स्यात् तथा तालङ्किनी मता ।
सप्तमी कथिता रड्डा भेदा लक्षणमुच्यते ॥ १५ ॥

५[१] करभी

विषमेऽग्निविधुकलाको रुद्रकलाको द्वितीयोऽपि ।
तुर्योऽपि रुद्रमात्र पञ्चपदानीह कथितानि ॥ १६ ॥
एव पञ्चपदानामग्रे दोहापि यस्यास्ताम् ।
करभीति नागराज कथयति गणकल्पना तु दोहावत् ॥ १७ ॥

इति करभी ।

५[२] नन्दा

विषमेषु वेदविधुभिर्द्वितीयतुर्यौ च रुद्रमात्राभि ।
अग्रे दोहा यस्या[4] ता नन्दामामनन्ति वृत्तज्ञा ॥ १८ ॥

इति नन्दा ।

---

१ ग विलसति । २ ग मञ्जुर । ३. ख ग अथ । ४ ग यस्या· ।

५[३] मोहिनी

अयुजि पदे नवमात्राः समेऽपि दिग्रुद्रसंख्याभिः ।
पुरतो दोहा यस्याः शेषस्तां मोहिनीमाह ॥ १९ ॥

इति मोहिनी ।

५[४] चारुसेना

असमपदे शरचन्द्राः[1] समयोरेकादशैव यस्यास्ताम् ।
दोहाविरचितशीर्षां भणति फणीन्द्रस्तु[2] चारुसेनेति ॥ २० ॥

इति चारुसेना ।

५[५] भद्रा

विषमेषु पञ्चदशभिर्द्वितीयतुर्यौ च सूर्यसंख्याभिः ।
या दोहाङ्कितशीर्षा सा भद्रा भवति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २१ ॥

इति भद्रा ।

५[६] राजसेना

पूर्ववदेव हि विषमे समे क्रमादेव सूर्यरुद्रैश्च ।
पूर्ववदेव हि दोहा यत्र स्याद् राजसेना सा ॥ २२ ॥

इति राजसेना ।

५[७] तालङ्किनी

विषमे पदेषु(च) यस्याः षोडशमात्रा विराजन्ते ।
पूर्ववदेव हि समयोर्दोहाऽपि च पूर्ववद्भवति ॥ २३ ॥
तालङ्किनीति कथिता सा रड्डा नागराजेन ।
एवं सप्तविभेदा विविच्य सम्यक् प्रदर्शिता क्रमशः[3] ॥ २४ ॥
उदाहरणमेतेषां ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।
नोक्तं सुबुद्धिभिस्तद्धि[4] स्वयमूह्यं[5] महात्मभिः ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिके[6] तृतीयं रड्डा[7]-प्रकरणं समाप्तम् ।

---

१. ग. चन्द्रो । २ ख. ग. च । ३. ग. क्रमतः । ४ ग तद् । ५ ग विरचय्या । ६ ग. 'वार्तिके' नास्ति । ७. ग षड्डा ।

चतुर्थं पद्मावती-प्रकरणम्

१ पद्मावती

यदि योगडगणकृत-चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणाः,
नायकविरहितपद-कविजनकृतमद-पठनादपि मानसहरणा।
इह दशवसुमनुभि[1] क्रियते कविभिर्विरतिर्यदि युगदहनकला,
सा पद्मावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥ १ ॥

यथा[2] –

करयुगधृतवशी रुचिरवतसी गोवर्द्धनधारणशील,
प्रियगोपविहारी भवसन्तारी वृन्दावनविरचितलीलः।
धृतवरवनमाली निजजनपाली वरयमुनाजलरुचिशाली[3],
मम मङ्गलदायी कृतभवमायी[4] वरभूषणभूषितभाली[5] ॥ २ ॥

इति पद्मावती।

२. कुण्डलिका

दोहाचरणचतुष्टय प्रथम नियतमवेहि,
कुण्डलिका फणिरनुवदति काव्य तदनु विधेहि।
काव्य तदनु विधेहि पद प्रतियमकितचरणं,
तदुभयविरतौ भवति पुनरपि च[1] तदुभयपठनम्।
तदुभयसुपठनसमयरचितकरकविजनमोहा।
कुण्डलिका सा भवति भवति यदि पूर्वं दोहा ॥ ३ ॥

यथा–

चरण शरण भवतु तव मुरलीवादनशील,
सुरगणवन्दितचरणयुग वनभुवि विरचितलील।
वनभुवि विरचितलील दुष्टजनखण्डनपण्डित,
दुर्जनजनहृदि कील गण्डयुगकुण्डलमण्डित।
दुर्जनजनहृदि कील[7] भीतभयतापविहरण[8],
मुनिजनमानसहस हरतु मम ताप चरणम्[9] ॥ ४ ॥

---

१. ग. मुनिभिः। २ ग तद्यथा। ग प्रतौ यथा शब्दस्य स्थाने सर्वत्र तद्यथा पाठो दृश्यते। ३ ग माली। ४. ग. भववरदायी। ५. ग. माली। ६ ग नास्ति पाठः। ७. ग. नास्ति पाठः। ८ ख विहरण। ९ ख चरण, ग वरणंम्।

३. गगनाङ्गणम्

टगण[1]मिहादौ रचयत विरमित[2]विनतानन्दन[3],
मध्ये नियमविरहित रविकृतयति कविवन्दनम्[4] ।
शरपक्षकलितकलाक[5]-नखमित[6]-वर्णविकासित,
गगनाङ्गणमिद भवति फणिपतिपिङ्गलभाषितम् ॥ ५ ॥

यथा –

मानसमिह मम कृन्तति कोकिलविरुतमकारण,
कलितशरासनसायकमतनु कलयति मारणम् ।
मधुसमये कथमपि[7] सखि[8] ! जीव निजमपि धारये,
रुचिरमधुभिदमन्तरा क्षणमपि सोढुमपारये ॥ ६ ॥

इति गगनाङ्गणम् ।

४. द्विपदी

आदौ टगणसमुपरचित तदनु च शरडगणसुविहितम् ।
गान्त द्विपदीवृत्त वसुपक्षकल फणिपतिभणितम्[9] ॥ ७ ॥

यथा–

मम मानसमभिलषति सखि-कृतरासकेलिरसनायके ।
निजरुचिजितनूतनजलधर-मुरलीनादसुखदायके ॥ ८ ॥

इति द्विपदी ।

५. झुल्लणा[10]

प्रथममिह दशसु यतिरनु च तदवधि भवति,
तदुपरि च मुनिविधुभिरत्र युक्ता ।
इति[11] हि विधियुगदला मुनिदहनकृतकला
झुल्लणा भवति गणनियममुक्ता ॥ ६ ॥

यथा–

करविधृतवशरवकृतहृदय-चित्तभव
गोकुलानन्दकररुचिररासे ।

---

१ ग टगण । २ ग विरचित । ३ ग. विनतानन्द । ४ ग. कविवन्द । ५ ग कला । ६. ग नखमिति । ७ ग. कथितमपि । ८ ग सखी । ६ ग. भाषितम् । १० ग झुल्लणा । ११. ग. इह ।

मम सविधमुपयासि मम वचनमनुपासि
वल्लवीरभिभूय जनितदासे[१] ॥ १० ॥

इति झुल्लणा* ।

---

१. ग हासे ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्या द्वितीयगुम्फेऽस्य छन्दसः झुल्लण-उपझुल्लण-सुझुल्लन-अतिझुल्लननामभिश्चत्वारो भेदा प्रदर्शितास्ते चात्राविकल समुद्ध्रियन्ते—

अथ झुल्लनच्छन्द.

यस्य चरणे सप्त पञ्चकलास्ततो द्वे कले तज् झुल्लनं नाम। यद्यपि पञ्चकलभेदा अविशेषेणैव गृहीतास्तथापि प्रतिगण द्वितीया कला परया कलया मिश्रितोद्वेजिकेत्यनुभवसाक्षिकम् ।

यथा—

शेषपतगेशविबुधेशभुवनेशभूतेशसविशेषसुनिदेशधरणी,
कन्दलितसुन्दरानन्दमकरन्दरसमज्जनमिलिन्दभवसिन्धुतरणी ।
ज्ञानमण्डनपरा कर्मखण्डनधरा शमनदण्डनपरा भूतिहरणी,
नित्यमिह वक्ति मुनिवृन्दमनुरक्तिमज्जयति हरिभक्तिरासवितकरणी ॥ ६१ ॥

अष्टत्रिंशत् कल उपझुल्लम् । तस्मिश्चोपान्त्यो गुरुरन्त्यो लघुर्नियत ।

यथा—

चण्डभुजदण्डसदखण्डकोदण्ड(श)शिखण्डशरखण्डझरदण्डितविपक्ष,
पर्वभृतशर्वरीनाथरुचिगर्वहरसर्वहृदखर्वसुखलीलनवलक्ष ।
दुष्टनररुष्टतरपुष्टनयजुष्टजनतुष्टमतिघुष्टचरितौघकृतिदक्ष,
तरक्षणसमक्षकृतरक्षणसपक्षगणलक्षितसुलक्षण जयेश गतलक्ष ॥ ६२ ॥

कलाद्वयाधिक्येन एकोनचत्वारिंशत्कलचरणमपि सभवति, तच्च सुझुल्लन नाम ।

यथा—

चूतनवपल्लवकषायकलकण्ठवलमञ्जुकलकोकिलाकूजितनिदान,
माधुरीमधुरमधुपानमत्तालिकुलवल्लकीतारझङ्कारसुखदानम् ।
चारुमलयाचलोद्यातपवमानजवजागरितचित्तभवसायकवितानम्,
पश्य सखि पश्य कुसुमाकरमुदित्वर मा कलय मानसे मानमतिमानम् ॥ ६३ ॥

चत्वारिंशत्कल अतिझुल्लनमपि स्वीकार्यम् ।

यथा—

कासकैलाससविलासहरहासमधुमाससविकाससितसारससमानगति,
शारदतुषारकरसारघनसारभरहारहिमपारदविसारसमुदारमनि ।
बालकमृणालमृदुमालतीजालरुचिचालितविशालविबुधालयमरालतति,
राजमृगराजवर राजते तव यशो राम सुरराजसुसभाजितसमाजनति ॥ ६४ ॥

६. खञ्ज

नवजलधिकलमितगणमिह[1] समुपनय
तदनु च कुरुत रगणमपि फणिभणितखञ्जके ।
इति विधिविरचितदलयुगमिह भवति
निखिलभुवनगतवरकविजनहृदयसुखसञ्जके ।। ११ ।।

यथा–

निजतनुरुचिविजितनवजलधररुचि-
विधृतरुचिरतर[2]मुकुट हरिरिह मम हृदि भासताम् ।
मम हृदयमविरतमनुभवतु तव
निजजनसुखवितरणरसिकचरणसरसिजदासताम् ।। १२ ।।

इति खञ्जा ।

७. शिखा

रसजलधिकलमुपनयत फणिरिति वदति सकलकविसखा हि ।
अपरदलमथ मुनिकृतमुभयमपि जगणविरतिगमिति[3] भवति शिखा हि ।।१३

यथा–

विकचनलिनगतमधुरमधुकरकलरवमनुकलय सुकेशि !
हरिरिति विनमति चरणयुगमपि मयि[4] कुरु हृदयमपरुषमति[5] सुवेषि! ।।१४।

इति शिखा ।

८. माला

जलनिधिकलमिह[6] नवगणमुपनय तदनु च
रगणमपि हि गुरुयुगगणमथ कुरु पिङ्गलप्रोक्तम् ।
गाथोत्तरार्द्धसहित मालावृत्त विजानीहि ।। १५ ।।

यथा–

अपितहृदय करयुगकृतवसन वसनहरण-
परवशयुवतिकृतविनतिरभयमान्ततद्वासा[7] (?) ।
तीरे कदम्बशाली वरवनमाली हरि पायात् ।। १६ ।।

इति माला ।

---

१ ग. कलनगुणनगणमिह । २. ग धर । ३ ग. विरचितमिति । ४. ग तम् ।
५. ग हृदि दयमति । । ६ ग सिह । ७ ग कृतत्रास. ।

९ चुलिआला[1]

यदि दोहादलविरतिकृत,
शरकलकुसुमगणो हि विराजति ।
फणिनायकपिङ्गलरचित,
चुलिआला किल जातिपु राजति ।। १७ ।।

यथा–

क्षणमुपविश वनभुवि हरे,
मम पुनरागमनाऽवधि पालय ।
उपयाता[2]मिह मम सखी[3],
तामङ्के राधामुपलालय[4]।। १८ ।।

इति चुलिआला ।

१०. सोरठा

सोरठाख्य तत्तु फणिनायक भणितं भवति ।
दोहावृत्त यत्तु विपरीत कविजनमवति ।। १९ ।।

यथा–

रूपविनिर्जितमार ! सकलयादवकुलपालक ! ।
जय जय नन्दकुमार ! गोपगोपीजनलालक ! ।। २० ।।

यथा वा–

गलकृतमस्तकमाल ! भालगतदहनविराजित !
जय जय हर ! भूतेश ! शेषकृतभूषणभासित ! ।। २१ ।।

इति सोरठा

११ हाकलि

सगणै[5]र्भगणैस्त्रिलघुयुतै.,
सकल चरण प्रविरचितम्[6] ।
गुरुकेन च सर्वं कलितं,
हाकलिवृत्तमिद कथितम् ।। २२ ।।

प्रथमद्वितीयचरणौ रुद्रार्णाविथ तृतीयतुर्यौ च ।
दशवर्णौ सकलेषु च मात्रा वेदेन्दुभि प्रोक्ताः ।। २३ ।।

---

१. ग. चूलीआला । २. ख. उपुयाता । ३ ख ग सखीं । ४ ग. पालय । ५. ग. सगुणै. । ६. ग प्रविरचित ।

यथा–

विकृतभयानकवेषकल,
चरणाङ्कितवरभूमितलम् ।
व्योमतलामलकम्बुगल,
नौमि विभूषितभालतलम् ॥ २४ ॥

यथा वा[1]–

यमुनाजलकेलिषु कलितं,
वनिताजनमानसवलितम् ।
सुरभीगणसङ्घा[2]च्चलित,
नौमि हृदा बलसम्मिलितम् ॥ २५ ॥

इति हाकलि ।

१२ मधुभारः

डगणमवधेहि, जगणमनु देहि ।
मधुभारमाशु, परिकलय वासु ॥ २६ ॥

यथा–

उरसि कृतमाल, भक्तजनपाल ।
रुचिजिततमाल, जय नन्दबाल ॥ २७ ॥

इति मधुभार ।

१३. आभीर

अन्ते जगणमवेहि,
विधुयुगकला विधेहि ।
आभीर परिशोभि,
कविजनमानसलोभि ॥ २८ ॥

यथा –

व्रजभुवि रचितविहार,
श्रुतिशतकलितविचार ।
यदुकुलजनितनिवास,
जय भूतलकृतरास[3] ॥ २९ ॥

इत्याभीर ।

---

१ ग उक्तञ्च । २ ग सगात् । ३ ग जय जय भुवि कृतरास ।

१४. दण्डकला[1]

वेदडगणविरचितमनु[1] च[2] टगणकृत[3]-मन्ते डगणद्वयविहितं,
गुरुकृतपदविरत कविजनसुमत दण्डकलाख्यमिद विदितम् ।
वरफणिकुलपतिना विमलसुमतिना पक्षदहनकृतचरणकल,
गगनेन्दुविराजित-योगविकासित-वेदावनिकृतयतिविमलम् ॥ ३० ॥

यथा–

खरकेशिनिषूदन-विनिहतपूतन-रचितदितिजकुलबलदलन,
बाणावलिमालित-सङ्करपालित-पार्थविलोकितशुभवदनम् ।
कृतमायामानव-रणहतदानव-दुस्तरभवजलराशितरिं,
सुरसिद्धि[4]-विधायक-यादवनायकमशुभहर प्रणमामि हरिम् ॥ ३१ ॥

इति दण्डकला ।

१५. कामकला

यदि रसविधुमात्राणामन्ते विरतिर्भवेत्तदा सैव[5] ।
कामकलेति फणीश्वरपिङ्गलकथिता मता सद्भिः[6] ॥ ३२ ॥

यथा–

कमलाकरलालितपदकमल निजजनहृदयविनाशित[7]शमलं,
पीतवसनपरिभासितममल जितकम्बुमनोहरविमलगलम् ।
नाभिकमलगतविधिकृतनमन फणिमणिकुण्डलमण्डितवदन,
नौमि जलधिशयमतिरुचिसदन दानवनिवहसमरकृतकदनम् ॥ ३३ ॥

इति कामकला ।

१६ रुचिरा

सप्तचतुष्कलकलितसकलदल-मन्त्याहितकुण्डलरुचिरा ।
न कुरु पयोधरमिह फणिपतिवर-भणितमिद वृत्त रुचिरा ॥ ३४ ॥

यथा–

कस्य तनुर्मनुजस्य सितासित-सङ्गममधिविधित पतिता ।
यस्य कृते करभोरु विषीदसि मिहिरातपनिहिते[8]च लता ॥३५॥

इति रुचिरा ।

---

१ ग. तनू । २. ग 'च' नास्ति । ३. ग विरचित । ४. ग. सिद्ध । ५ ग. सैष । ६ ग सद्भ्य । ७ हृदयविभाशित । ८ ग. विहितेव ।

१७. दीपकम्

डगणं कुरु विचित्र-
मन्ते जगणमत्र ।
मध्ये द्विलमवेहि[1],
दीपकमिति विधेहि ॥ ३६ ॥

यथा–

शेषविरचितहार,
पितृकाननविहार ।
जय जय हर ! महेश,
गौरीकृतसुवेष ! ॥ ३७ ॥

अथवा–

तुरगैकमुपधाय,
सुनरेन्द्र[2]मवधाय ।
इति[3] दीपकमवेहि,
लघुमन्तमधिधेहि ॥ ३८ ॥

यथा[4]–

क्षणमात्रमतिवल्गु,
जगदेतदतिफल्गु ।
धनलोभमपहाय,
नम पद्मनयनाय ॥ ३९ ॥

इति दीपकम् ।

१८ सिंहविलोकितम्

सगणद्विजगणविरचितचरण,
चरणे रसभूमिकलाभरणम् ।
फणिनायकपिङ्गलभणितवर,
वरसिंहविलोकितहृदयहरम् ॥ ४० ॥

यथा–

हतदूषणकृतजलनिधितरण,
रणभुवि[5]कृतदानवकुलमरणम् ।
रणरणितशरासन[6]भङ्गकरं,
करकलितशिरो नम[6] देववरम् ॥४१॥

इति सिंहविलोकितम् ।

---

१. ग द्विकलमवेहि । २ ग. सुनवेन्द्र । ३ ग. द्रह । ४. ग उक्तञ्च । ५ ग. 'रण' नास्ति । ६ ग. शरासन । ग. मम ।

१९. प्लवङ्गम

आदावादिगुरु कुरु षट्कलभाषित,
[पञ्चकल तदनु च डगण विभूषितम् ।
अन्ते नायकमथ रचय गुरुविकासित][1]
वृत्तमिदं प्लवङ्गममहिपतिसुभाषितम् ॥ ४२ ॥

यथा–

कुञ्चितचञ्चलकुन्तलकलितवरानन,
वेणुविरावविनोदविमोहित[2]काननम् ।
मण्डलनायकदानवखण्डनपण्डित,
चिन्तय चण्डकरोपमकुण्डलमण्डितम् ॥ ४३ ॥

इति प्लवङ्गमः ।

२०. लीलावती

लघुगुरुवर्णरचित-नियमविरहित-वसुडगणकृत-चरणविरचिता,
सगणद्विजवर-जगण-भगण-गुरुयुगकृतपदमतियमकसुकथिता ।
लीलावतिका पक्षदहनकृतकला वरकविजनहृदयमहिता,
विरचितललितपद-जनहृदयकृतमद-फणिनायकपिङ्गलभणिता ॥ ४४ ॥

यथा–

गुञ्जाकृतभूषणमखिलजनहृतदूषणमधिककृतरासकल,
करयुगधृतमुरलिं नवजलधर[3]नील वृन्दावनभुवि चपलम् ।
हृतगोपीमान नारदकृतगान लीलाबलदेवयुत,
स्मर नन्दतनूज सुरवरकृतपूजं मम हृदयमुनिजननुतम् ॥ ४५ ॥

इति लीलावती ।

२१[१] हरिगीतम्

चरणे प्रथम विरचय ठगण तदनु टगणविराजित,
रचय शरकल तदनु दहनमितमन्ते गुरुविकासितम् ।
वसुपक्षकलाक कविजनससदि हृदयसुखदायक,
हरिगीतमिति वृत्तमहिपतिकविनृपतिजल्पितनायकम् ॥ ४६ ॥

---

१. कोष्ठकान्तर्गतोऽयं पाठ. ख ग प्रतावेवास्ति । पाठेऽस्मिन् पञ्चकल-चतुष्कलयो॰ विधानं दृश्यते तच्च प्राकृतपैङ्गलमतविरुद्ध 'पंचमत्त चउमत्त गणा णहि किज्जए' इति नियमात् । (स०)

२. ग. विमोदित । २ नयनजलधर ।

यथा–

रचय कदलीदलनवशयनं कमलदलावलिमालित,
वीजय मृदुपवनेन घनाघनसुन्दरविरहदालितम् ।
अङ्गकमपि घनसारविराजितचन्दनरचनलालित,
कुरु मम वचनमानय कमलाननवनमालिनमालि तम् ॥ ४७ ॥

इति हरिगीतम्*

२१. [२] हरिगीत[क]म्

अन्ते यदि गुरुयुगकृतचरण नून भवेदिदं हि तदा ।
हरिगीत[क]मिति फणीश्वरपिङ्गलकथित विजानीत ॥ ४८ ॥

यथा–

उरसि विलसिता[1]ऽनुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतवनमाल,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलविकरालम् ।

---

१ ग विशलता ।

*टिप्पणी—श्रीकृष्णभट्टेन वृत्तमुक्तावल्या द्वितीयगुम्फे 'हरिगीत' वृत्तस्य अनुहरिगीत मन्द्रहरिगीत लघुहरिगीतञ्चेति त्रयो भेदा स्वीकृतास्ते यथा—

"अन्त्यगुरुमात्रेण हीन अनुहरिगीतम् । यथा —
नवकोकिलाकुलललितकलकलकलितजागरकाम
मतिधीरमलयसमीरधोरणिवलितमधुकन्दाम ।
सखि भूरिकुसुमपरागपूरितकुञ्जमञ्जुलधाम,
परिपश्य मानिनि मधुदिन रमणेन सन्ननु साम ॥ ४९ ॥

यदा तु अनुहरिगीतस्यादौ कलाद्वय वर्द्धते तदा मन्द्र(हरि)गीत उत्प्रेक्षित भवति । यथा–

जलधरधामधारण मोहतारण भवनिवारणशील,
मधुमुरनरकगञ्जन दुरितभञ्जन नयनरञ्जनलील ।
त्रिभुवनभव्यभावक निजजननावक कलितपावकपान,
जय रसकेलिभाजन सुरभाजन कृतसभाजनमान ॥ ५० ॥

अथ कलाद्वयह्रासे लघुहरिगीतम् । यथा.—

मल्लिकानवमल्लिकासुमतल्लिकारसपीन,
मालिकानवमालिकाकमलालिकामधुलीन ।
सोऽधुना विकरालकालकलाकुलोद्यत एव,
कुन्दकाननकौतुकी मा धाव मधुकरदेव ॥ ५१ ॥"

मुरलीरव[1]-मोहनमनु[2]-मोहितनिखिलयुवतिजन[3]-कृतरासं,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकाजनमानसजनितविलासम् ॥ ४९ ॥

इति हरिगीत[क]म् ।

२१ [३] मनोहर हरिगीतम्[4]

इयमेव यदि विरामे गुर्वन्त शरकल भवति ।
नैयत्येन कवीन्द्रैर्वसुपक्षकल मनोहर कथितम् ॥ ५० ॥

एतदनुसारेण पाठान्तर यथा–

उरसि विलसितानुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतमाल,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलकालम् ।
मुरलीरवमोहनमनुमोहितनिखिलयुवतिकृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकामानसजनितविलासम् ॥ ५१ ॥

इति मनोहरं हरिगीतम्

२१ [४] हरिगीता

रन्ध्रैर्मुनिभि. सूर्यै कृतविरतिर्भाविता कविभि ।
इद(य)मेव हि हरिगीता फणिनायकपिङ्गलोदिता भवति ॥ ५२ ॥

यथा–

भुजगपरिवारित-वृषभधारित-हस्तडमरुविराजित,
कृतमदनगञ्जन-मशुभभञ्जन-सुरमुनिगणसभाजितम् ।
हिमकरणभासित-दहनभूषित-भालमुमया सङ्गत,
धृतकृत्तिवाससममलमानसमनुसर सुखदमङ्ग तम् ॥ ५३ ॥

इति हरिगीता ।

२१ [५] अपरा हरिगीता

इयमेव वेदचन्द्रै कृतविरतिर्भाविता कविभि ।
पितृचरणैरतिविशदा पिङ्गलविवृतावुदाहृता स्फुटत ॥ ५४ ॥

तदुदाहरणं यथा[5]–

सखि ! बभ्रमीति मनो भृश जगदेव शून्यमवेक्ष्यते,
परिभिद्यते मम हृदयमर्म न शर्म सम्प्रति वीक्ष्यते ।

---

१. ग. वर । २. मम । ३ ग. 'जन' नास्ति । ४. ग. प्रतौ छन्दसोऽस्य लक्षणोदाहरणे न स्त । ५ क. ग. प्रतौ नास्त्युदाहरणपद्यमिदम् ।

परिहीयते वपुषा भृश नलिनीव हिमततिसङ्गता,
नुदती वने[1] वदतीति सा सुदती रतीशवशगता ॥ ५५ ॥

इत्यपरा हरिगीता ।

२२ त्रिभङ्गी

प्रथम दशसु च[2] यतिरनु च वसुपु यतिरथ च तदधिकृति-रस[3]कथित,
शेषे गुरुगदित त्रिभुवनविदित जगणविरहित जगति हितम् ।
वसुडगणकृतचरण-मधिकसुखकरण-सकलजनशरण-मतिसुमतिः,
वदतीति त्रिभङ्गीमिह निरनङ्गीकृतरतिसङ्गी फणिनृपति ॥ ५६ ॥

यथा–

वरमुक्ताहार हृदि कृतभार विरहितसार कुरु मुपित,
छादय विधुविम्ब न कुरु विलम्ब हर निकुरुम्ब कमलकृतम् ।
जहि[4] मलयजपवन लघु लघुवहन तनुकृतदहन मोहकर,
मम चित्तमधीर रदजितहीर यदुवरवीर याति परम् ॥ ५७ ॥

इति त्रिभङ्गी ।

२३ दुर्मिलका

यत्राऽष्टौ डगणा कविसुखकरणा प्रतिपदगुम्फनललितयुता
गगनावनिरचिता वसुषु च कथिता यत्र वेदविधुयतिरुदिता ।
द्वात्रिंशन्मात्रा स्युरतिविचित्राश्चरणे यस्मिन् कविगणिता
जनहृदि सुखदात्री वुद्धिविधात्री सा दुर्मिलका फणिभणिता ॥ ५८ ॥

यथा–

हैयङ्गवचोर नन्दकिशोर तन्दुलकणरुचिसमरदन,
घनकुञ्चितकेश मञ्जुलवेष विजितमनुजसुररुचिसदनम् ।
अपरिस्फुटगदन दधियुतवदन नौमि दितिजवरशकटहर,
मुक्ताभूषालकमद्भुतबालकमखिलमुनिजनहृदि सुखकरम्[5] ॥ ५९ ॥

इति दुर्मिलका ।

---

१. 'रुदती पर' इति पाठः पिङ्गलप्रदीपे । २ ग नास्ति । ३. क अथ । ४. ग नास्ति । ५ 'मुक्ताभूपालकमद्भुतबालकमृषिजनहृदये सौख्यकरम्' इति पाठे श्रुतिकटुत्व-दोषनिवृत्ति स्यात् (स)

२४. हीरम्

आदिगयुत-वेदलयुत-नागरचितपट्कल,
वह्निगदित-लोकविदितमन्त्यकथितमध्यकलम् ।
भाति यदनु-पादमतनु-कान्तिसुतनुसङ्गत,
हीरमहिपवीरकथितमीदृगखिलसम्मतम् ।। ६० ।।

यथा–

चन्द्रवदन-कुन्दरदन-मन्दहसनभूषण,
भीतिकदन-नीतिसदन[1]-कान्तिमदनदूषणम् ।
धीरमतुलहीरबहुलचीरहरणपण्डित,
नौमि विमलधूतकमलनेत्रयुगलमण्डितम् ।। ६१ ।।

यथा वाऽस्मत्तातचरणानाम्–

पाहि जननि ! शम्भुरमणि ! शुम्भ[2]दलनपण्डिते !
तारतरलरत्नखचितहारवलयमण्डिते ।
भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि[3]सकलनन्दिते[4] !
देहि सततभक्तिमतुलमुक्तिमखिलवन्दिते ! ।। ६२ ।।

इत्यादिमहाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि ।

इति हीरम्* ।

---

१ ग नास्ति । २. ग. शम्भु । ३ ग कलशशोभि । ४. ग. सकलसनन्दिते ।

*टिप्पणी—वृत्तमुक्तावल्या द्वितीयगुम्फे 'हीर'वृत्तस्य सुहीरं हीर लघुहीरक परिवृत्ताहीरक-चेति चत्वारो भेदा निबद्धास्तेऽत्र प्रदर्श्यन्ते—

प्रतिषट्कल यत्या रहित सुहीरम् ।

यथा–

रासललितलासकलितहासवलितशोभन,
लोकसकलशोकशमलमोकमखिललोभनम् ।
जातनयनपातजनितशातमुदितभारस,
भाति मदनमानकदनमीशवदनसारसम् ।। ५५ ।।

यथा–

प्रतिपट्कल यत्या सहितं हीरम् ।

खञ्जनवरगञ्जनकरमञ्जनरुचिराजित,
कामहृदभिराममतिललामरतिसभाजितम् ।
नीलकमलशीलमुदितकीलविरहमोचन,
जातिकुटिलयाति. सुदति भाति तव विलोचनम् ।। ५६ ।।

२५. जनहरणम्

गगनविधुयतिमहित-वसुजयतिसहित-
मनु वसुजविहितचरणयतिं,
कुरु मुनिमुनिगणकल[1]-विगत[2]सकलमल-
वरसगणबहुलपदविरतिम् ।
वसुडगणकृतचरण-सकलसुखकरण-
मधिकरुचिधरणकविशरण,
फणिवरनृपतिरचित-निखिलमनुजहित-
सकलगुरुरहितजनहरणम् ॥ ६३ ॥

यथा–

वरजलनिधिजलशय निरुपमरुचिचय
सुरगणहृतभय गतकुमते,
बहुदितिसुतकुलहर निजजनसुखकर
सुरमुनिगणवरकृतसुमते ।
अमलकनकसुवसन कटिधृतसुरसन
कुसुमनिभहसन सुखकरण,
तव भवतु पदकमलमधिकतरविमल
सुखद शुभयुगल भवतरणम् ॥ ६४ ॥

इति जनहरणम् ।

---

१ अत्र मुनिगणो विप्रगणपर्याय (स.) । २. ग. गलित ।

अत्र षट्कलस्य सर्वलघुत्वे, तुर्याक्षरस्यैव गुरुत्वे वा छन्दोऽन्तरमुत्प्रेक्षित भवति । तच्च लघुहीरक परिवृत्तहीरक चेति व्यवहर्त्तव्यम् । द्वयमपि यथा—

विरहगरलभरिततरलकुटिलसरसलोचना,
चरणनखरकलितमदनयुवतिमदविमोचना ।
अमलकमलरजनिरमणमुकुरविलसिताननना,
त्वमिह जयसि सुतनु किरणवलितसकलकानना ॥ ५७ ॥

विलसदङ्गरुचितरङ्गललितरङ्गरञ्जिनी,
लसदपारपटिमभारमदनदारगञ्जिनी ।
सकलयाममुखदवामतरललामलीलना,
जयसि नामहृदभिरामरतिनिकामशीलना ॥ ५८ ॥

२६ मदनगृहम्

प्रथम द्विल[1]सहित वरगुरुमहित
　　विरतौ विमलसकल[2]-चरणे श्रुति[3]-सुखकरणे,
नवडगणविकासित-मध्यविराजित-
　　जनशुभदायकदेहधर फणिभणितवरम् ।
गगनावलिकल्पित-वसुमितजल्पित-
　　वेदविधूदितयतिसहित[4] वसुयतिमहित,[5]
गगनोदधिमात्र भवति विचित्र
　　मदनगृह पवनविरहित[6] सकलकविहितम् ॥ ६५ ॥

यथा–

सुरनतपदकमल　हृतजनशमल
　　वारिजविजयिनयनयुगल वारिद[7]विमलं,
दितिसुतकुलविलय कमलानिलय
　　कल[8]करयुगलकलितवलय केलिषु सलयम् ।
चन्द्रकचित[9]-मुकुट विनिहतशकट
　　दुष्टकसहृदि बहुविकट मुनिजननिकट,
गतयमुनारूप कृतबहुरूप
　　नमतारूढहरितनीप[10] श्रुतिशतदीपम् ॥ ६६ ॥

यथा वाऽस्मत्पितुः शिवस्तुतौ—

करकलितकपाल धृतनरमाल
　　भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुकदन,
भवभयभरहरण[11]गिरिजारमण
　　सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम्[12] ।
कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसार
　　दक्षमखक्षयसक्षुब्ध रमणीलुब्ध,
गलराजितगरल गङ्गाविमल
　　कैलाशाचलधामकर प्रणमामि हरम् ॥ ६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति मदनगृहम् ।

---

१. ग द्विजसहितम् ।　२ ग कमल ।　३. ग श्रति ।　४ ख महितम् ।　५. ग. 'वसुयतिमहित' नास्ति ।　६. 'पवनविरहित मदनगृह' इति पाठात् श्रुतिकटुत्वदोषनिरास स्यात । (स०)　७ ग वारिज ।　८ ग. वरकर ।　९ ग. चन्द्रकजुत ।　१०. ग हरितानीपम् ।　११. ख ग भवभवभयहरणम् ।　१२ ग त्रैलोक्यहितम् ।

२७ मरहट्ठा [महाराष्ट्रम्]

प्रथम कुरु टगण पुनरपि डगण शरपरिमितमतिशोभि,
　　शेषे कुरु हार लघुमथ सार कविजनमानसलोभि ।
गगनेन्दौ विरति तदनु वसुयति पुनरथ विधुयुगलेऽपि,
　　मरहट्ठावृत्ते कविजनचित्ते नवयुगरचितकलेऽपि ।। ६८ ।।

यथा–

गर्वावलिभासुर हतकंसासुर भुवि कृतविमलविलास,
मुरलीभासितकर वृषभासुरहर वरतरुणीकृतरास[1] ।
दावानलवालक[2]गोधनपालक हिमकरकरनिभहास,
कृपया कुरु दृष्टि मयि सुखवृष्टि मुनिहृदि[3]जनितविकास ।। ६९ ।।

इति मरहट्ठा ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके चतुर्थं पद्मावतीप्रकरणम् ।



---

१. ग हास । २. ग. मिहकर । ३ ग. नास्ति ।

पञ्चमं सवया-प्रकरणम्

अथ सवया[1]

सप्तभकारविभूषित-पिंगलभाषितमन्तगुरूपहित[2],
अन्यदथापि तथैव भभूषितमन्तगुरुद्वयसविहितम् ।
अष्टसकारमथो गुरुसङ्गतमेतदथान्यदपि प्रथित,
सप्तजकारविराजितमन्त्यलघुं[3] गुरु[4]भासितमन्यदिदम् ॥ १ ॥
अन्यदिद [मुनिनायकभाषितमन्त्यलघुं गुरुयुग्मसुयुक्त,
योगचतुष्कलपूजित][5]मन्यदिदं युगवह्निकलाभिरमुक्तम्[6] ।
पण्डितमण्डलिनायकभूपतिमानसरञ्जनमद्भुतवृत्त,
सर्वमिद सवयाभिधमुक्तमशेषकवीन्द्रविमोहितचित्तम् ॥ २ ॥

अथैतेषा भेदाना नामानि

मदिरा मालती मल्ली मल्लिका माधवी तथा ।
मागधीति च नामानि तेपामुक्तान्यशेषत ॥ ३ ॥

क्रमेणोदाहरणानि[7], यथा[8]—

१ मदिरा सवया

भालविराजितचन्द्रकल नयनानलदाहितकामवर,
बाहुविराजितशेषफणीन्द्रफणामणिभासुरकान्तिधरम् ।
भूधरराजसुतापरिमण्डितखण्डित[9]नूपुरदण्डधर,
नौमि महेशमशेषसुरेशविलक्षणवेषमुमेश[10]हरम् ॥ ४ ॥

इति मदिरा सवया ।

२ मालती सवया

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पित-[11]चन्द्रकिशोभ,
वन्यनवीनविभूषणभूपितनन्दसुत वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधिदुर्गमवेदरहस्य
नौमि हरिं दितिजावलिमालित[12]-भूमिभरापनुद सुयशस्यम् ॥ ५ ॥

इति मालती सवया ।

---

१ ग. सवईया । २ ग पिहितम् । ३. ख ग लघु । ४. ग मुनि । ५ कोष्ठक-गतोंशो नास्ति क प्रतौ । ६ ग कलारसमुक्तम् । ७ ग तासां क्रमेणोदाहरणानि । ८. ग तद्यथा । ९. क प्रतौ 'खण्डित' शब्दो नैव । १० ग मुनेश । ११ ग विलम्बित । १२ ग दितिजावलिभारित ।

३ मल्ली सवया

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालु-मदभ्रमरोद्धत[1]-दानवकाल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेष[2]-कलानिधिलालितभालम् ॥ ६ ॥

इति मल्ली सवया ।

४ मल्लिका सवया

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरय पवन',
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदनं कुरुते मदन ।
कलानिधिरेष बलादयि ! मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिम.
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिम ॥ ७ ॥

इति मल्लिका सवया ।

५ माधवी सवया

विलोलविलोचनकोणविलोकित-मोहितगोपवधूजनचित्त ,
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्र. ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्त.,
सखीमिति[2] कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्त ॥ ८ ॥

इति माधवी सवया ।

६ मागधी सवया

माधव[3]विद्युदिय गगने तव कलयति पीतवसनमभिरामम्,
जलधरनीलगगनपद्धतिरपि तव तनुरुचिमनुसरति निकामम् ।
इन्द्रशरासनमपि तव वक्षसि भासितवरवनमालाशोभ
[कुरु मम वचन सफलय हृदय राधाधरमधुविरचितलोभम्[4]] ॥ ९ ॥

इति मागधी सवया ।

उक्तानि सवयाख्यानि छन्दास्येतानि कानिचित् ।
ऊह्यानि लक्ष्यमालोच्य[5] शेषाणि निजबुद्धित ॥ १० ॥

---

१ ग मदोधक । २ ग. सखीरिति । ३ ग. मागध । ४ चतुर्थचरण क. प्रतौ नास्ति । ५ ग आलोक्य ।

७ घनाक्षरम्[1]

रसभूमिवर्णयतिक[2] तदनु च शरभूमिविरतिक यत्तु[3] ।
विधुवह्निवर्ण[4]सङ्गतमिदमप्रतिम घनाक्षर वृत्तम् ॥ ११ ॥

यथा–

रावणादिमानपूर-दूरनाशनेति वीर
राम कि विशालदुर्गमायाजालमेव ते,
मैथिलीविलासहास धूतसिन्धुवासर(रा)स[5]
भूतपतिशरासनभङ्गकर[6] भासते ।
दीनदुःखदानसावधान पारावारपार[7]-
यान-वीरवानरेन्द्रपक्ष किं महामते ।,
ते रणप्रचण्डबाहुदण्डमेव हेतुमत्र
बाणदावदग्धशत्रुसैनिका. प्रकुर्वते ॥ १२ ॥

इति घनाक्षरम् ।

इति वृत्तमौक्तिके वार्त्तिके[8] पञ्चम सवया[9] प्रकरणम् ।



१. ग तद्यथा आर्या । २. ग य कि । ३. ग. कमनु । ४. ग. विधुवर्णे वह्नी । ५. ग वासस्सार । ६. ग. संगकर । ७ ग पारावान । ८ ग. नास्ति । ९ ग सवाय ।

षष्ठं गलितकप्रकरणम्

अथ गलितकानि—

१. गलितकम्

शरकलं पञ्चपरिमित जलधिकलयुगं
प्रविलसति यस्मिश्चरणे लघुगुर्वनुगम्[1] ।
विधुयुगकलारचितमहिपतिफणिकलितक
वरकविजनमानसहर[2] भवति गलितकम् ॥ १ ॥

यथा—

मल्लि[3]-मालतियूथिपङ्कजकुन्दकलिके,
कुमुदचम्पककेतकिपरिमलबलदलिके[4] ।
मलयपर्वतशीतल त्वयि जातपवन',
हरिवियोगतनोरिय मम कथ दहन ॥ २ ॥

इति गलितकम् ।

२. विगलितकम्

ठगणद्वय[5] भवति चतुष्कलद्वयसङ्गत
तदनु च शरकल भवति सुललितकविसम्मतम् ।
दहनपक्षकलाविलसितविमलसकलचरण,
विगलितकमेतत् फणिपतिमधिकसुखकरणम् ॥ ३ ॥

यथा –

भवजलधितारिणि[6] सकलतापहारिणि गङ्गे,
अघदहनकारिणि रुचिधारिणि हरकृतसङ्गे ।
गिरिनिकरदारिणि मनोहारिणि तरलभङ्गे,
स्वपिमि वारिणि हसहारिणि तव विलसदङ्गे ॥ ४ ॥

इति विगलितकम् ।

३ सङ्गलितकम्

डगणयुगेन विराजित,
पञ्चकलेन सभाजितम् ।
सङ्गलितकमिति कल्पित,
फणिपतिपिङ्गलजल्पितम् ॥ ५ ॥

---

१ ग गुर्वतुग' । २ ग मानसहर तवति । ३. ग मल्लिका । ४. ग कुन्दचम्पकके परिमलवल्लिके । ५. ख टगणद्वयम् । ६ ग भवजलधितंरणि ।

धृतिमवधारय मानसे,
हरिमपि[1] गततनुरानशे ।
सखि ! तव वचन मानये,
ननु वनमालिनमानये ॥ ६ ॥

इति सङ्गलितकम् ।

४. सुन्दरगलितकम्

ठगणद्वयेन भाषित,
लादित्रिकलविकासितम्[2] ।
सुन्दरगलितकनामकं,
वृत्तममलरुचिधामकम् ॥ ७ ॥

यथा–

विगलितचिकुरविलासिनी,
नवहिमकरनिभहासिनीम् ।
सुवलराधिकान्तामये[3],
तनुजितकनकां कामये ॥ ८ ॥

इति सुन्दरगलितकम् ।

५ भूषणगलितकम्

ठगणद्वितय प्रथम चरणे,
रसभूमिसुसख्यकलाभरणे ।
त्रिकलद्वितय पुनरेव यदा,
फणिभाषित-भूषणकेति तदा[4] ॥ ९ ॥

यथा–

रुचिरवेणुविरावविमोहिता
द्रुतपदा कृतरासरसै[5] हिता ।
हरिमदूरवने हरिणेक्षणा-
स्तमनुजग्मुरनन्यगतेक्षणाः[6] ॥ १० ॥

इति भूषणगलितकम् ।

६. मुखगलितकम्

षट्कल प्रथममथ वेदत्रिकलयुत,
पुनरपि यच्चरणशेषगतवलयचितम् ।

---

१ ग हरिमपगत । २. ग. विलासितम् । ३. ग. सुवलिराधिकाम् । ४. ग. यदा ।
५ ख ग रसे । ६. ग क्षणम् ।

गगनपक्षकलाकृतचरणविकासित,
मुखगलितकमिद वरफणिपतिभाषितम् ॥ ११ ॥

यथा–

ब्रह्मभवादिकनुतपदपङ्कजयुगल,
नाशितभक्तहृदयगतदारुणशमलम् ।
दीनकृपानिधि-भवजलराशितारकं,
नौमि हरि कमलनयनमशुभदारकम्[१] ॥ १२ ॥

इति मुखगलितकम् ।

७. विलम्बितगलितकम्

आदौ षट्कल तदनु चान्तगेन सहित,
जलनिधिकलचतुष्कमहिनायकेन विहितम् ।
समगणे जगणेन सहित[२] फणीन्द्रभणित,
विलम्बिताख्यमेतदखिलसुकवीन्द्रगणितम्[३] ॥ १३ ॥

यथा–

नमामि पङ्कजानन सकलदुःखहरण,
भवाम्बुराशितारक निखिलवन्द्यचरणम्[४] ।
कपोललोलकुण्डल[५] व्रजवधूजनसहित,
विलासहासपेशल सरसरासमहितम् ॥ १४ ॥

इति विलम्बितगलितकम् ।

८ [१]. समगलितकम्

डगणविभूष प्रथममवेहि पञ्चकलयुगयुत[६],
तदनु चतुष्कलयुगसहित विरतौ लगुरुमहितम्[७] ।
शरयुगमात्रासहितमनुत्तमपिङ्गलभाषित,
समगलितकमिदमतिसुखकरसुललितपदभासितम् ॥ १५ ॥

यथा–

निखिलसुरगणविनुतपङ्कजकोमलचरणयुगल,
पीतवसनविलसितशरीरमनुत्तमकम्बुगलम् ।
नौमि निगमपरिगदितमपारगुणयुतमिन्दुमुख,
नन्दतनूज निखिलगोपवधूजनदत्तसुखम् ॥ १६ ॥

इति समगलितकम् ।

---

१. ग. दायकम् । २. ग रहितम् । ३ ग गदितम् । ४. ग वन्द्या चरणम् । ५. ग कुञ्ज । ६. ग ज्युतम् । ७ ग. लघुगुरुसहितम् ।

८ [२]. अपरं समगलितकम्

समगलितक प्रभवति[1] विषमे यदि डगणत्रिकलाभ्या कलितकम्[2] ।
मुखगलितक समचरणे किल भवति निखिलपण्डितमुखवलितकम्[3] ॥ १७ ॥

यथा–

विभूतिसित शिरसि निवसिता[4]-नुपमनदीभवपङ्कजविलसितम् ।
अहिप[5]-रुचिर किमपि विलसिता[6] मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिरम् ॥ १८ ॥

इति द्वितीयं समगलितकम् ।

८ [३]. अपरं सङ्गलितकम्

विपरीतस्थितसकलपदयुतमेव समगलितक सङ्गलितकम्[7] ॥ १९ ॥

विपरीतपठितमिदमेवोदाहरणम् । यथा–

शिरसि निवसिता[8]नुपमनदीभव-पङ्कजविलसित विभूतिसितम् ।
किमपि विलसिता मम हृदि वेदरहस्यमतिसुचिर अहिप[9]-रुचिरम् ॥ २० ॥

इति द्वितीय सङ्गलितकम् ।

८ [४] अपर लम्बितागलितकम्

शरमितडगणै स्याद् भाविता[10] निखिलपादे
विषमजगणमुक्ता चान्तगा[11]विगतवादे ।
युगयुगकृतमात्राः कल्पिता[12] यदनुपाद,
फणिपतिभणितेय लम्बिता त्यज विषादम् ॥ २१ ॥

यथा–

राजति वशीकृतमेतत् काननदेशे,
गच्छति कृष्णे तस्मिन्नथ मञ्जुलकेशे ।
याहि मया सार्द्धमितो रासाहितचित्ते,
तत्सविधे प्रेमविलोले तेन च वित्ते[13] ॥ २२ ॥

इति द्वितीय लम्बितागलितकम् ।

९. विक्षिप्तिकागलितकम्

शरोदितकलो यदि भाति[14] गणो विषमस्थितियुत
समस्थित(ति)विभूषितेन तदनु चतुष्कलेन युत ।

---

१ ग 'समगलितक' नास्ति, भवति च । २ ग सक्लितकम् । ३ ग. मुखवतिलकम् । ४. ग निवासिता । ५. ग फणिप । ६ ग विलसतां । ७ ग नास्ति ८. ग विलासिता । ९ ख ग. फणिप । १० ग भावित । ११ ग. वान्तगावितवादे । १२. ग. कल्पित । १३. ग चल। १४. क. भावि ।

शरोदितगणैः परिभावितसकलचरणैः सहिता[१],
कवीन्द्रकथितान्तगुरुः[२] किल विक्षिप्तिका महिता[३] ॥ २३ ॥

यथा–

चन्द्रकचितमुकुटमखिलमुनिजनहृदयसुखकरण,
धृतवेणुकल वरभक्तजनस्याद्भुत शरणम् ।
वृन्दावनभूमिषु वल्लवनारीमनोहरण,
रुचिर निजचेतसि चिन्तय गोवर्द्धनोद्धरणम्[४] ॥ २४ ॥

इति विक्षिप्तिकागलितकम् ।

१०. ललितागलितकम्

पूर्वं कथिता विक्षिप्तिकैव[५] चरणसुकलिता,
ठगणे[६] चतुष्कलेन भूषिता प्रभवति ललिता ॥ २५ ॥

यथा–

कमलापतिं कमलसुलोचनमिन्दुनिभानन,
मञ्जुलपरिपीतवाससमपारगुणकाननम् ।
सनकादिकमानसजनितनिवाससमस्तनुत,
प्रणमामि हरिं निजभक्तजनस्य हिते निरतम् ॥ २६ ॥

इति ललितागलितकम् ।

११. विषमितागलितकम्

पूर्वं द्वितीयचरणे विषमस्थितिकपञ्चकल,
तुर्ये[७] तृतीयचरणे प्रथम भवति चतुष्कल ।
सकले समस्थित(ति)वेदकलो[८] विरतौ विरचिता,
या(यो)गेन[९] शरोक्तगणेन च सा भवति विषमिता ॥ २७ ।

यथा–

वेणुं करे[१०] कलयता सखि ! गोपकुमारकेण,
पीताम्बरावृतशरीरभृता भवतारकेण ।
प्रेमोद्गतस्मितरुचा वनजभूषणशोभिना,
चेतो ममाऽपि कवलीकृत मानसलोभिना ॥ २८ ॥

इति विषमितागलितकम् ।

---

१. ग. सहिताः । २ ग गुरु । ३ ग महिता । ४. ग धरणम् । ५. ग विक्षिप्तिकैः कथिता च । ६ ग ठगणेन । ७ ग. तुर्यं । ८. ग कलौ । ९. ग सागेन । १० ग वेणुकरे ।

१२ मालागलितकम्

षट्कलविरचित तदनु च दश[1]-सख्यडगण-
परिभावितचरणमुदेति मालाभिधं गलितकम् ।
मध्यगुरुजगणेन विरचितसमस्तसमगण-
रसोदधिकलकमहीन्द्रफणिवदने[2] वलितकम् ।।२९।।

यथा[3]–

कालियकुलविभञ्जक-मसुरविडम्बक-दनुजविलुम्पक-
मखिलजनस्तुतशुभचरितमुनिनुत,
नौमि विमलतर सकलसुखकर कलिकलुषहरं,
भवजलधितरिं हरिं पालने सुनियतम् ।
कसहृदि विकट मुनिगणनिकट विनिहतशकटं
परिधृतमुकुट जगद्विरचनेऽतिचतुर,
भवतजनशरण भवभयहरण वरसुखकरण
स्वपदवितरण जगन्नाशने धृतधुरम् ।। ३० ।।

इति मालागलितकम् ।

१३ मुग्धमालागलितकम्[4]

मालाभिख्यमेव[5] हि भवति चतुष्कल-
युगरहित फणिपविन्न[6] मुग्धपूर्वम् ।। ३१ ।।

यथा[7]–

वन्दे नन्दनन्दनमनवरत मरकतसुतनु धृतरुचि मुरारिमा(मी)श,
वादितवशमानतमुनिजन-नारदविरचितगानमवनीमणीमनीषम् ।
कारितरासहासपरवशरत विरचितसुरत विततकुङ्कुमेन पीत,
त देव प्रमोदभरसुविदित मुदितसुरनुत सततमात्मजेन गीतम् ।। ३२ ।।

इति मुग्धमालागलितकम् ।

१४. उद्गलितकम्

मुग्धपूर्वकमेव डगणयुगलेन रहितपदमुद्गलितकम् ।। ३३ ।।

यथा[8]–

नन्दनन्दनमेव कलयति न किञ्चिदिह जगति सारमपर,
पुत्रमित्रकलत्रमखिलमपि चित्रघटितमिव भाति न परम् ।

---

१. ग शरसख्य । २ ग फणिपवनेद । ३. ग ऊह्यमुदाहरण, उदाहरण नास्ति । ४ ग मुग्धामालागलितकम् । ५ ग मालाभिसख्यमेष । ६ ग वित्त । ७ ग ऊह्यमुदाहरणं, उदाहरणं नास्ति । ८. ग लक्षणानुसारादेव कविभिरुदाहरणमूह्यम्, उदाहरणं नास्ति ।

सावधानतयैव लवमपि मन. परमचलमिद न विदित
भावयन्तु दिवानिशमनिमिषमात्मनि परमपद प्रमुदितम् ॥ ३४ ॥

इत्युद्गलितकम् ।

एव गलितकादीनि वृत्तान्युक्तानि कानिचित् ।
लक्ष्याणि लक्ष्यमालक्ष्य शेषाणि निजबुद्धित [1] ॥ ३५ ॥

इति गलितक-प्रकरणं षष्ठम् [2] ।

[ग्रन्थकृत्प्रशस्तिः]

रन्ध्रसूर्याश्वसख्यात मात्राच्छन्द इहोदितम् ।
सप्रभेदवसुद्वन्द्वशतद्वयमुदीरितम् २८८ ॥ ३६ ॥

सोदाहरणमेतावदस्मिन्खण्डे मयोदितम् ।
प्रस्तारसख्यया तेषां भाषणे पिङ्गल क्षम ॥ ३७ ॥

[3]श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
मात्रावृत्तविधायकखण्ड. सम्पूर्णतामगमत् ॥ ३८ ॥

वाणमुनितर्कचन्द्रै [१६७५] गणितेब्दे वृत्तमौक्तिके रुचिरम् ।
माघे धवलपक्षे पञ्चम्या चन्द्रशेखरश्चक्रे [4] ॥ ३९ ॥

[5]इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्द शास्त्रपरमाचार्य-सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-
कर्णधारश्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखर-श्रीचन्द्रशेखरभट्ट-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके
मात्राख्यः प्रथम परिच्छेद ।

श्रीरस्तु ।

---

१. ग पूर्णं पद्यं नास्ति । २. ग इति वृत्तमौक्तिके गलितक प्रकरण षष्ठ । तदनन्तर ग. प्रतौ निम्नपद्य वर्तते--

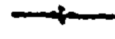
जनकुलपाल लालितवालं वादितमृदुतरशख,
रोचनयुतभाल धृतवनमाल शोभिततरलवशखम् ।
दितिव्रजकाल वादिततात कृतसुरमुनिगणशस,
रुचिकलिततमाल जितघनजाल भासितयादववशम् ॥

३ ग इति श्रीमच्चन्द्रशेखरकृते रुचिरवरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् मात्रावृत्तविधायकखण्ड समाप्तम् । ४ ग पूर्णं पद्यं नास्ति । ५. ग 'इत्याल' प्रारभ्य 'परिच्छेद' पर्यन्त पाठ नास्ति[3] ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टसूनु-कविचन्द्रशेखरभट्टप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

द्वितीयः खण्डः



प्रथमं वृत्तनिरूपण - प्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

शिरोऽदिव्यद्[1] गङ्गाजलभवकलालोलकमला-
न्यलं शुण्डादण्डोद्धरणविषयान्यारचयता।
जटायां कृष्टायां द्विरदवदनेनाथ रभसा,
दुदश्रुर्गौरीश. क्षपयतु मन. क्षोभनिकरम्॥ १॥

मात्रावृत्तान्युक्त्वा कौतूहलतः फणीन्द्रभणितानि।
अथ चन्द्रशेखरकृती वर्णच्छन्दांसि कथयति स्फुटत॥ २॥

[अथैकाक्षरं वृत्तम्]

१ श्री

यो गः। सा श्री॥ ३॥

यथा–

श्री-र्मा-मव्यात्॥ ४॥

इति श्रीः १

२. अथ इ

ल इ-रि-ति॥ ५॥

यथा–

श-म कु-रु॥ ६॥

इति इ २.

अत्रैकाक्षरस्य प्रस्तारगत्या द्वावेव भेदौ भवतः[2]।

इत्येकाक्षरं वृत्तम्।

---

१. ख. द्योप्यद्। २ पंक्तिरियं नास्ति क प्रतौ।

अथ द्व्यक्षरम्

तत्र–

३. कामः

गौ चेत् कामो ।
नाग-प्रोक्त ॥ ७ ॥

यथा

वन्दे कृष्णम् ।
केली-तृष्णम् ॥ ८ ॥

इति कामः ३

४. अथ मही

लगौ महीम् ।
वदत्यहि. ॥ ९ ॥

यथा–

रमापते ।
नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

इति मही ४.

५. अथ सारम्

वक्र-लौ च ।
सार-मत्र ॥ ११ ॥

यथा–

कस-काल ।
नौमि वाल ॥ १२ ॥

इति सारम् ५

६. अथ मधुः

द्विलकृति ।
मधुरिति ॥ १३ ॥

यथा–

मतिमव ।
मम भव ॥ १४ ॥

इति मधु ६

यद्यपि द्व्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या चत्वार ४ एव भेदा भवन्तीति, तावन्तोप्युक्ता ।

इति द्व्यक्षरम् ।

अथ त्र्यक्षरम्

तत्र–

७. ताली

पादे या म प्रोक्ता ।
ताली सा नागोक्ता ॥१५॥

यथा–

गोवृन्दे सञ्चारी ।
पायाद् दुग्धाहारी ॥ १६ ॥

इति ताली ७. 'नारी'त्यन्यत्र ।

८ अथ शशी

शशीवृत्तमेतत् ।
यकारो यदि स्यात् ॥ १७ ॥

यथा–

मुदे नोऽस्तु कृष्ण ।
प्रियाया सतृष्ण ॥ १८ ॥

इति शशी ८

९. अथ प्रिया

वल्लकी राजते ।
सा प्रिया भासते ॥ १९ ॥[1]

यथा–

राधिका-रागिणम् ।
नौमि गोचारिणम् ॥ २० ॥

इति प्रिया ९

१०. अथ रमण

क्रियते सगण ।
फणिना रमण ॥ २१ ॥

यथा–

सखि मे भविता ।
हरिरप्यचिता ॥ २२ ॥

इति रमण १०.

---

१. वृत्तमेतद् रगणोदाहृतेः । (स)

११. अथ पञ्चालम्[1]

पादेषु तो यहि ।
पञ्चाल-वृत्त हि ॥२३॥

यथा–

श देहि गोपेश ।
मन्दे महत्केश ॥ २४ ॥

इति पञ्चालम् ११.

१२. अथ मृगेन्द्र:

नरेन्द्र विराजि ।
मृगेन्द्र मवेहि ॥ २५ ॥

यथा–

विलोलवतस ।
नमो धृतवश ॥ २६ ॥

इति मृगेन्द्रः १२.

१३. अथ मन्दर:

भो यदि सुन्दरि ।
मन्दरमेव हि ॥ २७ ॥

यथा–

चञ्चलकुन्तल ।
नौमि सुमङ्गल ॥ २८ ॥

इति मन्दरः १३.

१४. अथ कमलम्

नमनुकलय ।
कमलममल ॥ २९ ॥

यथा–

अहिपवलय ।
शमिह कलय ॥ ३० ॥

इति कमलम् १४.

अत्राऽपि त्र्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या अष्टौ भेदा भवन्तीति तावन्तोप्युदाहृता ।

इति त्र्यक्षरम् ।

---

१ क प्रतौ पाञ्चालवृत्तस्य लक्षणमुदाहरणे नोल्लिखिते ।

अथ चतुरक्षरम्

तत्र–

१५. तीर्णा

यस्मिन् कर्णौ वृत्ते स्वर्णौ ।
सा स्यात् तीर्णा नागोत्कीर्णा ॥ ३१ ॥

यथा–

गोपीचित्ताकर्षे सक्तम् ।
न्दे कृष्ण गोभिर्युक्तम् ॥ ३२ ॥

इति तीर्णा १५. 'कन्या' इत्यन्यत्र ।

१६. अथ धारी

पक्षिभासि मेरुधारि ।
वारिराशि वर्णवारि[1] ॥ ३३ ॥

यथा–

गोपिकोडुसङ्घचन्द्र ।
नौमि जन्मपूतनन्द ॥ ३४ ॥

इति धारी १६.

१७. अथ नगाणिका

विधेहि ज ततो गुरुम् ।
नगाणिका भवेदरम् ॥ ३५ ॥

यथा–

विलोलमौलिभासुरम् ।
नमामि सहतासुरम् ॥ ३६ ॥

इति नगाणिका १७.

१८. अथ शुभम्

द्विजवरमिह यदि ।
विदधत, शुभमिति ॥ ३७ ॥

यथा–

अशुभमपहरतु ।
हृदि हरिरुदयतु ॥ ३८ ॥

इति शुभम् १८

अत्रापि चतुरक्षरस्य प्रस्तारगत्या षोडश १६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तभेद-युक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कयाऽत्र चत्वारो भेदा प्रदर्शिताः, शेषभेदा सुधीभिरूह्या इति।*

इति चतुरक्षरम् ।

---

१ ख. वर्णधारि ।

*शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

अथ पञ्चाक्षरम्

तत्र–

१९ सम्मोहा

आदौ म प्रोक्तं पश्चात् कर्णोक्तम् ।
बाणार्णैर्युक्तं सम्मोहावृत्तम् ॥ ३९ ॥

यथा–

वन्दे गोपालं दैत्यानां कालम् ।
गोपीगोपानां पालं दीनानाम् ॥ ४० ॥

इति सम्मोहा १९.

२०. अथ हारी

यस्मिन् तकारः पक्षोक्तहार ।
पञ्चार्णयुक्तं हारीति वृत्तम् ॥ ४१ ॥

यथा–

आनन्दकारी गोपीविहारी ।
मां पातु बालः केलीरसालः ॥ ४२ ॥

इति हारी २०

२१. अथ हंसः

आदिरथान्तं कुण्डलयुक्तं ।
मध्यगतं सो यत्र स हंस ॥ ४३ ॥

यथा –

नन्दकुमारं सुन्दरहारं ।
गोकुलपालं पातु स बालं ॥ ४४ ॥

इति हंसः २१.

२२ अथ प्रिया

सगणाहिता लग-संयुता ।
भवतीह या किल सा प्रिया ॥ ४५ ॥

यथा –

सखि ! गोकुले सुखसंकुले[1] ।
व्रजसुन्दरो ननु निर्दय. ॥ ४६ ॥

इति प्रिया २२.

---

१. ख 'सुखसंकुले' नास्ति ।

२३. अथ यमकम्

नमिह कुरु लयुगमथ ।
इति यमकमनुकलय ॥ ४७ ॥

यथा–

असुरयम शमिह मम ।
अनुकलय फणिवलय ॥ ४८ ॥

यथा वा–

लुषहर धरणिधर ।
दलितभव सुजनमव ॥ ४९ ॥

इति यमकम् २३

अत्र प्रस्तारगत्या पञ्चाक्षरस्य द्वात्रिंशद् ३२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचनोक्ताः शेषास्तूह्या ।*

इति पञ्चाक्षरम् ।

अथ षडक्षरम्

तत्र–

२४. शेषा

नागाधीशप्रोक्त सर्वैर्दीर्घैर्युक्तम् ।
षड्भिर्वर्णैर्वृत्त[1] शेषाख्य स्याद् वृत्तम् ॥ ५० ॥

यथा–

कसादीनां काल गोगोपीना पाल ।
पायान्मायाबाल मुक्ताभूषाभाल[2] ॥ ५१ ॥

इति शेषा २४

२५. अथ तिलका

यदिसद्वितयाचित सर्व पदा ।
तिलकेति फणिर्वदतीह तदा ॥ ५२ ॥

यथा–

कमनीयवपु शकटादिरिपु ।
जयतीह हरि भवसिन्धुतरि ॥ ५३ ॥

इनि तिलका २५

---

१ ग विन्त इव । २ ख मालः ।

*टिप्पणी—शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

२६. अथ विमोहम्

पक्षिराजद्वय यत्र पादस्थितम् ।
पिङ्गलेनोदित तद् विमोहं मतम् ।। ५४ ।।

यथा–

गोपिकामानसे य सदा व्यानशे ।
पातु मां सेवक सोऽहनद्यो बकम्[1] ।। ५५ ।।

इति विमोहम् २६.

'विज्जोहा' इति स्त्रीलिङ्गं पिङ्गले*[1] ।

२७ अथ चतुरसम्

प्रथमनकार[2] तदनु यकारम् ।
कुरु चतुरसे फणिकृतशसे ।। ५६ ।।

यथा–

विनिहतकंसं तरलवतसम् ।
नम धृतवंश सुरकृतशसम् ।। ५७ ।।

इति चतुरसम् २७.

'चउरसा' इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले*[2]।

२८. अथ मन्थानम्

पादे द्वित देहि षड्वर्णमाधेहि ।
जानीहि नागोक्तमन्थानमेतद्धि ।। ५८ ।।

यथा-

धूतासुराधीश गोगोपकाधीश ।
मा पाहि गोविन्द गोपीजनानन्द[3] ।। ५९ ।।

इति मन्थानम् २८. स्त्रीलिङ्गमन्यत्र ।

२९ अथ शङ्खनारी

यदा स्तो यकारौ रसप्रोक्तवर्णौ ।
तदा शङ्खनारी फणीन्द्रोदिता स्यात् ।। ६० ।।

यथा

व्रजे रासकारी मनस्तापहारी ।
वधूभि समेतो हरि. पातु चेत ।। ६१ ।।

इति शङ्खनारी २९ 'सोमराजी' त्यन्यत्र ।

---

१. ख. पद्यमिदं नास्ति । २. क ख. पुस्तके 'नकार' स्थाने 'नमस्कार' पाठ सोऽसमीचीन । (सं०) ३. ख. अमन्द ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम परिच्छेद २ पद्य ४५

*टिप्पणी—२ ,, ,, ,, ४७

३०. अथ सुमालतिका

जकारयुगेन विभाति युतेन ।
अहिर्वदतीति सुमालतिकेति ।। ६२ ।।

यथा– व्रजाधिपबाल विभूषितबाल[1] ।
सुरारिविनाश नमाम्यनलाश ।। ६३ ।।

इति सुमालतिका ३०. 'मालती'ति पिङ्गले*[1] ।

३१. अथ तनुमध्या

यस्या शरयुग्म कुन्तीसुतयुग्मे ।
ग्रन्थे खलु साध्या सा स्यात्तनुमध्या ।। ६४ ।।

यथा– राधासुखकारी वृन्दावनचारी ।
कसासुरहारी पायाद् गिरिधारी ।। ६५ ।।

इति तनुमध्या ३१.

३२ अथ दमनकम्

नगणयुगलमिह रचयत ।
दमनकमिति परिकलयत ।। ६६ ।।

यथा– व्रजजनयुत सुरगणवृत ।
जय मुनिनुत व्रजपतिसुत ।। ६७ ।।

इति दमनकम् ३२.

अत्र प्रस्तारगत्या षडक्षरस्य चतु षष्टि· ६४ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्त-सहिता. कियन्तो भेदा उक्ता, शेषभेदा सुधीभिरूह्या। ग्रन्थविस्तरशङ्कया नात्रोक्ता इति ।•[2]

इति षडक्षरम् ।६।

अथ सप्ताक्षरम्

तत्र– ३३ शीर्षा

वर्णा दीर्घा यस्मिन् स्यु पादेऽद्रीणा सख्याका. ।
नागाधीशप्रोक्त तत् शीर्षाभिख्य वृत्त स्यात् ।।६८।।

यथा– मुण्डाना मालाजालै-र्भास्वत्कण्ठ भूतेशम् ।
कालव्यालैः खेलन्त वन्दे देव गौरीशम् ।। ६९ ।।

इति शीर्षा ३३.

---

१. ख भाल ।
*टिप्पणी—१ प्राकृतपैङ्गलम्–परिच्छेद २ पद्य ५४ ।
•टिप्पणी—२ शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

३४ अथ समानिका

पक्षिराजभासिता जेन सविभूपिता ।
अन्तगेन शोभिता सा समानिका मता ॥ ७० ॥

यथा–

फुल्लपङ्कजानन केलिशोभिकाननम् ।
वल्लवीमनोहर नौमि राधिकावरम् ॥ ७१ ॥

इति समानिका ३४.

३५. अथ सुवासकम्

द्विजमिह धारय भमनु च कारय ।
भवति सुवासक-मिति गुणलासक ॥ ७२ ॥

यथा–

विबुधतरङ्गिणि भुवि कृत[1]रिङ्गिणि ।
तरलतरङ्गिणि जय हरसङ्गिनि ॥ ७३ ॥

इति सुवासकम् ३५

३६ अथ करहञ्चि

नगणमिह धेहि तदनु समवेहि ।
इति किल[श]राचि भवति करहञ्चि ॥ ७४ ॥

यथा–

व्रजभुवि विलास युवतिकृत[रा]स ।
जय निहतदैत्य जघन[2]कृतशैत्य ॥ ७५ ॥

इति करहञ्चि ३६

३७ अथ कुमारललिता

जकारयुतकर्णा मुनीन्द्रमितवर्णा ।
लघुद्वितयमध्या कुमारललिता स्यात् ॥ ७६ ॥

यथा–

व्रजाधिपकिशोर नवीनदधिचोरम् ।
कुमारललित [त] नमामि हृदि सत्तम् ॥ ७७ ॥

इति कुमारललिता ३७

३८. अथ मधुमती

नगणयुगयुता तदनु ग-महिता ।
वदति मधुमती-महिरतिसुमतिः ॥ ७८ ॥

---

१ ख 'क्षुभ'। २. ख नयन।

यथा–

दितिसुतकदनः शशधरवदन ।
विलसतु हृदि न. तनुजितमदन. ॥ ७९ ॥

इति मधुमती ३८.

३९ अथ मदलेखा

आद्यन्ते कृतकर्णा शैलै. सम्मितवर्णा ।
मध्ये भेन विशेषा नागोक्ता मदलेखा ॥ ८० ॥

यथा–

गोपाल कृतरासं गो - गोपीजनवासम् ।
वन्दे कुन्दसुहासं वृन्दारण्यनिवासम् ॥ ८१ ॥

इति मदलेखा ३९.

४०. अथ कुसुमतति

द्विजमनुकलय नमनु विरचय ।
अहिरनुवदति कुसुमततिरिति ॥ ८२ ॥

यथा–

विषमशरकृत कुसुमततियुत ।
युवतिमनुसर मनसि-शयकर ॥ ८३ ॥

इति कुसुमततिः ४०.

अत्र प्रस्तारगत्या सप्ताक्षरस्य अष्टाविंशत्यधिक शत १२८ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्तसहित भेदाष्टकं प्रोक्तं, शेषभेदा ऊहनीया सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तर-शङ्कया नात्रोक्ता इति ।*[1]

इति सप्ताक्षरम् ।

अथ अष्टाक्षरं वृत्तम्

तत्र–

४१. विद्युन्माला

सर्वे वर्णा दीर्घा यस्मिन्नष्टौ नागाधीशप्रोक्ता ।
अब्धावब्धौ विश्राम स्याद् विद्युन्मालावृत्त तत् स्यात् ॥ ८४ ॥

यथा–

कण्ठे राजद्विद्युन्माल. श्यामाम्भोदप्रख्यो बाल. ।
गो-गोपीना नित्य पाल. पायात् कंसादीनां काल ॥ ८५ ॥

इति विद्युन्माला ४१.

---

*[1] शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

४२. अथ प्रमाणिका

शरैस्तथा च कुण्डलै क्रमेण याऽतिशोभिता ।
गिरीन्द्रवर्णभासिता प्रमाणिकेति सा मता ॥ ८६ ॥

यथा–

विलोलमौलिशोभित व्रजाङ्गनासु लोभितम् ।
नमामि नन्ददारक तटस्थचीरहारकम् ॥ ८७ ॥

इति प्रमाणिका ४२.

४३. अथ मल्लिका

हारमेरुमत्र देहि त पुनः क्रमादवेहि ।
धेहि योगवर्णमासु (शु) मल्लिका कुरुष्व वासु ॥ ८८ ॥

यथा–

वेणुरन्ध्रपूरकाय गोपिकासु मध्यगाय ।
वन्यहारमण्डिताय मे नमोऽस्तु केशवाय ॥ ८९ ॥

इति मल्लिका ४३

इयमेव ग्रन्थान्तरे अष्टाक्षरप्रस्तारे समानिका इत्युच्यते । अस्माभिस्तु सप्ताक्षरप्रस्तारे समानिका प्रोक्तेति विशेष. ।

४४. अथ तुङ्गा

द्विजवरगणयुक्ता तदनु करतलोक्ता ।
पुनरपि गुरुसङ्गा फणिपतिकृततुङ्गा ॥ ९० ॥

यथा–

व्रजविहरणशील युवतिषु कृतलीलः ।
हृदि विलसतु विष्णु दितिसुतकुलजिष्णु ॥ ९१ ॥

इति तुङ्गा ४४.

४५ अथ कमलम्

नगण-सगणाचित लघुगुरुविराजितम् ।
फणिनृपविकासित कमलमिति भाषितम् ॥ ९२ ॥

यथा–

वरमुकुटभासुर व्रजभुवि हतासुरः ।
व्रजनृपतिनन्दन जयति हृदि[1] चन्दन ॥ ९३ ॥

इति कमलम् ४५.

---

१ ख धृत ।

४६. अथ माणवकक्रीडितकम्

भेन युत तेन चित दण्डकृत हारवृतम् ।
वेदयति नागमत माणवकक्रीडितकम् ॥ ९४ ॥

यथा–

वेणुधर तापहर[1] नन्दसुत बालयुतम् ।
चन्द्रमुखं भक्तसुख नौमि सदा शुद्धहृदा ॥ ९५ ॥

इति माणवकक्रीडितकम् ४६

४७. अथ चित्रपदा

भद्वितयाचितकर्णा शैलविकासितवर्णा ।
वारिनिधौ यतियुक्ता चित्रपदा फणिनोक्ता ॥ ९६ ॥

यथा–

वेणुविराजितहस्त गोपकुमारकशस्तम् ।
वारिदसुन्दरदेह नौमि कलाकुलगेहम् ॥ ९७ ॥

इति चित्रपदा ४७.

४८. अथ अनुष्टुप्

सर्वत्र पञ्चम यस्य लघु षष्ठ गुरु स्मृतम् ।
सप्तमं समपादे तु ह्रस्व तत्स्यादनुष्टुभम् ॥ ९८ ॥

यथा–

कमल ललितापाङ्गि-कालालिकुलसङ्कुलम् ।
विलुलत् कुन्तल सुभ्रु ! कलयत्यतुल सुखम् ॥ ९९ ॥

इति अनुष्टुप् ४८.

४९. अथ जलदम्

कुरु नगणयुगल मनु च लयुगमिह ।
वरफणिपतिकृति[2] कलय जलदमिति ॥ १०० ॥

यथा–

नवजलदविमल शुभनयनकमल ।
कलय मम हृदय-मखिलजनसदय ॥ १०१ ॥

इति जलदम् ४९.

अत्र च प्रस्तारगत्या अष्टाक्षरस्य षट्पञ्चाशदधिक द्विशतं २५६ भेदास्तेषु आद्यन्तसहित कियन्तस्समुदाहृता, शेषभेदा प्रस्तार्य समुदाहर्त्तव्या इति ।*

इत्यष्टाक्षरम् ।

---

१. 'तापहर' क प्रतौ नास्ति । २ ख फणिपतिकृतमय ।

*टिप्पणी—ग्रन्थान्तरेषु सप्राप्त ये शेषभेदास्ते पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या. ।

अथ नवाक्षरम्

तत्र–

५०. रूपामाला

नेत्रोक्ता माः पादे दृश्यन्ते यस्मिन्नङ्का वर्णा भासन्ते ।
यच्छ्रुत्वा भूपाला मोदन्ते तद् रूपामालाख्य प्रोक्तं ते ॥ १०२ ॥

यथा –

भव्याभि केकाभिः सम्मिश्राः कुर्वन्त सम्पूर्णा सर्वाशा ।
एते दन्तीन्द्राणां सकाशा मेघा पूर्णास्तस्मात् सन्त्वाशा ॥ १०३ ॥

इति रूपामाला ५०.

५१ महालक्ष्मिका

वैनतेयो यदा भासते साऽपि चेद् वह्निना भूष्यते ।
रन्ध्रवर्णा यदा सङ्गता सा महालक्ष्मिका सम्मता ॥ १०४ ॥

यथा-

कानने भाति वशीरुत कामबाणावलीसयुतम् ।
मानस भावनादाहित शीतय स्व मनो याहि तम् ॥ १०५ ॥

इति महालक्ष्मिका ५१.

५२. अथ सारङ्गम्

नगणयकारप्रथित लघुयुगगैः[1] सकथितम् ।
कविजनसञ्जातमद कलयत सारङ्गमिदम् ॥ १०६ ॥

यथा–

सखि हरिरायाति यदा विरचितकम्पेन हृदा ।
न किमपि वक्तुं कलये कथमपि दृष्टे वलये ॥ १०७ ॥

यथा वा–

प्रणमत सर्वाघहर दितिसुतगर्वापहरम् ।
सुरपतितर्वाहरण विलसदखर्वाचरणम् ॥ १०८ ॥

इति सारङ्गम् ५२

इदमेव सारङ्गिकेति पिङ्गले* नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१ क युगकै ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्–परि० २, पद्य

५३. अथ पाइन्तम्

यस्यादिर्वै मगणकृतश्चान्तो हस्तेन विरचित. ।
मध्ये भो यस्य विलसित. तत् पाइन्त फणिभणितम् ।। १०९ ।।

यथा–

गोपालानां रचितसुख सम्पूर्णेन्दुप्रतिममुखम् ।
कालिन्दीकेलिषु ललित वन्दे गोपीजनवलितम् ।। ११० ।।

इति पाइन्तम् ५३ पाइन्ता इति पिङ्गले* ।

५४. अथ कमलम्

नगणयुगलमहित तदनु करविरचितम् ।
फणिकृतमतिविमलं प्रभवति किल कमलम् ।। १११ ।।

यथा–

तरलनयनकमल रुचिरजलदविमलम् ।
शुभदचरणकमल कलय हरिमपमलम् ।। ११२ ।।

इति कमलम् ५४.

५५ अथ बिम्बम्

द्विजवरनरेन्द्रकर्णे प्रविरचितनन्द९वर्णैः ।
फणिनृपतिनागवित्त कविसुखदबिम्बवृत्तम् ।। ११३ ।।

यथा–

लुलितनलिनालसाक्ष शठललितवाचिदक्षः ।
कलयसि सुरागिवक्ष. त्वमपि मयि जातभिक्ष ।। ११४ ।।

इति बिम्बम् ५५.

५६ अथ तोमरम्

सगण मुदा त्वमवेहि जगणद्वय च विधेहि ।
नवसङ्ख्या वर्णविधारि कुरु तोमर सुखकारि ।। ११५ ।।

यथा–

कमलेषु 'सलुलितालि बकुली[कृतं] वरमालि ।
अवलोकये वनमालि वपुरेति'[1] किं वनमालि ।। ११६ ।।

इति तोमरम् ५६

---

१. ' ' चिह्नमध्यग पाठो नास्ति ख प्रतौ ।

* टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्–परि २ पद्य ८० ।

५७. अथ भुजगशिशुसृता

नगणयुगलसदिष्टं तदनु मगणनिर्दिष्टम् ।
भुजगशिशुसृतावृत्तं कलयत फणिना वित्तम् ॥ ११७ ॥

यथा– अनुपमयमुनातीरे नवपवस(कमल)लसन्नीरे ।
प्रणमत कदलीकुञ्जे हरिमिह सुदृशा पुञ्जे ॥ ११८ ॥

इति भुजगशिशुसृता ५७.

सृता इत्येव शम्भुप्रभृतिषु पाठः । भृता इति आधुनिकाः पठन्ति*[1]

५८. अथ मणिमध्यम्

आदिभकारं देहि ततः सोऽपि गणान्ते[1] नागमतः ।
मध्यमकारो भाति यदा स्यान्मणिमध्यं नाम तदा ॥ ११९ ॥

यथा– वल्लवनारीमानहरः पूरितवंशीरावपरः ।
गोकुलनेता गोषुचरः पातु हरिस्त्वां गोपवरः ॥ १२० ॥

इति मणिमध्यम् ५८

५९. अथ भुजङ्गसङ्गता

सगणं विधेहि सङ्गतं जगणं ततोऽपि संयुतम् ।
रगणं च नागसम्मता कथिता भुजङ्गसङ्गता ॥ १२१ ॥

यथा– मम दह्यते मनो भृशं परिभावयाङ्क कृशम् ।
कथयामि यं तमानये धृतिमालि येन धारये ॥ १२२ ॥

इति भुजङ्गसङ्गता ५९.

६०. अथ सुललितम्

दहन-नमिह वितनु चरणमनु च सुतनु ।
फणिपतिनृपतिकृति कलय सुललितमिति ॥ १२३ ॥

यथा– कलितललितमुकुट निहतदितिजशकट ।
मम सुखमनुकलय करयुगधृतवलय ॥ १२४ ॥

इति सुललितम् ६०.

अत्र प्रस्तारगत्या नवाक्षरस्य द्वादशाधिकपञ्चशत भेदेषु ५१२ आद्यन्त-सहिता एकादशभेदाः प्रदर्शिताः, शेषभेदा ऊहनीयाः ॥ ९ ॥*[2]

इति नवाक्षरं वृत्तम् ।

---

१. ख. गणोन्ते ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० कारिका २४

* टिप्पणी—२ अवशिष्टा प्राप्तभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या ।

अथ दशाक्षरम्

तत्र प्रथमम् —

६१. गोपाल:

वह्नेस्सख्याका मा पादे यस्मि-न्नन्ते हारश्चैको युक्तो यस्मिन् ।
नागाधीशप्रोक्त तद् गोपाल पक्त्यर्णैर्युक्त मुह्यद्भूपालम् ॥ १२५ ॥

यथा–

गो-गोपालाना वृन्दे सञ्चारी भूमौ दृप्यद्दैत्याना सहारी ।
यद्वेणुक्वाणैर्मोह सप्रापु गोप्य सोऽव्यान् मां य देवा नापु.[1] ॥ १२६ ॥

इति गोपाल. ६१.

६२. अथ संयुतम्

सगण विधाय मनोहर जगणद्वय च ततोऽपरम् ।
गुरुसङ्गत फणिजल्पित सखि ! सयुत परिकल्पितम् ॥ १२७ ॥

यथा–

सखि गोपवेशविहारिण शिखिपिच्छचूडविधारिणम् ।
मधुसुन्दराधरशालिन ननु कामये वनमालिनम् ॥ १२८ ॥

यथा वा–

व्रजनायिका हृतकालिय कलयन्ति या मनसालि यम् ।
सदय मया सह शालिन कुरु तासु त वनमालिनम् ॥ १२९ ॥

इति सयुतम् ६२

सयुता इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले ।*

६३ अथ चम्पकमाला

आदिभकारो यत्र कृत स्यात् प्रेयसि पश्चान् मोपि मत स्यात् ।
अन्तसकारो गेन युत स्यात् चम्पकमालावृत्तमिद स्यात् ॥ १३० ॥

यथा–

सर्वमह जाने हृदय ते कामिनि ! किं कोपेन कृत ते ।
पङ्कजघातैर्लोचनपातैः कामितमाप्त चेतसि ता तै ॥ १३१ ॥

इति चम्पकमाला ६३.

रुक्मवतीति अन्यत्र । रूपवतीति च क्वचित् नामान्तरेण इयमेव ज्ञेया ।

६४ अथ सारवती

भत्रितयाचित सर्वपदा पण्डितमण्डलिजातमदा ।
गेन युता किल सारवती नागमता गुणभारवती ॥ १३२ ॥

---

१ ख पदैवानापुः ।

*टिप्पणी—प्राकृतपैङ्गलम्, परि० २, पद्य ६० ।

यथा–

माधवमासि हिमांशुकरं चिन्तय चेतसि तापकरम् ।
माधवमानय जातरसं चित्तमिदं मम तस्य वशम् ।। १३३ ।।

इति सारवती ६४.

६५. अथ सुषमा

आदौ ज(त)गणं पश्चाद् यगणं यस्यामनु पादं स्याद् भगणं ।
हारं कथितश्चान्ते महिता सेयं सुषमा नागप्रथिता[1] ।। १३४ ।।

यथा–

गोपीजनचित्ते सवलितं वृन्दावनकुञ्जे सललितम् ।
वन्दे यमुनातीरे तरलं कंसादिकदैत्यानां गरलम् ।। १३५ ।।

इति सुषमा ६५.

६६. अथ अमृतगतिः

नगण-नरेन्द्र-नविहिता तदनु च चामरमहिता ।
अमृतगतिं कविकथिता फणिभणितोदधिमथिता ।। १३६ ।।

यथा–

सखि मनसो मम हरणं हरिमुरलीकृत[2]करणम् ।
भव मम जीवितशरणं किमु कलये निजमरणम् ।। १३७ ।।

इति अमृतगति ६६.

६७ अथ मत्ता

आदौ कुर्यान् मगणसुयुक्तं ज्ञेयं पश्चाद् भगणसुवित्तम् ।
अन्ते हस्तं कुरु युतहारं मत्तावृत्तं कविजनसारम् ।। १३८ ।।

यथा–

वृन्दारण्ये कुसुमितकुञ्जे गोपीवृन्दैः सह सुखपुञ्जे ।
रासासक्तं जलधरनीलं गोपं वन्दे भुवि कृतलीलम् ।। १३९ ।।

इति मत्ता ६७

६८ अथ त्वरितगति

नगणकृता जगणधृता नगणहिता गुरुसहिता ।
इति ह फणिर्भणति यदा त्वरितगतिर्भवति तदा ।। १४० ।।

---

१. ख प्रहिता । २. ख. रुत ।

यथा–

सरसमतिर्यदुनृपति परमततिस्त्वरितगति ।
क्षपितमद कलितगद सकलतरिर्जयति हरिः ॥ १४१ ॥

यथा वा–

क्षितिविजिति स्थितिविहति-र्व्रतरतय परगतय. ।
उरु रुरुधुर्गुरु दुधुवु-र्युधि कुरव स्वमरिकुलम् ॥ १४२ ॥

इति **दण्डिनी***[1]

इति त्वरितगति ६८

६९. अथ मनोरमम्

नगणपक्षिराजराजित कुरु मनोरम सभाजितम् ।
जगणकुण्डलप्रकाशित फणिप-पिङ्गलेन भाषितम् ॥ १४३ ॥

यथा–

कलय भाव नन्दनन्दन सकललोकचित्तचन्दनम् ।
दितिज-देवराजवन्दन कठिनपूतनानिकन्दनम् ॥ १४४ ॥

इति मनोरमम् ६९.

स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत्र*[2] । अत्रापि न तेन काचित् क्षति ।

७० अथ ललितगतिः

दहननमिह कलयत तदनु शरमपि कुरुत ।
वदति फणिनृपतिरिति पठत ललितगतिमिति ॥ १४५ ॥

यथा–

ललितललिततरगति हरिरिह समुपसरति ।
तव सविधमयि सुदति ! सफलय निजजनुरति ॥ १४६ ॥

इति ललितगतिः ७०.

अत्र प्रस्तारगत्या दशाक्षरस्य चतुर्विंशत्यधिक सहस्र १०२४ भेदा भवन्ति तेषु कियन्तो भेदा लक्षिता, शेषभेदा [स्तु सुधीभिरूह्याः][5] ।*[3]

इति दशाक्षरं वृत्तम् ।

---

१ ख प्रस्तार्य लक्षणीया ।

*टिप्पणी—१ काव्यादर्श तृतीय परिच्छेद पद्य ८५

*टिप्पणी—२ छंदोमजरी द्वि० स्त० का० ३४

*टिप्पणी—३ ग्रन्थान्तरेपूपलब्धा शेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या. ।

अथ एकादशाक्षरम्

तत्र–

७१. मालती

यस्या पादे हारा रुद्रै सख्याता,
सर्वे वर्णास्तद्वद् यस्या विख्याता ।
सर्वेषा नागाना भूपेनोक्ता सा,
मालत्युक्तेय लोकाना पूर्णाशा ॥ १४७ ॥

यथा–

सिन्धूना पृष्ठा[1] यत्पृष्ठे लीयन्ते,
दैत्यात् सर्वे वेदा येनादीयन्ते ।
यत्पुच्छोच्छालैर्देवेन्द्रा घूर्णन्ते,
धर्म सोऽव्यान्मायामीनस्तूर्णं ते ॥ १४८ ॥

इति मालती ७१

७२. अथ बन्धुः

भत्रितय-प्रविकाशितवर्ण.,
शेषविभूषितभासुरकर्ण ।
पण्डितचेतसि राजति बन्धु,
पिङ्गलनागकृतो गुणसिन्धु ॥ १४९ ॥

यथा–

श्यामललोलगजालिसदृक्ष-
श्चण्डसमीरणकम्पितवृक्ष ।
वारिधरस्तरुभञ्जितनीड,
भूततिवृष्टिकृतावनिपीड ॥ १५० ॥

इति बन्धु· ७२·

इदमेवान्यत्र दोधकमिति नामान्तरेणोक्तं, पिङ्गले* तु उट्टवणिकान्तरकृत-लक्षणान्तरमादाय रूपभेद इति न कश्चिद्विशेष फलत इति समञ्जसम् ।

७३. अथ सुमुखी

कुरु चरणे प्रथम नगण,
तदनु च पक्षमित जगणम् ।

---

१. ख. प्रेष्ठा ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम् परि० २, पद्य १००

लघुमथ ग च जन सुमुखी,
भवति[1] यत किल सा सुमुखी ॥ १५१ ॥

यथा–

तरुणविधूपमितं वदन,
मम हृदये कुरुते मदनम् ।
इति कथयश्चरणौ नमते[2],
हरिरनुधेहि दृश वनिते ॥ १५२ ॥

इति सुमुखी ७३.

७४ अथ शालिनी

कृत्वा पादे नूपुरौ हारयुग्म,
धृत्वा वीणामङ्किता चामरेण ।
पुष्पप्रोत चापि[3] कर्णं दधाना,
नागप्रोक्ता शालिनीय विभाति ॥ १५३ ॥

यथा–

चन्द्रार्कौ ते राम[4]कीर्त्तिप्रतापौ,
चित्र शत्रुक्षोणिपालापकीर्त्तिम् ।
भासागाढध्वान्तमध्वसयन्तौ,
त्रैलोक्यस्य[5] श्वेतता सन्दधाते ॥ १५४ ॥

यतिरप्यत्र वेदलोकैर्ज्ञेया ।

इति शालिनी ७४.

७५ अथ वातोर्मी

पूर्वं पादे मगणेन प्रयुक्ता,
या वै पश्चाद् भगणेनाथ युक्ता ।
वातोर्मीय तगणान्तस्थकर्णा,
वेदैर्लोकै स यती रुद्रवर्णा ॥ १५५ ॥

यथा–

मायामीनोऽवतु लोक समस्त,
लीलागत्या क्षुभिताम्भोधिमध्य ।
धात्रे दास्यन्नयन वेदरूप,
य कल्पाब्धौ जगृहे तिर्यगाख्याम् ॥ १५६ ॥

इति वातोर्मी ७५.

---

१. ख. भवत श्रत । २. ख भजते । ३. ख. वागि । ४ ख. मीन । ५. ख. विश्वस्यापि ।

७६ अथानयोरुपजातिः

चेद् वातोर्मीचरणाना यदि स्यात्,
पाठ. सार्द्धं शालिनीवृत्तपादै ।
इन्द्रप्रोक्ता सम्भवन्तीह भेदा-
स्तेषा नामान्युपजातीति विद्धि ॥ १५७ ॥

यथा–

गोप वन्दे गोपिकाचित्तचौर,
हास्यज्योत्स्नालुब्धहृद्यच्चकोरम् ।
शब्दायन्त[1] धेनुसघे धुनान,
वक्त्र वशीमधरे सन्दधानम् ॥ १५८ ॥

इति शालिनी-वातोर्म्युपजातिः ७६

अनयोरेकत्र पञ्चमाक्षरगुरुत्वादपरत्र च पञ्चमलघुत्वात् अल्पो भेद इति चतुर्दशोपजातिभेदा, पदेन पदाभ्या पदैश्च परस्पर योजनात् प्रस्ताररचनया जायन्त इत्युपदेश ।

७७. अथ दमनकम्

दहनमितनगणरचित,
तदनु कुरु लघुगुरुयुतम् ।
फणिवरनरपतिमथित,
दमनकमिदमिति कथितम् ॥ १५९ ॥

---

१. ख. गवन्त ।

*टिप्पणी—१ छन्दसोऽस्य चतुर्दशभेदाना नामलक्षणोदाहृतयो ग्रन्थकृताप्यनुल्लिखिता, नैव चान्यत्र ग्रन्थेषु भवन्ति समुपलब्धा ,अतश्चात्र प्रस्ताररीत्या चतुर्दशभेदाना लक्षणान्यधो निरूप्यन्ते—

१.	शा.	वा	वा.	वा.	८.	वा.	वा.	वा	शा,
२	वा.	शा.	वा	वा	९.	शा.	वा	वा	शा
३	शा	शा	वा	वा.	१०.	वा	शा	वा	शा
४	वा	वा	शा	वा	११	वा	शा.	वा	वा
५	शा.	वा	शा.	वा	१२.	वा	वा	शा	शा
६	शा.	वा.	वा	शा	१३	वा.	वा.	शा	वा.
७.	शा	शा.	शा.	वा.	१४.	वा.	वा	वा	शा

अत्र 'शा' 'वा' इति सकेतद्वयेन शालिनी-वातोर्मी क्रमशो ज्ञेये ।

यथा –

हृदि कलयत मधुमथन,
गिरिकृतजलनिधिमथनम् ।
रचितसलिलनिधिशयन,
तरलकमलनिभनयनम् ॥ १६० ॥

इति दमनकम् ७७

७८. अथ चण्डिका

आदिशेषशोभिहारभूषितौ,
बिभ्रती पयोधरावदूषितौ ।
स्वर्णशङ्खकुण्डलावभासिता,
चण्डिकाऽहिभूषणस्य सम्मता ॥ १६१ ॥

यथा–

व्यालकालमालिकाविकाशित,
भालभासितानलप्रकाशितम् ।
शैलराजकन्यकासभाजित,
नौमि चारुचन्द्रिकाविराजितम् ॥ १६२ ॥

इति चण्डिका ।

सेनिका इति अन्यत्र । क्वचिच्च **श्रेणीति**[1] रगण-जगण-रगण-लघु-गुरुभिर्नामान्तरं, फलतस्तु न कश्चिद्विशेष । किञ्च इयमेव चण्डिका यदि लघुगुरुक्रमेण क्रियते तदा सेनिका इत्यस्मन्मतम् । अतएव **भूषणकारोऽपि**[*] हारशङ्खविपरीताभ्यां रूपनूपुराभ्यां लघुगुरुभ्यां क्रमशो मण्डिता **चण्डिकामेव सेनिकामुदाजहार** । तन्मतमवलम्ब्य वयमपि सलक्षणमुदाहराम ।

७९ अथ सेनिका

हारेण कुण्डलेन च क्रमेण,
महेश-वर्णसख्यया भ्रमेण ।
समस्तपादपूरणं विधेहि,
फणिप्रयुक्त-सेनिकामवेहि ॥ १६३ ॥

---

१ ख. रेणीति ।

*टिप्पणी—हारशङ्खकुण्डलेन मण्डिता या पयोधरेण वीणयाङ्किता ।
रूपनूपुरेण चापि दुर्लभा सेनिका भुजङ्गराजवल्लभा ॥ २१२ ॥
[वाणीभूषण द्वि० अ०]

यथा–

सरोजसंस्तरादि सविधेहि,
पिकालिवक्त्रमुद्रण विधेहि ।
मुरारिवश्यजीवमालि देहि,
मृतामथान्यथा च मामवेहि ॥ १६४ ॥

इति सेनिका ७९.

८०. अथ इन्द्रवज्रा

हारद्वय मेरुयुत दधाना,
पादे तथा नूपुरयुग्मक च ।
हस्त सुपुष्प वलयद्वय च,
सधारयन्ती जयतीन्द्रवज्रा ॥ १६५ ॥

यथा–

आलोक्य वेदस्य सुरारिभीतिं,
यो दैत्यदाव दय(दद)दादिदेव[1] ।
पाठीनदेह[2] कठिन वभार,
मीन[3] स नो मङ्गलमातनोतु ॥ १६६ ॥

इति इन्द्रवज्रा ८०

८१ अथ उपेन्द्रवज्रा

पयोधर कुण्डलयुग्मयुक्तं,
विधारयन्ती वरमेरुयुग्मम् ।
सहारपुष्प दधती सुकर्ण-
मुपेन्द्रवज्रा रभसेन भाति ॥ १६७ ॥

यथा–

पराम्बुधावामिपवत्सुधाशु[4],
विलोकितु पूर्वदरीगतस्य ।
महेन्द्रसिंहस्य विभाति जिह्वा,
समं पुरः सामिखराशुविम्बम्[5] ॥ १६८ ॥

इति उपेन्द्रवज्रा ८२.

---

१ ख ददादिदेव । २ ख. पाठानदेह । ३ ख विष्णु. । ४. वत्सरांशेः । ५ ख सामिसुधांशुविम्बम् ।

८२. अथानयोरुपजातय

उपेन्द्रवज्राचरणेन युक्त,
स्यादिन्द्रवज्राचरण यदैव ।
नागप्रयुक्ताश्च तदैव भेदा,
महेन्द्रसंख्या उपजातय. स्यु ॥ १६९ ॥

यथा–

मुखन्तवैर्णाक्षि ! कठोरभानो,
सोढुं कर नालमिति ब्रुवाण: ।
पटेन पीतेन वनेषु राधा[1],
चकार कृष्ण परिधूतबाधाम् ॥ १७० ॥

इति उपजाति. ८२.

भेदाश्चतुर्दशैतस्या क्रमतस्तु प्रदर्शिता ।
प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्राऽतिस्फुटस्तत: ॥ १७१ ॥
विलोकनीया भेदास्ते नास्माभिस्समुदाहृता. ।
कथितत्वाद् विशेषेण ग्रन्थविस्तरशङ्कया*[1] ॥ १७२ ॥

---

१. ख. राधा ।

*टिप्पणी—१. ग्रन्थकृता वृत्तस्यास्य भेदानां लक्षणोदाहरणार्थं स्वपितृश्रीलक्ष्मीनाथभट्टकृतोदाहरणमञ्जरी द्रष्टव्येति ससूचितम्, किन्तु उदाहरणमञ्जरीपुस्तकस्याप्यनुपलब्धत्वादत्रास्माभिः 'प्राकृतपैङ्गला' २(१२२) नामलक्षणानि, छन्द-सूत्र- (निर्णयसागरसस्करण) स्य अनन्तशर्मकृतटिप्पणीत उदाहरणानि समुद्धृतान्यध प्रदर्शितानि—

१. कीर्तिः	[उ इ. इ इ.]	८. वाला	[इ इ. इ उ]
२. वाणी	[इ. उ. इ. इ]	९. आर्द्रा	[उ. इ. इ उ]
३. माला	[उ उ. इ. इ]	१० भद्रा	[इ. उ. इ उ.]
४. शाला	[इ. इ उ. इ.]	११. प्रेमा	[उ उ. इ उ]
५. हंसी	[उ. इ उ. इ.]	१२ रामा	[इ. इ. उ उ]
६. माया	[उ. उ. उ. इ]	१३. ऋद्धिः	[उ इ उ उ]
७. जाया	[इ. उ. उ. उ.]	१४. वृद्धिः	[इ उ. उ उ]

१ कीर्ति. –

(उ.) स मानसी मेरुसखः पितॄणां,
(इ.) कन्यां कुलस्य स्थितये स्थितिज्ञ· ।

(इ) मेना मुनीनामपि माननीया-
(इ.) मात्मानुरूपा विधिनोपयेमे ॥
[कुमारसम्भव १।१८]

२. वाणी—

(इ) यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान्,
(उ) दरीमुखोत्थेन समीरणेन ।
(इ.) उद्गास्यतामिच्छति किन्नराणां,
(इ) तानप्रदायित्वमिवोपगन्तुम् ॥
[कुमारसम्भव १।८]

३ माला—

(उ.) कपोलकण्डूः करिभिर्विनेतुं,
(उ) विघट्टितानां सरलद्रुमाणाम् ।
(इ) यत्र स्नुतक्षीरतया प्रसूतः,
(इ) सानूनि गन्धः सुरभीकरोति ॥
[कुमारसम्भव १।९]

४. शाला—

(इ.) उद्वेजयत्यङ्गुलिपार्ष्णिभागान्,
(इ.) मार्गे शिलीभूतहिमेऽपि यत्र ।
(उ) न दुर्वहश्रोणिपयोधरार्ता
(इ) भिन्दन्ति मन्दां गतिमश्वमुख्यः ॥
[कुमारसम्भव १।११]

५. हंसी [विपरीताख्यानिकी]

(उ) पदं तुषारस्रुतिधौतरक्तं,
(इ) यस्मिन्नदृष्ट्वापि हतद्विपानाम् ।
(उ) विदन्ति मार्गं नखरन्ध्रमुक्तै-
(इ.) र्मुक्ताफलैः केसरिणां किराताः ॥
[कुमारसम्भव १।६]

६ माया—

(उ) प्रसीद विश्राम्यतु वीर वज्रं,
(उ) शरैर्मदीयैः कतमः सुरारिः ।
(उ) बिभेतु मोघीकृतबाहुवीर्यः,
(इ) स्त्रीभ्योऽपि कोपस्फुरिताधराभ्यः ॥
[कुमारसम्भव ३।६]

७ जाया—

(इ) कालक्रमेणाथ तयोः प्रवृत्ते,
(उ) स्वरूपयोग्ये सुरतप्रसङ्गे ।

(उ) मनोरम यौवनमुद्वहन्त्या
(उ) गर्भोऽभवद् भूधरराजपत्न्या ॥

[कुमारसम्भव १।१९]

८ वाला—

(इ) य सर्वशैला परिकल्प्य वत्स,
(इ) मेरौ स्थिते दोग्धरि दोहदक्षे ।
(इ) भास्वन्ति रत्नानि महौषधीश्च,
(उ) पृथूपदिष्टा दुदुहुर्धरित्रीम् ॥

[कुमारसम्भव १।२]

९. आर्द्रा—

(उ) दिवाकराद् रक्षति यो गुहासु,
(इ.) लीन दिवाभीतमिवान्धकारम् ।
(इ) क्षुद्रेऽपि नून शरण प्रपन्ने,
(उ) ममत्वमुच्चैः शिरसा सतीव ॥

[कुमारसम्भव १।१२]

१० भद्रा (आख्यानिकी)—

(इ) अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा,
(उ) हिमालयो नाम नगाधिराज. ।
(इ) पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य,
(उ) स्थित पृथिव्या इव मानदण्ड ॥

[कुमारसम्भव १।१]

११ प्रेमा—

(उ) अनन्तरत्नप्रभवस्य यस्य,
(उ) हिम न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
(इ.) एको हि दोषो गुणसन्निपाते,
(उ) निमज्जतीन्दो. किरणेष्विवाङ्क ॥

[कुमारसम्भव १।३]

१२. रामा—

(इ.) यश्चाप्सरोविभ्रममण्डनाना,
(इ) सम्पादयित्री शिखरैर्बिभर्ति ।
(उ) वलाहकच्छेदविभक्तरागा-
(उ) मकालसन्ध्यामिव धातुमत्ताम् ॥

[कुमारसम्भव १।४]

८३. अथ रथोद्धता

स्वर्णशङ्खवलय रसाहित,
सुन्दर करतलेन सङ्गतम् ।
पुष्पहारमथ राविनूपुर,
बिभ्रती विजयते रथोद्धता ॥ १७३ ॥

यथा–

यामिनीष्वधिजगाम धामल.,
कामिनीकुलमनन्तसीरिणो[:] ।
नामनी कथयदाशु सम्रलत्-
सामिनीवि सखि नन्दनन्दनम् ॥ १७४ ॥

यथा वा–

गोपिके तव सुतोऽपि केवलो,
मायिनामयि[1] ममापि नायकः ।
'नीतमेव नवनीतमेधय-
त्येष यः कपटवेषनन्दन '[2] ॥ १७५ ॥

इति रथोद्धता ८३

८४. अथ स्वागता

हारभूषितकुचाऽतनुबाण-
भ्राजिता कुसुमकङ्कणहस्ता ।

१ क मायिनामय । २ ख. '–'चोरयत्यनुदिन गृहे गृहे, न तमेव नवनीतमेषयत् ।

१३ ऋद्धि–

(ऊ) प्रसन्नदिक्पांसुविविक्तवात,
(इ) शङ्खस्वनानन्तरपुष्पवृष्टि ।
(उ) शरीरिणा स्थावरजङ्गमाना,
(उ) सुखाय तज्जन्मदिन वभूव ॥
[कुमारसम्भव १।२३]

१४, बुद्धिः –

(इ) यत्रांशुकाक्षेपविलज्जितानां,
(ऊ) यदृच्छया किंपुरुषाङ्गनानाम् ।
(उ) दरीगृहद्वारविलम्बिविम्बा-
(उ) स्तिरस्करिण्यो जलदा भवन्ति ॥
[कुमारसम्भव १।१४]

नूपुरेण च विराजितपादा,
स्वागता भवति चेत् किमिहाऽन्यत् ॥ १७६ ॥

यथा

वल्लवीनयनपङ्कजभानुः,
दानवेन्द्रकुलदावकृशानुः ।
राधिकावदनचन्द्रचकोरः,
सकटादवतु नन्दकिशोरः ॥ १७७ ॥

इति स्वागता*१ ८४.

८५. अथ भ्रमरविलसिता

पूर्वं मः स्यात् तदनु च भगणः,
पश्चाद् यस्मिन् प्रकटितनगणः ।
अन्ते लो ग कविजनसहिता,
सेयं प्रोक्ता भ्रमरविलसिता ॥ १७८ ॥

यथा–

स्वान्ते चिन्तां परिहर वनिते,
नन्दादेशात् सपदि सुललिते ।
आगन्तास्मिन् हरिरिह न चिरं,
कुञ्जे शय्यां सफलय सुचिरम् ॥ १७९ ॥

इति भ्रमरविलसिता ८५.

---

*टिप्पणी—१ रथोद्धता-स्वागतोपजातिवृत्तास्यास्य ग्रन्थेऽस्मिँल्लक्षणोदाहरणान्यनुल्लिखितानि; नैव च ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धानि, अतोऽत्र चतुर्दशभेदाना प्रस्तारगत्या निम्न-लक्षणान्येव समुद्ध्रियन्तेऽस्माभिः—

१.	र.	स्वा.	स्वा.	स्वा.	८.	स्वा.	स्वा	स्वा	र
२	स्वा	र.	स्वा	स्वा	९.	र.	स्वा.	स्वा.	र.
३.	र.	र.	स्वा.	स्वा.	१०	स्वा.	र	स्वा.	र
४	स्वा	स्वा	र	स्वा	११	र.	र	स्वा.	र.
५.	र.	स्वा	र	स्वा.	१२	स्वा	स्वा	र.	र
६.	र	र	र	स्वा.	१३	र.	स्वा.	र.	र.
७.	स्वा.	र.	र.	र.	१४.	स्वा.	र	र	र.

अत्र 'र' कारेण रथोद्धता 'स्वा'शब्देन स्वागतेति च सबोध्या ।

८६ अथ अनुकूला

नूपुरमुच्चैः कलितसुराव,
पुष्पसुहार सरससुवक्रम् ।
रूपविराजत्सवलयहस्त,
स्यादनुकूला यदि किमिहाऽन्यत् ॥ १८० ॥

यथा–

गोकुलनारीवलयविहारी,
गोधनचारी दितिसुतहारी ।
नन्दकुमारस्तनुजितमारः,
पातु सहार सुरकुलसार ॥ १८१ ॥

इति अनुकूला ८६

८७. अथ मोटनकम्

वन्दे वलयद्वयसवलित,
हस्तद्वितय कलयन्तममुम् ।
गन्धोत्तमपुष्पसुहारधर,
नागस्य सदा प्रियमोटनकम् ॥ १८२ ॥

यथा–

कृष्ण कलये वनितावलये,
नृत्ये सरसे ललिते सलये ।
दिव्यै कुसुमै कलित मुकुटे,
स्तुत्य मुनिभिर्वलित लकुटे ॥ १८३ ॥

इति मोटनकम् ८७.

८८ अथ सुकेशी

विभ्राणा वलयौ सुवर्णचित्रौ,
सराजत्करसङ्गशोभमानौ ।
हाराभ्या ललित कुच दधाना-
माद्यन्त कुरुते न क सुकेशी ॥ १८४ ॥

यथा–

गोपाल कलये विलासिनीना,
मध्यस्थं कलचारुहासिनीनाम् ।

कुर्वन्त वदनेन वशराव,

यस्तासा प्रकटीचकार भास.[1] ॥ १८५ ॥

इति सुकेशी ८८

८८. अथ सुभद्रिका

अतनुरचितबाणपञ्चक,

कुसुमकलितहारसङ्गतम् ।

कुचमनुदधती च नूपुर,

मुदमिह तनुते सुभद्रिका ॥ १८६ ॥

यथा–

हृदि कलयतु कोपि बालक,

सुललितमुखलम्बितालकः ।

अलिविलसितपङ्कजश्रिय,

परिकलयति य स मत्प्रियम् ॥ १८७ ॥

इति सुभद्रिका ८९.

९० अथ बकुलम्

द्विजवरगणयुगलमिति,

तदनु नगणमपि भवति ।

सुकविफणिपतिविरचित-

मनुकलयत बकुलमिति ॥ १८८ ॥

यथा–

ग्रथय कमलनिचयमिह,

बकुलशयनमनुरचय ।

कुरु मणिहततिमिरगृह-

मिह हरिरुपसरति सखि ! ॥ १८९ ॥

इति बकुलम् ९०.

अत्रापि प्रस्तारगत्या रुद्रसंख्याक्षरस्य अष्टचत्वारिंशदधिक सहस्रद्वय २०४८ भेदा भवन्ति। तत्र कियन्तोऽपि भेदा प्रोक्ताः, शेषभेदा प्रस्तार्य सूचनीया इति[2] ।*[1]

इत्येकादशाक्षरम् ।

---

१ ख. भाबम् । २ पक्तिद्वय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ ग्रन्थातरेषु समुपलभ्यमाना शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

अथ द्वादशाक्षरम्

तत्र–

९१. आपीडः

यस्मिन् वेदाना सख्याका मा दृश्यन्ते,
पादे वर्णाः सूर्यैः सम्प्रोक्ता जायन्ते ।
आपीडाख्यं दिव्य वृत्त धेहि स्वान्ते,
सम्प्रोक्तं नागानामीशेनैतत्कान्ते ! ॥ १६० ॥

यथा–

कूर्मो नित्य मामव्यादत्यन्त पीनः,
यत्पृष्ठेऽद्रिः कस्मिश्चित्कोणे संलीनः ।
य सर्वेषा देवाना कार्यार्थं जात-
स्त्रैलोक्ये नानारत्नादाता विख्यातः ॥ १६१ ॥

इति आपीड ९१.

अयमेवान्यत्र विद्याधरः*[1] ।

९२ अथ भुजङ्गप्रयातम्

लघु पूर्वमन्ते भवेद् यत्र कर्णः,
रवे. सख्यया यत्र चाऽऽभाति वर्ण. ।
तकारत्रयं यत्र मध्ये सुयुक्तं,
भुजङ्गप्रयात तदा भावि वृत्तम् ॥ १६२ ॥

यथा–

चलत्कुन्तल केलिलोलाकुलाक्ष,
सदा चल्लवीलालित नन्दबालम् ।
कपोलोल्लसत्कुण्डलालङ्कृताऽऽस्य,
विलोलामलस्रग्ललाम नमामि ॥ १६३ ॥

इति भुजङ्गप्रयातम् ९२.

९३. अथ लक्ष्मीधरम्

भानुसंख्यामितैरक्षरैर्भासित,
वेदसख्यैस्तथा पक्षिभिः शोभितम् ।
सर्वनागाधिराजेन सभापित,
तद्धि लक्ष्मीधर मानसे लोभितम् ॥ १६४ ॥

---

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्, परि० २, पद्य ११२, एव वाणीभूषणम् द्वि० अ० २२६

यथा–

वेणुनादेन समोहयन् गोकुले,
वल्लवीमानस रासकेली व्यधात् ।
य सदा योगिभिर्वन्दितस्त तदा[1],
गोपिकानायकं गोकुलेन्द्रं भजे ॥ १९५ ॥

इति लक्ष्मीधरम् ९३.

इदमेवान्यत्र स्रग्विणी* इति नामान्तर लभते ।

९४. अथ तोटकम्

यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमत
रविसम्मितवर्ण इह प्रमितः ।
अहिभूपतिना फणिना भणित,
सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥ १९६ ॥

यथा–

अलिमालितमालतिभिर्ललित,
ललितादिनितम्बवतीकलितम् ।
कलितापहर कलवेणुकल,
कलये नलिनामलपादतलम् ॥ १९७ ॥

इति तोटकम् ९४.

९५. अथ सारङ्गकम्

जायेत हारद्वयेनाथ शङ्खेन,
यद्वै क्रमात् सूर्यसख्यातवर्णेन ।
सारङ्गक तत्तु सारङ्गनेत्रेण,
सभाषितं सर्वनागाधिराजेन ॥ १९८ ॥

यथा–

श्रीनन्दसूनो कथं धृष्ट गोपाल,
गोपीषु धाष्टर्चं विधत्से महामाल ।
आस्थाय वालै सहाय सुखस्थस्य,
भीतिर्न ते कसतो गोकुलस्य ॥ १९९ ॥

इति सारङ्गकम् ९५.

---

१. ख. हृदा ।

*टिप्पणी—छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० ७१, एव वृत्तरत्नाकर द्वि० अ० ।

९६. अथ मौक्तिकदाम

पयोनिधिभूपतिमन्त्र विधेहि,
खरांशुविराजितवर्णमवेहि ।
फणीन्द्रविकासितसुन्दरनाम,
हृदा परिभावय मौक्तिकदाम ।। २०० ।।

यथा–

स्वबाहुबलेन विनाशितकंस,
कपोलविलोलललामवतंस ।
समस्तमुनीश्वरमानसहंस,
सदा जय भासितयादववंश ।। २०१ ।।

इति मौक्तिकदाम ९६

९७ अथ मोदकम्

वेदविभावितभं परिभावय,
भानुविभासितवर्णमिहानय ।
भामिनि ! पिङ्गलनागसुभाषित-
मोदकवृत्तमितीह निभालय ।। २०२ ।।

यथा–

नन्दकुमार विपारगुणाकर,
गोपवधूमुखकंजदिवाकर ।
मद्वचनं हितमाशु निशामय,
कुञ्जगृहं ननु याहि[1] निशामय ।। २०३ ।।

इति मोदकम् ९७.

९८ अथ सुन्दरी

कुसुमरूपरसेन समाहिता,
ललितनूपुररावविहारिणी ।
कुचयुगोपरिहारविराजिता,
हरति कस्य मनो न हि सुन्दरी ।। २०४ ।।

यथा–

उदयदर्द्धदिवाकरदर्डुर[2],
ललितवर्तुलवाद्यविशेपकम् ।

---

१ ग माधि । २. ग. दर्दुर ।

सकलदिग्रचित विहगारवै,
　　　　स रुतमातनुते विधिभिक्षुक. ॥ २०५ ॥

यथा वा, 'वाणीभूषणे'*[1]-

असुलभा शरदिन्दुमुखीप्रिया,
　　　　मनसि कामविचेष्टितमीदृशम् ।
मलयमारुतचालितमालती-
　　　　परिमलप्रसरो हतवासर. ॥ २०६ ॥

इति सुन्दरी ९८.

९९. अथ प्रमिताक्षरा

सुसुगन्धपुष्पकृतहारकुचा[1],
　　　　सरसेन शखरचितेन यथा ।
वलयेन शोभितकरा कुरुते,
　　　　प्रमिताक्षरा रसिकचित्तमुदम् ॥ २०७ ॥

यथा-

हरपर्वत इ(ए)व बभुर्गिरय,
　　　　पतगास्तथा जगति हसनिभा. ।
यमुनापि देवतटिनीव बभौ,
　　　　हिमभाससा जगति सवलिते ॥ २०८ ॥

यथा वा, 'भूषणे'*[2]-

अभजद् भयादिव नभो वसुधा,
　　　　दधुरेकतामिव समेत्य दिश ।
अभवन् महीपदयुगप्रमिता,
　　　　तिमिरावलीकवलिते जगति ॥ २०९ ॥

इति प्रमिताक्षरा ९९

१००. अथ चन्द्रवर्त्म

पक्षिराजमथन कुरु चरणे,
　　　　स विधेहि भगण सुखकरणे ।
हस्तमत्र कुरु पिङ्गलकथित,
　　　　चन्द्रवर्त्म कविभिर्हृदि मथितम् ॥ २१० ॥

---

१ क रुचा ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्-द्वितीय अध्याय, पद्य २५२
　　,,　　२　　,,　　,,　　२५४

यथा–

देवकूलिनि मिलद्घनसलिले,
दिव्यपुष्पकलिते सुरनमिते ।
चन्द्रशेखरजटावलिवलिते,
देहि श मम सदा भुवि ललिते ॥ २११ ॥

यथा वा–

चन्द्रवर्त्म पिहित घनतिमिरै-
राजवर्त्म रहित जनगमनैः ।
इष्टवर्त्म तदलङ्कुरु सरसे,
कुञ्जवर्त्मनि हरिस्तव कुतुकी ॥ २१२ ॥

इति छन्दोमञ्जर्यामपि*[1] ।

इति चन्द्रवर्त्म १००.

इति प्रथम शतकम् ।

१०१. अथ द्रुतविलम्बितम्

कुरु नकारमथो भगण ततः,
सरवनूपुरपुष्पगुरु कुरु ।
कलय शब्दमतो गुरुरन्ततो,
द्रुतविलम्बितवृत्तमिद सखि ! ॥ २१३ ॥

अत्रापि समपादस्थयो पादान्तलघ्वोः वैकल्पिक गुरुत्वम् ।

यथा–मत्कृत 'पाण्डवचरिते' महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे––

नृषु विलक्षणमस्य पुनर्वपु-
स्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
सकललक्षणलक्षितमद्भुत,
न घटते रथकारकुलोचितम् ॥ २१४ ॥

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

भिदुरमानसमाशुचिचक्षुप,
स विदुरो निनदैरतिभीषणैः ।
सकलबालपराक्रमवर्णनैः
सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ॥ २१५ ॥

टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिकाया ६५ उदाहरणम् ।

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[1]*–

तरणिजापुलिने नवपल्लवी-
परिषदा सह केलिकुतूहलात् ।
द्रुतविलम्बितचारुविहारिण,
हरिमह हृदयेन सदा वहे ॥ २१६ ॥

इत्यादि रघुवंशमहाकाव्यादिषु च सहस्रशो निदर्शनानि ।

इति द्रुतविलम्बितम् १०१.

१०२. अथ वशस्थविला

पयोधर हारयुगेन सङ्गत,
कर तथा पुष्पसुकङ्कणान्वितम् ।
सुरावयुक्त दधती च नूपुर,
विभाति वशस्थविला सखे ! पुरः ॥ २१७ ॥

यथा–

विलोलमौलिं तरलावतसक,
व्रजाङ्गनामानसलोभकारकम् ।
करस्थवश परिवीतबालक,
हरिं भजे गोकुलगोपनायकम् ॥ २१८ ॥

इति वशस्थविला १०२.

नपुसकमिदमन्यत्र*[2] । वशस्तनितमिति क्वचित् ।

१०३ अथ इन्द्रवशा

कर्णं सुरूप धृतकुण्डलद्वय,
पुष्प सुगन्ध दधती च नूपुरम् ।
वक्षोजसभूषितहारशोभिनी,
स्यादिन्द्रवशा हृदि मोददायिनी ॥ २१९ ॥

यथा–

कूर्म श(स)मव्यान् मम य. पयोनिधौ,
पृष्ठे महापर्वतघोरघर्षणात् ।

---

*टिप्पणी–१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तवक, कारिकाया ७४ उदाहरणम् ।
२ 'वदन्ति वशस्थविलं जतौ जरौ' छन्दोमजरी द्वि० स्त० का० ६६

कद्रू[1]विनोदेन सुखातिसभ्रमान्,
निद्रा जगामालसमीलितेक्षणः ॥ २२० ॥

यथा वा–

कम्पायमाना सखि ! सर्वतो दिश,
शम्पा दधाना नवनीरदावलि ।
कम्पायित सविदधाति मानस,
मा पाहि नन्दस्य सुत समानय ॥ २२१ ॥

इति इन्द्रवशा १०३.

१०४. अथानयोरुपजातय.

यदीन्द्रवशाचरणेन सङ्गता[2],
पादोऽपि वशस्थविलस्य जायते ।
भेदास्तदा स्यु सुरराजसख्यकाः,
नागोदितास्तेप्युपजातिसज्ञका ॥ २२२ ॥

इति वशस्थविलेन्द्रवशोपजाति *[1] ।

अनयोरप्येकत्र प्रथमाक्षर लघु, अपरत्र च प्रथमाक्षर गुरुरिति स्वल्पभेदत्वाच्चतुर्दशोपजातिभेदा पूर्ववदेव प्रस्ताररचनया भवन्ति । तथा चात्र सर्वत्र स्वल्पभेदाच्छन्दोभ्यामुपजातयो भवन्तीति उपदिश्यत इति दिक् ।

---

१ ख कुण्डविनोदेन । २ ख सङ्गत ।

*टिप्पणी—१ क. ख. प्रतौ वशस्थविलेन्द्रवशोपजातेरुदाहरण न विद्यते ।

*टिप्पणी—२ ग्रन्थकारेण वशस्थविलेन्द्रवशोपजातेर्व तस्य चतुर्दशभेदा स्वीकृता, पर तत्तद्भेदाना लक्षणोदाहरणादिभि प्रतिपादन नैव कृतम् । अतोऽत्रास्माभिरन्यग्रन्थाधारेण तत्तन्नामलक्षणोदाहरणानि प्रस्तूयन्ते ।

१ वैरासिकी	[व इ इ इ]		८ वासन्तिका	[इ इ. इ व]
२. रताख्यानिकी	[इ व इ इ]		९ मन्दहासा	[न इ. इ. व]
३. इन्दुमा	[व. व इ इ]		१० शिशिरा	[इ. व इ व]
४. पुष्टिदा	[इ. इ. व. इ.]		११ वैधात्री	[व व. इ व]
५. उपमेया	[व. इ व इ]		१२ शङ्खचूडा	[इ. इ. व व.]
६. सौरभेयी	[इ. व व. इ.]		१३. रमणा	[व इ व व.]
७. शीलातुरा	[व. व. व इ]		१४. कुमारी	[इ. व व व.]

१. वैरासिकी—

व. महाचमूनामधिपा समन्ततः,
इ. सनह्य सद्यः सुतरामुदायुधाः ।
इ. तस्थुर्विनम्रक्षितिपालसङ्कुले,
इ. तस्याङ्गणद्वारि बहि प्रकोष्ठके ।।

[कुमारसम्भव १५।६]

२. रताख्यानिकी—

इ. पद्मै रनन्वीतवधूमुखद्युतो,
व. गता न हसै. श्रियमातपत्रजाम् ।
इ दूरेऽभवन् भोजबलस्य गच्छत ,
इ शैलोपमातीतगजस्य निम्नगा' ।।

[शिशुपालवधम् १२।६१]

३ इन्दुमा—

व चमूप्रभु मन्मथमर्दनात्मजं,
व विजित्वरीभिर्विजयश्रियाश्रितम् ।
इ श्रुत्वा सुराणा पृतनाभिरागत,
इ चित्ते चिर चुक्षुभिरे महासुराः ।।

[कुमारसम्भव १५।२]

४ पुष्टिदा—

इ श्रुत्वेति वाच वियतो गरीयसी,
इ. क्रोधादहङ्कारपरो महासुर ।
व प्रकम्पिताशेषजगत्त्रयोऽपि स-
इ. न्नाकम्पतोच्चैर्दिवमभ्यधाच्च स. ।

[कुमारसम्भव १५।३९]

५ उपमेया [रामणीयकम्]—

व. नितान्तमुत्तुङ्गतुरङ्गहेषितै-
इ रुद्दामदानद्विपबृंहितै. शतैः ।
व. चलद्ध्वजस्यन्दननेमिनि स्वनै-
इ. श्चाभून्निरुच्छ्वासमथाकुल नभ. ।

[कुमारसम्भव १४।४१]

६. सौरभेयी—

इ सङ्गेन वो गर्भतपस्विन शिशु
व. वंराक एपोऽन्तमवाप्स्यति ध्रुवम् ।
वं अतस्करस्तस्करसङ्गतो यथो,
इ तद्वो निहन्मि प्रथम ततोप्यमुम् ।

[कुमारसम्भव १५।४२]

७. शीलातुरा—

व. निवार्यमाणैरभितोनुयायिभि-
व. र्ग्रहीतुकामैरिव त मुहुर्मुहु. ।
व. अपाति गृध्रै रभिमौलि चाकुलै-
इ र्भविष्यदेतन्मरणोपदेशिभि ।

[कुमारसम्भव १५।२९]

८ वासन्तिका—

इ. अभ्याजतोऽभ्यागततूर्णतर्णका-
इ. न्निर्याणहस्तस्य पुरो दुधुक्षत ।
इ. वर्गाद्गवां हुंकृतिचारु निर्यती-
व मरिर्मधोरैक्षत गोमतल्लिकाम् ।

[शिशुपालवध १२।४१]

९. मन्दहासा—

व. न जामदग्न्य क्षयकालरात्रिकृत्,
इ. स क्षत्रियाणा समराय वल्गति ।
इ. येन त्रिलोकीसुभटेन तेन ते,
व. कुतोऽवकाश सह विग्रहग्रहे ।

[कुमारसम्भव १५।३७]

१०. शिशिरा—

इ. साऽवज्ञमुन्मील्य विलोचने सकृत्,
व. क्षण मृगेन्द्रेण सुषुप्सुना पुन ।
इ सैन्यान्न यात समयाऽपि विव्यथे,
व. कथ सुराजम्भवमन्यथाऽथवा ।

[शिशुपालवध १२।५२]

११ वैधात्री—

व. प्रयान्ति मन्त्रः(न्त्रै) प्रशम भुजङ्गमा-
वं. न मन्त्रसाध्यास्तु भवन्ति धातवः ।
इ. केचिच्च कञ्चिच्च दशन्ति पन्नगा,
व सदा च सर्वं च तुदन्ति धातव. ।

[सौन्दरानन्द]

१२ शङ्खचूडा—

इ निम्ना· प्रदेशा स्थलतामुपागमन्,
इ. निम्नत्वमुच्चैरपि सर्वतश्च ते ।
व. तुरङ्गमाणा व्रजता खुरै क्षता-
व. रथैर्गजेन्द्र· परित समीकृता. ॥

[कुमारसम्भव १४।४४]

१०५ अथ जलोद्धतगतिः

अवेहि जगण ततोऽपि सगण,
विधेहि जगण पुनश्च सगणम् ।
फणीन्द्रकथिता जलोद्धतगति,
चकास्ति हृदये कृतातिसुमति. ॥ २२३ ॥

यथा–

नवीननलिनोपमाननयन,
पयोदरुचिर पयोधिशयनम् ।
नमामि कमलासुसेवितहरिं,
सदा निजहृदा भवाम्बुधितरिम् ॥ २२४ ॥

इति जलोद्धतगतिः १०५.

१०६. अथ वैश्वदेवी

कर्णा जायन्ते यत्र पूर्वं नियुक्ता.,
वह्नेस्सख्याका. य-द्वयेन प्रयुक्ता ।
बाणार्णैश्छिन्ना वाजिभिश्चापि भिन्ना,
नागेनोक्ता सा वैश्वदेवी विभाति ॥ २२५ ॥

यथा–

वन्दे गोविन्द वारिधौ राजमान,
श्रीलक्ष्मीकान्त नागतल्पे शयानम् ।
अत्यन्त पीत वस्त्रयुग्म दधान,
पार्श्वे तिष्ठत्या पद्मया सेव्यमानम् ॥ २२६ ॥

इति वैश्वदेवी १०६.

---

१३. रमणा—

वं　　वली वलारातिबलाऽतिशातन,
इ　　दिग्दन्तिनादद्रवनाशनस्वनम् ।
व.　　महीधराम्भोधिनवारितक्रम,
वं　　ययौ रथ घोरमथाधिरुह्य स. ॥
[कुमारसम्भव१५।८]

१४ कुमारी—

इ　　किं ब्रूथ रे व्योमचरा महासुरा.,
व　　स्मरारिसूनुप्रतिपक्षवर्तिन ।
व.　　मदीयवाणव्रणवेदना हि सा-
व　　ऽधुना कथ विस्मृतिगोचरीकृता ।
[कुमारसम्भव १५।४०]

१०७ अथ मन्दाकिनी

इह यदि नगणद्वय जायते,
तदनु च रगणद्वय दीयते ।
फणिपमुखसुमेरुमन्दाकिनी,
प्रभवति हि तदैव मन्दाकिनी ।। २२७ ।।

यथा–

सखि ! मम पुरतो मुरारेः कथा,
कुरु न कुरु तथा वृथाऽन्या कथाम् ।
दि मधुरिपुरेति वृन्दावन,
कलय मम तदा शरीरावनम् ।। २२८ ।।

इति मन्दाकिनी १०७

क्वचिदियमेव **प्रभेति***[1] नामान्तर लभते । 'सह शरधि निज तथा कार्मुकम्' इत्यादि **किराते***[2] । यथा वा–'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया' इति **माघे**ऽपि । *[3]

१०८ अथ कुसुमविचित्रा

विरचय विप्र तदनु च कर्णं,
पुनरपि तद्वत् कुरु रविवर्णम् ।
श्रुतिमितपादे विमलचरित्रा,
परमपवित्रा कुसुमविचित्रा ।। २२९ ।।

---

*टिप्पणी–१ वृत्तरत्नाकरः अ० ३, का० ६५

*टिप्पणी–२ सह शरधि निजस्तथा कार्मुक
वपुरतनु तथैव सर्वमितम् ।
निहितमपि तथैव पश्यन्नसि,
वृषभगतिरुपाययौ विस्मयम् ।।
[किरातार्जुनीयम् स० १८, प० १६]

*टिप्पणी–३ अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया-
मतनुतरतयेव सतानक ।
तरुणपरभृत स्वन रागिणा-
मतनुत रतये वसन्तानक ।।
[शिशुपालवधम् स० ६, प० ६७]

यथा–

भययुतचित्तो विगतविलम्बं,
　　कथमपि यातो हरितकदम्बम् ।
तरणिसुतायास्तटभुवि कृष्ण.,
　　स जयति गोपीवसनसतृष्णः ॥ २३० ॥

इति कुसुमविचित्रा १०८.

१०९. अथ तामरसम्

सरससुरूपसुगन्धसशोभं,
　　कुचयुगसङ्गमसवृत[1]लोभम् ।
रसयुतहारयुगाहितमुक्त,
　　कलयत तामरस वरवृत्तम् ॥ २३१ ॥

यथा –

विलसति मालतिपुष्पविकास,
　　न हि हरिदर्शनतो वनवासः ।
सखि ! नवकेतकिकण्टककर्ष,
　　वनकलितोनुतनूरुहहर्ष. ॥ २३२ ॥

इति तामरसम् १०९

११० अथ मालती

कलय नकारमतोपि नायकौ,
　　तदनु विधारय पक्षिणा पतिम् ।
फणिपतिपिङ्गलनागभाषिता,
　　कविहृदि राजति मालती मता ॥ २३३ ॥

यथा–

कलयति[2] चेतसि नन्ददारकं,
　　सकलवधूजनचित्त[3]हारकम् ।
निखिलविमोहकवेणुधारक,
　　दितिसुतसङ्घविनाशकारकम् ॥ २३४ ॥

इति मालती ११०

---

१ ख संभृतम् । २ ख. कलयत । ३ ख चीरहारकम् ।

कुत्रचिद् इयमेव **यमुना** इति नामान्तरं लभते । 'अयि विजहीहि दृढोपगूहनम्' इत्युदाहरणान्तरं भारविस्थिरम्[1]* ।

१११. अथ मणिमाला

आदौ विदधाना हारौ वरमेरू,
युक्ता रववद्भ्या सन्नूपुरकाभ्याम् ।
कर्णे रसपुष्पोद्यत्कुण्डलयुग्मा,
छिन्ना रसयुक्तैर्वर्णैर्मणिमाला ॥ २३५ ॥

यथा–

गौरीकृतदेह व्यालावलिमाल,
नृत्ये विधुनान कृत्तिं पुरकालम् ।
लोलानलकालै[1] सभूषितभाल,
कामैः शरणं त्वं सम्प्राप्य शिवालम् ॥ २३६ ॥

इति मणिमाला १११.

११२. अथ जलधरमाला

यस्यामादौ पदविरतौ वा कर्णा,
पक्षप्रोक्ता दिनकरसंख्यावर्णा ।
मध्ये विप्रो जलनिधिशैलैश्छिन्ना,
नागप्रोक्ता जलधरमाला भिन्ना ॥ २३७ ॥

यथा–

शीतैः पुष्पैरभिनवशय्या कृत्वा,
ताम्यच्चित्ता मलयजमूर्तिं धृत्वा ।
वक्षस्पीठे तव सुचिरं ध्यायन्ती,
तिष्ठत्येषा शठविधिदोषं पश्यन्ती ॥ २३८ ॥

इति जलधरमाला ११२.

---

१ ख. कीलैः ।

***टिप्पणी—१.** अयि विजहीहि दृढोपगूहनं
त्यज नवसङ्गमभीरु ! वल्लभम् ।
अरुणकरोद्गम एष वर्तते,
वरतनु ! सम्प्रवदन्ति कुक्कुटा ॥

पद्यमिदं वृत्तमौक्तिककारेण छन्दोमञ्जरीकृता च भारवेः स्वीकृतं किन्तु तत्कृतौ किरातार्जुनीये तु नास्त्युपलब्धिरस्य । अतोऽन्यत्र चोह्यम् ।

११३. अथ प्रियंवदा

कुसुमसङ्गतकरा रसाहिता,
विमलगन्धकुचहारभूषिता ।
सरुतनूपुरसुशोभिता सदा,
जयति चेतसि सखे ! प्रियंवदा ॥ २३९ ॥

यथा–

व्रजवधूजनमनोविमोहन,
सरसकेलिषु कलानिकेतनम् ।
सरसचन्दनविलेपचर्चित,
कलय चेतसि हरिं सदार्चितम् ॥ २४० ॥

इति प्रियंवदा ११३.

११४ अथ ललिता

हारद्वयाचितकुचेन भूषिता,
हस्तस्थितोज्ज्वलसुपुष्पकङ्कणा ।
पादे विरावयुतनूपुराञ्चिता,
चित्ते चकास्ति ललिता विलासिनी ॥ २४१ ॥

यथा–

गोपीषु केलिरससक्तचेतस,
सूर्यात्मजा विलुलितातिवेतसम् ।
चित्तावमोहकरवेणुधारक,
वन्दे सदा ललितनन्ददारकम् ॥ २४२ ॥

इति ललिता ११४.

इयमेव अन्यत्र सुललिता इति गणभेदेन उक्तम् । अतएव 'तो भो जरौ सुललिता श्रुतौ यति ।' इति वृत्तसारे सयति लक्षण लक्षितमिति ।

११५. अथ ललितम्

धेहि भकार तदनु च तगण,
धारय न वा तदनु च सगणम् ।
बाणविराम फणिपतिकलित,
चेतसि वृत्त कलयत ललितम् ॥ २४३ ॥

यथा–

चेतसि कृष्ण कलयति[1] ललित,
गोकुलगोपीजनहृदि वलितम् ।
वादितवश तरलितमुकुट,
कारितरास विनिहतशकटम् ।। २४४ ।।

इति ललितम् ११५

इदमेव अन्यत्र **ललना***[1] इत्युक्तम् ।

११६ अथ कामदत्ता

द्विजवर-सगणौ विधेहि तूर्णं,
जगणमथ ततोऽपि देहि कर्णम् ।
सरससुकविपिङ्गलेन वित्ता,
लसति कविमुखेषु कामदत्ता ।। २४५ ।।

यथा–

कलपरिमलचञ्चलालिमाल,
सुललितदलमालतीविशालम् ।
वनमिदमलिसलुलद्रसाल,
हरिमिह हि विना सुखाय नालम् ।। २४६ ।।

इति कामदत्ता ११६

११७. अथ वसन्तचत्वरम्

यदा लघुर्गुरु क्रमेण भासते,
खराशुवर्णकेन चेद् विकासते ।
फणीन्द्रनागभाषित सुसत्वर,
विधेहि मानसे वसन्तचत्वरम् ।। २४७ ।।

यथा–

मुदा विलोलमौलिगोपनायकं,
हृदा सदैव चित्तमोददायकम् ।
यदा विभावयिष्यसि त्वमाशु रे,
तदा सुखे निमज्जितासि[2] भासुरे ।। २४८ ।।

इति वसन्तचत्वरम् ११७.

---

१ ख. ख. कलयत । २ ख. निमङ्क्ष्यसि प्रभासुरे ।

*टिप्पणी—१ छन्द सूत्र टि० पृ० १३७

११८ अथ प्रमुदितवदना

सरसकविजनाहिता भाविता,
भवति सुकविपिङ्गलेनोदिता ।
सकलरसिकचित्तहृद्या तदा,
प्रमुदितवदना तु नौ रौ यदा ।। २४६ ।।

यथा–

कलय सखि ! विराजि वृन्दावन,
सहचरि ! कुरु मे शरीरावनम् ।
यदि कथमपि मानसे भावये:,
यदुकुलतिलक तदैवानये ।। २५० ।।

इति प्रमुदितवदना ११८.

इयमेव अन्यत्र प्रभा*[1] ।

११६. अथ नवमालिनी

सखि ! नवमालिनी रसविरामा,
ननु कलयालि पूर्वयतियुक्ताम् ।
नजभयकारभावितपदाढ्या,
फणिपतिनागपिङ्गलविभक्ताम् ।। २५१ ।।

यथा–

इह कलयालि ! नन्दसुतबाल,
नवघनकान्तिनिर्जिततमालम् ।
सरसविलासरासक्तमाल,
मुनिवरयोगिमानसमरालम् ।। २५२ ।।

इति नवमालिनी ११६

१२०. अथ तरलनयनम्

जलधि-नगणमिह रचयत,
रविमित लघुमिह कलयत ।
सुकविफणिपतिरिति वदति,
तरलनयनमिति हि भवति ।। २५३ ।।

---

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर. अ० ३, का० ६५

यथा–

तव कुसुमनिभहसितमयि,
गततनुमनुकलयति मयि ।
इति हि सखि ! हरिरनुवदति,
परिकलय दृशमयि सुदति ! ॥ २५४ ॥

इति तरलनयनम् १२०

'अत्र प्रस्तारगत्या द्वादशाक्षरस्य षण्णवत्यधिकं सहस्रचतुष्टय ४०९६ भेदा भवन्ति, तेषु कियन्त. प्रदर्शिता शेषभेदा, सुधीभि. प्रस्तार्य सूचनीया इति[1] ।'[*]

इति द्वादशाक्षरम् ।

अथ त्रयोदशाक्षरम्

तत्र–

१२१. वाराह

यस्मिन् पादे दृश्यन्ते सयुक्ता षट्कर्णा,
सूर्याणामेकेनाग्राणा सख्याका वर्णा. ।
कर्णस्यान्ते यस्मिन् सप्रोक्तश्चैको हार,
सोऽय नागोक्तो वाराहो वृत्तानां सार· ॥ २५५ ॥

यथा–

कल्पान्तप्रोद्यद्वारां राशौ दृष्ट्वा मग्नं,
य क्षोणीपृष्ठ दष्ट्राग्रे कृत्वा सलग्नम् ।
हत्वा दैत्य दृप्यन्त सिन्धोर्मध्यादागात्,
कुर्यात् काल[2] सोऽय सर्वेषां रक्षां वेगात् ॥ २५६ ॥

इति वाराह १२१.

१२२. अथ माया

हारौ कृत्वा स्वर्णसुमेरुद्वययुक्तौ,
प्रत्येक हस्तौ वलयाभ्यामपि सक्तौ ।
मिथ्याचित्तस्यस्य दधाना[3]वरवर्णे,
माया सर्वेषा हृदये राजति तूर्णे[4] ॥ २५७ ॥

---

१ क प्रतौ '–' पक्तिद्वय नास्ति । २ ख कोलः । ३ ख. दधानां वरवर्णम् । ४ ख तूर्णम् ।

*टिप्पणी–१ अन्यग्रन्थेषु प्राप्तशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोकनीया· ।

एतस्या एवान्यत्र श्रुतिः नवयतिसहित मगण - तगण - यगण-सगण-गुरुयुत **मत्तमयूर**मिति गणान्तरेण नामान्तरमुक्तम् । तथा च **छन्दोमञ्जर्याम्** [द्वितीयस्तवके का ९७] 'वेदै रन्ध्रैर्म्तौ यसगा मत्तमयूरम् ।' इति लक्षणात् ।

यथा–

वन्दे गोप गोपवधूभि. कृतरासं,
हस्ते वश रावि दधान वरहासम् ।
नव्ये कुञ्जे सविदधान नवकेलिं,
लोलाक्ष राधामुखपद्माकरहेलिम् ॥ २५८ ॥

इति माया १२२

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामहश्रीरामचन्द्रभट्टविरचित कृष्णकुतूहले महाकाव्ये रासवर्णनप्रस्तावे—

रासक्रीडासक्तवचस्कायमनस्का.,
सस्कारातिप्रापितनाट्यादिविशेषा ।
वृन्दारण्य तालतलोद्घट्टनवाचा-
मत्यासगाच्चक्रुरिमा मत्तमयूरम् ॥ २५९ ॥

यथा वा, **छन्दोमञ्जर्याम्** [द्वितीयस्तवके का० ९७]

लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्त,
चञ्चन्नीपामोदिपयोदानिलरम्यम् ।
कामक्रीडाहृष्टमना गोपवधूभि.,
कसध्वसी निर्जनवृन्दावनमाप ॥ २६० ॥

'गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे,'*[१] त ससारध्वान्तविनाश हरिमीडे*[२]'

---

*टिप्पणी—१
'लीलारब्धस्थापितलुप्ताखिललोका
लोकातीतैर्योगिभिरन्तश्चिरमृग्याम् ।
बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जां
गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ॥ १ ॥
[शङ्कराचार्यकृतगौरीदशकस्तोत्र प० १]

*टिप्पणी—२
स्तोष्ये भक्त्या विष्णुमनादिं जगदादिं
यस्मिन्नेतत् ससृतिचक्र भ्रमतीत्थम् ।
यस्मिन् दृष्टे नश्यति तत्ससृतिचक्र,
त ससारध्वान्तविनाश हरिमीडे ॥ १ ॥
[शङ्कराचार्यकृतहरिमीडे स्तोत्र प०-१]

इति च श्रीशङ्कराचार्यविरचिते गौरीदशके हरिस्तोत्रे च। 'हा तातेति-क्रन्दितमाकर्ण्यविषण्ण' *१ इत्यादि रघुवशे च सहस्रशो निदर्शनानि।

इति मत्तमयूरम् १२२.

१२३. अथ तारकम्

जलराशिविराजितहस्तसयुक्त,
चरणस्य तथा विरतौ गुरुवृत्तम्[1]।
हृदये कुरुताखिलमोहितचित्त,
फणिनायकभाषित-तारकवृत्तम् ॥ २६१ ॥

यथा–

विमल कमल गरल मनुते सा,
सरसेन विसेन सुसेवितवेषा।
अवन गमनं तदनन्दितचित्त,
हृदये सदये तदये कुरु वित्तम् ॥ २६२ ॥

अथा वा, भूषणे*२–

अतिभारतर हृदि चन्दनपङ्क,
मनुते सरसीपवनं विषशङ्कम्।
तव दुस्तरतारवियोगपयोधि-
र्न हि पारमसौ भविता परमाधे ॥ २६३ ॥

इति तारकम् १२३

१२४. अथ कन्दम्

शर हारयुग्म क्रमादत्र सधेहि,
त्रय पक्तिसख्याकवर्णं तथा धेहि।
इद कन्दसज्ञ समुक्त फणीन्द्रेण,
कवीना यथा मोदकन्द कवीन्द्रेण ॥ २६४ ॥

---

१ ख. वित्तम्।

*टिप्पणी—१ हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विषण्ण-
स्तस्यान्विष्यन् वेतसगूढ प्रभव स।
शल्यप्रोत वीक्ष्य सकुम्भ मुनिपुत्रं,
तापादन्त शल्य इवासीत् क्षितिपोपि ॥

[रघुवश स० ९, प० ७५]

*टिप्पणी—२. वाणीभूषणम् द्वि० अ० पद्य २४८

यथा–

विलोलद्विरेफावलीनां विरावेण,
हिमांशोः कराणां च सङ्गेन दावेण ।
वपुर्मे सदा दाहित शीतयस्वालि,
पुरो दर्शयित्वा वपुर्मालतीमालि ॥ २६५ ॥

इति कन्दम् १२४

१२५. अथ पङ्क्तावलिः

भ कुरु तदनु नकारमिहानय,
धेहि जमथ जगण परिभावय ।
शखमिह तदनु भामिनि मानय,
पङ्कसुपरिकलितावलिमानय ॥ २६६ ॥

यथा–

कोमलसुललितमालति[1]मालिनि,
पङ्कजपरिमलसलुलितालिनि ।
कोकिलकलकल[2]कूजितशालिनि,
राजति हरिरिह वञ्जुलजालिनि ॥ २६७ ॥

इति पङ्क्तावलि १२५

१२६ अथ प्रहर्षिणी

कर्णाभ्या सुललितकुण्डलं दधाना,
शखाभ्यामतिसुरसा कुचाढचहारा ।
विश्राम ननु रवनूपुरस्य युग्मे,
बिभ्राणा सखि ! जयति प्रहर्षिणीयम् ॥ २६८ ॥

यथा–

यद्दन्ते विलसति भूमिमण्डल त-
न्मालिन्यश्रियमुपयातमुज्ज्वलाभे ।
देवेन्द्रैरभिकलितः स्तवप्रयोगै-
रस्माक वितरतु श स कोलदेह. ॥ २६९ ॥

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामह-महाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते कृष्णकुतूहले महाकाव्ये श्रीभगवदाविर्भाववर्णनप्रस्तावे––

---

१. ख. कुन्दसुमालिनि । २ ख. कोकिलनवकल ।

सत्य सद्वसु वसुदेवदेवकीभ्या,
रोहिण्यामुडुनि नभस्य कृष्णपक्षे ।
पर्जन्ये कटति निशीथनीरवाया-
मष्टम्या निगमरहस्यमाविरासीत् ।। २७० ।।

इति प्रहर्षिणी १२६.

१२७ अथ रुचिरा

पयोधरे कुसुमितहारभूषिता,
सुपुष्पिणी सरसविराविनूपुरा ।
रसान्विता सकनकरावकङ्कणा,
चतुर्यति सखि ! रुचिरा विराजते ।। २७१ ।।

यथा–

कलापिन निजदयिताविहारिणं
पयोधर सखि ! कलये विराविणम् ।
हरिं विना मम सकल विषायित,
हरे पुन सकलमिद सुखायितम् ।। २७२ ।

इति रुचिरा १२७.

१२८. अथ चण्डी

कलय नयुगमिह धारय हस्त,
तदनु च विरचय स किल शस्तम् ।
चरणविरतियुतभासुरहारा,
त्रिजगति वरसखि राजति चण्डी ।। २७३ ।।

यथा–

सरुतचरणयुतनूपुरशोभा,
बहुविधविरचितमानसलोभा ।
हरिगतवनमनुगच्छति राधा
सखि मनसिजकृतमानसबाधा ।। २७४ ।।

इति चण्डी १२८.

१२९ अथ मञ्जुभाषिणी

करसङ्गिपुष्पयुतकङ्कणान्विता,
रसरूपरावमितनूपुराञ्चिता ।
कुचशोभमानवरहारधारिणी,
कुरुते मुदं मनसि मञ्जुभाषिणी ॥ २७५ ॥

यथा–

जनितेन मित्रविरहेण दुःखिता,
मिलितुं तथैव वनिता हरेर्हरित् ।
विधुबिम्बचित्तभवयन्त्रपूजनं,
कुसुमैस्तनोति नवतारकामयैः ॥ २७६ ॥

इति मञ्जुभाषिणी १२९

सुनन्दिनी इत्यन्यत्र । अन्यत्रेति शम्भौ । क्वचिदियमेव प्रबोधिता च[1*] ।

१३०. अथ चन्द्रिका

कुरु नगणयुगं धेहि पादे ततः,
तगणयुगलकं गोऽपि चान्ते ततः ।
चरणमनु तथा कामवर्णान्विता,
हयरसविरतिश्चन्द्रिका पूजिता ॥ २७७ ॥

यथा[1]–

कलयत हृदये शैलसधारकं,
मुनिजनमहितं देवकीदारकम् ।
व्रजजनवनिता-दुःखसन्तारकं,
जलधररुचिरं दैत्यसंहारकम् ॥ २७८ ॥

इति चन्द्रिका १३०.

यथा वा–

'इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः ।' इत्यादि किरातार्जुनीये[*2] । क्वचिदियमेव उत्पलिनी इति प्रसिद्धा ।

---

१ ख यथा उदाहरणं नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका ९९ एवं १०२ ।

*टिप्पणी—२ 'इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमैः
सततमसुतरं वर्णयत्यन्तरम् ॥
अमुमतिविपिनं वेददिग्व्यापिनं
पुरुषमिव परं पद्मयोनिः परम् ॥
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० १८]

१३१ अथ कलहंसः

सगणं विधेहि जगणं च सुयुक्तं,
सगणद्वयं कुरु पुनः फणिवित्तम् ।
गुरुमन्तगं कुरु तथा हृतचित्तं,
कलहंसनामकमिदं वरवृत्तम् ॥ २७९ ॥

यथा–

नवनीतचोरममलद्युतिशोभं,
व्रजसुन्दरीवदनपङ्कजलोभम् ।
ललितादिगोपवनिताकृतरासं,
कलये हरिं निजहृदा वरहासम् ॥ २८० ॥

इति कलहंसः १३१.

कुत्रचिदयमेव सिंहनाद इति, क्वचिच्च कुटजाख्यमिति ।

१३२ अथ मृगेन्द्रमुखम्

कुरु नगणं तदनन्तरं नरेन्द्रं,
तदनु च जं कुरु पक्षिणामथेन्द्रम् ।
तदनु विधारय नूपुरं पदान्ते
रचय मृगेन्द्रमुखं सुखेन कान्ते ! ॥ २८१ ॥

यथा–

कुमुदवनीषु सखे ! विधूतबन्धः,
कमलवनस्य सदा हृतातिगन्धः ।
विधुरुदितो धवलीकृतातिलोकः,
प्रतिरजनीषु च दत्तकोकशोकः ॥ २८२ ॥

इति मृगेन्द्रमुखम् १३२.

१३३. अथ क्षमा

द्विजवर-सगणौ धेहि वैनतेयं,
यगणमथ तथा पण्डितालिगेयम् ।
मुनिरचितयति सज्जनादिमेयं,
फणिपतिकथिता राजति क्षमेयम् ॥ २८३ ॥

यथा–

कलयत हृदये नन्दगोपसूनुं,
फणिपतिदमनं न्यक्कृतातिभानुम् ।

शशधरवदन राधिकारसाल,
सरसिजनयनं पङ्कजालिमालम् ॥ २८४ ॥

इति क्षमा १३३.

इयमेव क्वचिद् गणान्तरेणापि क्षमैव[1]* भवति ।

१३४ अथ लता

कलय नगण विधेहि तत. कर,
जगणयुगल च देहि तत. परम् ।
चरणविरतौ गुरु कुरु सम्मता,
रसकृतयतिर्मुदा विहिता लता ॥ २८५ ॥

यथा–

कलय हृदये मुदा व्रजनायक,
ललितमुकुट सदा सुखदायकम् ।
युवतिसहित व्रजेन्द्रसुत हरिं,
कनकवसन भवाम्बुनिधेस्तरिम् ॥ २८६ ॥

इति लता १३४.

१३५ अथ चन्द्रलेखम्

कुरु न-सगणौ पक्षिराज च युक्त,
रचय रगण कामवर्णैरमुक्तम् ।
तदनु च पुन कुण्डल धेहि शेष,
कलय फणिना भाषित चन्द्रलेखम् ॥२८७॥

यथा–

नमत सतत नन्दगोपस्य सूनु,
फणिप-दमन दानवोलूकभानुम् ।
कमलवदन राधिकाया रसाल,
तरलनयन पङ्कजालीसुमालम् ॥ २८८ ॥

इति चन्द्रलेखम् १३५

चन्द्रलेखा[2]* इत्यन्यत्र ।

---

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकरस्य (अ० ३ का० ७५) नारायणीटीकायां 'इय क्षमैव आचार्यो मतभेदेन सञ्ज्ञान्तरार्थं पुनरूचे' ।

*टिप्पणी—२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १०५

१३६. अथ सुद्युतिः

कुरु न-सगणौ पादे तकारौ तथा,
कलय वलय स्यु कामवर्णा यथा ।
रसपरिमितैर्वर्णैस्तथा स्याद् यति',
फणिपकथिता सशोभते सुद्यु ति' ।' २८९ ॥

यथा–

वदनवलितैर्भृङ्गैर्युता सद्वया,
लुलितललिता लोलालसाक्षिद्वया ।
सखि हरिगृहाद् याति प्रगे राधिका,
सकलसुदृशा नित्य मनोबाधिका ॥ २९० ॥

इति सुद्यु ति १३६.

१३७ अथ लक्ष्मीः

कर्णे विराजिसरसकुण्डलान्विता,
गन्धाढ्यपुष्पयुतकरेण शोभिता ।
वक्षोरुहे च विमलहारशोभिनी,
लक्ष्मी. सदा फलतु ममातुल फलम् ॥ २९१ ॥

यथा–

वन्दे हरिं फणिपतिभोगशायिन,
सर्वेश्वर सकलजनेष्टदायिनम् ।
पीताम्वर मणिमुकुटादिभासुर,
गो-गोपिकानिकरवृत हतासुरम् ॥ २९२ ॥

इति लक्ष्मी १३७

१३८. अथ विमलगतिः

जलधिमित नगणमिह कलय,
तदनु च सखि लघुमिह रचय ।
फणिपतिसुकलितमिति भवति,
वितनु यति विमलगति सुदति ! ॥ २९३ ॥

यथा–

अभिनवसजलजलदविमल,
निजजनविहतसकलशमल[1] ।
कमलसुललितनयनयुगल,
जय ! जय ! सुरनुतपदकमल ।। २९४ ।।

इति विमलगतिः १३८.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोदशाक्षरस्य द्विनवत्युत्तर शतमष्टौ सहस्राणि च ८१९२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचन भेदाः समुदाहृता., शेषभेदा. सुधीभि प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यल पल्लवेन ।*

इति त्रयोदशाक्षरम्।

अथ चतुर्दशाक्षरम्

तत्र–

१३९. सिंहास्यः

यस्मिन्निन्द्रै सख्याता राजन्ते युक्ता वर्णा,
पादे सूर्याश्वै. सख्याका· सशोभन्ते कर्णा ।
नागानामीशेनैतत् प्रोक्त सिंहास्य कान्ते !
भूपालाना चित्तानन्दस्थान धेहि स्वान्ते ।। २९५ ।।

यथा–

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
भिद्यद् ब्रह्माण्ड व्याकुश्योच्चैर्व्यामृद्नादुग्रै ।
दत्तालीकान्युन्मिश्र निर्यद्विद्यु द्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माक रक्षा कुर्याद्घोर(वीर)सिंहास्य. ।। २९६ ।।

इति सिंहास्य १३९

१४०. अथ वसन्ततिलका

हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना,
हस्त च गन्धकुसुमोज्ज्वलकङ्कणाढ्यम् ।
पादे तथा सरुतनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ।। २९७ ।।

---

१ ख. समल । २. पक्तित्रय नास्ति क. प्रतौ ।

★ टिप्पणी– ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धशेषभेदा. पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

यथा–

लोके त्वदीययशसा धवलीकृतेऽस्मिन्,
छायाभय निजशरीरकृत विमुच्य[1] ।
ज्योत्स्नावतीषु रजनीष्वभिसारिकाणा,
सङ्घ प्रियस्य सदन सुखत. प्रयाति ॥ २९८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

पातु न पारयति यत्कथित पयस्त-
द्दध्नो विनाश्य दृढनाशयति स्वकीयान्[2] ।
खण्ड निधाय दधिखण्डमखण्डमेव,
क्षिप्त्वा मुखे निखिलमत्ति मुखे सुतस्ते ॥ २९९ ॥

इति वसन्ततिलका १४०.

१४१. अथ चक्रम्

कुण्डलकलितदहनमित नगण,
शङ्खसहितमिह विरचय सगणम् ।
कुण्डल[3]नरपतिवरकविकलित,
क्रमखिलकविजनहृदि ललितम् ॥ ३०० ॥

यथा–

कोकिलकलरवसुललितसमये,
शीतलमलयजपवनसुखमये ।
कामविशिखचयविदलितहृदये,
सुन्दरि ! परिहर हृदयमदमये ॥ ३०१ ॥

यथा वा, वाणीभूषणे— [द्वितीयाध्याय, पद्य २५८]

सुन्दरि ! नभसि जलदचयरुचिरे,
देहि नयनयुगमतिघनचिकुरे ।
मानमिह न कुरु जलधरसमये,
किं तव भवति हृदयमिदमदये ॥ ३०२ ॥

इति चक्रम् १४१.

१४२ अथ असम्बाधा

बिभ्राणा कर्णौ कलितललितताटङ्कौ(ङ्का),
वाणै सञ्छिन्ना द्विजविरचितशोभाढ्या ।

---

१ क विमुक्त. । २. ख दृढमाशयति स्वकोशात् । ३ ख कुण्डली ।

हस्ताग्रे राजद्विरचितवलयद्वन्द्वा,
स्तुत्या संप्रोक्ता वरकविभिरसम्बाधा ॥ ३०३ ॥

यथा

वन्दे गोपाल व्रजजनतरुणीधीरं,
रासक्रीडायामभिगतयमुनातीरम् ।
देवानां वन्द्यं हृतवरवनिताचीरं,
वालैः संयुक्तं दितिसुतदलने वीरम् ॥ ३०४ ॥

इति असम्बाधा १४२

१४३ अथ अपराजिता

द्विजपरिकलिता करेण विराजिता,
कुचयुगकलिता प्रलम्बितहारिणी ।
भुवननिगदितातिशोभितवर्णिनो,
कृतमुनिविरतिर्जयत्यपराजिता ॥ ३०५ ॥

यथा–

अतिरुचिदशनैः सभातमसा हरः,
दितिसुतरुधिरैः सुरक्तनखाङ्कुरः ।
जलभृदुडुगणौ सटाभिरुपाहरत्[1],
जयति हरितनुर्भटानपि संहरत्[2] ॥ ३०६ ॥

इति अपराजिता १४३.

१४४ अथ प्रहरणकलिका

रचयत नगणद्वयमथ भगणं,
लघुगुरुसहितं कलयत नगणम् ।
प्रहरणकलिका मुनियतिसहिता,
फणिपतिकथिता कविजनमहिता ॥ ३०७ ॥

यथा –

नम मधुमथन जलनिधिशयन,
सुरगणनमित सरसिजनयनम् ।
इति गदनमतिर्भवति हृदि यदा,
भवजलनिधि[त]स्तरति सखि ! तदा ॥ ३०८ ॥

---

१ ख उपाहरन् । २ ख. संहरन् ।

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

व्रजयुवतिभिरित्यभिमतवचसि,
प्रतिपदममृतद्रवमिव विकिरति ।
मनसिजविशिखप्रपतनविधुत-
स्वविरहदहनप्रशमनमकलि[1] ॥ ३०९ ॥

इति प्रहरणकलिका १४४

१४५ अथ वासन्ती

कर्णौ कृत्वा कुण्डलसहितौ गन्ध पुष्प,
हस्ते धृत्वा कङ्कणमथ हार राजन्तम् ।
स्वर्णेनाढ्य नूपुरमथ धृत्वा राजन्ती,
नागप्रोक्ता राजति कविचित्ते वासन्ती ॥ ३१० ॥

यथा–

वन्दे गोपीमन्मथजनक कसारातिं,
भूमे कार्यार्थं नृषु कृतमिथ्याविख्यातिम् ।
रासे वशीवादननिपुण कुञ्जे कुञ्जे,
लीलालोल गोकुलनवनारीणा पुञ्जे ॥ ३११ ॥

इति वासन्ती १४५.

१४६. अथ लोला

कर्णे कुण्डलयुक्ता हस्त स्वर्णसनाथ,
बिभ्राणा वलयाढ्यं हारौ चोज्ज्वलपुष्पौ ।
सध्वान च दधाना दिव्य नूपुरयुग्म,
नागोक्ता कविचित्ते कान्ता राजति लोला ॥ ३१२ ।

यथा–

गोपाल कलयेऽहं नित्यं नन्दकिशोर,
वृन्दारण्यनिवास गोपीमानसचौरम्[2] ।
वशीवादनसक्त नव्ये कुञ्जकुटीरे,
नारीभि. कृतरास कालिन्दीवरतीरे ॥ ३१३ ॥
इति लोला १४६

---

१ क कमलि । २. ख चोर ।

१४७ अथ नान्दीमुखी

द्विजपरिकलिता हस्तयुक् कङ्कणाढ्या,
विरुतविलसितौ नूपुरौ धारयन्ती ।
रसकनकयुत हारमुच्चैर्दधाना,
स्वरविरतियुता भाति नान्दीमुखीयम् ॥ ३१४ ॥

यथा–

नखगलदसृजा पानतो भीषणास्य.
सुरनृपतिमुखैर्देवसघैरुपास्य ।
भयजनकरवैर्नादयद्दिङ् मुखानि,
प्रकटयतु स व सिहवक्त्र सुखानि ॥ ३१५ ॥

इति नान्दीमुखी १४७,

१४८. अथ वैदर्भी

कर्णे कृत्वा कनकसुललित ताटङ्कं,
सबिभ्राणा द्विजमथ वलय हस्ताग्रे ।
दिव्य हारद्वितयमथ दधाना युक्त
वेदैश्छिन्ना जगति विजयते वैदर्भी ॥ ३१६ ॥

यथा–

वन्दे नित्य नरमृगपतिदेह व्यग्र,
दैत्येशोर स्थलदलनविधावत्युग्रम् ।
प्रह्लादस्याभिलषितवरद सृक्काग्रे,
सलिह्यन्त रुधिरविलुलितं जिह्वाग्रम् ॥ ३१७ ॥

इति वैदर्भी १४८.

१४९. अथ इन्दुवदनम्

धेहि भगण तदनु धारय जकारं,
हस्तमथ कारय ततोऽपि च नकारम् ।
हारयुगल तदनु देहि चरणान्ते,
नागकृतमिन्दुवदन भवति कान्ते ! ॥ ३१८ ॥

यथा–

नौमि वनिताविततरासरसयुक्तं,
गोकुलवधूजनमनोहरणसक्तम् ।

देवपतिगर्वहरखण्डनसुदक्ष,
भूमिवलये निहतदैत्यगणलक्षम् ॥ ३१९ ॥

इति इन्दुवदनम् १४९.

स्त्रीलिङ्गमन्यत्र* ।

१५०. अथ शरभी

कर्णं स्वर्णोज्ज्वलललितताटङ्कयुक्त,
सबिभ्राणा द्विजमथ रुत नूपुराढ्यम् ।
हार पुष्प वलययुगल धारयन्ती,
वेदैश्छिन्ना जयति शरभी पिङ्गलोक्ता ॥ ३२० ॥

यथा–

वन्दे कृष्ण नवजलधरश्यामलाङ्ग,
वृन्दारण्ये व्रजयुवतिभिर्जातसङ्गम् ।
कालिन्दीये सरसपुलिने क्रीडमान[1],
कालीयाहे प्रथितयशसो घूतमानम् ॥ ३२१ ॥

इति शरभी १५०

१५१ अथ अहिधृतिः

रचय नयुगल कुरु ततो भगण,
लघुगुरुसहित कुरु तथा जगणम् ।
मुनिविरतियुता फणिनृपस्य कृति,
जगति विजयते सुविमलाऽहिधृति. ॥ ३२२ ॥[2]

यथा–

सकलतनुभृतां जलमपेयतर,
विगतवि[ष]भय रचयितु कृपया ।
पतति तरुवराच्छिरसि नन्दसुते,
भुवनभरसहा विजयतेऽहिधृति· ॥ ३२३ ॥*

इति अहिधृति· १५१.

१५२ अथ विमला

रचय न-भूपती कुरु तथा भगण,
लघुवलयाचित च विरतौ जगणम् ।

---

१. ख. सघमानं । २. पूर्णं पद्यं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर अ० ३, का० ८२

फणिपतिभाषिता रविहयैर्विरति-
　　वरकविमानसेऽतिविमला जयति ॥ ३२४ ॥

यथा–

व्रजजननागरीदधिहृतावतुला,
　　तरणिसुतातटे हरितनुर्विमला[1] ।
वरवनितादृशा सुसुकृतैककला,
　　मम विमले सदा भवतु हृद्यचला ॥ ३२५ ॥

इति विमला १५२

१५३. अथ मल्लिका

कुरु गन्धयुग्मसहित मृगाधिपतिं,
　　रचयाशु सन्ततमथो नरावपि सम् ।
इह मल्लिका कलयता विलासवती,
　　नवपञ्चकैर्यतियुता मुदो[2] जननीम् ॥ ३२६ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसूनुरिह मे मनोहरण,
　　जनताप्रसादसुमुखस्तमोहरण ।
भविता सहायकरणो जनानुगत,
　　करवै कमत्र शरण वने सुखत ॥ ३२७ ॥

इति मल्लिका १५३.

१५४. अथ मणिगणम्

जलधिमित नगणमिह कलयत,
　　तदनु च लघुयुगमपि रचयत ।
सकलफणिनृपतिविरचितमिति,
　　निजहृदि कलयत मणिगणमिति ॥ ३२८ ॥

यथा–

भुजयुगलविलसितफणिवलय,
　　कृतसकलदितिसुतकुलविलय ।
प्रलयसमयभयजनक सलय[3],
　　वृषगमनमपि सुखमनुकलय ॥ ३२९ ॥

इति मणिगणम् १५४.

---

१ पद्यस्य पूर्वार्द्ध भाग नास्ति ख. प्रतौ ।　२ ख मुदा ।　३ ख जनसकलय ।

[1]अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्दशाक्षरस्य चतुरशीत्यधिकानि त्रिशतानि षोडश-सहस्राणि च भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रदर्शिता, शेषभेदा सुधीभिराकरतः स्वमत्या वा प्रस्तार्य समूहनीया इति दिक्[1]* ।

इति चतुर्दशाक्षरम् ।

अथ पञ्चदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१५५ लीलाखेलः

यस्मिन् वृत्ते रव्यश्वै सख्याता दृश्यन्ते कर्णा,
पादे पादे तिथ्या सम्प्रोक्ता सशोभन्ते वर्णाः ।
हारश्चैकोऽन्ते यस्मिन्नागानामीशेन प्रोक्त,
लोके वृत्ताना सार लीलाखेलाख्य तद्वृत्तम् ।। ३३० ।।

यथा

देवैर्वन्द्य त्रैलोक्यास्थान देह खर्वीकुर्वन्,
दैत्यानामीश भूम्यां ख्यात [2] पातालस्थं कुर्वन् ।
स्वाराज्य देवेशा यान्त्यन्त स्थैर्याढ्य सयच्छन्,
मामव्याद् गोविन्दो वैरोच्यानाशी [3]पद्य गर्जन् ।। ३३१ ।।

इति लीलाखेल १५५

यथा वा –

'मा कान्ते पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशेस्वाप्सी.', इति ज्यौतिषिकाणा कालपरि-माणपर उदाहरणमिति **कण्ठाभरणे**[*2] । **लीलाखेलस्य** एतस्यैवान्यत्र **सारङ्गिका**[3*] इति नामान्तरमुक्तम् ।

१५६. अथ मालिनी

द्विजकरवलयाढ्या नूपुरारावयुक्ता,
श्रवणरचितपुष्पप्रोतताटङ्कयुग्मा ।
वमुरचितविरामा सर्वलोकैकवर्णा,
फणिपनृपतिकान्ता भासते मालिनीयम् ।। ३३२ ।।

---

१ पक्तित्रय नास्ति क प्रतौ । २. ख. घातः । ३. ख वैरोचन्याशी.

*टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु प्राप्तशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः ।

*टिप्पणी–२ मा कान्ते ! पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सी,
कान्त वक्त्र वृत्ता पूर्णं चन्द्र मत्वा रात्रौ चेत् ।
क्षुत्क्षाम' प्राटश्चेतश्चेतो राहु क्रूर प्राद्यात्,
तस्माद्ध्वान्ते हर्म्यस्यान्ते शय्यैकान्ते कर्त्तव्या ।।
[कण्ठाभरण]

*टिप्पणी–३ प्राकृतपैंगलम्-द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १५६ ।

यथा—

अयममृतमरीचिर्दिग्वधूकर्णपूर
सपदि परिविधातु कोऽपि कामीव कान्तः ।
सरस इव नभस्तोऽत्यन्तविस्तारयुक्ता-
दुडुगणकुमुदानि प्रोच्चकैरुच्चिनोति ॥ ३३३ ॥

यथा वा, पाण्डवचरिते—

भवनमिव ततस्ते वाणजालैरकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे वाहुयुद्धे च दक्षाः ।
विधृतनिशितखड्गाश्चर्मणा भासमाना,
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥ ३३४ ॥

यथा वा, अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीना रागिणी वारुणीय,
हृदयमिव युवानस्तस्करा स्व हरन्ति ।
भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश-
स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥ ३३५ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

निरवधिदिनमाना य विना गोपवध्व-
स्तमभिकमभिसाय वीक्षमाणा ननन्दु ।
स्मितमधुरमपाङ्गालोकन प्रीतिवल्या.,
कुसुममिव तदीय वीक्ष्य कृष्णोप्यतुष्यत् ॥ ३३६ ॥

इति मालिनी १५६

१५७ अथ चामरम्

पक्षिराजभूपतिक्रमेण यद् विराजते,
वाणभूमिसख्ययाक्षरं च यत्र भासते ।
नागराजभाषित तदेव चारुचामर,
मानसे विधेहि पाठतोऽपि मोहितामरम् ॥ ३३७ ॥

यथा—

नौमि गोपकामिनीमनोविनोदकारण,
लीलयावधूतकसराजमत्तवारणम् ।
कालियाहिमस्तकोल्लसन्मणिप्रकाशित,
नन्दनन्दन सदैव योगिचित्तभासितम् ॥ ३३८ ॥

यथा वा, भूषणे[1] *—

रासलास्यगोपकामिनीजनेन खेलता,
　　पुष्पपुञ्जमञ्जुकुञ्जमध्यगेन दोलता ।
तालनृत्यशालिगोपबालिकाविलासिना,
　　माधवेन जायते सुखाय मन्दहासिना ।। ३३९ ।।

इति चामरम् १५७

एतस्यैव अन्यत्र तूणक *[2] इति नामान्तरम् ।

१५८. अथ भ्रमरावलिका

चरणे विनिधेहि सकारमिषूपमित,
　　कुरु वर्णमपीपुनिशाकरसप्रमितम् ।
फणिनायकपिङ्गलचित्तमुद कलिका,
　　सखि ! भाति कवीन्द्रमुखे भ्रमरावलिका ।। ३४० ।।

यथा–

कलकोकिलकूजितपूजितनू(त्न)वनं,
　　वनजाक्षिनवीनसरोजवनीपवनम् ।
हिमदीधितिकान्तिपय परिधौतमिद,
　　जगदाशु विलोक्य[1] परित्यज मानमिदम् ।। ३४१ ।।

यथा वा, भूषणे[3]–

सखि ! सम्प्रति क प्रति मौनमिद विहित,
　　मदनेन धनु सशर स्वकरे निहितम् ।
नतिशालिनि का वनमालिनि मानकथा,
　　रतिनायकसायकदु खमुपैषि[2] वृथा ।। ३४२ ।।

इति भ्रमरावलिका १५८.

भ्रमरावलीति पिङ्गले[4] *

---

१. ख जगदाशुचि लोक्य । २ 'मुपैति' वाणीभूषणे ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २६२
　२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १३७
　३ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६६
　४ प्राकृतपैङ्गलम्, द्वितीयपरिच्छेद, प० १५४

१५९. अथ मनोहंसः

प्रथमं विधेहि कर जकारविराजितं,
जगण ततो भगणेन कारय भूषितम् ।
विनिधेहि पक्षिपतिं ततस्तिथिजाक्षर,
कुरु हंसमेणविलोचने मनस. परम् ॥ ३४३ ॥

यथा–

तनुजाग्निना सखि ! मानस मम दह्यते,
तनुसन्धिरुष्णगदारुवत् परिभिद्यते ।
अधर च शुष्यति वारिमुक्तसुशालिवत्,
कुरु मद्गृह कृपया सदा वनमालिमत् ॥ ३४४ ॥

यथा वा–

नवमञ्जुवञ्जुलकुञ्जकूजितकोकिले.
मधुमत्तचञ्चलचञ्चरीककुलाकुले ।
समयेतिधीरसमीरकम्पितमानसे,
किमु चण्डि मानमनोरथे न विखिद्यसे ॥ ३४५ ॥

इति मनोहंस १५९.

१६० अथ शरभम्

जलनिधिकृतमिह विरचय तगणं ,
चरणविरतिमनुविरचय सगणम् ।
वरफणिपतिविरचितमतिरुचिर ,
शरभमखिलहृदि विलसति सुचिरम् ॥ ३४६ ॥

यथा–

नभसि समुदयति सखि ! हिमकिरण ,
वहति सुलघुलघुमलयजपवनम् ।
त्यजति तिमिरमिदमपि(भि) जननयन ,
द्रुतमनुविरचय मधुरिपुशयनम् ॥ ३४७ ॥

इति शरभम् १६०.

इदमेवान्यत्र शशिकला*[1] इति नामान्तरेण उक्तम् ।
अथ मणिगुणनिकरस्रजौ छन्दसी, किञ्च—
इदमेव हि यदि वसुयति ८ मणिगुणनिकराख्यमीर्यते हि तदा ।
यदि तु रसे ६ विश्राम स्रगिति समाख्या तदा लभते ॥ ३४८ ॥

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तबक, कारिका १३१

अपि च

मणिगुणनिकरोदाहृतिरिह शरभोदाहृतौ ज्ञेया ।
स्रगुदाहरण ज्ञेयम् लक्षणवाक्ये तु शरभस्य ।। ३४९ ।।

यथा वा–

नरकरिपुरवतु निखिलसुरगति-
रमितमहिमभरसहजनिवसतिः[1] ।
अनवधिमणिगुणनिकरपरिचित. ,
सरिदधिपतिरिव धृततनुविभवः ।। ३५० ।।

अयि ! सहचरि ! रुचिरतरगुणमयी ,
अदिमवसतिरनपगतपरिमला ।
स्रगिव निवसति लसदनुपमरसा ,
सुमुखि ! मुदितदनुजदलनहृदये ।। ३५१ ।।

इति छन्दोमञ्जर्यामुदाहरणद्वय* 'यतिभेदेनोक्तम् । प्रकृत तु शरभमेव इति न कश्चिद् विशेप ।

१६१ अथ निशिपालकम्

धेहि भगण तदनु भूपतिमथो कर ,
देहि नगण च रगण कुरु तत. परम् ।
नागनृपपिङ्गलसुभाषितमुदीरित ,
वृत्तममल हृदि निधेहि निशिपालकम् ।। ३५२ ।।

यथ –

गोपतरुणीजनमनोहरणपण्डितं,
हस्तयुगधारितसुवेणुपरिमण्डितम् ।
चन्द्रकविराजितविलोलमुकुट हृदा,
नौमि हरिमर्कतनयातटगत सदा ।। ३५३ ।।

यथा वा, भूपणे'[2]–

चन्द्रमुखि ! जीवमुखि(पि) ! वाति मलयानिले,
याति मम चित्तमिव पाति[2] मदनानिले ।

---

[1] क मनिनिल सुगति । [2] गाढ 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—[1] छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १३३, १३२
[2] वाणीभूषणम् द्वितीयाऽध्याय, पद्य २५६

तापकर-कामशर-शल्यवरकीलित[1],
मामिह हि पश्य जहि कोपमतिशीलितम्[2] ॥ ३५४ ॥

इति निशिपालकम् १६१.

१६२. अथ विपिनतिलकम्

रचय नगण तदनु धेहि हस्त मुदा,
नगणसहित रगणयुग्ममन्ते सदा ।
रसनवयति फणिपभाषित सुन्दर
विपिनतिलक कलय बाणविध्वक्षरम् ॥ ३५५ ॥

यथा–

नरवरपतेरिव नरा. शशाङ्कांशवः,
तिमिरनिकरः सपदि चोरवद् गच्छति ।
अयमपि रविः सखि ! हृताधिकारिप्रभ,
कथयति विधोः खगकुल जय बदिवत् ॥ ३५६ ॥

यथा वा–

जयति करुणानिधिरशेषसत्तारक,
कलितललितादिवनितामनोहारक ।
सकलधरणीपकुलमण्डलीपालकः,
परमपदवीकरणदेवकीबालक ॥ ३५७ ॥

इति विपिनतिलकम् १६२.

१६३. अथ चन्द्रलेखा

कर्णे ताटङ्कयुग्म पुष्पाढ्यहारौ दधाना,
बिभ्राणा नूपुरस्य द्वन्द्व सुराव सुचित्तम् ।
पादान्ते धारयन्ती वीणा सुवर्णावियुक्ता,
नागोक्ता चन्द्रलेखा सप्ताष्टछेदैरमुक्ता ॥ ३५८ ॥

यथा–

नित्य वन्दे महेश गौरीशरीरार्द्धयुक्तं,
दग्धाऽनङ्ग पुरारिं वेतालसङ्घैरमुक्तम् ।
बिभ्राण चन्द्रलेखा नृत्येषु कृत्तिं धुनान,
गङ्गासञ्जातसङ्ग दृष्ट्या त्रिलोकी पुनानम् ॥ ३५९ ॥

इति चन्द्रलेखा १६४.

चण्डलेखा इत्यन्यत्र ।

---

१ तल्पभरशीलितम्, 'वाणीभूषणे' । २. शेषमतिसञ्चितम् 'वाणीभूषणे' ।

१६४. अथ चित्रा

कर्णद्वन्द्व ताटङ्काभ्यां योजित कारयित्वा,
हारौ बिभ्राणा स्वर्णाढ्यं पुष्पयुक्त तथैव ।
तिथ्युक्तैर्वर्णै सयुक्ता कङ्कणौ धारयन्ती,
शोभा धत्ते चित्रा चित्रा शब्दवन्नूपुराभ्याम् ॥ ३६० ॥

यथा–

कालिन्दीकूले केलीलोल वधू[1]सङ्घयुक्तं,
वन्दे गोपाल रक्षाया नन्दगोपस्य सक्तम् ।
हस्तद्वन्द्वे धृत्वा श्वासैर्वंशिकां पूरयन्त,
दैतेयान् हृत्वा देवाना संकट दूरयन्तम् ॥ ३६१ ॥

इति चित्रा १६४.

चित्रमिदमन्यत्र[1]* ।

१६५ अथ केसरम्

कुरु नगणं ततोऽपि च विधेहि भूपतिं,
भगणपयोधरौ तदनु पक्षिणा पतिम् ।
फणिपतिभाषित तिथिविभाविताक्षरं,
सुकविमनोहर हृदि निधेहि केसरम् ॥ ३६२ ॥

यथा–

चिरमिह मानसे कलय नन्ददारक,
वरवनमालिन दितिसुतापहारकम् ।
व्रजवनितारसोदधिनिमग्नमानस,
रवितनयातटे कलितपीतवाससम् ॥ ३६३ ॥

इति केसरम् १६५.

१६६. अथ एला

प्रथम कर रचय जगणमनु कान्ते ।
नगणद्वय तदनु कुरु यगणमन्ते ।
फणिभाषिता शरपरिकलितविरामा,
कृतसस्तुति सकलवरकविभिरेला ॥ ३६४ ॥

---

१. ग बन्धू ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १३६

यथा–

हृदि भावये विमलकमलनयनान्त ,
जनपावन नवजलधररुचिकान्तम् ।
व्रजनायिकाहृदयमधिजनितकाम ,
वनमालिन सकलसुरकुलललामम् ॥ ३६५ ॥

इति एला १६६.

१६७ अथ प्रिया

कुरु नगणयुग धेहि त भगण तत ,
प्रतिपदविरतौ भासते रगणोऽन्ततः ।
मुनिरचितयति[1]र्नागराजफणिप्रिया ,
सकलतनुभृता मानसे लसति प्रिया ॥ ३६६ ॥

इदमेव हि यदि वसुयतिद रलिरिति सज्ञा तदाप्नोति ।
लक्षणवाक्ये मुनियतिरुदिता वसुकृतयतिश्च यथा ॥ ३६७ ॥

यथा–

कलय दशमुखारिं हताखिलदानव ,
मुनिजनमखपालमृषा भुवि मानदम् ।
सरसिजनयनान्त शरासनभञ्जक ,
कपिकुलवरराज्ञ सदा प्रियसज्जकम् ॥ ३६८ ॥

इति प्रिया १६७.

१६८. अथ उत्सव

पक्षिराज-नगणौ भगण-द्वितयं ततः
कारयाशु पदशेषकृतो रगणो मत ।
उत्सव. फणिनागकृत· सखि ! भासते ,
पङ्क्तिजाक्षरविरामयुत कविमानसे ॥ ३६९ ॥

यथा–

बभ्रमीति हृदय जलधौ तरणिर्यथा ,
दह्यते सखि ! तनुर्नलिनीव हिमागमे ।
वायुलोलकदलीव तनुर्मम वेपते ,
चन्दन शुचि सरोवदिद परिशुष्यति ॥ ३७० ॥

इति उत्सवः १६९.

---

१ ख. यति. ।

१६९ अथ उडुगणम् ।

भुवनविरचितमिह लघुमुपनय ,
तदनु विधुकृतलघुमिह विरचय ।
उडुगणमखिलहृदयकृतसदन—
मृषिकृतविरतिमनुकुरु सुवदन ! ॥ ३७१ ॥

यथा–

दहनगतमलकनकनिभवसन,
कटिधृतविरुतरुचिरवररसन ।
सुरकृतनमन जलनिधिनिवसन,
शमनुविरचय कुसुमनिभहसन ॥ ३७२ ॥

इति उडुगणम् १६९.

[1]अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चदशाक्षरस्य द्वात्रिंशत्सहस्राणि सप्तशतानि अष्टपष्ट्युत्तराणि ३२७६८ भेदास्तेषु आद्यन्तसहिता कियन्तः प्रोक्ता, शेषभेदाः प्रस्तार्य लक्षणीया इति दिक्[1]* ।

इति पञ्चदशाक्षरम् ।

अथ षोडशाक्षरम्

तत्र–

१७० राम

यस्मिन्नष्टौ पादस्थित्या युक्ता सदृश्यन्ते कर्णा,
सशोभन्ते पादे पादे शृङ्गारै सख्याता वर्णा ।
यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे स्याद् वेदैर्वेदैर्यद्विश्राम,
सर्पाणामीशेन प्रोक्त सच्छन्द स्यु (स्तु) प्रेष्टो राम. ॥३७३॥

यथा–

इन्द्राद्यैर्देवेन्द्रैर्नित्य वन्द्य पायाल्लोकं राम,
लक्षाणा दातृत्वे दक्ष सर्वेषा क्षत्राणा वाम ।
अङ्गीकृत्यात्यन्त्वं पित्रा दत्तामाज्ञा शस्त्र वेगात्,
मातुर्मूर्ध्नि च्छेदे[2] बिभ्रद् यो वै हस्ते कम्प नागात् ॥ ३७४ ॥

इदमेवाऽन्यत्र ब्रह्मरूपकम्[2]*इति नामान्तरं लभते ।

इति राम १७०

---

१. पङ्क्तित्रय नास्ति क. प्रतौ । २ ख मातर्मूर्द्धच्छेदे ।

* टिप्पणी—१ ग्रन्थान्तरेषु पञ्चदशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

* टिप्पणी—२ प्राकृतपैंगलम् द्वितीयपरिच्छेद, प० १७४

१७१ अथ पञ्चचामरम्

शरेण नूपुरेण यत्क्रमेण भाविताक्षर,
वसुप्रयुक्तभेदभाग् भवेच्च षोडशाक्षरम् ।
फणीन्द्रराजपिङ्गलोक्तमुक्तमत्र भासुर,
विधेहि मानसे सदैव चारु पञ्चचामरम् ।। ३७५ ।।

यथा–

कठोरठात्कृतिध्वनत्कुठारधारभीषण,
स्वय कृतप्रतिज्ञया सहस्रबाहुदूषणम् ।
समस्तभूमिदक्षिणे मखे मुनीन्द्रतोषण,
नतो महेन्द्रवासिन भृगुन्तु[1] वशभूपणम् ।। ३७६ ।।

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामह-**श्रीरामचन्द्रभट्टमहाकविपण्डितविरचित दशावतारस्तोत्रे** जामदग्न्यवर्णने—

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन-
क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभीषण ।
प्रकामवाम जामदग्न्यनाम राम हैहय-
क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ।। ३७७ ।।

इति पञ्चचामरम् १७१.

एतस्यैव अन्यत्र **नराचम्**[1]*इति नामान्तरम् ।

१७२ अथ नीलम्

वेद-भकारविराजितमद्भुतवृत्तवर,
भामिनि ! भावय चेतसि कङ्कणशोभि करम् ।
पिङ्गलनागसुभाषितमालि विमोहकर,
नीलमिद रसभूमिविभावितवर्णधरम् ।। ३७८ ।।

यथा–

पर्वतधारिणि गोपविहारिणि 'नन्दसुते,
सुन्दरि हारिणि'[2] कसविदारिणि वालयुते ।
पङ्कजमालिनि केलिषु शालिनि मे सुमति-
र्वेणुविराविणि भूम(भ)रहारिणि जातरति ।। ३७९ ।।

इति नीलम् १७२.

---

१. ख. भूगुरु । '–' २. क. प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २७३

१७३ अथ चञ्चला

[1]हारमेरुजक्रमेण यद् विराजते सुकेशि !,
षोडशाक्षरेण यद् विकासित भवेत् सुवेषि ! ।
पिङ्गलेन भापित समस्तनागनायकेन,
तद्धि चञ्चलाभिध कवीन्द्रमोददायकेन ।। ३८० ।।

यथा–

आलि ! रासजातलास्यलीलया सुशोभितेन,
गैरिकादिधातुवन्यभूषणानुभूषितेन ।
गोपिकाविमोहिराववशिकाविनोदितेन,
मन्मनो हृत व्रजाटवीपु केलिमोदितेन ।। ३८१ ।।

यथा वा, भूषणे[1]*—

आलि ! याहि मञ्जुकुञ्जगुञ्जितालिलालितेन,
भास्करात्मजाविराजिराजि[2]तीरकाननेन ।
शोभिते स्थले स्थितेन सङ्गता यदूत्तमेन,
माधवेन भाविनी तडिल्लतेव नीरदेन ।। ३८२ ।।

इति चञ्चला १७३.

एतस्यैवान्यत्र चित्रसङ्गम्*[2]इति नामान्तरम् ।

१७४ अथ मदनललिता

कर्णं कृत्वा कनकरुचिर ताटङ्कसहित,
सविभ्राणा द्विजमथ पुन स्वर्णाढ्यवलया ।
हारौ धृत्वा कुसुमकलितौ हस्तेन रुचिरा,
वेदैः षड्भिर्मदनललिता छिन्ना रसयतिः ।। ३८३ ।।

यथा–

कालिन्दीये तटभुवि सदा[3] केलीसु ललित,
राधाचित्तप्रणयसदन गोपेषु(पीसु) वलितम् ।
सविभ्राण विरुतरुचिर वश करतले,
ध्यायेन्नित्य व्रजपतिसुत चित्तेऽतिविमले ।। ३८४ ।।

इति मदनललिता १७४.

---

१ ख हारमेरुजक्रमेण सद्विराजते पुरेण, यद्विकासित भवेत् सुकेशि षोडशाक्षरेण ।
२ ख रम्यतीरकाननेन । ३ ख. तटपरिसरे ।
* टिप्पणी–१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २७८
२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १४८

१७५. अथ वाणिनी

कुरु नगणं विधेहि जगण ततो भकारं,
जगणमथोऽपि रेफयुतमन्तजातहारम् ।
षडधिकपक्तिवर्णकलित सुवृत्तसार,
कलयत वाणिनीति कविभि कृतप्रचारम् ॥ ३८५ ॥

यथा–

अनवरतं खरांशुतनयाचलज्जलौघे,
तटभुवि[1]सलुप्ते*[1]ऽखिलनृणा विनाशिताघै ।
द्विजजनसाधिताऽनुपमसप्ततन्तुभोक्ता,
पशुपजनैर्हरि. सह वनोदन जघास[2] ॥ ३८६ ॥

इति वाणिनी १७५.

१७६ अथ प्रवरललितम्

यकार पूर्वस्मिन् रचय मगण धारयाशु,
नकार ह्स्त च प्रथय रगण धेहि वासु ।
गुरु पादस्यान्ते विरचय फणीन्द्रेण गीत,
सुहास्ये विश्राम प्रवरललित नाम वृत्तम् ॥ ३८७ ॥

यथा–

तडिल्लोलैर्मेघैर्दिशि दिशि महाध्वानवद्भि-
र्गजानीकाकारैरनवरतमाप सृजद्भि ।
व्रजं भीत[3] वीक्ष्य द्रुतमचलराजं कराग्रे,
दधद्रक्षा कुर्यात् भवजलनिधावत्युदग्रे ॥ ३८८ ॥

इति प्रवरललितम् १७६.

१७७ अथ गरुडरुतम्

द्विजवरमत्र धेहि रगण नकारं तत,
कुरु रगण ततोऽपि रगण पदान्ते मत ।
षडधिकपक्तिवर्णकलित समस्ते पदे,
गरुडरुत समस्तफणिराजचित्तास्पदे ॥ ३८९ ॥

---

१ ख विटपितले लुते। २ क. वतोदनं भुक्ति। ३ ख छन्न।

*टिप्पणी—१ अत्र पादे नगणमनु जगणोपस्थितिर्युक्ता किन्त्वत्र 'सलुप्ते' इति पाठे यगणो जायते तदयुक्तम् ।

यथा–

मृगगणदाहके वननदीसर शोषके,
ग्रसति तरून् विलोलनिजहेतिजिह्वाशतै. ।
भयभरखिन्न[1] डिम्भवदन निरीक्ष्याशु य,
दवदहन पपौ स दिशतान् मनोवाञ्छितम् ॥ ३९० ॥

इति गरुडरुतम् १७७.

१७८. अथ चकिता

देहि भमिह स कर्ण हारौ कुण्डलमबले !,
धारय कुसुम पुष्पद्वन्द्व कामिनि ! तरले ! ।
रूपवलयक पादप्रान्ते स्यादिह चकिता,
षड्सु च विरति. काव्यव्यक्ति स्मरले[2] भविता ॥ ३९१ ॥

यथा–

कामिनि ! सुघने वृन्दारण्ये नन्दय नयनं,
भामिनि ! भवने भव्याकारे भावय शयनम् ।
शीतलपवने धन्ये पुण्ये खञ्जननयने,
त्वामिह कलये तल्पेऽनल्पे कुञ्जरगमने ॥ ३९२ ॥

इति चकिता १७८

१७९ अथ गजतुरगविलसितम्

धारय रौहिणेयमथ पतगवरपतिं,
कारय वह्निमेय-नगणवरगुरुयतिम् ।
षोडशवर्णधारि-गजतुरगविलसित,
भामिनि ! भावयेदमपि मुनियतिरचितम् ॥ ३९३ ॥

यथा

सुन्दरि ! नन्दनन्दनमिह धरणिवलये,
मानिनि ! मानदानमपि[3] न हि न हि कलये ।
भावय भावनीयगुणगणपरिकलित,
चेतसि चिन्तयाशु सखि ! मुनिजनवलितम् ॥ ३९४ ॥

इति गजतुरगविलसितम् १७९.

क्वचिद् इदमेव ऋषभगजविलसितम्[1]* इति नामान्तरेणोक्तम् ।

---

१ ख भिन्न । २ ख सरले । ३ ख. मानगोचरमुमिह न कलये ।

*टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर, अ० ३, का० ९१, छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० का० १४९

१८० अथ शैलशिखा

धेहि भकारमत्र खगराजमवेहि तत,
कारय न ततोऽपि भगणो भगणेन युत ।
नूपुरमेकसंख्यमवधेहि पदान्तगत,
शैलशिखाभिध त्वमवधारय नागकृतम् ॥ ३९५ ॥

यथा–

गोपवधूमयूरवनितानवमेघनिभ,
दानवसङ्घदारणविधावतिसप्रतिभ ।
तुम्बरुनारदादिकमन सरसीषु गज,
वाञ्छितमातनोतु तव गोपपतेस्तनुज ॥ ३९६ ॥

इति शैलशिखा १८०.

१८१ अथ ललितम्

कारय भ ततोऽपि रगण विधेहि नगण,
पक्षिपतिं विधारय पुनस्तथैव नगणम् ।
कङ्कणमन्तग कुरु समस्तपादविरतौ,
धेहि मन सदैव ललिते फणीश्वरकृतौ ॥ ३९७ ॥

अत्रापि सप्तभिर्नवभि प्रायो विरतिर्भवतीति उपदिश्यते ।

यथा–

गोपवधूमुखाम्बुजविकासने दिनपति,
दानवसङ्घमन्तकारिदारणे मृगपति ।
लोकभयापहः सकलवन्द्यपादयुगल,
श कुरुता ममापि च विलोलनेत्रकमल ॥ ३९८ ॥

इति ललितम् १८१

१८२. अथ सुकेसरम्

नगण-सगणौ विधेहि जगण तत पर,
सगण-जगणौ च नूपुरमथोऽनन्तरम् ।
फणिनृपतिभाषित रसविधूदिताक्षर,
कलय हृदये सदा सुखकर सुकेसरम् ॥ ३९९ ॥

यथा–

नरपतिसमूहकण्ठतटघट्टनोद्भवै-
रुडुगणनिभै स्फुलिङ्गनिकरैर्भयानक ।
विलसति नृपेन्द्रशत्रुगणधूमकेतुवत्,
तव रणविधौ स्थित करतले कृपाणक ॥ ४०० ॥

इति सुकेसरम् १८२

१८३. अथ ललना

प्रथम कलय करतलमात्मना ह्यपथा[1],
ललना नगणयुगलवती जभाकलिताम् ।
फणिराजभणितगुण(रु)विराजितामतुला,
कलयाशु सपदि सुजनमानसे वलिताम्[2] ॥ ४०१ ॥

यथा

विदधातु सकलफलमनारत तनुते,
सनकादिनिखिलमुनिनतो वने वनिते ! ।
व्रजराजतनय इह सदा हृदा कलितः,
स चराचरजनतनुमहोदधौ फलित' ॥ ४०२ ॥

इति ललना १८३.

१८४ अथ गिरिवरधृतिः

शरपरिमितमिह नगणमनु कुरुत,
विधुविरचितमथ लघुमपि रचयत ।
फणिपतिरिति किल मधुरमनुवदति,
कलयत निजहृदि गिरिवरधृतिरिति ॥ ४०३ ॥

यथा –

विशिखनिचयहतनिखिलरजनिचर !,
निजभुजयुगवलरणविनिहतखर ! ।
विबुधनिहतभय ! दशमुखकुलहर !,
दशरथनृपसुत ! जय ! जय ! रघुवर ! ॥ ४०४ ॥

इति गिरिवरधृतिः १८४

अचलधृति[1]*इत्यन्यत्र ।

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या षोडशाक्षरस्य पञ्चषष्टिसहस्राणि पञ्चशतानि षट्-त्रिंशदुत्तराणि ६५५३६ भेदास्तेषु कियन्तो लक्षिता, शेषभेदा प्रस्तार्य स्वेच्छया नामानि चारयज्या (विचार्य) लक्षणीया इत्युपदिश्यते ।[3]

इति षोडशाक्षरम् ।

---

१ ख ह्यय ताम् । २. ख वलितम् । ३. पंक्तित्रय नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, का० १५५

,, —२ षोडशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या' ।

अथ सप्तदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

१८५. लीलाधृष्टम्

वृत्ते यस्मिन्नष्टौ पादे कर्णा सयुक्ता सदृश्यन्ते,
हारश्चैक प्रान्ते यस्मिन् वर्णा शैलश्चन्द्रै. शोभन्ते ।
सर्वेषा नागाणामीशेनैतत्सप्रोक्त धेहि स्वान्ते,
भूपालाना चित्तानन्दस्थान लीलाधृष्टाख्य कान्ते ! ॥ ४०५ ॥

यथा–

वारा राशौ सेतुं बद्ध्वा लङ्कायामातङ्कौघ दास्यन्,
नानावर्णै सुग्रीवाद्यै लङ्काया[1] भिन्न दुर्गं कुर्वन् ।
सीताचित्ते प्रेमाधिक्यै लोहै कीलैर्ग्राव्णीवोत्कीर्णा,
काकुत्स्थ कल्याण कुर्याद् युष्माक क्रव्यादाब्धि तीर्ण ॥ ४०६॥

इति लीलाधृष्टम् १८५.

१८६ अथ पृथ्वी

पयोधरविराजिता करसुवर्णवत्कङ्कणा,
सुगन्धकुसुमोज्ज्वला सरसहारसशोभिनी ।
सुरूपयुतकुण्डला कनकरावसुनूपुरा,
वसुप्रथितसस्थितिर्जगति भाति पृथ्वी सदा ॥ ४०७ ॥

यथा–

हरिर्भु जगनायक निजगिरिं भवानीपति ,
गजेन्द्रममराधिपो निजमरालमब्जासन ।
द्विजा विबुधकूलिनी जगति जायमाने नृप [1],
त्वदीययशसोज्ज्वले किल गवेषयन्त्यातुरा ॥ ४०८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

अनेन नयताऽधुना महदुलूखल शाखिनो,
रयातियुगमन्तरा ककुभयोरिह क्रामता ।
इतीरयति केचन श्रदधुराशु गोपान्हृदा,
पुरो विहरति स्वके शिशुकदम्बके नापरे ॥ ४०९ ॥

इत्यादि शतशो निदर्शनानि काव्येषु ।

इति पृथ्वी १८६

---

१. ख. लकाया ।

१८७ अथ मालावती

द्विजविलसिता पयोधरविराजिता हारिणी,
सरसकरयुक्सुवर्णवलया लसत्कुण्डला ।
विरुतयुतनूपुरा मुनिदिगीशसङ्ख्याक्षरा,
भुजङ्गपतिभाषिता जगति भाति मालावती ॥ ४१० ॥

यथा–

वनचरकदम्बकैरपरसिन्धुशोभाधरै,
करजदशनायुधैर्जलधिनीरमाच्छादयन् ।
रघुपतिरुपागत सखि ! निशाचराधीश्वर,
रणभुवि निहत्य दास्यति तवातुल सम्मदम् ॥ ४११ ॥

इति मालावती १८७

मालाधर इति पिङ्गले[1]* नामान्तरम् ।

१८८. अथ शिखरिणी

सुरूप स्वर्णाढ्य श्रवणमधिताटङ्कयुगल,
सदा सविभ्राणा द्विजमथ सुपुष्पाढ्यवलयौ ।
सुरूप हस्ताग्र तदनु दधती राजति रसै,
शिवैश्छिन्ना नागप्रथितमहिमेय शिखरिणी ॥ ४१२ ॥

यथा–

दिशि स्फारीभूतै कविनिकरगीतैस्तव रण-
स्तवैर्वात्याचक्रैर्द्विगुणितरय क्षोणितिलक ।
प्रतापो दावाग्निस्तव खरकरस्पर्शकठिनो,
विपक्षक्षोणीन्द्र प्रथितवनमत्र प्रभवति[1] ॥ ४१३ ॥

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये—

यदा कसादीना निधनविधये यादवपुरी,
गत श्रीगोविन्द पितृभवनतोऽक्रूरसहित ।
तदा तस्योन्मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
पपात श्रीराधाकलिततदसाधारणरति ॥ ४१४ ॥

---

१. ख प्रदति ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपैंगलम्, द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १७८

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

विना तत्तद्वस्तु क्वचिदपि च भाण्डानि भगवत्,
प्रसादान्ताऽभूवन् प्रतिभवनमित्यद्भुतमभूत् ।
भयोद्यद्वैलक्ष्याऽवितथवचसस्तच्चरणयो-
र्निपेतुस्ता हस्ताहृतवसनमुक्तामणिगणा ॥ ४१५ ॥

यथा वा, रूपगोस्वामिकृत-हंसदूतकाव्ये[१]*—

दुकूलं बिभ्राणो दलितहरितालद्युतिहरं,
जपापुष्पश्रेणीरुचिरुचिरपादाम्बुजतलः ।
तमालश्यामाङ्गो दरहसितलीलाञ्चितमुखः,
परानन्दाभोगः स्फुरतु हृदि मे कोऽपि पुरुषः ॥ ४१६ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरीस्तोत्रे[२]*—

दृशा द्राघीयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा,
दवीयांसं दीनं स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनाऽयं धन्यो भवति न च ते हानिरियता,
वने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकरः ॥ ४१७ ॥[१]

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशो निदर्शनानि द्रष्टव्यानि ।

इति शिखरिणी १८८

१८९ अथ हरिणी

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा ।
विरुतललितं संबिभ्राणं[२] पदान्तगनूपुरं,
रसजलनिधिश्छिन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥ ४१८ ॥

यथा–

सपदि कपयः शौर्याविशस्फुरत्करजद्विजा,
गिरिवरतरूनुन्मृद्नन्तस्तथोत्पथगामिनः ।
अहमहमिका कृत्वा वारानिधेरतिलङ्घने[३],
तटभुवि गता संप्रेक्षन्ते मुखानि परस्परम् ॥ ४१९ ॥

---

१. क. प्रतौ नास्तीदम्पद्यम् । २ ख. संबिभ्राणा । ३. ख. लघते ।

*टिप्पणी—१ श्रीरूपगोस्वामिकृत-हंसदूतम् प्रथमपद्यम्
२ शंकराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरी पद्य ५७

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हसितवदने दृष्ट्वा चेष्टा सुतस्य सविस्मये,
यमतुरथ ते गोपापत्यौ तदद्भुतमन्यत ।
तदनु कतिचिद् बाला मात्रे बलेन सहोचिरे,
मृदमनुपद कृष्ण प्राशीदिति प्रतिभाजुष' ॥ ४२० ॥

यथा वा, लक्ष्यलक्षणयुक्त तत्रैव—

ग्रहिलहृदयोदञ्चत्तत्तद्गतिप्रतिभाजुषा,
त्रिभुवनपतिप्रत्यासत्तिस्फुरत्पुलकस्पृशाम् ।
शिथिलकबरीबन्धस्रस्तस्रजा हरिणीदृशा,
न समरसत कायप्रायो लघुर्गुरुरप्यभूत् ॥ ४२१ ॥

श्लेषार्थं ऊहनीय । यथा वा– 'अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे'*।' इत्यादि रघुवशे महाकाव्यादिसत्कविप्रबन्धेषु च भूमनिदर्शनानि ।

इति हरिणी १८९

१९० अथ मन्दाक्रान्ता

कर्णौ पुष्पद्वितयसहितौ गन्धवद्धस्तयुक्ता,
हार रूप तदनु वलय स्वर्णसञ्जातशोभम् ।
सविभ्राणा विरुतललितौ नूपुरौ वा पदान्ते
मन्दाक्रान्ता जयति निगमैश्छेदयुक्ता रसैश्च ॥ ४२२ ॥

यथा–

सिन्धोष्पारे दशमुखपुरी वानरास्तत्र दूता,
पम्पाशम्पाशतयुतचलन्नीलमेघावलीकाः ।
वास केकाकवलिततटे मादृशामृष्यमूके,
दैवो वाम पुनरयमतो भावि किं किं न जाने ॥ ४२३ ॥

---

*टिप्पणी— १ अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे,
नृपतिककुद दत्वा यूने सितातपवारणम् ।
मुनिवनतरुच्छायां देव्या तया सह शिश्रिये,
गलितवयसामिक्ष्वाकूणामिद हि कुलव्रतम् ॥
[रघुवश, स० ३, प० ७०]

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हृत्वा ध्वान्तस्थितमपि वसुप्रक्षिपत् पक्ष्म[राजि-]
स्पन्द विन्दन् व्रजति कुहचित् कैश्चनालक्ष्यमाणः ।
छिद्राणि द्राक् कलयति शयाशक्यशिक्ष्यस्थभाण्डे[1],
निद्रा भक्त्वा द्रवति जवतस्ताडयत् सुप्तबालात् ।। ४२४ ।। (?)

इति मन्दाक्रान्ता १९०.

१९१ अथ वंशपत्रपतितम्

कारय भ ततोऽपि रगणं रचय न-भगणौ,
धेहि नकारमेरुवलयान् तदनु सुललितान् ।
व्योमसुधाशुभि. कुरु हयै तदनु च विरति.[2],
चेतसि वंशपत्रपतित रचय फणिकृतम् ।। ४२५ ।।

यथा–

जानकि ! नैव चेतसि कृथा रजनिचरमतिं,
राघवदूततामुपगत कलय हृदि निजे ।
जल्पति मारुताविति तदा जनकतनयया-
दत्त[3] न मुद्रिकाऽपि कलिता जलपिहितदृशा ।। ४२६ ।।

यथा वा–

'सम्प्रति लब्धजन्म शनकै कथमपि लघुनि ।' इति किरातार्जुनीये[1]*।

इति वंशपत्रपतितम् १९१

स्त्रीलिङ्गमिति केचित् । वंशवदनम् इति शाम्भवे तस्यैव नामान्तरमुक्तम् ।

१९२ अथ नर्दटकम्

कुरु नगण तत कलय ज वद भ च ततो,
जगणयुग ततो रचय कारय मेरुगुरू ।
फणिपतिभाषित मुनिविधूदितवर्णधर,
कविजनमोहकं हृदि विधारय नर्दटकम् ।। ४२७ ।।

---

१. ख. भारो । २ ख विरतिं । ३. ख. हन्त ।

*टिप्पणी—१ सम्प्रति लब्धजन्म शनकै· कथमपि लघुनि,
क्षीणपयस्युपेयुपि भिदा जलधरपटले ।
खण्डितविग्रहं बलभिदो धनुरिह विविधा,
पूरयितु भवन्ति विभवशिखरमणिरुच. ।।४३।।
[किरातार्जुनीयम् स० ५, प० ४३]

यथा–

अनुलवमूर्च्छया क्षपितदेहलता गलता,
नयनजलेन दूपितमुखी[1] तव भूमिसुता ।
रघुवरमुद्रिका हृदि निधाय सुखातिशयै-
र्मुकुलितलोचना क्षणमभूदमृतस्नपिता ।। ४२८ ।।

यथा वा, श्रीभागवते दशमस्कन्धे वेदस्तुतौ[1]*—

जय ! जय ! जह्यजामजितदोषगृहीत[2]गुणाम् । इत्यादि ।

इति नर्द्दटकम् १६२.

अथ कोकिलकम्

मुनिरसवेदैर्विरतिर्यदि कोकिलक तदेदमेव भवेत् ।
तदुदाहरण लक्षणवाक्ये ज्ञेय सुधीभिरिति ।। ४२९ ।।

यथा, छन्दोमञ्जर्याम्[2]*—

लसदरुणेक्षण मधुरभाषणमोदकर,
मधुसमयागमे सरसकेलिभिरुल्लसितम् ।
अलिललितद्युति रविसुतावनकोकिलक,
ननु कलयामि त सखि ! सदा हृदि नन्दसुतम् ।। ४३० ।।

गणविरचना सैव, विरतिकृत एवात्र भेद इति नामान्तरम् ।

इति कोकिलकम् ।

१६३ अथ हारिणी

कर्णे कृत्वा कनकललित ताटङ्कसराजित,
सविभ्राणा द्विजमथ रुतस्वर्णाचितौ नूपुरौ ।
पुष्प हारी सरसवलय सधारयन्ती मुदा,
वेदैः षड्भिर्विरचितयतिः शैलोदिता हारिणी ।। ४३१ ।।

---

१. ख. दूषितमुखा । २. ख गृभीतगुणाम् ।

* टिप्पणी—१ जय जय जह्यजामजितदोषगृभीतगुणा
त्वमसि यदात्मना समवरुद्धसमस्तभाग ।
अगजगदोकसामखिलशक्त्यवबोधक ते
क्वचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः ।।
[भागवत-दशमस्कन्ध, अ० ८७, श्लो० १४]

२ छन्दोमजरी, द्वि० स्त० का० १६७ ।

यथा–

बद्ध्वा सिन्धू नगरमिह मे राम. समायात्ययं,
रोद्धु [1] श्रुत्वा दशमुख इति प्रीतोऽभवत्तत्क्षणम् ।
बाह्वो कण्डू गमयितुमना पश्चान्नर राघव,
श्रुत्वाऽवज्ञाकलुषितमना लङ्केश्वरोऽभूत्तदा ।। ४३२ ।।

इति हारिणी १९३.

१९४. अथ भाराक्रान्ता

आदौ कुर्यान् मगण-भगणौ ततो नगणो मत,
रेफ दद्यात्तदनुरुचिर विधेहि कर ततः ।
मेरु हार विरचय तत फणीश्वरभाषिता,
भाराक्रान्ता जलनिधिरसैर्विरामयुता मता ।। ४३३ ।।

यथा–

सिन्धोर्बन्ध रघुवरकृत निशम्य दशाननो,
दध्यौ मूद्ध्र्ना [2] सपदि बहुधा व्यधाच्च विधूननम् ।
शङ्के च्योतन्मणिकपटतो रघूत्तमरागिणी,
सत्यामाख्या जगति तनुते तदा कमलालया ।। ४३४ ।।

इति भाराक्रान्ता १९४

१९५ अथ मतङ्गवाहिनी

हारमेरुजक्रमेण जायते यदा विराजिता,
शैलभूमिसख्यकाक्षरैस्तथा भवेद् विकासिता ।
पण्डितावलीविनोदकारिपिङ्गलेन भाषिता,
जायते मतङ्गवाहिनी गुणावलीविभूषिता ।। ४३५ ।।

यथा–

नौम्यह विदेहजापति शरासनस्य 'भञ्जकं,
वालिजीवहारिण विभीषणस्य राज्यसञ्जकम् ।
लक्ष्यवेधने तथा सदा शरासनस्य' [3] धारिण,
रावणद्रुह कठोरभानुवशदीप्तिकारणम् ।। ४३६ ।।

इति मतङ्गवाहिनी १९५.

---

१ ख. योद्धुम् । २ ख मूर्द्धन । ३, '–' चिह्नगतोऽश' क. प्रतौ नास्ति ।

१९६. अथ पद्मकम्

रचय नगण स तस्यान्ते धेहि पश्चान्मकार,
तदनु चरणे तस्य द्वन्द्व कारयाशु द्विहारम् ।
समुनिविधुभि· पादे छिन्न पिङ्गलेन प्रयुक्त,
कलय हृदये छन्द श्रेष्ठ पद्मक वृत्तसारम् ॥ ४३७ ॥

यथा–

अयमिह[1] पुर पारावार चेतसा गम्यपार,
सपदि सहित पाद सङ्घैर्भीषणो वीचिहस्तै. ।
कपिगणमहासेना चेय पारमुत्प्रेक्षमाणा,
रचय यदिह न्याय शीघ्र वानराणा पते[2] तत् ॥ ४३८ ॥

इति पद्मकम् १९६

१९७ अथ दशमुखहरम्

जलनिधिपरिमित नगणमिह विरचय,
तदनु च शरपरिमितलघुमपि कलय ।
सकलफणिगणनरपतिरिति हि वदति,
सखि ! कलय निजहृदि दशमुखहरमिति ॥ ४३९ ॥

यथा–

जय ! जय ! रघुवर ! जलधितरणनिपुण !,
दशरथसुत ! विबुधनिकरकथितगुण ! ।
सुरविमतदशवदनकुलकदनकर !
सुरगणनुतचरण ! शमिह मम वितर ॥ ४४० ॥

इति दशमुखहरम् १९७

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या सप्तदशाक्षरस्य एक लक्ष एकत्रिंशत् सहस्राणि द्विसप्ततिश्च १३१०७२ भेदास्तेषु कियन्त प्रोक्ता, शेषभेदा प्रस्तार्य समुदाहरणीया, इत्यलमतिविस्तरेण[3]* ।

इति सप्तदशाक्षरम् ।

---

१. ग प्रथममपि । २ ख पते । ३. पङ्क्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी १—सप्तदशाक्षरवृत्तस्यावशिष्टप्राप्तभेदा पञ्चमपरिशिष्टेऽवलोकनीया· ।

अथ अष्टादशाक्षरम्

तत्र–

१६८. अथ लीलाचन्द्र

अश्वै सख्याता यस्मिन् वृत्ते पादे पादे शोभन्ते कर्णा,
पश्चाद् वेदै सख्याता हारा योगैश्चन्द्रैस्सयुक्ता वर्णा ।
लीलाचन्द्राख्य वृत्त प्रोक्त नागानामीशेनैतत् कान्ते !,
रन्ध्राङ्कैर्वर्णे सविच्छिन्न धेहि स्वान्ते भास्वन्नेत्रान्ते ॥ ४४१ ॥

यथा–

हालापानोद्घूर्णन्नेत्रान्तस्तुच्छीकुर्वत्कैलास भासा,
नीलाम्भोजप्रोद्यच्छोभावत् स्कन्ध द्वन्द्वे सराजद्वासाः ।
मालां वक्ष पीठे बिभ्राणो न्यक्कुर्वन्ती कान्त्यालीन् तूर्णं,
तालाङ्कस्सर्वेषां लोकाना कल्याणौघ दद्यात् सम्पूर्णम् ॥४४२॥

इति लीलाचन्द्र १६८

१६९ अथ मञ्जीरा

पूर्व [१] कर्णत्रित्व कारय पश्चाद्धेहि भकार दिव्य,
हार वह्निप्रोक्त धारय हस्त देहि मकार चान्ते ।
रन्ध्रैर्वर्णैर्विश्राम कुरु पादे नागमहाराजोक्त,
मञ्जीराख्य वृत्त भावय शीघ्र चेतसि कान्ते ! स्वीये ॥ ४४३ ॥

यथा–

सिन्धुर्गम्भीरोऽय राजति गन्तार कपयस्तत्पार,
शैले शैले केकी कूजति वातोऽय मलयाद्रेर्वाति ।
लङ्काया वैदेही तिष्ठति कामोऽय पुरत. सज्जास्त्र,
सामग्रीय तावल्लक्ष्मण सर्वं पूर्वकृतस्याधीनम् ॥ ४४४ ॥

यथा वा, भूषणे[१]*–

प्रौढध्वान्ते गर्जद्वारिदधाराधारिणि काले गत्वा,
त्यक्त्वा प्राणानग्रे कौलसमाचारानपि हित्वा यान्ती ।
कृत्वा सारङ्गाक्षी साहसमुच्चै. केलिनिकुञ्ज शून्य,
दृष्ट्वा प्रागत्राण भावि कथं वा नाथ ! वद प्रेयस्या ॥४४५॥

इति मञ्जीरा १६९.

---

१ ख पूर्णम् ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६४

२००. अथ चर्चरी

कुण्डल दधती सुरूपसुवर्णरावरसाहित,
नूपुर कुचयुग्मसङ्गतदिव्यहारविभूषिता ।
हस्तयुक्तसुरूपकङ्कणभासिता फणिभाषिता,
चर्चरी कविमानसे परिभाति भावुकदायिनी ॥ ४४६ ॥

यथा–

रासकेलिरसोद्धतप्रियगोपवेष! जगत्पते !
दैत्यसूदन ! भोगिमर्द्दन ! देवदेव ! महामते !
कंसनाशन ! वारिजासनवन्द्यपाद ! रमापते !,
चिन्तयामि विभो ! हरे ! तव पादुके त्रिदशैर्नुते ॥ ४४७ ॥

[1]यथा वा, अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—

मन्दहासविराजित मुनिवृन्दवद्यपदाम्बुज,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारु लसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुङ्कुमपङ्करूषितवक्षस,
नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करि ॥ ४४८ ॥

[2]यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके—

कल्पपादपनाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे,
रत्नसङ्कृतान्तरीपसुनीपराजि विराजते,
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥ ४४९ ॥

यथा वा, भूषणे[3]*—

कोकिलाकलकूजित न शृणोषि सम्प्रति सादरं,
मन्यसे तिमिरापहारि सुधाकर न सुधाकरम् ।
दूरमुज्झसि भूषण विकलासि चन्दनमारुते,
कस्य पुण्यफलेन सुन्दरि ! मन्दिर न सुखायते ॥ ४५० ॥

---

१. २ नन्दनन्दनाष्टक-सुन्दरीध्यानाष्टकञ्चेति पद्यद्वय नास्ति क प्रतौ ।

३ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २९६

यथा वा, मार्कण्डेयमहामुनिविरचितचन्द्रशेखराष्टके—[प्रथम पद्यम्]

रत्नसानुशरासन रजतादिशृङ्ग निकेतन,
सिञ्जिनीकृतपन्नगेश्वरमच्युतानलसायकम् ।
क्षिप्रदग्धपुरत्रयं त्रिदशालयैरभिवन्दित,
चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यम ॥ ४५१ ॥

यथा वा, शङ्कराचार्यकृत-नवरत्नमालिकास्तोत्रे[1]—

कुन्दसुन्दरमन्दहासविराजिताधरपल्लवा-
मिन्दुबिम्बनिभाननामरविन्दचारुविलोचनाम् ।
चन्दनागुरुपङ्करूषिततुङ्गपीनपयोधरा,
चन्द्रशेखरवल्लभा प्रणमामि शैलसुतामहम् ॥ ४५२ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रशो निदर्शनानि अनुसन्धेयानि ।

इति चर्चरी २०० इति द्वितीय शतकम् ।

२०१ अथ क्रीडाचन्द्रः

यकार रसेनोदितं सर्वपादेषु सधेहि युक्त,
तथा धेहि पादे नगाधीशशीताशु[2]सख्यातवर्णम ।
कवीनामधीशेन नागाधिराजेन सभाषितं तत्,
मुदा क्रीडया शोभित चन्द्रसज्ञ हृदा धेहि[3] वृत्तम् ॥ ४५३ ॥

यथा— मुनीन्द्रा पतन्ति स्म हस्त नृपा कर्णयुग्मे तथाधु,
सभाया नियुक्ता दधु कम्पमुच्चैस्तदा स्तम्भसङ्घा ।
सुराणा समूहेन नाश्रावि लोके तथान्योन्यवाच[4]-
स्तदा रामसभिन्नबाणासनाढ्यातपूर्णो[5] त्रिलोके ॥ ४५४ ॥

यथा वा, भूषणे[टि१]—

भ्रमन्ती धनुर्मुक्तनाराचधारानिरुद्धे समस्ते,
नभः प्राङ्गणे पक्षिवाय्वो प्रयाते निरन्ते प्रशस्ते ।

---

१ नवरत्नमालिकाया पद्य क. प्रतौ नास्ति । २. 'शीताशु' क प्रतौ नास्ति । ३ धेहि । ४ ख. वाणी । ५ ख सनाद्यातपूर्णे ।

टिप्पणी—१ रा प्रा वि प्र ग्र० स० १४२५० स्थ उपरोक्तपद्य नास्ति, किन्त्वस्य स्थाने निम्नोद्धृत पद्य वर्तते ।

'पदान्यासनम्रीकृतक्षोणिचक्रत्रुटन्मर्मकूर्मं
भ्रमत्तुङ्गखङ्गाङ्कविक्षेपकौत्रेरवैर च दर्पम् ।
भुजङ्गेशनि· श्वासवातोच्चलच्चक्रवालाचलेन्द्रं,
शिवायास्तु चन्द्रेन्दुचूडामणेस्ताण्डवाडम्बर व· ॥२९६॥

[वाणीभूषणम्, द्वि अ प २९८]

तथा चण्डगाण्डीवबाणावलीनीचरक्षाविरक्षः[1],

बभूवाङ्गराजो यथा न स्थितोऽसौ विपक्षः स्वपक्षः ॥ ४५५ ॥

इति क्रीडाचन्द्र २०१.

२०२ अथ कुसुमितलता

कर्णौ ताटङ्कप्रथितयशसो[2] धारयन्ती द्विज च,

प्रोद्यद्रूपाढ्य कनककलित कङ्कण चादधाना ।

पुष्पाक्तौ हारौ तदनु दधती राववन्नूपुरौ च,

छिन्ना बाणार्णे कुसुमितलता स्याद् रसैर्वाजिभिश्च ॥४५६॥

यथा–

घूर्णन्नेत्रान्ते हलकलनया[3] भिन्नपातालमूल,

तालाङ्के गाङ्गे क्षिपति रभसान्नागसाङ्क प्रवाहे[4] ।

हर्म्याणा सङ्घ कुरुभिरभितश्चूर्णित घूर्णित च,

क्रीडार्थं बालैरिव विरचिते[5] क्रीडित शैलराजे ॥ ४५७ ॥

यथा वा–

'गौड पिष्टान्न दधि सकृशर निर्जल मद्यमम्लम् ।' इत्यादि **वाग्भटे** चिकित्साग्रन्थे ।[1]*

इति कुसुमितलता २०२.

२०३ अथ नन्दनम्

रचय नकारयुक्त-जगण विधेहि पश्चाच्च भ,

कुरु जगण ततोऽपि रगण विधेहि रेफ तत ।

शिवरचिता विधेहि विरति तथा हयैर्भासिता,

कविजननन्दन कुरु सखे ! सदा हृदा नन्दनम् ॥ ४५८ ॥

यथा–

तव यशसा त्रिलोकवलये वलक्षतामागते,

बहुलनिशास्वपि प्रकटिताश्चकोरकैश्चञ्चव ।

जगति पय प्रवाहमतिभि सुख मरालैर्वृत,

सपदि गुहा गता हिमधिया मुनीश्वरा दुर्बला. ॥ ४५९ ॥

---

१ ग. विलक्षो । २. ख यशसो । ३ ख हलकलजया । ४ ख प्रवाहो । ५. ख विरचित कौतुकात् ।

*टिप्पणी—१ 'ग्राम्याब्जानूप पिशितमबल शुष्कशाक तिलान्न,
गौड पिष्टान्न दधि सलवण विज्जल मद्यमम्लम् ।
धानावल्लूर समशनमथो गुर्वसात्म्य विदा हि
स्वप्न चाजाग्री त्ययथुगदवान् वर्जयेन्मैथुन च ॥
[वाग्भट—अष्टाङ्गहृदय, अ० १७, श्लो० ४२]

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्[1]*—

तरणिसुतातरङ्गपवनै सलीलमान्दोलितं,
मधुरिपुपादपङ्कजरज· सुपूतपृथ्वीतलम् ।
मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसस्मारक,
क्षितितलनन्दन व्रज सखे ! सुखाय वृन्दावनम् ॥ ४६० ॥

यथा वा, "अहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायोधनम्' । इत्यादि भट्टिकाव्ये[2]* ।

इति नन्दनम् २०३.

२०४. अथ नाराचः

रचय न-युगल समस्ते पदे वेदसख्याकृत,
तदनु च कलयाशु पक्षिप्रभु भासमान पदे ।
वसुहिमकिरणप्रयुक्ताक्षरोद्भासमान हृदा,
परिकलय फणीन्द्रनागोक्त-नाराचवृत्त मुदा ॥ ४६१ ॥

यथा—

सुरपतिहरितो गलत्कुन्तलच्छाद्यमान मुख,
सपदि विरहजेन दु खेन मित्रस्य पाण्डुप्रभम् ।
अनुहरति घनेन सञ्छादित· किञ्चिदुद्यत्प्रभ,
समुदितवरमण्डलोऽय पुर शीतरश्मिः प्रिये ! ॥ ४६२ ॥

यथा वा, 'रघुपतिरपि तात वेदो विशुद्धो प्रगृह्य प्रियाम् ।' इत्यदि रघुवशे[3]* ।

षोडशाक्षरप्रस्तारे नराच , अत्र तु नाराच इत्यनयोर्भेद ।

इति नाराचः २०४.

मञ्जुला इत्यन्यत्र ।

---

१. पक्तिरियं नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छदोमञ्जरी, द्वि० स्तवक, का० १७५ या उदाहरणम्

,, २ अहृत धनेश्वरस्य युधि यः समेतमायो धन,
तमहमितो विलोक्य विबुधै कृतोत्तमाऽऽयोवनम् ।
विभवमदेन निह्नुतह्रियाऽतिमात्रसम्पन्नक,
व्यथयति सत्पथादधिगताऽथवेह सपन्न कम् ॥
[भट्टिकाव्य, सर्ग १०, प० ३७]

,, ३ रघुपतिरपि जातवेदोविशुद्धा प्रगृह्य प्रिया,
प्रियसुहृदि विभीषणे सगमय्य श्रिय वैरिणः ।
रविसुतसहितेन तेनानुयात. स सौमित्रिणा,
भुजविजितविमानरत्नाधिरूढ. प्रतस्थे पुरीम् ॥
[रघुवश, स० १२, प० १४]

२०५. अथ चित्रलेखा

कर्णं कृत्वा कनकसुललित कुण्डलप्राप्तशोभं,
सविभ्राणा द्विजमथ च करं कङ्कणेन प्रयुक्तम् ।
पुष्पं हारद्वयमथ दधती रावबन्नूपुरौ च,
वेदैरश्वैर्मुनिरचितयतिर्भासते चित्रलेखा ।। ४६३ ।।

यथा–

श्रीमद्राजन्नयमिह गगने त्वत्प्रतापाहितस्य,
छिद्रस्येन्दुः कलयति सुषमां मुद्रणे सीसकस्य ।
ताराशोभा विदधति वियतो हारितस्य प्रतापै-
स्फोटस्यैषा दिगपि किमु हरे कुङ्कुमैर्भाति कीर्णा ।।४६४।।

इति चित्रलेखा २०५.

२०६ अथ भ्रमरपदम्

कारय भं ततोऽपि रगणमथ नगणयुगलं,
धेहि नकारकं तदनु च विरचय करतलम् ।
भासितमक्षरैर्गिरिविरहिमकरपरिमितैः,
पिङ्गलभाषितं भ्रमरपदमिदमतिललितम् ।। ४६५ ।।

यथा–

नीलतमं पटाधिगतमिदं[1]मुडुगणमखिलं,
मौक्तिकमेप कालनरपतिरतिललिततरम् ।
वासवदिग्गतद्विजपतय इह कलितकरं,
यच्छति सोऽपिताननुकलयति निजकरगणैः ।। ४६६ ।।

इति भ्रमरपदम् २०६.

२०७ अथ शार्दूलललितम्

आर्दौ मं सततं विधेहि तदनु ज्ञेयं सरसिजं,
तत्पश्चाद् विरचय जं कलय सं कर्णं तदनुगम् ।
तस्यान्ते कुरु रूपहस्तमतुलं जानीहि सरसं,
नव्यप्रेमभरालसे सुललिते शार्दूलललितम् ।। ४६७ ।।

---

१ ख मिम ।

यथा–

श्रीगोविन्दपदारविन्दमनिशं वन्देऽतिसरस,
मायाजालजटालमाकुलमिद मत्वाऽतिविरसम् ।
वृन्दारण्यनिकुञ्जसञ्चरणत. सञ्जातसुषमं,
[1]दम्भोल्यकुशसध्वजं सरसिजप्रोद्भासमसमम् ॥ ४६८ ॥

इति शार्दूलललितम् २०७.

२०८. अथ सुललितम्

कलय नयुगल पश्चाद्वक्र तथातिमनोहर,
तदनु विरचयेः कर्णौ पुष्पान्वितौ भगण ततः ।
वितनु सुललित पक्षीन्द्र वा विलासिनीसुन्दर,
मुनिविरतियुत वेदैश्छिन्न हयैश्च विभावितम् ॥ ४६९ ॥

यथा–

त्रिजगति जयिनस्ते ते भावा नवेन्दुकलादय.,
परिणतिमधुरा· काम सर्वे मनोरमतां गता ।
मम तु तदखिल शून्यारण्यप्रभ सखि ! जायते,
मुररिपुरहित तस्माद् भद्रे समाह्वय त हरिम् ॥ ४७० ॥

इति सुललितम् २०८.

२०९ अथ उपवनकुसुमम्

सलिलनिधिपरिमित-नगणमिह विरचय,
तदनु च रसनिगदितलघुमपि कलय ।
कविजनहितसकलफणिपतिकथितमिह,
हृदि कलय सुललितमुपवनकुसुममिति ॥ ४७१ ॥

यथा–

असितवसनवरललितहलमुशलधर !,
निजतनुरुचिविजितपुरमथनगिरिवर ! ।
द्विविदकपिवरकदनकर ! नवरुचिचय !,
जय ! जय ! कुरुनरपतिनगरजनितभय ! ॥ ४७२ ॥

इति उपवनकुसुमम् २०९.

---

१ ख दम्भोल्यंकुशकेतनाब्जनुचिर सच्छोभमसमम् ।

[1]अत्रापि प्रस्तारगत्या अष्टादशाक्षरस्य लक्षद्वय द्वाषष्टिसहस्राणि चतुश्चत्वारिंशदुत्तर च शत २६२१४४ भेदास्तेषु कियन्तो भेदा प्रोक्ता:, शेषभेदास्तूह्या. सुधीभिरिति दिक् ।*[1]

इति अष्टादशाक्षरम् ।

अथ एकोनविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२१०. अथ नागानन्द

अश्वाना सख्याका यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे सदृश्यन्ते कर्णा,
पश्चाद् वाणै संप्रोक्ता हारा युक्ता रन्ध्रैर्भूम्या चोक्ता वर्णा: ।
सर्वेषा नागानामीशेनैतत् प्रोक्तं नागानन्दाख्यं वृत्त,
विश्वेषां यच्छ्रुत्वा समज्जत्यानन्दानां वारा राशौ चित्तम् ॥ ४७३ ॥

यथा–

जैनप्रोक्ताना धर्माणां सर्वेभ्यो लोकेभ्य शिक्षा सदास्यन्,
यज्ञाना हिंसाङ्गाना तन्मूलानां वेदानां वा निन्दा कुर्वन् ।
सर्वस्मिस्त्रैलोक्ये भूताना रक्षारूपा धर्मनिवाधास्यन्,
कल्याण कुर्यात् सोऽय गोविन्द क्रीडार्थं बौद्धाभिख्या गृह्णन् ॥४७४॥

इति नागानन्द २१०.

२११ अथ शार्दूलविक्रीडितम्

कर्णं कुण्डलपुष्पगन्धललित हार च वक्षोरुहे,
हस्त कङ्कणयुग्मसुन्दरतर शब्दोल्लसन्नूपुरौ ।
रूपाढ्या रसना तथैव च दधत्तीक्ष्णाशुविच्छेदित,
श्रीमत्पिङ्गलभाषित विजयते शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ४७५ ॥

यथा -

ते राजन्नतिचण्ड[2]कीर्त्तितटिनीडिण्डीरपिण्डाकृति-
र्ब्रह्माण्डातिलसत्करण्डनिहितश्वेताण्डजप्रोज्ज्वलम् ।
तन्वीगण्डविपाण्डुरद्युतिपुरस्फूर्जद्विधोर्मण्डल,
राहोर्मण्टक(न)खण्डमेतदुदयत्याखण्डलाशामुखे ॥ ४७६ ॥

---

१ पश्चिनश्यं नास्ति क प्रतौ । २ ग राजन्ने परिपूर्णकीर्ति ।

*टिप्पणी—१ अष्टादशाक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषूपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या ।

यथा वा, **ममैव पाण्डवचरिते** अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्—

ज्ञान यस्य ममात्मजादपि जना. शस्त्रास्त्रशिक्षाधिक,
पार्थ. सोऽर्जुनसञ्ज्ञकोऽत्र सकलै. कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवची गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ।। ४७७ ।।

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

उन्मीलन्मकरध्वजव्रजवधूहस्तावधूताञ्चल-
व्याजोदञ्चितबाहुमूलकनकद्रोणीक्षणादीक्षणे ।
उद्यत्कण्टककैतवस्फुटजनानन्दादिसख्यामित-
ब्रह्माद्वैतसुखश्चिरः स भगवाश्चिक्रीड तत्कन्दुकैः ।। ४७८ ।।

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रश उदाहरणानि प्रत्युदाहरणत्वेन[1] द्रष्टव्यानि ।

इति शार्दूलविक्रीडितम् २११.

२१२. अथ चन्द्रम्

प्रतिपदमिह कुरु नगणत्रितयमथ कलय,
जगणमिह नगणयुगल तदनु च विरचय ।
चरणविरतिमनु रुचिर कुसुममथ वितनु,
सकलफणिनृपतिकृत-चन्द्रमिति शृणु सुतनु ! ।। ४७९ ।।

यथा -

नवकुलवनजनितमन्दमरुदिह वहति,
किरणमनुकलयति विधुस्त्रिजगति सुमहति ।
सपदि सखि ! मम निजहित वचनमनुकलय,
समनुसर वनगतहरिं तनुमतिसफलय ।। ४८० ।।

यथा वा, भूषणे[1]*—

अनुपहतकुसुमरसतुल्यमिदमधरदल-
ममृतमयवचनमिदमालि विफलयसि चल ।
यदपि यदुरमणपदमीश मुनिहृदि लुठति,
तदपि तव रतिवलितमेत्य वनतटमटति ।। ४८१ ।।

इति चन्द्रम् २१२.

चन्द्रमाला इत्यस्यैव नामान्तर पिङ्गले*[2] ।

---

१ ख 'प्रत्युदाहरणत्वेन' नास्ति ।

टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३००
टिप्पणी—२ प्राकृतपैंगलम्, परिच्छेद २, पद्य १९०

२१३. अथ धवलम्

द्विजवरगणमिह रचय जलनिधिपरिमित,
तदनु कलय सगणमथ चरणविरतिगतम् ।
सकलकविकुलहृदयतलविलुठनकरण,
फणिपतिभणित-धवलमिह शृणु सुखकरणम्[1] ॥ ४८२ ॥

यथा–

जलमिह कलय सखि ! कनकयुतमिव विमल,
गगनतलमपि विगतजलधरमतिधवलम् ।
गतवचनरचनमिदमपि शिखिकुलमबल,
नववपुरिदमव मम कुसुमविशिखतरलम् ॥ ४८३ ॥

यथा वा, भूषणे[1]—

उपगत इह सुरभिसमय इति सुमुखि ! वदे,
निधुवनमधि सह पिब मधु जहि रुषमपदे ।
कमलनयनमनुसर सखि ! तव रभसपर,
प्रियतमगृहगमनमुचितमनुचितमपरम् ॥ ४८४ ॥

इति धवलम् २१३.

धवला इति पिङ्गले[2]* ।

२१४. अथ शम्भुः

कुरु हस्त स्वर्णविराजत्कङ्कणपुष्पोद्यद्गन्धैर्युक्त,
श्रवण ताटङ्कसुरूपप्राप्तरस हारद्वन्द्व पश्चात् ।
रसनायुग्म कनकेनात्यन्तविराजद्वक्राभ्या प्रान्ते,
नवभूवर्णै कथित नागार्चितशम्भ्वाख्य वृत्त कान्ते ! ॥४८५॥

यथा–

नवसन्ध्या वह्निजभीत्या पश्चिमसिन्धौ मित्रे संमग्ने,
नलिनीयं पङ्कजनेत्र मीलयतीवात्यन्त शोकेन ।
हरितो वध्व पतगौघाना विरुतैरुच्चैर्नादि सदभ्रु[2],
वरभृत्याश्चाम्बरमुच्चैर्भानुसमूहारक्त सवभ्रु ॥ ४८६ ॥

---

१. ख. सुखशरणम् । २. ख सचक्षु ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०२
" २ प्राकृतपैंगलम्, परि० २, पद्य १९२

यथा वा*[1]–

जय ! मायामानवमूर्ते दानववंशध्वंसव्यापारी[1],
बलमाद्यद्रावणहत्याकारण[2]लङ्कालक्ष्मीसंहारी[3] ।
कृतकंसध्वसन-कर्माशसन-गो-गोपी-गोपानन्दी[4],
बलिलक्ष्मीनाशन-लीलावामन-दैत्यश्रेणीनिष्कन्दी[5] ॥ ४८७ ॥

इति शम्भुः २१४

२१५ अथ मेघविस्फूर्जिता

यकार सदेहि प्रथममथ म देहि पश्चान्नकारं,
कर तस्याप्यन्ते रचय रुचिर रेफयुग्म ततोपि ।
गुरु तस्याप्यन्ते कलय ललित षड्रसच्छेदयुक्तं,
कुरु च्छन्द सार फणिपकथित मेघविस्फूर्जिताख्यम् ॥ ४८८ ॥

यथा–

विलोलै.[6] कल्लोलैस्तरणिदुहितु. क्रीडन कारयन्त,
लसद्वश कसप्रभृतिकठिनान् दानवानर्दयन्तम् ।
सुराणा सेन्द्राणा ददतमभय पीतवस्त्र दधान,
सलीलं विन्यासैश्चरणरचितैर्भूमिभाग पुनानम् ॥ ४८९ ॥

यथा वा, कविराक्षसकृतदक्षिणानिलवर्णने—

उदञ्चत्कावेरीलहरिषु परिष्वङ्गरङ्गे लुठन्त
कुहूकण्ठी कण्ठीरवरवलवत्रासितप्रोषितेभा. ।
अमी चैत्रे मैत्रावरुणितरुणीकेलिकङ्केलिमल्ली-
चलद्वल्लीहल्लीसकसुरभयश्चण्डि चञ्चन्ति वाताः ॥४९०॥

इत्यादि ।

इति मेघविस्फूर्जिता २१५

२१६. अथ छाया

सुरूपाढ्य कर्णं कनकललित ताटङ्कयुग्मान्वित,
द्विज गन्ध स्वर्णं वलययुगल पुष्पाढ्यहारद्वयम् ।
दधाना पादान्ते ललितविरुतप्रोद्भासित नूपुरं,
रसै षड्भिश्छिन्ना फणिपकथिता छाया सदा राजते ॥४९१॥

---

१ ख. व्यापारिन् । २ ख हिंसाकारण । ३. संहारिन् । ४. ख गोपानन्दिन् ।
५. ख. निष्कन्दिन् । ६ ख वधूटीः ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०४

यथा–

भवच्छेदे दक्ष दितिसुतकुलध्वान्तस्य विध्वसने,
सदार्काभ वक्ष स्थलगतलसद्रत्नाशुभिर्भूषितम् ।
वधूभिर्गोपाना तरणितनयाकुञ्जेषु रासस्पृह,
सदा नन्दादीनाममितसुखद गोपालवेष भजे ॥ ४६२ ॥

इति छाया २१६

२१७ अथ सुरसा

कर्णद्वन्द्व विराजत् कुसुमसुललित कुण्डलयुग,
सविभ्राणा ततोपि द्विजमथ च कर कङ्कणयुतम् ।
रूपाढ्या दिव्यरावा कुसुमविलसिता नूपुरयुता,
शैलैरश्वैश्च वार्णैर्विरचितविरतिर्भाति सुरसा ॥ ४६३ ॥

यथा–

गोपालं केलिलोल व्रजजनतरुणी-रासरसिक,
कालिन्दीये निकुञ्जे पशुपसुतगणैर्वेष्टिततनुम् ।
वशीरावेण गोपीसुललितमनसा मोहनपर,
कंसादीनामराति व्रजपतितनय नौमि हृदये ॥ ४६४ ॥

इति सुरसा २१७

२१८. अथ फुल्लदाम

कर्णौ स्वर्णाढ्यौ कुसुमरसमयौ रूपरावान्वितौ चेद्,
पुष्पोद्यद्रूपौ कनकविरचित नूपुरं पुष्पशोभम् ।
हारौ रावाढ्यौ विलसदमलगौ कङ्कणेनातिरम्यौ,
शश्वल्लोकाना सुकथितमतुल फुल्लदाम प्रसिद्धम् ॥ ४६५ ॥

यथा–

दीव्यद् देवाना परमधनकर कामपूर जनाना,
शश्वद्भक्ताना परिकलितकलाकौशल कामिनीनाम् ।
दिव्यानन्दाना परम[1] निलयन वेदगम्य पुराण,
पुण्यारण्याना गहनमहमिम नौमि मूर्द्ध्ना नितान्तम् ॥४६६॥

इति फुल्लदाम २१८

---

१. 'दिव्यानन्दानां परम' इति नास्ति क प्रतौ ।

२१९. अथ मृदुलकुसुमम्

रचय नगणमिह रसपरिमित[1]मनुकलय,
शिशिरकिरणरचित कुसुमगणनमपि कुरु ।
सकलभुजगनरपतिकथितमिदमतिशय-
सुललितमृदुलकुसुममिति हृदि परिकलय[1]॥ ४६७ ॥

यथा –

अयि ! सहचरि ! निरुपममृदुलकुसुमरचित-
मनुकलय सरसमलयजकणलुलितमिति ।
वरविपिनगततरुवरतलकलितशयन-
मनुसर सरसिजनयनमनुपमगुणमिह ॥ ४६८ ॥

इति मृदुलकुसुमम् २१९

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकोनविंशत्यक्षरस्य लक्षपञ्चक चतुर्विंशतिसहस्राणि अष्टाशीत्युत्तर शतद्वय ५२४२८८ भेदास्तेषु कतिपयभेदाः प्रोक्ता, शेषभेदाः सुधीभि. प्रस्तार्य उदाहरणीया, इत्युपदिश्यते[1]* ।

इत्यूनविंशत्यक्षरम् ।

अथ विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्–

२२० योगानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिक्सख्याता सलग्ना शोभन्तेऽत्यन्त पूर्णा कर्णा-
स्तद्वल्लीलालोले पादप्रान्ते विख्याता ख्याप्यन्ते नख्या वर्णा ।
श्रीमन्नागाधीशप्रोक्त विद्वत्सार हारोद्धार धेहि स्वान्ते,
तद्वद्वृत्त योगानन्द सर्वानन्दस्थान धैर्याधान कान्ते ! ॥४६९॥

यथा—

वन्देऽह त रम्य गम्य कान्त सर्वाध्यक्ष देव दीप्त धीर,
नाथ नव्याम्भोदप्रख्य काम श्रव्य राम मित्र सेव्य वीरम् ।
सर्वाधार भव्याकार दक्ष पाल कसादीना काल वाल,
आनन्दाना कन्द विद्यासिन्धुं सेवे येन क्षिप्त मायाजालम् ॥५००॥

इति योगानन्दः २२०

---

१ ख परिगनु । २ पङ्क्तित्रय नास्ति क प्रतौ ।
*टिप्पणी—१ लभ्यशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे विलोकनीया ।

२२१. अथ गीतिका

कुरु हस्तसगिसुशङ्खकङ्कणरूपरावसमन्वित,
वरपक्षिराजविराजित नवगन्धयुग्मविभूषितम् ।
कुरु वल्लकीरवधारिण रसमुग्धसुन्दररूपिणो-
रवयुक्तनूपुरमत्र धेहि विधेहि भामिनि ! गीतिकाम् ॥ ५०१ ॥

यथा-

अयि ! मुञ्च मानमवेहि दानमुपैहि कुञ्जगत हरिं,
नवकञ्जचारुविलोचन भयमोचन भवसन्तरिम् ।
कुरुषे विलम्बमकारण सखि ! साधयाशु मनोरथ,
ननु खिद्यसेऽतिभृश वृथैव जनुर्विधारयसे कथम् ॥ ५०२ ॥

यथा वा-

अलमीश-पावक-पाकशासन-वारिजासनसेवया,
गमित जनुर्जनकात्मजापतिरप्यसेव्यत नो मया ।
करुणापयोनिधिरेक एव[1] सरोजदामविलोचन.,
स पर करिष्यति दु खशेष[2]मशेषदुर्गतिमोचनः ॥ ५०३ ॥

'अथ सालतालतमालवञ्जुलकोविदारमनोरमा' इत्यादि । **शिक्षो काव्ये च** प्रत्युदाहरण[3]मिति ।

इति गीतिका २२१

२२२ अथ गण्डका[*]

हारपुष्पसुन्दर विधेहि तन्मनोहर मनोहरेण,
नागराजकुञ्जरेण भाषित च रेण यत्पयोधरेण ।
अन्तगेन चामरेण राजित विराजित च काहलेन,
गण्डकेति यस्य नाम धारित सुपण्डितेन पिङ्गलेन ॥ ५०४ ॥

यथा-

देव! देव! वासुदेव! ते पदाम्वुजद्वय विभावयेम,
नाम पुष्पदाम[4]धामतेजसा सदा हृदा विधारयेम ।
तावदेव सारवस्तु नान्यदस्ति किञ्चनात्र धारितेन,
वाजिराजिकुञ्जरादिसाधनेन तेन किं विभावितेन ॥ ५०५ ॥

---

१ ख एक। २ ख दु खनाश। ३. ख तदुदाहरणम्। ४ ख पुष्पदान।

*टिप्पणी– १ वृत्तस्यास्य निर्दिष्टलक्षणकारिका परिस्फुटा नैवास्ति किन्तु ग्रन्थकर्तृर्यदभीष्ट तदुदाहरणेनैव परिज्ञायते—'यच्छन्दसि हारपुष्पयो (ऽ।) नववारमनुक्रमेण योजन तदनु चामर-काहलयो (ऽ।)न्यसन भवेत्ताद् गण्डकावृत्त स्यादिति ।

यथा वा, भूषणे[1]* प्रत्युदाहरणम्—

दृष्टमस्ति वासुदेव विश्वमेतदेव शेष[वक्त्र]क तु[1],
वाजिरत्नभृत्यदारसूनुगेहवित्तमादिवन्नव तु ।
त्वत्पदाब्जभक्तिरस्तु चित्तसीम्नि वस्तुतस्तु सर्वदैव,
शेषकाललुप्तकालदूतभीतिनाशनीह हन्त सैव ॥ ५०६ ॥

क्वचिदियमेव **चित्तवृत्तम्** इति । केवल वृत्तमात्रमन्यत्र[2]* ।

इति गण्डका २२२.

२२३. अथ शोभा

यकार प्रागस्ते तदनु च मगण कथ्यते यत्र बाले !,
ततोऽपि स्यात् पश्चाद् यदि नगणयुग स्यात्तकारद्वय च ।
ततश्चान्ते हारद्वयमुपरितन कारयाशु प्रकाम,
रसैरश्वैश्छिन्ना मुनिविरतिगता भासते काऽपि शोभा ॥५०७॥

यथा–

रमाकान्त वन्दे त्रिभुवनशरण शुद्धभावैकगम्यं,
विरञ्चे स्रष्टार विजितघनरुचि वेदवाचावगम्यम् ।
शिव लोकाध्यक्ष समरविजयिन कुन्दवृन्दाभदन्त(वदात),
सहस्रार्चीरूप विधृतगिरिवर हार्दकञ्जे वसन्तम् ॥ ५०८ ॥

इति शोभा २२३.

२२४ अथ सुवदना

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगणो जङ्घासुघटितः,
पश्चाद्द्येयो नकारस्तदनु च यगणस्तातेन रचित· ।
कार्यौ तत् पार्श्वदेशे तदनु लघुगुरू ज्ञेया सुवदना,
नागाधीशेन नुन्ना नखमितचरणा नव्या सुमदना ॥ ५०९ ॥

यथा–

श्रीमन्नारायण त नमत बुधजना ससारशरण,
सर्वाध्यक्ष वसन्त निजहृदि सदय गोपीविहरणम् ।
कल्याणाना निधान कलिमलदलन वाचामविषय,
क्षीराब्धौ भासमान दमितदितिसुत वेदान्तविषयम् ॥ ५१० ॥

---

१. शेषवक्त्रभाजि 'वाणीभूषणे' ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि० अ०, पद्य ३०८

२ छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्तबक, का० २०६ एव वृत्तरत्नाकरः, अ० ३, का १०३

यथा वा, हलायुधभट्टविरचितछन्दोवृत्तौ[1]*—

या पीनाङ्गोरुतुङ्ग[1]स्तनजघनघनाभोगालसगति-
यस्या कर्णावतसोत्पलरुचिजयिनी दीर्घे च नयने ।
सीमा सीमन्तिनीना[2] मतिलडहतया या च त्रिभुवने,
सम्प्राप्ता साम्प्रत मे नयनपथमसौ दैवात् सुवदना ॥ ५११ ॥

इति सुवदना २२४.

२२५. अथ प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्

यदा लघुर्गुरुर्निवेश्यते तदा प्लवङ्गभङ्गमङ्गल,
जरौ जरौ जरौ रसप्रयुक्तमुच्यते लगौ सुमङ्गलम् ।
कवीन्द्रपिङ्गलोदित सुशङ्खहारभूपित मनोहर,
प्रमाणिका-पदद्वयेन पूर्यते च यच्च पञ्चचामरम् ॥ ५१२ ॥

यथा–

नवीनमेघसुन्दर भजेम भूपुरन्दर विभु वर,
प्रकामधामभासुर दधानमद्भुताम्बर[3] दयापरम् ।
विलासिनीभुजान्तरानिरुद्धमुग्धविग्रह स्मरातुर,
चराचरादिजीवजातपातकापह जगद्धुरन्धरम् ॥ ५१३ ॥

इति प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम् २२५

२२६. अथ शशाङ्कचलितम्

कर्ण. पयोधरकरौ यदा च भवतो विलासललिते,
ज्ञेयस्तत सुतनु ! ज सुहस्तकलित शशाङ्कचलिते ।
ततोऽपि चेद् भवति ज सुपाणिघटितो वसौ च विरति-
स्ततौ रसैरपि यति कलावति भवेत् पुना रसयति ॥५१४॥

यथा–

कृष्ण प्रणौमि सतत बलेन सहितं सदा शुभरत,
कल्याणकारिचरित सुरैरभिनुत प्रमोदभणितम्[4] ।
कसादिदर्पदलन च कलाकुतुकिन विलासभवन,
ससारपारकरण परोदयकर सरोजनयनम् ॥ ५१५ ॥

इति शशाङ्कचलितम् २२६

---

१. मा पीनो गाढतुङ्ग-'हलायुधे' । २. श्यामा सीमन्तिनीना 'हलायुधे' । ३. ख. अदभुत वरम् । ४ ख भरितम् ।

*टिप्पणी—१ अध्याय ७, कारिकाया २३ उदाहरणम् ।

२२७. अथ भद्रकम्

वेदसुसम्मितमादिगुरु कुरु जोहल कमल प्रिये !,
अन्तगत कुरु पुष्पसुकङ्कणराजित विजितक्रिये ।
रन्ध्ररसैरपि बाणविभेदितविंशक कुरु वर्णक,
कामकलारसरासयुते निजमानसे कुरु भद्रकम् ॥ ५१६ ॥

यथा–

चेतसि पादयुग नवपल्लवकोमल किल भावये,
मञ्जुलकुञ्जगत सरसीरुहलोचन ननु चिन्तये ।
आनय नन्दसुत सखि! मानय मेदुर रजनीमुखं,
कुञ्चितकेशममु परिशीलय कामुक कुरु मे सुखम् ॥ ५१७ ॥

इति भद्रकम् २२७.

२२८ अथ अनवधिगुणगणम्

रसपरिमितमिति सरसनगणमिति[1] विरचय,
विकचकमलमुखि ! लघुयुगमनुमतमनुनय ।
सुतनु ! सुदति ! यदि निगदसि बहुविधमनवधि-
गुणगणमनुसर नखलघुमितमनुलवमयि ! ॥ ५१८ ॥

यथा–

अनुपमगुणगणमनुसर मुरहरमभिनव-
मभिमतमनुमत[2]मतिशयमनुनयपरमव ।
सकपटयदुवरकरधृतगिरिवरपरमयि,
कुरु मम सुवचनमफलय सखि न हि न हि मयि ॥ ५१६ ॥

इति अनवधिगुणगणम् २२८.

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या विंशत्यक्षरस्य दशलक्षमष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि षट्-सप्तत्युत्तराणि पञ्चशतानि च १०४८५७६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तसहिताः विस्तरभीत्या कियन्तो भेदा लक्षिता, शेषभेदाः सुबुद्धिभि. प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।[1]*

इति विंशाक्षरम् ।

---

१ ख मिह । २ ख मनुगत । ३. पङ्क्तिचतुष्टय नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ लब्धशेषभेदा· पञ्चमपरिशिष्टे समोलोकनीया· ।

अथ एकविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२२६. अथ ब्रह्मानन्दः

यस्मिन् वृत्ते पङ्क्तिः ख्याता शोभन्तेऽत्यन्तं कर्णाः प्रान्ते चैकोहारः,
नागाधीशप्रोक्तोऽपारः सारोद्धारो ब्रह्मानन्दो वृत्तानां सारः ।
विश्रामश्च प्रायो यस्मिन् वेदैः श्रोत्रैः शैलेन्द्रैः शस्त्रैर्वा स्यात् प्रान्ते,
विंशत्याः वर्णैरेकाग्रैः संयुक्तैर्लीलालोले सोऽयं ज्ञेयः कान्ते ! ॥५२०॥

यथा–

सर्वं कालव्यालग्रस्तं मत्वा स्त्रीषु व्यासङ्गं हित्वा कृत्वा धैर्यं,
कालीन्दीये कुञ्जे कुञ्जे भ्राम्यद्भृङ्गैः संगीते भ्रातर्मुक्त्वा क्रौर्यम् ।
श्रीगोविन्दं वृन्दारण्ये मेघश्यामं गायन्तं वेणुक्वाणैर्मन्दं,
ब्रह्मानन्दं प्राप्याजस्रं ध्यात्वा चेतः साफल्यं धेहि स्वान्तेऽमन्दम् ॥५२१

इति ब्रह्मानन्द २२६.

२३० अथ स्रग्धरा

आदौ मो यत्र बाले ! तदनु च रगणः स्यात् प्रसिद्धस्तु यस्या,
पश्चाद् भं चापि नं च त्रिगुणितमपि यं धेहि कान्ते ! विचित्रम् ।
शैलेन्द्रैः सूर्यवाहैरपि च मुनिगणैर्दृश्यते चेद् विरामः,
कामव्यासक्तचित्ते सुदति ! निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥ ५२२ ॥

यथा, ममैव पाण्डवचरिते—

तुष्टेनाथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञः,
कर्णोपि प्राप्तमानस्सदसि कुरुपतेर्द्वन्द्वयुद्धार्थमागात् ।
जम्भारातिः स्वसूनोरुपरि जलधरैस्सव्यधादातपत्रं,
चण्डांशुश्चापि कर्णोपरिनिजकिरणानाततानातिशीतात् ॥५२३॥

यथा वा, मत्पितुः खड्गवर्णने—

सङ्ग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूभृद्विहारी,
शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविक्षोभकारी ।
माद्यन्मातङ्गकुम्भस्थलगलदमलस्थूलमुक्ताग्रहारी,
स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥ ५२४ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

केशिद्वेषिप्रसूश्च क्वचिदथ समये सद्मदासीषु कार्य-
व्यग्रासु प्रग्रहान्तग्रहणचलभुजाकुण्डलोद्ग्रीवसूनुः ।
पुत्रस्नेहस्नुतोरुस्तनमनणुरणत्कङ्कणक्वाणमुद्यत्-
कम्पस्विद्यत्कपोल दधिकचविगलद्दामबन्ध ममन्थ ॥५२५॥

इति स्रग्धरा २३०.

२३१. अथ मञ्जरी[1]

कङ्कण कुरु मनोहर तदनु सुन्दर रचय तुम्बुर,
सुन्दरी कलय सुन्दरी तदनु पक्षिणामपि पतिं तत ।
भावमातनु तत पर सुतनु ! पक्षिण च कुरु सङ्गत,
भावमेव कुरु मञ्जरी [तदनु] जोहल विरचयातत ॥५२६॥
रगणनगणक्रमेण च सप्तगणा भान्ति यत्र सरचिता ।
नव-रस-रसयतिसहिता वदन्ति तज्ज्ञास्तु मञ्जरीमिति ताम् ॥ ५२७ ॥

यथा—

हारनूपुरकिरीटकुण्डलविराजिता वरमनोहर,
सुन्दराधरविराजिवेणुरवपूरिताखिलदिगन्तरम् ।
नन्दनन्दनमनङ्गवर्द्धनगुणाकर परमसुन्दर,
चिन्तयामि निजमानसे रुचिरगोपगोधनधुरन्धरम् ॥ ५२८ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्याणां नवरत्नमालिकायाम्—

दाडिमीकुसुममञ्जरीनिकरसुन्दरे मदनमन्दिरे,
यामिनीरमणखण्डमण्डितशिखण्डके तरलकुण्डे (कुण्डले) ।
पाशमकुशमुदञ्चित दधति कोमले कमललोचने !
तावके वपुषि सन्तत जननि ! मामक भवतु मानसम् ॥५२९॥

इति मञ्जरी २३१.

२३२ अथ नरेन्द्र.

कुण्डलवज्ररज्जुमुनिगणयुतहस्तविराजितशोभ,
पाणिविराजिशखयुगवलयित-कङ्कणचामरलोभ ।
कामविशोभयोगवरविरतिगचन्द्रविलोचनवर्ण,
पन्नगराजपिङ्गल इति गदति राजति वृत्तनरेन्द्र ॥ ५३० ॥

---

*टिप्पणी—१ मञ्जरीवृत्तस्य लक्षणोदाहरणप्रत्युदाहरणानि नैव सन्ति क प्रतौ ।

मानिनि ! मानकारणमिह[1] जहिहि नन्दय त सखि ! कृष्णं,
चिन्तय चिन्तनीयपदमनुमतमाकलयाशु सतृष्णम् ।
जीवय जीवजातमुपगतमपि मा कुरु मानसभङ्ग,
केवलमेव तेन सह सहचरि ! सन्तनु तत्तनुसङ्गम् ।। ५३१ ।।

यथा वा–

पङ्कजकोपपानपरमधुकरगीतमनोज्ञतडाग,
पञ्चमनादवादपर[2]परभृतकाननसत्परभाग ।
वल्लभविप्रयुक्तकुलवरतनुजीवनदानदुरन्त,
किं करवाणि वक्षि[3] मम सहचरि ! सन्निधिमेति वसन्त ।।५३२।

इति नरेन्द्र २३२.

२३३ अथ सरसी

सहचरि ! नो यदा भवति सा कथिता सरसी कवीश्वरै-
र्यदि तु जभौ जजौ च भवतोपि जरौ समनन्तर परै ।
इह विरती यदा शरविलोचनजे भवतो मुनीश्वरै,
शिशिरकरैस्सदा भवति लोचनतो गणनापदाक्षरै ।। ५३३ ।।

यथा–

नमत सदा जना प्रणतकल्पतरु जगदीश्वर हरिं,
प्रवलहृदन्धकारतरणिं भवसागरपारसन्तरिम् ।
सकलसुरासुरादिजनसेवितपादसरोरुह पर,
जलरुहशङ्खचक्रकमनीयगदाधरसुन्दराम्वरम् ।। ५३४ ।।

यथा वा–

'तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गजन्मनः ।' इत्यादि माघकाव्ये[1]* ।

इति सरसी २३३.

सुरतरुरिति अन्यत्र । सिद्धकम्[2]* इति क्वचित् ।

---

१ क मानकारिणिमिह । २. ख पञ्चमनादगानपर । ३ ख वरिध।

*टिप्पणी—१ 'तुरगशताकुलस्य परित. परमेकतुरङ्गजन्मन,
प्रमथितभूभृत प्रतिपथ मथितस्य भृश महीभृता ।
परिचलतो वलानुजवलस्य पुर सतत धृतश्रिय-
श्चिरविगतश्रियो जलनिधेश्च तदाभवदन्तर महत् ।। ८२ ।।
[शिशुपालवधम्–स० ३, प० ८२]
२ वृत्तरत्नाकरः, नारायणीटीकायाम्–अ. ३, का १०४

२३४. अथ रुचिरा

कुरु नगण ततो रचय भूमिपतिं दहन च सुन्दर,
तदनु विधेहि ज त्रिगुणित ललित विहग तत परम् ।
मुनिमुनिभिर्भवेद्विरतिरप्यतुला सुकला मनोहरा,
सुकविवरै. परा निगदिता रुचिरा परमार्थतो वरा ।। ५३५ ।।

यथा–

नयनमनोहरं परमसौख्यकर सखि ! नन्दनन्दनं,
कनकनिभांशुक त्रिजगतीतिलक मुरलीविनोदनम् ।
भुवनमहोदय घनरुचि रुचिर कलये सदोन्नत[1],
सुरकुलपालक श्रुतिनुत सदय दयितं श्रिय पतिम् ।। ५३६ ।।

इति रुचिरा २३४

२३५. अथ निरुपमतिलकम्

सुतनु ! सुदति ! सरसमुनिमितनगणमिह रचय,
शिशिरकरजनयनमितसुपदमपि परिकलय ।
कनककटकवलयकलितकरकमलमुपनय,
फणिपतिभणितमिह निरुपमतिलकमिति कथय ।। ५३७ ।।

यथा–

जय ! जय ! निरुपम ! दिशि दिशि विलसितगुणनिकर !,
करधृतगिरिवर ! विगणितगुणगणवरसुकर !।
कनकवसनकटकमुकुटकलित ! मिलितललन !,
विजितमदन ! दलितशकट ! सवलदितिजदलन ! ।। ५३८ ।।

इति निरुपमतिलकम् २३५

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या एकविंशत्यक्षरस्य नवलक्ष सप्तनवतिसहस्राणि द्विसमधिकपञ्चाशदुत्तर शत २०९७१५२ भेदा भवन्ति, तेषु भेदसप्तक प्रोक्त, शेषभेदाः सुधीभिः स्वबुद्ध्या प्रस्तार्य सूचनीया इति दिक् ।*[1]

इति एकविंशाक्षरम् ।

---

१. ख सदोन्नति । २ पंक्तित्रय नास्ति क. प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ एकविंशत्यक्षरवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेषु लब्धशेषभेदा' पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्या

अथ द्वाविंशत्यक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२३६ विद्यानन्द

यस्मिन् वृत्ते रुद्रप्रोक्ता. कुन्तीपुत्रा नेत्रैर्नेत्रैर्वर्णा· पादप्रान्ते,
पड्भि कर्णैर्विश्राम. स्यात् तद्वद् यस्मिन् रम्यै. पाण्डो पुत्रै· स्यात् तस्यान्ते ।
श्रीमन्नागाधीशेनोक्त सार वृत्त श्रव्यं भव्य नव्य काव्यं कान्ते !,
बाले ! लीलालोले ! मुग्धे ! विद्यानन्द दिव्यानन्द सम्यग् धेहि स्वान्ते ॥५३९॥

यथा–

काशीक्षेत्रे गङ्गातीरे चञ्चन्नीरे विश्वेशाङ्घ्रिद्वन्द्व सम्यग् ध्यात्वा,
कृत्वा तत्तन्मात्रायुक्तप्राणायाम शोच्य नश्यत्तत्सङ्ग मुक्त्वा ।
मायाजाल सर्वं विश्व मत्वा चित्ते रम्य हर्म्यं पुत्रा. किञ्चिन्नैत-
च्छस्वत्कामक्रोधक्रौर्याक्रान्त श्रान्त प्रान्ते नाह देह सोऽह तत्सत् ॥५४०॥

इति विद्यानन्द· २३६.

२३७ अथ हसी

यस्यामष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च दिनपतिमित वरवर्णा,
दण्डाकारा. कान्ते ! चञ्चत्करयुगविलसितवलयविलोले ।
तद्वद्दीर्घावन्त्यौ वर्णौ *यतिरिह विलसति वसुभुवनार्णै:,
सा विज्ञेया हसी बाले ! प्रभवति यदि किल नयनयुगार्णा* ॥५४१॥

यथा–

प्रौढध्वान्ते प्रावृट्काले क्षितितलविलसिततरलितकन्दे,
कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे त्वदभिसरणकृत-सरभसवेषा ।
राधात्यन्त वाधायुक्ता प्रसरति मनसिजविशिखविलूना,
वन्यस्रग्भिर्विरचितभूपस्त्वमपि च विहरसि सरसकदम्बे*¹ ॥ ५४२ ॥

यथा वा–

श्रीकृष्णेन क्रीडन्तीना क्वचिदपि वनभुवि मनसिजभाजा,
गोपालीना चन्द्रज्योत्स्नाविशदरजनिगुरुजनितरतीनाम् ।
घर्मभ्रश्यत्पत्रालीनामुपच्चितरभसविमलतनुभासा,
'रासक्रीडायासध्वसी मुदमुपनयति' मलयगिरिवात ॥ ५४३ ॥

इति हसी २३७

**चिह्नगतोऽय पाठो नास्ति क प्रतौ । १ १ क. रासक्रीडायापासध्वसमुदमुपनयमिद ।

*टिप्पणी—१ पादोऽय सर्वथाऽशुद्ध वर्णद्वयवर्द्धनाद्दीर्घद्वयरहितत्वाच्च । अतोऽस्मिन् पादे यदि 'विरचित'पदस्थाने 'सृष्टा' पदयोजना स्यात्तद्दोपपरिहारसभवः ।

२३८ अथ मदिरा

आदिगुरुं कुरु सप्तगण सखि ! पिङ्गलभाषितमन्तगुरु,
पङ्क्तिविराजि-र्यति च तत. कुरु सूर्यविभासियर्ति च तत· ।
चिन्तय चेतसि वृत्तमिद मदिरेति च नाम यत प्रथितं,
सप्तभकारगुरूपहित बहुभि कविभिर्बहुधा कथितम् ॥ ५४४ ॥

यथा–

मा कुरु माविनि ! मानमये वनमालिनि सन्तति[1]शालिनि हे,
पाणितलेन कपोलतल न विमुञ्चति सम्प्रति किं मनुषे ।
यौवनमेतदकारणक न हि किञ्चिदतोऽपि फल तनुषे,
कुञ्जगत परिशीलय त परिलम्बमिद सखि ! किं कुरुषे ॥ ५४५ ॥

इति मदिरा २३८.

इयमेव अस्माभिर्मात्राप्रस्तारे पूर्वखण्डे सवयाप्रकरणे मदिराभिसन्धाय सवया इत्युक्ता, सा तत एवावधारणीया ।

२३९ अथ मन्द्रकम्

कारय भ ततोपि रगण ततो नरनरास्ततश्च न-गुरू,
दिग्रविभिर्भवेच्च विरतिर्विलोचनयुगैरपीन्दुवदने ! ।
कल्पय पादमत्र रुचिरं कवीन्द्रवरपिङ्गलेन कथित,
मन्द्रकवृत्तमेतदबले ! सुभाषितमहोदधे सुमथितम् ॥ ५४६ ॥

यथा–

दिव्यसुगीतिभि सकृदपि स्तुवन्ति भवये(भुवि ये) भवन्तमभय,
भक्तिभरावनम्रशिरस कृताञ्जलिपुटा निराकृतभवम् ।
ते परमीश्वरस्य पदवीमवाप्य सुखमाप्नुवन्ति विपुल,
मर्त्यभुव स्पृशन्ति न पुनर्मनोहरसुताङ्गनापरिवृताः ॥ ५४७ ॥

इति मन्द्रकम् २३९

२४०. अथ शिखरम्

मन्द्रकमेव हि वृत्त यदि दशरसयुगविरति भवेत् ।
शिखर तदत्र बाले ! कथित कविपिङ्गलेन तदा ॥ ५४८ ॥

---

१. ख सन्ततिशालिनी ।

यथा–

कृष्णपदारविन्दयुगल नमन्ति ननु ये जना· सुकृतिन.,
ससृतिसागर सुविपुल तरन्ति मुदितास्त एव कृतिनः ।
दिव्यधुनीतरङ्गललिते तटे कृतकुटा· स्मरन्ति परमं,
धाम निरन्तर मनसि तज्जराकवलित जनुर्न चरमम् ॥ ५४९ ॥

इति शिखरम् २४०

मन्द्रकस्य गणा एव अत्रापि यतिकृत एव पर भेद. ।

२४१. अथ अच्युतम्

सलयुग-निगमनगणमिह[1]* कुरु पक्षि-पाणिसभाजित,
तदनु च रचय कमलमुखि ! सखि ! पुष्पहारविराजितम् ।
निगमशिशिरकरविरचितयतियोगबद्ध विभावित,
कविवरफणिपतिसुभणितमिति[1] मानसे कलयाच्युतम् ॥ ५५० ॥

यथा–

सघनतिमिरभरभरितविपिनमात्मनैव विभावित,
न खलु सहचरि ! वितनु विदलितमाश्रयामि सुजीवितम् ।
कनकनिभवसनमरुणनयनमानयाशु मनोहर,
मसृणमणिगणखचिततनुमपि हारयामि तमोहरम् ॥ ५५१ ॥

इति अच्युतम् २४१.

२४२ अथ मदालसम्

कर्ण जकार-रसयुग्म विधेहि सखि ! कर्ण तत. कुरु रस,
हार नकारमथ कर्ण नरेन्द्रमिह हस्त विधेहि च तत. ।
सूर्याश्वसप्तयति कुर्याद् यथाभिरुचि पश्चाद् वसौ च विरति[2],
नेत्रद्वयेन कुरु पादान्तवर्णमिति वृत्त मदालसमिदम् ॥ ५५२ ॥

यथा–

शम्भो ! जय प्रणमदम्भोजनामविधिदम्भोलिपाणितरणे-
　　रम्भोरुगाढपरिरम्भोपभोगदिवि रम्भोपगीतसततम् ।
स्तम्भोदयप्रणतजम्भोपघाति[3] शिशुदम्भोपकल्पिततनो !,
　　रम्भोदरप्रतिमशम्भो! जयामलविदम्भोधि[4] वर्द्धनविधो ! ॥ ५५३ ॥

---

१ क. सुभाषितमिति । २ ख विरति । ३. ख जम्भो प घाति । ४ ख. चिदम्भोधि ।

*टिप्पणी—१ 'सलयुगनिगमनगणमिह' इह – अच्युतवृत्ते लघुद्वयसहितच तुर्नगणमर्थात् चतुर्दशलघ्वक्षरमत्र 'कुरु' रचयेत्यर्थ ।

यथा वा–

मन्दाकिनीपुलिनमन्दारदामगतवृन्दारकार्च्चितविभो[1]!
नारायणप्रखरनाराचविद्धपुरनाराधिदुष्कृतवता ।
गङ्गाचलाचलतरङ्गावलीमुकुटरङ्गावनीमतिपटो[2]!
गौरीपरिग्रहणगौरीकृतार्द्धं तव गौरीदृशी श्रुतिगता ।।५५४।।

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामहकविपण्डितमुख्यश्रीमद्रामचन्द्रभट्टकृतनारायणाष्टके-

कुन्दातिभासि शरदिन्दावखण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू-
वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।
वन्दारुविभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारकेश्वरकृत-
च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृतिं हृदि भजे ।। ५५५ ।।

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि[3] ।

इति मदालसम् २४२

२४३ अथ तरुवरम्

सहचरि ! रविहयपरिमित मुनगणमिह विरचय,
तदनु शिशिरकरपरिमित कुसुममिह परिकलय ।
कविवरसकलभुजगपतिनिगदितमिदमनुसर,
नवरससुघटित-नरवरसुपठित-तरुवरमिति ।। ५५६ ।।

यथा–

अवनतमुनिगण ! करधृतगिरिवर ! सदवनपर !,
त्रिभुवननिरुपम ! नरवरविलसित ! सकपटवर ! ।
दमितदितिजकुल ! कलितसकलबल ! सततसदय !,
सरभसविदलितकरिवर ! जय ! जय ! निगमनिलय ! ।। ५५७ ।।

अत्र प्रायोऽष्टाष्टरसैर्विरतिरित्युपदेशः ।

इति तरुवरम् २४३.

अत्रापि प्रस्तारगत्या द्वाविंशत्यक्षरस्य एकचत्वारिंशल्लक्षाणि चतुर्नवति-सहस्राणि चतुरुत्तर शतत्रय ४१९४३०४ भेदा, तेषु भेदाष्टकमुक्तम् । शेषभेदास्तु शास्त्ररीत्या प्रस्तार्य प्रतिभावद्भिरुदाहर्त्तव्या । इति दिङ्मात्रमुपदिश्यते[1]* ।

इति द्वाविंशत्यक्षरम् ।

---

१ ख विभा । २ ख गतिपटो । ३ ख. तदुदाहरणम् ।

*टिप्पणी—१ लब्धाः शेषभेदा द्रष्टव्या पञ्चमपरिशिष्टे ।

अथ त्रयोविंशाक्षरम्

तत्र पूर्वम्—

२४४. दिव्यानन्दः

कुन्तीपुत्रा यस्मिन् वृत्ते दिक्सख्याता सैकाः शोभन्ते प्रान्ते चैको हारः,
रौद्रैर्नेत्रैर्यस्मिन् सर्वैर्वर्णैर्वा सोऽय दिव्यानन्दश्छन्दोग्रन्थे सारः ।
विश्रामः स्यात् षड्भि कर्णैर्यस्मिंस्तद्वत् सार्द्धे[1] पाण्डो. पुत्रैर्वा स्यात्तस्यान्ते,
बाले ! लीलालोले!कामक्रीडासक्ते!पूर्वोक्त दिव्य वृत्त धेहि स्वान्ते ।।५५८।।

यथा–

वन्दे देवं सर्वाधार विश्वाध्यक्ष लक्ष्मीनाथ त क्षीराब्धौ तिष्ठन्तं,
यो हस्तीन्द्र भक्त ग्राहग्रस्त मत्वा हित्वाप्त सर्वं स्त्रीवर्गं भासन्तम् ।
आरूढ सौपर्णे पृष्ठेऽनास्तीर्णेपि प्राप्तश्चक्री वेगादेवोच्चैः क्रीडत्,
व्यापाद्याम् नक्त[2] मध्ये वक्त्र सद्यस्त दन्तीन्द्र ससारान्मुक्त कुर्वन् ।।५५९।।

इति दिव्यानन्द २४४

२४५ [१]. अथ सुन्दरिका

करयुक्तसुपुष्पद्वयललिता ताटङ्कमनोहरहारधरा,
द्विजकर्णविराजत्पदयुगला गण्डेन सुमण्डितकुण्डलका ।
यदि सप्तविभिन्ना शरविरति शर्वैरपि चेद्विहतिर्विहिता,
किल सुन्दरिका सा फणिभणिता नेत्राग्निकला कविराजहिता ।।५६०।।

यथा–

सखि ! पङ्कजनेत्र मुरहरणं विशं कमनीयकलाललित,
वरमौक्तिकहार सुखकरण रम्य रमणीवलये वलितम् ।
तरुणीजनचित्त वरतरुण भव्य भवभीतिविनाशकर,
घनकुञ्चितकेश मुनिशरण नित्यं कलयेऽखिलदैत्यहरम् ।। ५६० ।।

इति सुन्दरिका २४५[१].

२४५[२] अथ पद्मावतिका

सुन्दरिकैव हि बाले ! यदि मुनिरसदशविरामिणी भवति ।
विज्ञापयन्ति तज्ज्ञाः पद्मावतिकेति नयनदहनकमलाम् ।। ५६२ ।।

यथा–

सखि ! नन्दकुमार तनुजितमार कुण्डलमण्डितगण्डयुगं,
हतकसनरेश रचितसुवेश कुञ्चितकेशमशेषसुगम् ।

---

१. ख. शेदै । १ ख नक्तं ।

यमुनातटकुञ्जे सतिमिरपुञ्जे कारितरासविलासपरं,
मुखनिर्जितचन्द्र विगलिततन्द्र चिन्तय चेतसि चित्तहरम् ।। ५६३ ।।

इति पद्मावतिका २४५[२].

२४६ अथ अद्रितनया

सहचरि ! चेन्नजौ भजगणौ भजौ च भवतस्ततो भलगुरू,
शिवविरतिस्तथैव विरतिः प्रभाकरभवा भवेच्च नियता[1] ।
प्रतिपदमत्र वह्निनयनाक्षरैर्गणय पादमिन्दुवदने !,
जगति जया प्रकाशितनया जनै. किल विभाविताऽद्रितनया ।। ५६४ ।।

प्रकारान्तरेणापि लक्षण यथा—

सुदति ! विधेहि न तदनु जं ततोऽपि भगणं ततश्च जगण,
तदनु च देहि भ तदनु ज ततोऽपि भगण ततो लघुगुरू ।
कुरु विरतिं शिवे दिनकरे यतिं सुरुचिरां विभावितनया,
दहनविलोचनाक्षरपदा विधेहि सुभगे[2] ! मुदाऽद्रितनयाम् ।। ५६५ ।।

यथा–

नयनमनोरम विकसित पलाशकुसुम विलोक्य सरस,
विकचसरोरुहा च सरसी विभाव्य सुभृश मनोऽतिविरसम् ।
गगनतलं च चन्द्रकिरणै कर्णैरिव[3] विभावसोस्सुपिहित,
सहचरि ! जीवन न कलये विना सहचर विधेहि विहितम् ।। ५६६ ।।

यथा वा–

'विलुलितपुष्परेणुकपिशप्रशान्तकलिकापलाशकुसुमम् ।।' इत्यादि भट्टिकाव्ये[1]*

इति अद्रितनया २४६.

अश्वललितमिदमन्यत्र[2]*, तथाहि—

---

१. ख नियमा ।　२ ख. सुभग ।　३. ख करणैरिव ।

*टिप्पणी—१ 'विलुलितपुष्परेणुकपिश प्रशान्तकलिका-पलाशकुसुम,
कुसुमनिपातविचित्रवसुध सशब्दनिपतद् द्रुमोत्कशकुनम् ।
शकुननिनादनादिककुव्विलोलविपलायमानहरिण,
हरिणविलोचनाधिवसतिं बभञ्ज पवनात्मजो रिपुवनम् ।।
[भट्टिकाव्य, स० ८, प. १३१]

२ वृत्तरत्नाकर—नारायणीटीका अ० ३, का० १०६ ।

पवनविधूतवीचिचपल विलोकयति जीवित तनुभृता,
न पुनरहीयमानमनिश जरावनितया वशीकृतमिदम् ।
सपदि निपीडनव्यतिकर यमादिव नराधिपान्नरपशु,
परवनितामवेक्ष्य कुरुते तथापि हतबुद्धिरस्खललितम् ।। ५६७ ।।

इति प्रत्युदाहरणम्[1] ।

[2]अत्रापि गणयतिवर्णविन्यासस्तु पूर्ववदेव, नाममात्रे भेद, फलतो न कश्चिद् विशेष ।[2]

२४७ अथ मालती

अत्रैव सप्तभगणानन्तर गुरुद्वयदानेन मालतीवृत्त भवति । लक्षण च यथा–

इयमेव सप्तभगणादनन्तर भवति मालतीवृत्तम् ।
यदि गुरुयुगलोपहिता पिङ्गलनागस्तदाख्याति ।। ५६८ ।।

यथा–

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमौलिविलुम्पितचन्द्रकिशोभ,
वन्यनवीनविभूषणभूपितनन्दसुत वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधि-दुर्गमवेदरहस्य,
नौमि हरिं दितिजावलिमालितभूमिभरापनुद[3] सुयशस्यम् ।। ५६९ ।।

इति मालती २४७

इयमेव अस्माभि पूर्वखण्डे मालती सवया इत्युक्ता । [सा तत एवावलोकनीया]

किञ्च—

२४८ अथ मल्लिका

सप्तजगणादनन्तरमपि चेल्लघुगुरुनिवेशन भवति ।
जल्पति पिङ्गलनाग सुकविस्तन्मल्लिकावृत्तम् ।। ५७० ।।

यथा–

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरय पवन,
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदन कुरुते मदन ।
कलानिधिरेष बलादयि मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिम[4],
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिम[5] ।। ५७१ ।।

इति मल्लिका २४८

---

१ ख उदाहरणम् । २–२. चिह्नगोऽयमशो नास्ति क. प्रतौ । ३. ख भरापनुदे । ४ ख हित. । ५ ख व्रजभूमहित ।

इयमेवास्माभि. पूर्वखण्डे मल्लिका सवया इत्युक्ता। सा तत एवावधारणीया।

२४९. अथ मत्ताक्रीडम्

यस्मिन्नष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च मनुमित लघुमिह रचयेत्[1],
पादप्रान्ते चैक हार विकचकमलमुखि ! विरचय नियतम्।
मत्ताक्रीड वृत्त बाले ! वसुतिथियतिकृतरतिसुखनिवह,
कुन्तीपुत्र वेदैरुक्त निगमनगणमपि विरचय सगणम् ॥ ५७२ ॥

यथा–

नव्ये कालिन्दीये कुञ्जे सुरभिसमयमधुमधुरसुखरस,
रासोल्लासक्रीडारङ्गे युवतिसुभगभुजरचितवरवशम्[2]।
सान्द्रानन्द[3] मेघश्याम मुरलिमधुर[4]रवविमुषितहरिण,
वृन्दारण्ये दीव्यत्पुण्ये स्मरत परममिह हरिमनवरतम् ॥ ५७३ ॥

इति मत्ताक्रीडम् २४९.

२५०. अथ कनकवलयम्

सुतनु ! सुदति ! मुनिमितमिह सुनगणमिति ह विरचय,
तदनु विकचकमलमुखि ! सखि ! खलु लघुयुगमुपनय।
दहननयनमितलघुमिह पदगतमपि परिकलय,
कनकवलयमिति कथयति भुजगपतिरिति तदवय[5] ॥ ५७४ ॥

यथा–

कनकवलयरचितमुकुट ! *विधृतलकुट ! निकटवल !,
शमितशकट ! कनकसुपट ! दलितदितिजसुभटदल !।
कमलनयन* ! विजितमदन ! युवतिवलयरचितलय !,
तरलवसन ! विहितभजन ! धरणिधरण ! जय ! विजय !॥ ५७५ ॥

इति कनकवलयम् २५०

[6] अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोविंशत्यक्षरस्य त्र्यशीतिलक्षाणि अष्टाशीतिसहस्राणि अष्टोत्तराणि षट्शतानि च ८३८८६०८ भेदा भवन्ति, तेषु अष्टौ भेदा प्रोक्ता:, शेषभेदा प्रस्तार्य गणयतिवर्णनामसहितास्समुदाहरणीया इति दिगुपदिश्यते[6]।

इति त्रयोविंश.त्यक्षरम्।

---

१ ख रचये। २. ख परवशम्। ३. क सान्द्रावक्ष। ४ ख ललितमधुर। ५ ख च तदय। ६ पंक्तित्रय नास्ति क प्रतौ। *–* चिह्नगतोऽय पाठ क प्रता नास्ति।

*टिप्पणी—१ त्रयोविंशत्यक्षरवृत्तस्य ग्रथान्तरेपु लब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्याः।

अथ चतुर्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्– २५१. रामानन्द

आदित्यै सख्याता यस्मिन् वृत्ते दिव्ये श्रीनागाख्याते शोभन्तेऽन्यन्त कर्णाः,
षड्भि कर्णैर्द्विस्त्व प्राप्तैर्यद्विश्रामः स्यात् सत्तत्त्वैस्साख्यै ख्यातास्तद्वद्वर्णाः ।
कामक्रीडाकूतस्फीत प्राप्तानन्दे भव्याकारे चन्द्रागव्ये नव्ये कान्ते !,
वेदैर्नेत्रैर्यस्मिन् पादे हारा सपत्कन्द रामानन्द वृत्त धेहि स्वान्ते ।। ५७६ ।।

यथा–

रासोल्लासे गोपस्त्रीभिर्वृन्दारण्ये कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे गुञ्जद्भृङ्गे,
दिव्यामोदे पुष्पाकीर्णे धृत्वा वशी मन्द मन्द दिव्यैस्तानै सङ्गायन्तम् ।
कामक्रीडाकूतस्फीत तासामङ्गेऽनङ्ग साङ्ग कुर्वन्तत काम कान्त,
सर्वानन्द तेजोरूप विश्वाध्यक्ष वन्दे देव भासन्त प्रात सायान्तम् ।।५७७।।

इति रामानन्द २५१.

२५२ अथ दुर्मिलका

विनिधाय कर सखि ! पाणितल कुरु रत्नमनोहरबाहुयुग,
सगण च तत कुरु पाणितल सखि ! रत्नविराजितपादयुतम् ।
यदि योगरसैरपि पक्तिविराजित-तत्त्वविभासितवर्णधरा,
भवतीह तदा किल दुर्मिलका सखि ! नेत्रविभावसुभासिकला ।।५७८।।

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर नृकपालधर,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर शशिखण्डवरम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालमदभ्रमदोद्धतनीलगल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिभालतलम् ।। ५७९ ।।

यथा वा, भूषणे[1]–

कति सन्ति न गोपकुले ललिता. स्मरतापहताश्च विहाय च ता,
रतिकेलिकलारसलालसमानसमागतमुज्झितमानरसम् ।
वनमालिनमालि नमस्य नमस्य नमस्य मुदस्य चिरस्य वृथा,
भविता परितापवती भवती युवती जनससदि हासकथा ।। ५८० ।।

इति दुर्मिलका २५२

---

[1] टिप्पणी—१ वाणीभूषणम्, द्वि० अ० पद्य ३१८

२५३ अथ किरीटम्

पादयुग कुरु नूपुरराजितमत्र कर वररत्नमनोहर-
वज्रयुग कुसुमद्वयसङ्गतकुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानसकल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपन्नगराजनिवेदितवृत्तकिरीटमिद परिभावय ।। ५८१ ।।

यथा–

मल्लिलते मलिनासि किमित्यलिना रहिता भवती बत यद्यपि,
सा पुनरेति शरद्रजनी तव या तनुते धवलानि जगन्त्यपि ।
षट्पदकोटिविघट्टितकुण्डल[1]कोटविनिर्गतसौरभसम्पदि,
न त्वयि कोऽपि विधास्यति सादरमन्तरमुत्तरनागरससदि ।। ५८२ ।।

इति किरीटम् २५३

२५४. अथ तन्वी

कारय भ त सुचरितभरिते न कुरु स सखि ! सुमहितवृत्ते,
धेहि भयुग्म नगणसुसहित कारय सुन्दरि ! यगणमिहान्ते ।
भूतमुनीनैर्यतिरिह कथिता द्वादशभिश्च सुकविजनवित्ता,
तत्त्वविरामा भुजगविरचिता राजति चेतसि परमिति तन्वी ।। ५८३ ।।

यथा–

मा कुरु मान कुरु मम वचन कुञ्जगत भज सहचरि ! कृष्णं,
कारितरास वलयितवनित गोपवधूजनयुवतिसतृष्णम् ।
कोकिलरावैर्मधुकरविरुतै[2] स्फोटितकर्णयुगलपरिखिन्ना,
दाहमुपेता मलयजसलिलैरसम्प्रतिदेहजशरभरभिन्ना ।। ५८४ ।।

यथा वा, छन्दोवृत्तौ[1]*द्वादशाक्षरविरति —

चन्द्रमुखी सुन्दरघनजघना कुन्दसमानशिखरदशनाग्रा,
निष्कलवीणा श्रुतिसुखवचना त्रस्तकुरङ्गतरलनयनान्ता ।
निर्मुखपीनोन्नतकुचकलशा मत्तगजेन्द्रललितगतिभावा,
निर्भरलीला निधुवनविषये मुञ्जनरेन्द्र ! भवतु तव तन्वी ।। ५८५ ।।
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति तन्वी २५४.

---

१ ख कुड्मल । २ क मधुकरविरति· ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र-हलायुधीयटीका अ० ७, कारिकाया २६ उदाहरणम् ।

२५५ अथ माधवी

तत्त्वाक्षरकृतवृत्तं यदि वसुभिर्नायकैर्घटितम् ।
तत्सखि ! पिङ्गलभणित कथित त्विह माधवीवृत्तम् ॥ ५८६ ॥

यथा–

विलोलविलोचनकोणविलोकितमोहितगोपवधूजनचित्त,
मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारकलानिधिबालचरित्रः ।
करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्त',
सखीमिति कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्त ॥ ५८७ ॥

इति माधवी २५५.

इदमेवास्माभि पूर्वखण्डे माधवी सवया इत्युक्ता ।

२५६ अथ तरलनयनम्

वसुमितलघुमिह सहचरि ! विकचकमलमुखि ! विरचय,
तदनु घटय सखि ! रसदशलघुमपि तरलनयन इह ।
सकलचरणमिति वसुमितसुनगणमनु कुरु सुरमणि,
फणिमणिरिह विभुरनुवदति सुरुचिरमिति परिकलय ॥ ५८८ ॥

यथा–

कुसुमनिकरपरिकलितमधुरवनविहरणसुनिपुण,
सरभसविदलितकरिवरनखरदलितदितिजगण ।
करघृतगिरिवर विलसितमणिगण मुनिमतमुरहर,
फणिपतिविगणितगुणगण जय जय जय सदवनपर ॥ ५८९ ॥

इति तरलनयनम् २५६.

[1]अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्विंशत्यक्षरस्य एकाकोटिः सप्तषष्टिलक्षाणि सप्तसप्ततिसहस्राणि षोडशोत्तर शतद्वय च १६७७७२१६ भेदास्तेषु भेदषट्कमुदाहृतं, शेषभेदा प्रस्तार्य सुधीभिरुदाहरणीया, इति दिक् ।

इति चतुर्विंशत्यक्षरम् ।

अथ पञ्चविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२५७ कामानन्दः

यस्मिन् वृत्ते सावित्रा कौन्तेया कान्ता यत्पादप्रान्ते कान्ते ! चैको मुक्ताहार,
विश्राम स्यात् षड्भि कर्णैर्भव्याकारैः सार्द्धैस्तैरेव स्यात् सोऽय वृत्ताना सारः ।

---

१. पदित्रय नास्ति क. प्रतौ ।

टिप्पणी—१ चतुर्विंशत्यक्षरवृत्तस्य लभ्यशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीया. ।

तत्त्वैरात्मा यस्मिन् वृत्ते वर्णै ख्याता [1] छन्दोविद्भि सद्भि: ससेव्य. सर्वानन्द:,
सोऽय नागाधीशेनोक्तो वृत्ताध्यक्ष ससाध्य पुम्भिश्चित्ते काम कामानन्द:।५९०।

यथा–

वन्यै पीतै पुष्पैर्मालां सङ्ग्रथ्नत[2] श्रीमद्वृन्दारण्ये गोपीवृन्दे[3] खेलन्तं,
मायूरै पत्रैर्दिव्य छत्र कुर्वन्त वृक्षाणा शाखा धृत्वा हिन्दोले दोलन्तम् ।
वशीमोष्ठप्रान्ते कृत्वा सगायन्त तासा तन्नाम्नान्युक्त्वा गोपीराह्वायन्त,
दक्ष पाद वामे कृत्वा सतिष्ठन्त काल्पेवार्क्षे [4] मूले वन्दे कृष्ण[5]भासन्तम्।।५९१।।

इति कामानन्द: २५७.

२५८. अथ क्रौञ्चपदा

कारय भ मं धारय स भ निगमनगणमिह विरचय रुचिर,
सञ्चितहारा पञ्चविरामा शरवसुमुनियुतसुरचितविरति: ।
क्रौञ्चपदा स्यात् काञ्चनवर्णे गतिवशसुविजितमदगजगमने,
तत्त्वविभेदैर्वर्णविरामा बहुविधगतिरपि भवति च गणने ।। ५९२ ।।

यथा

या तरलाक्षी कुञ्चितकेशी मदकलकरिवरगमनविलसिता,
फुल्लसरोजश्रेणिकटाक्षा मधुमदसुमुदितसरभसगमना ।
स्थूलनितम्बा पीनकुचाढ्या बहुविधसुखयुतसुरतसुनिपुणा,
सा परिणेया सौख्यकरा स्त्री बहुविधनिधुवनसुखमभिलषता ।। ५९३ ।।

यथा वा, हलायुधे[1]*

या कपिलाक्षी पिङ्गलकेशी कलिरुचिरनुदिनमनुनयकठिना,
दीर्घतराभि स्थूलशिराभि परिवृतवपुरतिशयकुटिलगति ।
आयतजङ्घा निम्नकपोला लघुतरकुचयुगपरिचितहृदया,
सा परिहार्या क्रौञ्चपदा स्त्री ध्रुवमिह निरवधिसुखमभिलषता ।। ५९४ ।।
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति क्रौञ्चपदा २५८

२५९ अथ मल्ली

सगणाष्टकगुरुघटिता शरपक्षकवर्णविलसिता या स्यात् ।
तामिह पिङ्गलनाग कथयति मल्लीमिति स्फुटत. ।। ५९५ ।।

---

१. ख. स्यात: । २. क सङ्ग्रीथ्मन्त । ३. ख गोपीवृन्दे । ४ ख त तिष्ठन्त सत्कावम्बे । ५ क कृष्णे ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र-हलायुधीयटीकाया अ० ७, कारिकाया ३० उदाहरणम् ।

यथा–

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूषित-दीनदयालमदभ्रमदोद्धतदानवकाल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिलालितभालम् ।। ५६६ ।।

इति मल्ली २५६.

इयमेव मात्रावृत्ते मल्लीसवया इत्युक्ता ।

२६० अथ मणिगणम्

सुतनु ! सुदति ! वसुमितनगणमिह विधुसुमुखि ! सुविरचय,
तदनु विकचकमलसदृशमुखि ! सुरभिकुसुममपि कलय ।
गतिवशविदलितमदकलकरिवरगमन इह सुरमणि,
मणिगणमिति फणिपतिरपि कथयति विमलमतिरतिरणि[1] ।। ५६७ ।।

यथा–

निगमविदित सततमुदित परमपुरुषसुकृतसुललित[2],
सकलमनुजकलुषदहन तरलयुवतिवचनविचलित ।
विकटगहनदहनकवल पिहितनयन मिलितसखिवल !
कलितविविधविबुधसुखचय जय जय दलितदितिजदल ।। ५६८ ।।

इति मणिगणम् २६०

[3]अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चविंशत्यक्षरस्य कोटित्रय पञ्चत्रिंशल्लक्षाणि चतुःपञ्चसहस्राणि द्वात्रिंशदुत्तराणि चतुःशतानि च ३३५५४४३२ भेदास्तेषु दिगुपदर्शनार्थं भेदचतुष्टयमुक्त वृत्तान्तराणि च प्रस्तार्य सुधीभिरूह्यानीति शिवम्*[1] ।

इति पञ्चविंशत्यक्षरम् ।

अथ षड्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथम सर्वगुरुम्–

२६१ श्रीगोविन्दानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिक्सख्याता कर्णा रामैः सपन्ना शोभन्तेऽत्यन्त वामैर्भव्याकारा,
विश्रामः स्यात् षड्भि कर्णै पश्चादन्ते कुन्तीपुत्रैर्मौनैस्तेषा लोकैः ख्याताहाराः ।
सर्वेषा नागानामीशेनाय प्रोक्तः सर्वान्त्य प्रस्तारः षड्विंशत्याहारैस्तारैः,
सोऽय श्रीगोविन्दानन्दश्छन्दस्सारः सर्वाधार कार्यश्चित्तेऽपारैश्छन्दस्कारैः
।।५६६।।

---

१. क विलमतिरतितरणि । २. ख सुफलित । ३. पक्ति चतुष्टय नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ पञ्चविंशत्यक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे लोकनीया ।

यथा–

श्रीगोविन्द. सर्वानन्दश्चित्ते ध्येयः वित्त मित्र स्वाराज्य स्त्रीवर्ग. सर्वो हेय ,
वृन्दारण्ये गुञ्जद्भृङ्गे पुष्पै. कीर्णे श्रीलक्ष्मीनाथः श्रीगोपीकान्तः शश्वद्गेय ।
द्वारे द्वारे व्यर्थं ससारे रे रे रे भ्राम भ्राम काम किं कुर्यास्त्व क्षाम चेत ,
मायाजाल सर्वं चैतत् पश्यच्छ्रावन्भ्राम्यन्नानायोनौ पूर्वं खिन्नोऽसि त्वं भ्रात
॥ ६०० ॥

इति श्रीगोविन्दानन्द २६१

२६२. अथ भुजङ्गविजृम्भितम्

आदौ यस्मिन् वृत्ते काले[१] मगणयुग-तनननगणा रसौ च लगौ ततो-[२]
वस्वीशाश्वच्छेदोपेतं चपलतरहरिणनयने विधेहि सुखेन वै ।
पादप्रान्त यस्मिन् वृत्ते रसनरनयनविलसित मनोहरण प्रिये !,
नागाधीशेनोक्त प्रोक्त[३] विबुधहृदयसुखजनक भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०१ ॥

यथा–

ध्यानैकाग्रालम्बादृष्टिष्कमलमुखि ! लुलितमलकै करे स्थितमानन,
चिन्तासक्ता शून्या बुद्धिस्त्वरितगतिपतितरशनातनुस्तनुता गता ।
पाण्डुच्छायक्षाम वक्त्र मदजनति रहसि सरसा[४] करोषि न सकथा,
को नामाय रम्यो व्याधिस्तव सुमुखि ! कथय किमिद न खल्वसि नातुरा[५]
॥ ६०२ ॥

यथा वा, हलायुधे[१]*—

यै सन्नद्धानेकानीकैर्नरतुरगकरिपरिवृतै सम तव शत्रव ,
युद्धश्रद्धालुब्धात्मान[६]स्त्वदभिमुखमथ गतभिय पतन्ति धृतायुधा. ।
तेऽद्य त्वा दृष्ट्वा संग्रामे तुडिगनृपकृपणमनस पतन्ति दिगन्तर,
किं वा सोढुं शक्य तैस्तैर्बहुभिरपि सविपविषम भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०३ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति भुजङ्गविजृम्भितम् २६२.

२६३ अथ अपवाह

आदौ म तदनु च कुरु सहचरि ! रसपरिमितमिह नगण गण्य,
हस्त सविरचय सखि ! विकचकमलमुखि ! तदनु च रुचिर कर्णम् ।
विश्रामः सुतनु ! सुदति ! नवरसरसशरपरिमित इह बोभूयात्,
नागो जल्पति फणिपतिरतिशयमिति रतिकृतिधृतिरपवाह. स्यात् ॥ ६०४ ॥

---

१ ख. वाले । २. ख तनो । ३. ख वृत्तं । ४ ख सारसा । ५ ख चातुरा । ६. ख लब्धात्मानः ।

*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकाया अ० ७, कारिकाया ३१ उदाहरणम् ।

यथा–

श्रीकृष्ण भवभयहरमभिमतफलकरणनिपुणतरमाराध्य,
लक्ष्मीश दलितदितिजमवजितपरमवनतमुनिवरससाध्यम् ।
सर्वज्ञ गरुडगमनमहिपतिकृतरुचिरशयनमनघ नव्य,
त वन्दे कनकवसनतनुरुचिजितजलदपटलमजित दिव्यम् ॥ ६०५ ॥

यथा वा, हलायुधे[१] *—

श्रीकण्ठ त्रिपुरदहनममृतकिरणशकलकलितशिरस रुद्रं,
भूतेश हतमुनिभयमखिलभुवनमितचरणयुगमीशानम् ।
सर्वज्ञ वृषभगमनमहिपतिकृतवलयरुचिरकरमाराध्य,
त वन्दे भवभयनुदमभिमतफलवितरणगुरुमुमया युक्तम् ॥ ६०६ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अपवाह २६३.

२६४ अथ मागधी

अत्रैव वसुभगणानन्तर गुरुद्वयदानेन मागधीवृत्त भवति । तल्लक्षण यथा —

भगणाष्टकगुरुयुगला रसयुगवर्णा रसाग्निराशिकला ।
पन्नगपिङ्गललपिता विज्ञेया मागधी सुधिया ॥ ६०७ ॥

यथा –

माधव विद्युदिय गगने तव सतनुतें नवकाञ्चनरञ्जितवस्त्रं,
नीरदवृत्तमिद गगनेऽपि च भावयति प्रसभ तव देहमहास्त्रम् ।
इन्द्रशरासनजालमिद तव वक्षसि भावयते[१] वनमालतिमाला,
मानय मे वचन कुरु सम्प्रति सुन्दर चेतसि भावयतामिह बालाम् ॥६०८॥

इति मागधी २६४.

इयमेव च द्वात्रिंशत्कलका मागधी सवया इत्युक्ता पूर्वखण्डे । अत्र तु गुरुद्वयमधिकमिति षड्त्रिंशत्कलेति, ततो भेद. । वर्णप्रस्तारत्वाच्च षड्विंशत्यक्षरनियम । *अतएव च जातिवृत्तसाकर्येण छन्द सन्दर्भवैचित्रीमावहतीति सर्वत्र रहस्य चाकसीति छन्द शास्त्रेषु ।*

---

१ ख संतनुते । *-* चिह्नगतोऽय पाठ. क प्रतौ नास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीकाया अ० ७, कारिकाया ३२ उदाहरणम् ।

अथान्त्य सर्वलघु—

२६५. अथ कमलदलम्

सहचरि ! विकचकमलमुखि ! वसुमितसुनगणमिह विरचय,
तदनु सकलपदविशदसुरभिकुसुमयुगमपि परिकलय ।
रसयुगपरिमितपदगतलघुमनुकलय कमलदलमिति,
तदिह मनसि कुरु सुरुचिरगुणवति ! कथयति फणिपतिरपि ।। ६०६ ।।

यथा–

कलुषशमन ! गरुडगमन ! कनकवसन ! कुसुमहसन ! [जय,
ललितमुकुट ! दलितशकट ! कलितलकुट ! रचितकपट ! जय ।
कमलनयन !][1] जलधिशयन ! धरणिधरण ! मरणहरण ! जय,
सदयहृदय ! पठितसुनय ! विदितविनय ! रचितसमय ! जय ।। ६१० ।।

इति कमलदलम् २६५.

[2]अत्रापि प्रस्तारगत्या रसलोचनवर्णस्य कोटिषट्कं एकसप्ततिलक्षाणि वसुसहस्राणि चतुषष्ट्युत्तराणि अष्टौ शतानि च भेदाः ६७१०८८६४ तेषु भेदपञ्चकमभिहित, शेषभेदा. प्रस्तार्य गुरूपदेशतः स्वेच्छया नामानि आरचय्य सूचनीया इति सर्वमवदातमिति ।[1]*

इति षड्विंशत्यक्षरम् ।

उक्तग्रन्थमुपसहरति[2]—

लक्ष्यलक्षणसयुक्त मया छन्दोऽत्र कीर्तितम् ।
प्रत्युदाहरणत्वेन क्वचित् प्राचामुदाहृतम् ।। ६११ ।।
सुजातिप्रतिभायुक्तं सालङ्कार स्फुरद्गुणम् ।
कुर्वन्तु सुधिय कण्ठे वृत्तमौक्तिकमुत्तमम् ।। ६१२ ।।
सर्वगुर्वादिलघ्वन्तप्रस्तारस्त्वतिदुष्कर ।
इति विज्ञाय वाद्यन्तभेदकल्पनमीरितम् ।। ६१३ ।।
पञ्चषष्ठ्यधिक नेत्रशतक समुदीरितम् ।
त्यक्त्वा लक्षणमित्राणि[3] वर्णवृत्तमिति स्फुटम् ।। ६१४ ।।
यथामति यथाप्रज्ञमवधार्य मनीषिभि ।
शोधनीय प्रयत्नेन बद्ध सन्तोऽयमञ्जलि ।। ६१५ ।।

---

१ [-] कोष्ठगतोंऽश क प्रतौ नास्ति ।

२ पक्तिचतुष्टय नास्ति क प्रतौ । ३. ख नास्ति पाठः । ४ ख वृत्तानि ।

*टिप्पणी—१ लभ्यशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या. ।

अत्र चैकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारपिण्डसंख्या—

रसलोचनसप्ताश्वचन्द्रदृग्वेदवह्निभि ।
आत्मना योजितैर्वामगत्या ज्ञेया मनीषिभिः ॥ ६१६ ॥

इत्यस्मत्पितृचरणप्रदीपित 'पिङ्गलप्रदीपभाष्य'* निर्दिष्टदिशा 'त्रयोदश कोटयो द्विचत्वारिंशल्लक्षाणि सप्तदशसहस्राणि षड्विंशत्युत्तराणि सप्तशतानि च १३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारस्य।

षड्विंशतिःसप्तशतानि चैव तथा सहस्राण्यपि सप्तपंक्ति ।
लक्षाणि दृग्वेदसुसम्मितानि कोटचस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥६१७॥

इति मदुपदिष्टपूर्वखण्डोक्तपिण्डसंख्या च सिंहावलोकनशालिभिरनुसन्धातव्या इति सर्वमनवद्यम् ।

इति श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखरचन्द्रशेखरभट्टविरचिते
[1]श्रीवृत्तमौक्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षर-
प्रस्तारेष्वाद्यन्तभेदसहितवृत्तनिरूपण-
प्रकरण प्रथमम् ।



१ ग वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरान्तप्रस्तारे ।

*टिप्पणी—१ लक्ष्मीनाथभट्टकृताया प्राकृतपैङ्गलवृत्तौ २११ पद्यस्य टीकायाम् ।

द्वितीयं प्रकीर्णक-प्रकरणम्

अथ प्रस्तारोत्तीर्णानि कतिचिद् वृत्तानि वर्णनियमरहितान्यभिधीयन्ते । तत्र प्राचीनानां सग्रहकारिका—

१–४ अथ भुजङ्गविजृम्भितस्य चत्वारो भेदाः

वेदैः पिपीडिका स्यान्नवभिः करभश्चतुर्दशभि ।
पणवमिद तु शरैश्चेन्माला इह मध्यगैर्लघुभिरधिकै ॥ १ ॥

इति भुजङ्गविजृम्भितभेदनिरूपणम् १–४ *[1]

---

*टिप्पणी—१ ग्रन्थकारेण द्वितीयखण्डस्य द्वादशप्रकरणे विज्ञापितमिद यदस्य द्वितीयखण्डस्य द्वितीयप्रकरणे पिपीलिका-पिपीलिकाकरभ - पिपीलिकापणव-पिपीलिकामालाच्छन्दांसि लक्षणोदाहरणसहितानि निरूपितानि'। परमत्र चतुर्वृत्ताना लक्षणोदाहरणानि क्वचिदपि नैव दृश्यन्ते, केवल त्वत्र प्राचीन-सग्रहकारिकैव समुपलभ्यते । कारिकाया पूर्वापरप्रसङ्गरहितत्वात् लक्षणान्यपि न प्रस्फुटीभवन्ति । अत कलिकालसर्वज्ञ-हेमचन्द्राचार्यप्रणीताच्छन्दोनुशासनादेषा चतुर्वृत्ताना लक्षणोदाहरणान्यध प्रस्तूयन्ते । वृत्तान्येतानि सन्ति षड्विंशत्यक्षरात्मक-भुजङ्गविजृम्भितस्यैव भेदरूपाणि ।

"मातनीजभ्रा पिपीलिका जणे. ।३८५।

[व्या०] मद्वय तगणो नगणचतुष्टय जभरा' । जणैरिति अष्टभिः पञ्चदशभिश्च यति. ।

यथा–

निष्पत्यूह पुण्या लक्ष्मीमविरतमभिलषसि यदि रमयितुं सुख च यदीच्छसि,
स्यात् न्यायोन्मीलद्वुद्धे लघुभिरपि सह बहुभिरिह कुरु मा विरोधपद तदा ।
विस्फूर्जत्पूत्कारं क्रीडाकवलितसकलमृगकुलमजगरं भुजङ्गममुन्मद,
सङ्घात कृत्वा पश्यैता ग्लपितवपुषमनवधिरचितरुजा अदन्ति पिपीलिका ॥३८५॥

एषैव नीपरत पञ्च-दश-पञ्चदशलवृद्धाक्रमेण करभ. ॥३५॥ पणव ॥४०॥
माला ॥४५॥—॥३८६॥

[व्या०] एषैव पिपीलिका चतुर्भ्यो नगणेभ्य परत पञ्चभि, दशभि, पञ्चदशभिश्च लघुभिर्वृद्धा शेषगणेषु तथैव स्थितेषु क्रमेण करभादयो भवन्ति । तेऽत्र पञ्चभिर्वृद्धा-पिपीलिकाकरभ । यथा—

नित्य लक्ष्मच्छायाछन्न कलयतु कथमिव तव
वदनरुचिममृतरुचिरिचर क्षयसयुत ,
तुल्य नाब्ज स्फूर्जद्धूलीविधुरितजननयन-
युगमतिमृदुकरचरणस्य निर्मलचारुण ।

५, अथ द्वितीयत्रिभङ्गी

प्रथमत इह कुरु सहचरि ! दश-परममपि च भ
कुरु शेषे गुरुयुग्म हस्तसुयुक्तं,
पुनरपि गुरुयुग-लघुयुग-गुरुयुगमपि कुरु,
जल्पति नागः कृतराग. पीतविभागः ।
श्रुतिपदमिह सखि ! सममिति विरचय शुभदति[1]
वेदहगुक्ता विरतौ मात्रा कुरु युक्ता,
वसुरसशशिमितकलमिह कलय सकलपद-
मङ्गदभङ्गी सुखरङ्गी सज्जनसङ्गी ॥ २ ॥

---

१. ख. वरतनु ।

*टि०—कण्ठस्येय दासी श्यामापरभृतयुवतिरपि
मधुपरिचयकलविरुतिर्निसर्गकलध्वने ,
भ्रूवल्लीभङ्गे छेकाया हरिणनयनमचतुर-
मतिललिततनु करभोरु ते सदृश दृश ॥ ३८६ ॥

दशभिर्वृद्धापिपीलिकापणव । यथा—

रुन्दोऽमन्दः कुन्दच्छाय शरदमलघनतुहिनविकच-
कुमुदवनहरहसितसितः शशाङ्ककरोज्ज्वल ,
तारः पारावारापारः स्थलजलगगनतलसकल-
भुवनपथधवलनपरिचित प्रसाधितदिङ्मुख ।
लोकालोकच्छेद गत्वा दृढकठिनविकटदिग-
वधितटघटनविवलनचलयितो विशुद्धयशश्चयः,
प्रोत्तुङ्गः श्वेतप्राकारो ध्वनितगुणपणव तव जयति
नृपवर नवललितवसतेर्जगत्त्रितयश्रिय ॥३८७॥

पञ्चदशभिर्वृद्धा पिपीलिकामाला । यथा—

उत्फुल्लाम्भोजाक्ष्यास्तस्या कुसुमशरसुभग तव विरहदव
इह हि जयिनि समुपवरणविषये व्यधायि सखीजनैः,
अङ्गे वासः कर्पूराम्भस्तिमितशुचितुहिनकिरणकरपरि-
भवचतुरधवलिमकुचतटयुगे सुमौक्तिकदाम च ।
रम्भागुल्म लीलागार मलयजरसकलितवसुधामभिनव-
विकचकुमुदवनदलसमुदयैश्च तल्पककल्पना,
नव्या मौलौ मल्लीमाला तदिदमखिलमपि दवहुतवहरुहि-
परिचितमहिम विरचयति मुहु प्रदाहमहाज्वरम् ॥ ३८८ ॥"

[छन्दोनुशासनम् द्वि० अ०]

द्वकलघुदशकस्यान्ते भगण-गयुग-सगण-गुरुयुगलम् ।
लघुयुगलं गुरुयुगल यदि घटित स्यात् त्रिभङ्गिकावृत्तम् ॥ ३ ॥

यथा

स जयति हर इह वलयितविषधर तिलकितसुन्दरचन्द्र
परमानन्द सुखकन्द. ।
वृषभगमन डमरुधरण नयनदहन जनितातनुभङ्ग
कृतरङ्ग सज्जनसङ्ग ।
जयति च हरिरिह करधृतगिरिवर विनिहतकसनरेश.
परमेश. कुञ्चितकेशः ।
गरुडगमन कलुषशमनचरणशरणजनमानसहस
सुवतस. पालितवश. ॥ ४ ॥

इति द्वितीयत्रिभङ्गी ५.

६ अथ शालूरम्

कर्णद्विजवरगणमिह रसपरिमितमतिसुरुचिरमनुकलय कर,
शालूरममलमिति विकचकमलमुखि ! सखि ! सहचरि ! परिकलय वरम् ।
नेत्रानलकलमिदमतिशयसहृदय विशदहृदय सुखरसजनकम् ।
नागाधिपकथितमखिलविबुधजनमथितमगणितगुणगणकनकम् ॥ ५ ॥

यथा–

गोपीजनवलयित - मुनिगणसुमहितमुपचितदितिसुतमदहरणं ,
व्यर्थीकृतजलधर-करधृतगिरिवर-गतभय-निजजनसुखकरणम् ।
वृन्दावनविहरण - परपदवितरण - विहितविविधरसरभसपरं ,
पीताम्बरधरमरुणचरणकरमनुसर सखि ! सरसिजनयनवरम् ॥ ६ ॥

इति शालूरम् ६.

इति प्रकीर्णकं वृत्तमुक्तं सद्वृत्तमौक्तिके ।
प्रस्तारगत्या वृत्तानि शेषाण्यूह्यानि पण्डितै. ॥ ७ ॥

इति प्रकीर्णक–प्रकरणं द्वितीयम् ।

तृतीयं दण्डक-प्रकरणम्

अथ दण्डकाः

तत्र यत्र पादे द्वौ नगणौ रगणाश्च सप्त भवन्ति स दण्डको नाम षड्-विंशत्यक्षरपादस्य वृत्तस्यानन्तर 'दण्डको नौ र' [॥७।३३॥][1]* इति सूत्रकार-पाठात् सप्तविंशत्यक्षरत्वमेव युक्त दण्डकस्य। प्रथम तावदेकाक्षरश्र्यादिवृत्ताना-मेकैकाक्षरवृद्धचा प्रस्तारप्रवृत्तिरत ऊर्ध्वं पुनरेकैकरेफवृद्धचा प्रस्तार। तल्लक्षण यथा—

१. अथ चण्डवृष्टिप्रपात

नगणयुगलादनन्तरमपि यदि रगणा भवन्ति सप्तैव।
दण्डक एष निगदितश्चण्डकवृष्टिप्रपात इति ॥ १ ॥

यथा—

इह हि भवति दण्डकारण्यदेशे स्थितिः पुण्यभाजा मुनीना मनोहारिणी,
त्रिदशविजयिवीर्यदृप्यद्दशग्रीवलक्ष्मीविरामेण रामेण ससेविते।
जनकयजनभूमिसम्भूतसीमन्तिनीसीमसीतापदस्पर्शपूताश्रमे,
भुवननमितदिव्यपद्माभिधानाम्बिकातीर्थयात्रागतानेकसिद्धाकुले ॥ २ ॥

इति चण्डवृष्टिप्रपातः १.

२ अथ प्रचितक

'शेष प्रचितकः' [७।३६][2]* इति सूत्रकारोक्तदिशा [चण्डवृष्टिप्रपातादूर्ध्वं अधिकैकरेफदानेन प्रस्तारे कृते दण्डक. प्रचितक इति सज्ञा लभते। लक्षण,

यथा—

यदि ह न-द्वयानन्तरमपि रेफा स्युर्वसुप्रमिताः।
प्रचितक इति तत्सज्ञा कथिता श्रीनागराजेन ॥ ३ ॥

यथा—

प्रथमकथितदण्डक][1] चण्डवृष्टिप्रपाताभिधानो मुने पिङ्गलाचार्यनाम्नो मत,
प्रचितक इतितत्पर[2] दण्डकानामिय जातिरेकैकरेफाभिवृद्धचा यथेष्ट भवेत्।
स्वरुचिरचितसज्ञया तद्विशेषैरशेषै पुन काव्यमन्येपि कुर्वन्तु वागीश्वरा,
भवति यदि समानसख्याक्षरैस्तत्र पादव्यवस्था ततो दण्डक पूज्यतेऽसौ जनै.

इति प्रचितकः ३. ॥ ४ ॥

---

१ [–] कोष्ठकान्तर्गतोऽशो नास्ति क प्रतौ। २. 'प्रचित इति ततः पर' इति हलायुधे।
*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र।
२ छन्द शास्त्र-हलायुधटीका।

३ अथ अर्णादयः

पितृचरणैरिह कथिता प्रतिचरणविवृद्धिरेफा ये ।
दण्डकभेदा पिङ्गलदीपे[1] *ऽप्यर्णादयः स्फुटतः ॥ ५ ॥
तत एव हि ते विबुधैः विज्ञेया रेफवृद्धित प्राज्ञैः ।
प्रस्तार्य ते विधेया इत्युपदेश कृतोऽस्माभिः ॥ ६ ॥

अत्रापि समानसख्याक्षर एव पादो भवतीति ध्येयम् । तत्रार्णो यथा—

जय जय जगदीश विष्णो हरे राम दामोदर श्रीनिवासाच्युतानन्त नारायण,
त्रिदशगणगुरो मुरारे [मुकुन्दासुरारे][1] हृषीकेश पीताम्बर श्रीपते माधव ।
गरुडगमन कृष्ण वैकुण्ठ गोविन्द विश्वम्भरोपेन्द्र चक्रायुधाधोक्षज श्रीनिधे,
बलिदमन नृसिंह शौरे भवाम्भोधिघोरार्णसि त्व निमज्जन्त[2] मभ्युद्धरोपेत्य माम्७

इत्युदाहरणम्[3]

इत्यर्णादयो दण्डकाः ३.

४ अथ सर्वतोभद्रः

रसपरिमितलघुकान्ते यदि यगणा स्युर्मुनिप्रमिताः ।
दण्डक एष निगदितः पिङ्गलनागेन सर्वतोभद्रः ॥ ८ ॥

यथा–

जय जय यदुकुलाम्भोधिचन्द्र प्रभो वासुदेवाच्युतानन्तविष्णो मुरारे,
प्रबलदितिजकुलोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्रासुरारे ।
प्रणतजनपरितापोग्रदावानलच्छेदमेघौघनारायण श्रीनिवास,
चरणनख[ज]सुधांशुच्छटोन्मेषनि शेषिताशेषविश्वान्धकारप्रकाश ॥९॥

एतस्यैव अन्यत्र **प्रचितक** इति नामान्तरम् ।

इति सर्वतोभद्र. ४.

---

१ [–] कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क. प्रतौ । २. ध्वस्तमज्जन्त । ३. क. इति प्रत्युदाहरणम् ।

*टिप्पणी–१. "अथार्णादयः–प्रतिचरणविवृद्धिरेफाः स्युरर्णार्णवव्यालजीमूतलीलाकरोद्दाम-शङ्खादय. ।

यदि नगणद्वयान्तरमेव प्रतिचरण विवृद्धिरेफाः क्रमात् समधिकरगणास्तदा अर्ण-अर्णव-व्याल-जीमूत-लीलाकर-उद्दाम-शङ्खादयो दण्डका स्युरिति । एतेन नगणयुगल-वसुरेफेण अर्ण । तत परे क्रमाद् रगणवृद्धया ज्ञेया । आदि-शब्दादन्येऽपि रगणवृद्धया स्ववुद्धया नामसमेता दण्डका विधेया इत्युपदिश्यते ।
(प्राकृतपैंगलम् पृ० ५०८)

५ अथ अशोककुसुममञ्जरी

रगण-जगण-क्रमेण हि रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ता. ।
पिङ्गलनागनिगदिता ज्ञेया साऽशोककुसुममञ्जरिका ॥ १० ॥

यथा–

राधिके विलोकयाद्य केलिकानन पिकावलीविरावराजित मनोरम च,
सुन्दराङ्गि चारुचम्पकस्रगावली-विराजिते विलोलहारमण्डितेऽपर च ।[1]
मद्वच·[2] शृणुष्व ते हित च वच्मि हे सखि प्रमोदकारण मनोविनोदन च,
फुल्लनागकेसरादिपुष्परेणुभूषित भजाद्य नन्दनन्दन मनोहर च ॥ ११ ॥

इति अशोककुसुममञ्जरी ५.

६. अथ कुसुमस्तवकः

सखि ! यत्र रन्ध्र-सगणा श्रुतिपदघटिता विराजन्ते ।
कुसुमस्तवक दण्डकमाह तदा त तु पिङ्गलो नाग ॥ १२ ॥

यथा–

सखि ! नन्दसुतं कमनीयकलाकलित करुणावरुणालयमीशहरिं,
रजनीशमुख भवभीतिहर नवनीतकर भवसागरपारतरिम् ।
चपलारुचिराशुकवल्लिधर कमलावलिमालितमालि तमालरुचिं,
भवमोचन-पङ्कजलोचनरोचनरोचितभालमह शरण कलये ॥ १३ ॥

इति कुसुमस्तवक. ६.

७ अथ मत्तमातङ्गः

यत्र स्वेच्छा घटिता भवन्ति विहगा[3] सरोजाक्षि ! ।
पिङ्गलभुजगाधिपति कथयति त मत्तमातङ्गम् ॥ १४ ॥

यथा–

यामुने सैकते रासखेलागत गोपिकामण्डलीमध्यग वेणुवाद्योतर,
मञ्जुगुञ्जावनम्र जगन्मोहन चारुहासश्रिया सञ्चित कुन्तलैरञ्चितम् ।
दिव्यकेलीकलोल्लासमम्भावित दामवृन्दापदुन्मूलक कामनापूरक,
कल्पवृक्षस्य मूले स्थित चन्द्रिकोत्तसहाराञ्चित चेतसा कृष्णचन्द्र भजे ॥१५॥

इति मत्तमातङ्ग:७

---

१ [illegible] प्रगौ नाग्नि । २ क. मे वच । ३. ग. विगहगा ।

८. अथ अनङ्गशेखरः

जगण-रगण-क्रमेण च रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ता (गुर्वन्ता)।
फणिपतिपिङ्गलभणिता.[1] स ज्ञेयोऽनङ्गशेखरः कविभि. ॥ १६ ॥

यथा–

विलोलचारुकुण्डल स्फुरत्सुगण्डमण्डल सुलोलमौलिकुन्तल स्मरोल्लसत्,
नवीनमेघमण्डलीवपुर्विभासिताम्वरप्रभातडित्समाश्रितः स्मितं दधत्।
मयूरचारुचन्द्रिकाचयप्रपञ्चचुम्बितोल्लसत्किरीटमण्डित समुच्छ्वसन्,
विलासिनीभुजावलीनिरुद्धबाहुमण्डलः करोतु व. कृतार्थता जनानवन्[2] ॥१७॥

इति अनङ्गशेखर ८.

इति दण्डकाः

एवमन्येपि नकारद्वयानन्तरमनियतैस्तकारैः दण्डका: प्रबन्धेषु दृश्यन्ते। तेऽस्माभिरपि यतत्वादेवोपेक्षिता. ग्रन्थविस्तरभयाच्चेह न लक्षिता, इत्युपरम्यते[1]*।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके[तृतीय]दण्डकप्रकरणम्।



१. ख भणित। २. ख. जनाननवन्।

*टिप्पणी—दण्डकवृत्तस्य ग्रन्थान्तरेपु प्राप्तभेदा: पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः।

चतुर्थं अर्द्धसम-प्रकरणम्

अथ अर्द्धसमवृत्तानि लक्ष्यन्ते—

चतुष्पद भवेत् पद्यं द्विधा तच्च प्रकीर्तितम् ।
जातिर्वृत्तप्रभेदेन छन्दः [शास्त्रविशारदैः ॥ १ ॥
मात्राकृता भवेज्जातिर्वृत्ता वर्णकृत मतम् ।
तच्चापि त्रिविध प्रोक्त समार्द्ध][1] समक तथा ॥ २ ॥
विषम चेति तस्यापि लक्ष्यते लक्षण त्विह ।
चतुष्पदी समा यस्य तत्सम परिकीर्तितम् ॥ ३ ॥
यस्य स्यात् प्रथमः पादस्तृतीयेन समस्तथा ।
द्वितीयस्तु चतुर्थेन भवत्यर्द्धं सम हि तत् ॥ ४ ॥
यस्य पादचतुष्क स्याद् भिन्न लक्षणभेदतः ।
तदाहुर्विषम वृत्तं छन्द शास्त्रविशारदा ॥ ५ ॥
सम तत्र मया प्रोक्तमथार्द्धसममुच्यते ।
यथा श्रीनागराजेन भाषित सूत्रवृत्तिभिः ॥ ६ ॥

तत्र प्रथम—

१. पुष्पिताग्रा

यदि रसलघुरेफतो यकारो, विषमपदे परिभाति पन्नगोक्ता[2] ।
सम इह चरणे च नो जजौ रो, गुरुरपि चेज्जयतीह पुष्पिताग्रा ॥ ७ ॥

यथा—

सहचरि ! कथयामि ते रहस्य, न खलु कदाचन तद्गृह व्रजेथाः[3] ।
इह विषमविषमा गिरः सखीना, सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति ॥ ८ ॥

यथा वा—

प्रसरति पुरत सरोजमाला, तदनु मदान्धमधुव्रतस्य पङ्क्तिः ।
तदनु धृतशरासनो मनोभू[4]स्तव हरिणाक्षि विलोकन तु पश्चात् ॥ ९ ॥

इति वा—

दिशि दिशि परिहासगूढगर्भाः, पिशुनगिरो गुरुगञ्जन च तादृक् ।
सहचरि ! हरये निवेदनीय, भवदनुरोधवशादय विपाक. ॥ १० ॥

---

१ कोष्ठगोऽश क. प्रतौ नास्ति । २. ख पन्नगोक्तः । ३ ख. व्रजेयाम् । ४ क मनोहर ।

अथ च—

इह खलु विषम. पुरा कृतानां, विलसति जन्तुषु कर्मणां विपाक. ।
क्व जनकतनया क्व रामजाया, क्व च रजनीचरसङ्गमापवाद: ।। ११ ।।

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतश. प्रत्युदाहरणानि[1] ।

इति पुष्पिताग्रा १.

२. अथ उपचित्रम्

विषमे यदि सौ सलगा प्रिये ! भौ च समे भगगा: सरसाश्चेत् ।
फणिना भणित गणित गणै-र्वृत्तमिद कथित ह्युपचित्रम् ।। १२ ।।

यथा—

नवनीतकर करुणाकरं, कालियगञ्जनमञ्जनवर्णम् ।
भवमोचन-पङ्कजलोचन, चिन्तय चेतसि हे सखि ! कृष्णम् ।। १३ ।।

इति उपचित्रम् २.

३. अथ वेगवती

विषमे यदि सात्रशनिर्गो, भत्रितय समके गुरुयुग्मम् ।
कविना फणिना भणितैव, वेदय चेतसि वेगवतीयम् ।। १४ ।।

यथा—

सखि ! नन्दसुतं कमनीय, यादववशधुरन्धरमीशम् ।
सनकादिमुनीन्द्रविचिन्त्य, कुञ्जगतं परिशीलय कृष्णम् ।। १५ ।।

इति वेगवती ३.

४. अथ हरिणप्लुता

विषमे यदि सौ सगणो लगौ, सखि ! समे नगणे भभरा कृता: ।
कविना फणिना परिजल्पिता, सुमुखि ! सा गदिता हरिणप्लुता ।। १६ ।।

यथा—

नवनीरदवृत्तमनोहर[2], कनकपीतपटद्युतिसुन्दर. ।
अलिके तिलकीकृतचन्दन-स्तव तनोतु मुदं मधुसूदन: ।। १७ ।।

इति हरिणप्लुता ४.

५. अथ अपरवक्त्रम्

विषम इह पदे तु नौ रलौ, गुरुरपि चेद् घटित. सुमध्यमे ।
सम इह चरणे नजौ जरौ, तदपरवक्त्रमिदं भवेन्न किम् ।। १८ ।।

---

१. ख. समुदाहरणानि ।   २. ख. वृन्दमनोहर: ।

यथा—

स्फुटमधुरवच प्रपञ्चनै, कलितमिद हृदय तदैव ते ।
अलमलमधुना तवानन, न खलु कदापि विलोकयाम्यहम् ॥ १६ ॥

यथा वा, हर्षचरिते [प्रथमोच्छ्वासे]—

तरलयसि दृश किमुत्सुका-मविरतवासविलासलालसे[1] ।
अवतर कलहसि वापिका, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥ २० ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अपरवक्त्रम् ५.

६. अथ सुन्दरी

विषमे यदि सौ लगौ लगौ, समके स्भौ रलगा भवन्ति चेत् ।
घनपीनपयोधरे ! तदा, कथिता नागनृपेण सुन्दरी ॥ २१ ॥

यथा–

अयि मानिनि ! मानकारण, ननु तस्मिन्न विलोकयाम्यहम् ।
कुरु सम्प्रति मे वचोऽमृत, प्रियगेह व्रज किं विडम्बनै. ॥ २२ ॥

यथा वा–

अथ तस्य विवाहकौतुक, ललित बिभ्रत एव पार्थिव· ।
वसुधामपि हस्तगामिनी-मकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ २३ ॥*[1]

इति रघुवशादिमहाकाव्येषु शतश· प्रत्युदाहरणानि[2] ।

इति सुन्दरी ६.

७. अथ भद्रविराट्

यस्मिन् विषमे तजौ रगौ चेद्, म सो ज समके गुरू भवेताम् ।
तद्वै कथितं कवीन्द्रवर्यै—स्तज्ज्ञैर्भद्रविराडिति प्रसिद्धम् ॥ २४ ॥

यथा–

यद्वेणुविरावमोहितास्ता, गोप्य स्व वसन च न स्मरेयु[3] ।
द्वार्येव[4] निवारिता जनोघै-र्ध्यातव्ये कृतनिश्चया वभूवु ॥ २५ ॥

इति भद्रविराट् ७

---

१. मकलुषमानसवासलालिते 'हर्षचरिते' । २. ख. समुदाहरणानि । ३. ख. मरन्ति । ४. क. द्वाप्येव ।

*टिप्पणी—१ रघुवश, स० ८, पद्य १

८ अथ केतुमती

विषमे सजौ सखि ! सगौ चेद्, भ समके रनौ गुरुयुगाभ्याम् ।
मिलितौ यदैव भवतस्तौ, केतुमतीति सा भवति वृत्तम् ॥ २६ ॥

यथा–

यमुनाविहारकलनाभि, कालियमौलिरत्ननटनाभि ।
विदितो जनेन परमेश, केवलभक्तितस्तु भुवनेश ॥ २७ ॥

इति केतुमती ८.

६ अथ वाङ्मती

यद्ययुग्मयोः रजौ रजौ कृतौ च, जरौ जरौ च युग्मयोर्गसगतौ वा ।
हारगङ्कक्रमैरयुग्मतश्च, समानयोर्विपर्ययेण वाङ्मतीयम् ॥ २८ ॥

यथा–

काञ्चनाभ-वाससोपलक्षितश्च, मयूरचन्द्रिकाचयैर्विराजितश्च ।
नन्दनन्दन. पुनातु सन्तत च, मनोविनोदन. प्रकामभासुरश्च ॥ २९ ॥

अत्र समयो पादयो पादान्तगुरुत्वमवधेयम् ।

इति वाङ्मती ६.

१०. अथ षट्पदावली

वाङ्मत्येव हि सुकले, विपरीता भवति चेद् बाले ! ।
कथयति पिङ्गलनागस्तामेता षट्पदावली रुचिराम् ॥ ३० ॥

ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति षट्पदावली १०.

इत्यर्द्धसमवृत्तानि कथितान्यत्र कानिचित् ।
सुधीभिरूह्यान्यान्यानि प्रस्तार्य स्वमनीषया ॥ ३१ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिके [चतुर्थं] अर्द्धसमप्रकरणम् ।



पञ्चमं विषमवृत्त-प्रकरणम्

अथ विषमवृत्तानि

भिन्नचिह्नचतुष्पादमुद्दिष्टं विषम मया ।
अथेदानी तदेवात्र सोदाहरणमुच्यते ॥ १ ॥

तत्र प्रथमम्—

१. उद्गता

सजसा लघुः प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तदनु भनभा गयुता, सजसा जगौ चरमतरपदोद्गता ॥ २ ॥

यथा—

विललास गोपरमणीषु, तरणितनयातटे हरि. ।
वशमधरदले कलयन्, वनिताजनेन निभृत निरीक्षितः ॥ ३ ॥

इति उद्गता १.

अथोद्गताभेदः

सजसा लघु प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मतः ।
स्युस्तदनु भनलजा गयुता, सजसा जगौ च खलु तुर्यतो भवेत् ॥ ४ ॥

तृतीयचरणे वा स्याद् भेद. समुपलभ्यते । ततो **भारवि-माघादौ** उद्गतेयमुदीरिता । यथा—

अथ वासवस्य वचनेन, रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।
क्लान्तिरहितमभिराधयितु, विधिवत्तपासि विदधे धनञ्जय ॥ ५ ॥*[1]

यथा वा, माघे*[2]

तव धर्मराज इति नाम, सदसि यदपष्ठु पठ्यते ।
भौमदिनमभिदधत्यथवा, भृशमप्रशस्तमपि मङ्गल जना. ॥ ६ ॥

इति उद्गताभेदः १.

२. अथ सौरभम्

प्रथमं द्वितीयमथ तुर्य-मिह सममुशन्ति पण्डिता ।
सौरभ यदि तृतीयपदे, विहगो नभौ गुरुरपीह दृश्यते ॥ ७ ॥

---

*टिप्पणी—१. किरातार्जुनीयम्, स० ११, पद्य १ ।
,, २. शिशुपालवधम्, स० १५, पद्य १७ ।

यथा–

यमुनातटे विहरतीह, सरसविपिने मनोहरे ।
रासकेलिरभसेन सदा, व्रजसुन्दरीजनमनोहरो हरि ॥ ८ ॥

इति सौरभम् २.

३ अथ ललितम्

न-युगं च हस्तयुगलं च, सुमुखि ! चरणे तृतीयके ।
भवति सुकविविदितं ललित, कथित तदेव भुवने मनोहरम् ॥ ९ ॥

यथा–

व्रजसुन्दरीसहचरेण[1], मुदितहृदयेन गीयते ।
सुललितमधुरतरं हरिणा, करुणाकरेण सततं मुरारिणा ॥ १० ॥

इति ललितम् ३.

४ अथ भावः

षट्संख्याता हाराः, पादेषु त्रिष्वेवम् ।
अन्ते कान्त यस्मिन्, भ-त्रय-ग-द्वितय[2] वद भावम् ॥ ११ ॥

यथा–

राधामाधायैनां, चित्ते बाधा त्यक्त्वा ।
कल्पान्ते य· क्रीडेत्, त किल चेतसि भावय नित्यम् ॥ १२ ॥

इति भावः ४.

५. अथ वक्त्रम्

कदाचिदर्द्धसमकं, वक्त्रं च विषम भवेत् ।
द्वयोस्तयोरुपान्तेषु, वृत्त तदधुनोच्यते ॥ १३ ॥

तत्र वक्त्रम्–

युग्भ्या वक्त्र मगौ स्यातां, सागराद् य[3]स्त्वनुष्टुभि ।
ख्यात सर्वगणैरेतत्, प्रसिद्धं तद्धलायुधे ॥ १४ ॥

यथा–

मुखाम्भोजं सदा स्मेर, नेत्र नीलोत्पल फुल्लम् ।
गोपिकाना मुरारातेश्चेतोभृङ्ग जहारोच्चै. ॥ १५ ॥

इति वक्त्रम् ५

---

१. ख. समुदयेन । २ क. यत्रयगद्वितयम । ३ चतुर्थाक्षरादनन्तर यगणो देय इत्यर्द· ।

६ अथ पथ्यावक्त्रम्

अपि च–

युजोश्चतुर्थतो येन (जेन), पथ्यावक्त्रं प्रकीर्तितम् ।
[एवमन्येऽपि भेदास्तु, विज्ञेया गणभेदतः ।। १६ ।।][1]

यथा–

रासकेलिसतृष्णस्य, कृष्णस्य मधुवासरे ।
आसीद् गोपमृगाक्षीणा, पथ्यावक्त्र मधुश्रुति. ।। १७ ।।

इति पथ्यावक्त्रम् ६.

एवमन्यान्यपि गणविभेदात् ज्ञेयानि वक्त्रवृत्तानि ।

अथवा–

पञ्चम लघु सर्वत्र सप्तम द्विचतुर्थयो ।
गुरुषष्ठ तु पादाना शेषेष्वनियमो मत. ।। १८ ।।
अत श्रीकालिदासश्च स्वप्रबन्धे समुज्जगौ ।
तथान्येऽपि कवीन्द्राश्च स्वनिबन्धे बबन्धिरे ।। १९ ।।

यथा–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगत पितरौ वन्दे, पार्वतीपरमेश्वरौ ।। २० ।।*[1]

किञ्च–

प्रयोगे प्रायिक प्राहु केप्येतद् वक्त्रलक्षणम् ।
लोकेऽनुष्टुबिति ख्यातिस्तस्याष्टाक्षरता कृता ।। २१ ।।
तथा नानापुराणेषु नानागणविभेदत. ।
वृत्तमष्टाक्षर वक्त्र, विपमाख्या प्रयाति हि ।। २२ ।।
एव तु विषम वृत्त दिङ्मात्रमिह कीर्तितम् ।
शेपमाकरतो ज्ञेय, सुधीभिर्भावनापरै ।। २३ ।।
पदचतुरूर्द्ध्व वृत्त मात्रासमकमेव च ।
उपस्थितप्रचुपित-मथान्यदपि वृत्तकम् ।। २४ ।।
हलायुधे प्रसिद्धत्वादत्र [नात्युप] योगिन ।
तदग्रन्थगौरवभीत्या च मयका न प्रपञ्चितम्*[2] ।। २५ ।।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीये वृत्तपरिच्छेदे
विषमवृत्तप्रकरण पञ्चमम् ।

---

[1] [-] कोष्ठवर्त्यंशो नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ रघुवश, स० १, प० १

*टिप्पणी—२ पदचतुरूर्द्ध्वादिवृत्ताना लक्षणानि श्रीहलायुधरचित-छन्द सूत्रटीकानुसारेण संक्षेपेणोद्ध्रियन्ते—

पदचतुरूर्ध्वम्—प्रथमचरणे अष्टौ वर्णा, द्वितीयचरणे द्वादशाक्षरवर्णा, तृतीयचरणे षोडस वर्णा, चतुर्थचरणे च विंशतिवर्णा भवन्ति। अस्मिन् वृत्ते गुरुलघुनियमो नास्ति।

आपीडः— [प्र.च] लघु ६, गुरु २। [द्वि च] लघु १०, गुरु २।
[तृ च.] लघु १४, गुरु २। [च च.] लघु १८, गुरु २।

प्रत्यापीडः— [प्र च] गुरु २, लघु ६। [द्वि च] गुरु २, लघु १०।
[तृ च] गुरु २, लघु १४। [च च] गुरु २, लघु १८।

प्रत्यापीडः— [प्र च] ग २, ल ४, ग २। [द्वि.च] ग. २ ल ८, ग. २।
[तृ च] ग २ ल १२, ग २। [च.च] ग २, ल १६, ग २।

मञ्जरी— [प्र च] १२ वर्णा। [द्वि च] ८ वर्णा।
[तृ.च] १६ वर्णा। [च च] २० वर्णा.।

लवली— [प्र च] १६ वर्णा। [द्वि च] १२ वर्णाः।
[तृ च] ८ वर्णा.। [च.च] २० वर्णा.।

अमृतधारा— [प्र च.] २० वर्णाः। [द्वि च] १६ वर्णा.।
[तृ.च] १२ वर्णाः। [च च.] ८ वर्णा।

उपस्थितप्रचुपितम्— [प्र च] म स ज.भ ग ग। [द्वि.च.] स न.ज.र.ग
[तृ च.] न न स [च.च] न न न.ज य

वर्द्धमानम्— [प्र च.] म स ज भ.ग ग [द्वि.च] स.न.ज र.ग
[तृ च.] न न स.न न स. [च च] न.न न ज य

शुद्धविराट्वृषभ— [प्र च] म.स ज भ ग ग. [द्वि च.] स न ज र ग
[तृ च] त ज र. [च च.] न न न ज य.

षष्ठं वैतालीय-प्रकरणम्

१. अथ वैतालीयम्

विषमे रससङ्ख्यकाः कलाः, समकेऽष्टौ न कला. पृथक्कृताः ।
न समात्र पराश्रया कला, वैतालीयेऽन्त्ये र-दण्ड-गा. ॥ १ ॥
विषमे रसमात्रा. स्यु समे चाष्टौ कलास्तथा ।
वैतालीय भवेद् वृत्त[१] तयोरन्ते रलौ गुरु ॥ २ ॥

यथा–

तव तन्वि ! कटाक्षवीक्षितैः, प्रचरद्भिः श्रवणान्तगोचरैः ।
विशिखैरिव तीक्ष्णकोटिभिः, प्रहृत प्राणिति दुष्कर नरः ॥ ३ ॥

अस्य च भूयासि सप्रपञ्चमुदाहरणप्रत्युदाहरणानि **पिङ्गलवृत्तौ** सन्ति, तानि तत एवावधेयानि । [नैषधकाव्ये च द्वितीये सर्गे सन्ति तानि तत एवावधेयानि][२]

इति वैतालीयम् १.

२. अथ औपच्छन्दसकम्

तत्रैवान्तेऽधिके गुरौ स्या-दौपच्छन्दसक कवीन्द्रहृद्यम् ।
फणिभाषितमुत्तम रसाल, पठनीय कविपण्डितैरुदारैः ॥ ४ ॥

यथा–

परमर्मनिरीक्षणानुरक्त, स्वयमत्यन्तनिगूढचित्तवृत्तिम् ।
अनवस्थितमर्थलुब्धमाराद्, विपरीत विजहीहि मित्रमेवम् ॥ ५ ॥

इति औपच्छन्दसकं वैतालीयम् २.

३. अथ आपातलिका

आपातलिका कथितेय, भाद् गुरुकावथ पूर्ववदन्यत् ॥ ६ ॥

यथा–

पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी, वाचा या विकटोन्नतदन्ती ।
आपातलिका पुनरेषा, नृपतिकुलेऽपि न भाग्यमुपैति ॥ ७ ॥

इति आपातलिका ३.

४ अथ नलिनम्

विषमपदैः स्यान्नलिनाख्यम् ॥ ८ ॥

---

१ क. पृते । २. कोष्ठगतोंशो. नास्ति क. प्रतौ ।

[व्या०] विषमैरेव चतुर्भिरापातलिकापदैर्नलिनाख्य वैतालीयमित्यर्थः ।
यथा–

कुञ्चितकेशी नलिनाक्षी, स्थूलनितम्बा रुचिकान्ता ।
पद्मसुहस्ता रुचिरौष्ठी, गोष्ठीरसिका परिणेया ॥ ९ ॥

इति नलिनाख्यं वैतालीयम्

५. अथापर नलिनम्

समचरणैरपि चान्यदुदीते ॥ १० ॥

[व्या०] समैरेव चतुर्भिरापातलिकापादैरपर नलिन भवतीत्यर्थः ।
यथा–

पङ्कजलोचनमम्बुददेहं, बालविनोद-सुनन्दितगेहम् ।
पद्मजशम्भुकृतस्तुतिमीश, चिन्तय कृष्णमपारमनीषम् ॥ ११ ॥

इति अपरं नलिनाख्यं वैतालीयम् ५.

६ अथ दक्षिणान्तिका वैतालीयम्

द्वितीयलस्यान्त्ययोगतः, पदेषु सा स्याद् दक्षिणान्तिका ॥ १२ ॥

[व्या०] द्वितीयलघोरन्त्येन–तृतीयेन योगतश्चतुर्षु पादेषु यत्र सा दक्षिणान्तिका इत्यर्थः। अतएव शुद्धवैतालीयस्य विषमपदैर्दक्षिणान्तिका, समपदैरुत्तरान्तिका इति शम्भुरप्याह ।
यथा–

ववौ मरुद्दक्षिणान्तिको, वियोगिनीप्राणहारक· ।
प्रकम्पिताशोकचम्पको, वसन्तजोऽनङ्गबोधक· ॥ १३ ॥

यथा वा, ममप्रत्युदाहरणम्[1]—

नमोऽस्तु ते रुक्मिणीपते, जगत्पते श्रीपते हरे ।
भवाम्वुधेस्तारयाशु मा, विधेहि सन्मतिं शुभाम् ॥ १४ ॥

इति दक्षिणान्तिका वैतालीयम् ६

७. अथ उत्तरान्तिका वैतालीयम्

शुद्धवैतालीयस्य समपदैरुत्तरान्तिका ॥ १५ ।

यथा–

सहसा सादितकसभूपतिं, धृतगोवर्द्धनशैलमुद्धुरम् ।
यमुनाकुञ्जविहारिण हरिं, यदुवीर कलयाम्यहर्निशम् ॥ १६ ॥

इति उत्तरान्तिका वैतालीयम् ७.

८. अथ प्राच्यवृत्ति·

तुर्यस्य तु शेषयोगतः, प्राच्यवृत्तिरिह युग्मपादयो. ॥ १७ ॥

---

१. ग. ममै(वो)दाहरणम् ।

[व्या०] [चतुर्थलकारस्य शेषेण-पञ्चमेन योगतः प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीय युग्मपादयो.-समपादयोरित्यर्थः ।][1]

यथा- हलायुधे—*[1]

विपुलार्थसुवाचकाक्षरा', कस्य नाम न हरन्ति मानसम् ।
रसभावविशेपपेशलाः, प्राच्यवृत्ति कविकाव्यसम्पद ।। १८ ।।

यथा वा, सुल्हणे—

स्वगुणैरनुरञ्जितप्रज., प्राच्यवृत्तिपरिपालने रतः ।
रणभूमिषु भीमविक्रमो, विन्ध्यवर्मनृपतिर्जयत्यसौ ।। १९ ।।

यथा वा, मम[1] प्रत्युदाहरणम्-

कति सन्ति न गोपबालका., कामकेलिकलनासुकोविदा ।
अयि माधव ! एव केवल, चेतना ननु[2] परिक्षिणोति मे ।। २० ।।

इति प्राच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् ८.

९. अथ उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम्

उदीच्यवृत्तिस्त्वयुग्मयो , भवति तृतीयस्याद्ययोगत ।। २१ ।।

[व्या०] अयुग्मयो -प्रथमतृतीययोः पादयो. तृतीयस्य लघोराद्येन-द्वितीयेन योगादुदीच्यवृत्तिर्नाम वैतालीयम् । यथा-

यथा- हलायुधे*[2]

अवाचकमनूर्जिताक्षर, श्रुतिदुष्ट श्रुतिकष्टमक्रमम् ।
प्रसादरहित च नेष्यते, कविभि काव्यमुदीच्यवृत्तिभिः ।। २२ ।।

यथा वा, ममापि उदाहरणम्—

अवञ्चकमनिन्दित पर, परमेश परमार्थपेशलम् ।
अनाकलितवैभव विभु, जगता वन्द्यमनारत भजे ।। २३ ।।

इति उदीच्यवृत्तिर्वैतालीयम् ९.

१०. अथ प्रवृत्तक वैतालीयम्

प्रवृत्तक पद्भिरेतयो. ।। २४ ।।

[व्या०] उदीच्यवृत्ति-प्राच्यवृत्त्योर्युगपत्प्रवृत्तयो पदै प्रवृत्तक, युक्पादे पञ्चमेन पूर्व सयुज्यते, अयुक्पादे तृतीयेन पूर्वमित्यर्थः ।

---

१ [-]कोष्ठागतांशस्य स्थाने 'समयोरित्यर्थ' इत्यंश एवास्ति क. प्रतौ ।

१. ख ममैवोदाहरणम् । २ ख. न तु ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र-हलायुधटीका अ० ४ का० ३७ उदाहरणम्
२ ,, ,, ,, ४ ,, ३८ ,,

यथा ,हलायुधे*[1]—

जयो भरतवशस्य[1], श्रूयता श्रुतमनोरसायनम् ।
पवित्रमधिक शुभोदय, व्यासवक्त्रकथित प्रवृत्तकम् ।। २५ ।।

प्रत्युदाहरणम्—

हरिं भजत रे जना पर, श्रूयता परमधर्म्ममुत्तमम् ।
न काल इह कालयत्यसौ, सर्वघस्मरघनाघनद्युति[2] ।। २६ ।।

इति प्रवृत्तक वैतालीयम् १०.

११ अथ अपरान्तिका

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका ।। २७ ।।

[व्या] अस्य–प्रवृत्तकस्य समपदकृता–समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भि पादै रचिताऽपरान्तिका ।

यथा, हलायुधे*[2]—

स्थिरविलासनतमौक्तिपेशला[3], [कमलकोमला][4]ङ्गी मृगेक्षणा ।
हरति कस्य हृदय न कामिन , सुरतकेलिकुशलाऽपरान्तिका ।। २८ ।।

यथा वा, सुल्हणे—

तुङ्गपीवरघनस्तनालसा, चारुकुण्डलवती मृगेक्षणा ।
पूर्णचन्द्रवदनाऽपरान्तिका, चित्तमुन्मदयतीयमङ्गना ।। २९ ।।

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

चारुकुण्डलयुगेन मण्डितो, बर्हिबर्हकृतमौलिशेखरः ।
ब्रूत भो. पनसपिप्पलादयो, नन्दसूनुरिह नावलोकित. ।। ३० ।।

इति अपरान्तिका ११.

१२. अथ चारुहासिनी

अयुक्कृता चारुहासिनी ।। ३१ ।।

[व्या०] प्रवृतकस्यैव विषमपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भि पादैर्विरचिता चारुहासिनी नाम वैतालीयम् । किं तल्लक्षणम् ? चतुर्दशमात्रत्व तृतीयेन च द्वितीययोग. ।

---

१ इद भरतभूभृताम् । २. ख द्युति · । ३ कावली 'हलायुधे' । ४. कोष्ठगतोंऽशो नास्ति क प्रतौ ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीका अ० ४, का ३९ उदाहरणम् ।
२ ,, ,, ,, ,, ,, ४१ उदाहरणम् ।

यथा, हलायुधः प्राह*[1]—

मनाक्प्रसृतदन्तदीधितिः, स्मरोल्लसितगण्डमण्डला ।
कटाक्षललिता च कामिनी, मनो हरति चारुहासिनी ॥ ३२ ॥

यथा वा, वृत्तरत्नाकरटीकायां सुल्हणः प्रोवाच—

न कस्य चेतः समन्मथं, करोति सा सुन्दराकृतिः ।
विचित्रवाक्योक्तिपण्डिता, विलासिनी चारुहासिनी ॥ ३३ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

सुवृत्तमुक्तावलीधरं, प्रतप्तचामीकराम्बरम् ।
मयूरपिच्छैर्विराजितं, नमाम्यहं नन्दनन्दनम् ॥ ३४ ॥

इति चारुहासिनी वैतालीयकम् १२.

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वैतालीयप्रकरणं षष्ठम् ।



*टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्रहलायुधटीकायां अ० ४, कारिकायां ४० उदाहरणम्

सप्तमं यतिनिरूपण—प्रकरणम्

अथाभिधीयते चात्र यतिर्विच्छेदसञ्ज्ञिता ।
विरामधृतिविश्रामावसानपदरूपिणी ॥ १ ॥
समुद्रेन्द्रियभूतेन्द्ररसपक्षदिगादयः ।
साकांक्षत्वादिमे शब्दा यत्या सम्बन्धमाश्रिता ॥ २ ॥
तस्यास्तु लक्षण सम्यगुच्यते वृत्तमौक्तिके ।
आलोच्य मूलशास्त्राणि सोदाहरणमञ्जसा ॥ ३ ॥
यतिः सर्वत्र पादान्ते श्लोकस्यार्द्धे विशेषतः ।
समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ॥ ४ ॥
क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ तथैव च ।
अत्र पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥
पूर्वान्तवत् स्वर सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् ।
द्रष्टव्यो यतिचिन्ताया यणादेश परादिवत् ॥ ६ ॥
नित्य प्राक्पदसम्बन्धाश्चादय प्राक्पदान्तवत् ।
परेण नित्यसम्बन्धा. प्रादयश्च परादिवत् ॥ ७ ॥

'यतिः सर्वत्रपादान्ते' इत्यादि कारिकाचतुष्टयं यथास्थान व्याकरिष्याम । तत्र–यति सर्वत्र सर्ववृत्तेषु इत्यर्थ, पादान्त एव भवति । यथा–

[विशुद्धज्ञानदेहाय, शिवाय गुरवे नम । इत्यादि ।

तस्यैव प्रत्युदाहरण यथा][1]—

नमस्तस्मै महादेवाय शशाङ्कार्द्धमौलये । इति ।

'श्लोकस्याऽर्द्धे विशेषत.' इत्यत्र सन्धिकार्याभावः, स्पष्टविभक्तिकत्व च विशेषतो यत्र भवति । तद्यथा—

नमस्यामि सदोद्भूतमिन्धनीभूतमन्मथम् ।
ईश्वराख्यं पर ज्योतिरज्ञानतिमिरापहम् ॥

अत्रेश्वरमित्यस्य मकारेण सयोगो न कर्त्तव्य । समासे तस्यैव प्रत्युदाहरणं । यथा–

सुरासुरशिरोरत्नस्फुरत्किरणमञ्जरी–
पिञ्जरीकृतपादाब्जद्वन्द्व वन्दामहे शिवम् ॥ इति ।

'समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ।' तत्र स्वतन्त्रव्यक्तविभक्तिकं समासान्तर्भूत-मव्यक्तविभक्तिकम् । यथा–

---

१. [-] क. प्रतौ नास्ति कोष्ठगोऽशः ।

यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु । इत्यादि

व्यक्ताव्यक्तविभक्तिक इति । यतिः सर्वत्रपादान्ते इत्यनेन सम्बध्यते ।

यथा–

वशीकृतजगत्काल कण्ठेकाल नमाम्यहम् ।
महाकाल कलाशेषं शशिलेखाशिखामणिम् ।।

अपि च–

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ।।

क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ यतिर्भवेत् ।
यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ।। ५ ।।

इति । चतुरक्षरा यतिर्भवति । यथा–

पर्याप्त तप्तचामीकरकटकतटे श्लिष्टशीतेतराशौ ।

इत्यादि । यथा वा–

उन्मीलन्नीलपङ्केरुहरुचिररुचो देवदेवस्य विष्णो ।

इत्यादि । तथा–

कूजत्कोयष्टिकोलाहलमुखरभुव प्रान्तकूलान्तदेशाः ।

इत्यादि । तथा–

वैरिञ्चाना[1] तथोच्चारितरुचिरऋचा चाननाना चतुर्णाम् ।

इत्यादि ।

समुद्रादौ इति किम् ? पादमध्येऽपि यतिः । पदान्ते तु माऽभूत् । तद्यथा–

प्रणमत भवबन्धक्लेशनाशाय नारा-
यणचरणसरोजद्वन्द्वमानन्दहेतुम् ।

इत्यादि ।

पूर्वोत्तरभागयोरकाराक्षरत्वे तु पदमध्ये यतिर्दुष्यति ।

यथा–

एतस्या गण्डमण्डल-ममल गाहते चन्द्रकक्षाम्[2] ।

इत्यादि । यथा–

एतस्या राजति मुखमिद पूर्णचन्द्रप्रकाशम् ।

इत्यादि । तथा–

सुरासुरशिरोनिघृष्टचरणारविन्द. शिव. ।

इत्यादि

१ क. वैराञ्चिना । २. ख. गाहतेन्द्रकक्षाम् ।

पूर्वान्तवत् स्वर· सन्धौ क्वचिदेव परादिवत् । अस्यायमर्थः—योऽयं पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ विधीयते । स क्वचित् पूर्वस्यान्तवद् भवति, क्वचित् परस्यादिवद् भवति । तथा च पाणिनि स्मरति–'अन्तादिवच्च' [पा०सू० ६।१।८५] इति । तत्र पूर्वान्तवद्भावे यथा स्यात् । यथा–

स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमे चाभिरामा[1] ।

इत्यादि । तथा–

जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधत. सान्द्रसिन्दूररेणुम् ।

इत्यादि । तथा -

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्त्तये ।
स्वानुभूत्येकमानाय नम शान्ताय तेजसे ॥

इत्यादि ।

परादिवद्भावे यथा–

स्कन्ध विन्ध्याद्रिमूर्द्धा निकषति [महिषस्याहितोऽसूनहार्षीत् ।

इत्यादि । तथा–

शूल शूलं तु गाढ प्रहर हर हृषीकेश][2] केशोऽपि वक्त्र—
श्चक्रेणाऽकारि किं ते ।

इत्यादि ।

अत्र हि स्वरूपस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि तदभक्तत्वात् तदादिवद् भवति ।

'यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ' इत्यन्तादिवद्भावे विधावपि सम्बध्यते । तेन–

अस्या वक्त्राब्जमवजितपूर्णेन्दुशोभ विभाति ।

इत्येवंविधा यति[र्न]भवति । यथा वा स्वरः सन्धौ–

राकाचन्द्रादधिकमबलावक्त्रचन्द्रं विभाति ।

तथा शेषेऽपि, यथा–

रामातरुणिमोद्दामानङ्गरङ्गप्रसङ्गिनी ।

इत्यादि[3] उन्नेयम् । 'यणादेश परादिवत्' भवतीति शेष । यथा—

विततजलतुषारास्वादुशुभ्राशुपूर्णा-
स्वविरलपदमाला श्यामलामुल्लिखन्तः ।

इत्यादि ।

'नित्यं प्राकपदसम्बन्धाश्चादयः प्राक्पदान्तवत् ।' तेभ्य पूर्वा यतिर्न कर्त्तव्या इत्यर्थ ।

---

१ ख. नाभिरामा । २. कोष्ठगतोंऽशः ख. प्रतौ नास्ति । ३ ख. इत्याद्यन्त्यवद् ।

यथा

स्वादु स्वच्छ सलिलमपि च प्रीतये कस्य न स्यात् ।

इत्यादि ।

नित्यं प्राक्पदसम्बन्धा इति किम् ? अन्येषां पूर्वपदान्तवद्भावो माऽभूत् । तद्यथा–

मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्या ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्ध' प्रादयश्च परादिवत् ।' तेभ्यः परा यतिर्न भवतीत्यर्थ । तद्यथा–

दु खं मे प्रक्षिपति हृदये दुस्सहस्तद्वियोग. ।

इत्यादि ।

'परेण नित्यसम्बन्धा' इत्यादि किम् ? कर्मप्रवचनीयसञ्ज्ञकेभ्य' प्रादिभ्य परापि यतिर्यथा स्यादिति । तच्च यथा–

प्रिय प्रति स्फुरत्पादे मन्दायन्ते न खल्विति ।

श्रेयांसि वहुविघ्नानि भवन्ति महतामपि ।

इत्यादि ।

अथ तु चादीनां प्रादीनां चैकाक्षराणामनेकाक्षराणां वा पादान्ते यतावादिवद्भाव इष्यते, न तु अनेकाक्षराणा पादमध्ये यतौ । तत्र हि पदमध्येपि च चामीकरादिष्विव–यतेरभ्यनुज्ञातत्वात् । तत्र चादीनां यथा–

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम् ।

इत्यादि ।

प्रादीनामपि, यथा–

दूरारूढ प्रमोद हसितमिव तथा दृष्टमारात् सखीभि. ।

इत्यादि ।

एव माधुर्यसपत्तिनिमित्त यतिवन्धनम्[1] ।
न विना यतिसौन्दर्यं काव्य भव्यतर भवेत् ॥ ८ ॥
भरतादिमुनीन्द्रैरप्येवमेवाभिधीयते ।
तथाऽन्येपि कवीन्द्रास्तु यतिं वध्नन्त्यनुत्तमाम् ॥ ९ ॥

अन्यैरप्युक्तम्—

एव यथा यथोद्वेग सुधियां नोपजायते ।
तथा तथा मधुरतानिमित्त यतिरिष्यते ॥ १० ॥

इति । किञ्च—

पिङ्गले जयदेवश्च सस्कृते यतिमिच्छतः ।
श्वेतमाण्डव्य[2]मुख्यैस्तु मुनिभिर्नानुमन्यते ॥ ११ ॥

---

१ ख यतिसम्बन्धनम् । २ ख श्वेतमण्ढव्य

तेन सस्कृते यतिरक्षाया गुण । यतिभङ्गेन दोषोऽपीति तेषामाशय' ।

अतएव मुरारिः*[1]—

याच्ञादैत्यपराचि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्व वृणु,
त्वं वृणिवत्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथ वर्ण्यताम् ।।

इत्यादि ।

जयदेवोऽपि[2]*—

भाव शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग् वचांसि ।

इति । एवमन्येऽपि—

कोष्ठीकृत्य जगद्धन कति वराटीभिर्मुद यास्यति ।

इत्यादि, महाकवीनां स्वरसादिति दिक् । अपि च—

[3]यतिभङ्गो नामधातुभागभेदे भवेद् यथा ।
पुनातु नरकारिश्चक्रभूषितकराम्बुज ।। १२ ।।

दिविषद्वृन्दवन्द्य वन्दे गोविन्दपदद्वयम् ।
स्वरसन्धौ तु न श्रीशोऽस्तु भूत्यै भवतो यथा ।। १३ ।।

न स्याद्विभक्तिभेदे भात्येष राजेति कुत्रचित् ।
क्वचित्तु स्याद् यथा देवाय नमश्चन्द्रमौलये ।। १४ ।।

चादयो न प्रयोक्तव्या विच्छेदात् परतो यथा ।
नम कृष्णाय देवाय च दानवविनाशिने ।। १५ ।।

---

*टिप्पणी—१. 'सतुष्टे तिसृणा पुरामपि रिपौ कण्डूलदोर्मण्डली-
क्रीडाकृत्तपुन प्ररूढशिरसो वीरस्य लिप्सोर्वरम् ।
याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मिथस्त्व वृणु,
त्वा वृणिवत्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथ वर्ण्यताम् ।।
[मुरारिकृत-मनर्घराघवम् अक–३, प० ४१]

२ 'साध्वी माध्वीकचिन्ता न भवति भवतः शर्करे कर्कशासि,
द्राक्षे द्रक्ष्यन्ति के त्वाममृतमृतमसि क्षीरनीर रसस्ते ।
माक्रन्द क्रन्द कान्ताधर धर न तुला गच्छ यच्छन्ति भाव,
यावच्छृङ्गारसार शुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाच ।।
[जयदेवकृत-गीतगोविन्दः–स० १२, प० १२]

३ देवेश्वरकृत-कविकल्पलताया शब्दस्तवकच्छन्दोऽभ्यासप्रकरणे ।

एकस्वरोपसर्गेण विच्छेदः श्रुतिसौख्यहृत्[1] ।
यथा पिनाकपाणिं प्रणमामि स्मरशाशनम् ॥ १६ ॥

इत्यादि, **कविकल्पलतायां वाग्भटनन्दनेन देवेश्वरेणाभ्यधायि ।**

छन्दोमञ्जर्यां[1]तु-

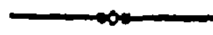
यतिर्जिह्वेष्टविश्रामस्थानं कविभिरुच्यते ।
सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया ॥ १७ ॥

इति सामान्यलक्षणमुक्तम् । किञ्च—

क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्वकृतिभि,
पदान्ते सा शोभा व्रजति पदमध्ये त्यजति च ।
पुनस्तत्रैवासौ स्वरविहितसन्धि श्रयति तां,
यथा कृष्ण· पुष्णात्वतुलमहिमा मां करुणया ॥ १८ ॥

इति **छन्दोगोविन्दे**[2] गङ्गादासेनाप्युक्तमित्युपरम्यते । इति सर्वमङ्गलम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीयपरिच्छेदे
यतिनिरूपण-प्रकरण सप्तमम् ।



१. क ख सौख्यकृत् ।

*टिप्पणी—१. छन्दोमञ्जरी, प्रथमस्तवक, प० १२, १३ ।
२ 'गोविन्दे' इत्यस्य स्थाने 'मञ्जर्यां' इति पाठ एव समीचीनोऽस्ति गङ्गादास-कर्तृत्वात् ।

अष्टमं गद्यनिरूपण—प्रकरणम्

अथ गद्यानि

वाङ्मय द्विविधं प्रोक्त पद्य गद्यमिति क्रमात् ।
तत्र पद्यं पुरा प्रोक्त गद्यं सम्प्रति गद्यते ॥ १ ॥
असवर्ण सवर्णं च गद्य तत्रासवर्णकम् ।
त्रिविध कथित तच्च कवीन्द्रैर्गद्यवेदिभिः ॥ २ ॥
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदतः ।

तत्र–

अकठोराक्षर स्वल्पसमास चूर्णक विदु ॥ ३ ॥
तद्धि वैदर्भरीतिस्थ गद्य हृद्यतर भवेत् ।
आविद्ध ललित मुग्धमिति तच्चूर्णक त्रिधा ॥ ४ ॥

तत्र–

दीर्घवृत्ति-कठोरार्णमाविद्ध परिकीर्तितम् ।
स्वल्पवृत्त कठोरार्णं ललित कीर्त्यते बुधै. ॥ ५ ॥
मुग्ध मृद्वक्षर प्रोक्तमवृत्त्यत्यल्पवृत्ति वा ।
भवेदुत्कलिकाप्राय दीर्घवृत्त्युत्कटाक्षरम् ॥ ६ ॥
वृत्त्येक[1]देशसम्बद्ध वृत्तगन्धि पुन. स्मृतम् ।
अथात्र क्रमतश्चैषामुदाहरणमुच्यते ॥ ७ ॥

तत्र प्रथम यथा–

१ शुद्धचूर्णकम्

स हि खलु त्रयाणामेव जगता गति परमपुरुष पुरुषोत्तमो दृप्तसमस्तदैत्य-दानवभरेण भङ्गुराङ्गीमिमामवनिमवलोक्य करुणरसामृतपरिपूर्णार्द्रहृदयस्तथा भुवो भार अवतारयितु रामकृष्णस्वरूपेण यदुकुलेऽवततार । य प्रसङ्गेनापि स्मृतोऽभ्यर्चित. प्रणतो वा गृहीतनामा पु स ससारसागरपारमवलोकयति ।

इति शुद्धचूर्णकम् १.

१[१] अथ आविद्ध चूर्णकम्

यथा–

दलदलि[2]सहकारमञ्जरीविगलन्मकरन्दबिन्दुसन्दोहसन्दानितमन्दानिलवीज्य-मानदशदिगाभोगसुरभिसमय समुपाजगाम । इत्यादि ।

इति आविद्ध चूर्णकम् १[१].

---

१. ख. वृत्तैकदेश । २. ख. दरदलित ।

१[२]. अथ ललित चूर्णकम्

यथा–

सदाभिराम नाभिजितकाम रामणीयकधाम माधुर्यसौन्दर्यशौर्यादिगुणग्रामाभिराम भक्तजनपरिपूरितकाम सकललोकविश्रामधाम वामदेवाभिनन्द्यपौरुष राम जय जय।

इत्यादि।

इति ललित चूर्णकम् १[२]

मुग्धमपि द्विविधम्। अवृत्ति-अत्यल्पवृत्ति चेति। तत्र—

१[३] अवृत्तिमुग्ध चूर्णकम्

यथा–

यत्र च नायिकाना नयनै: कमलमयमिव, वदनै परिपूर्णचन्द्रमण्डलमयमिव, हस्तै मृणालमयमिव, जघनै[1] कदलीस्तम्भमयमिव विराजित भवनकुलम्।

इत्यादि।

इत्यवृत्तिमुग्ध चूर्णकम् १[३].

१[४]. अथ अत्यल्पवृत्तिमुग्ध चूर्णकम्

यथा–

कमलमिव चन्द्रविम्वमिव मुख, मृणालमिव कामपाशमिव भुजयुगल, मीनवृन्दमिव खञ्जरीटयुगमिव नीलोत्पलमिव एणनयनमिव नयनयुगल, कोकयुग्ममिव सिन्दूरसमूहकमिव पुष्पगुच्छमिव कनककलशयुगलमिव वक्षोजयुगलम्।

इत्यादि।

इत्यल्पवृत्तिमुग्ध चूर्णकमिदम् १[४]

२. अथोत्कलिकाप्रायम्

यथा–

सङ्ग्रामसीमकण्डूलदोर्दण्डकुण्डलितकोदण्ड[2]निर्गलितकाण्डप्रचण्डाघातखण्डितारातिवृन्दनरपतिसीमन्तिनीनयनारविन्दाविरलविगलदम्बुनिकरकीर्णसप्तार्णवान्तर्भ्रमत्कमनीयकीर्त्तिहृम, त्रिजगत्कामिनीकर्णावतसानन्तसामन्तसन्तानशिरोमुकुटरत्नरागद्विगुणिताङ्घ्रिनखमयूखानवरतकलधौतदानसम्मानसन्तोषिताशेषयाचकचयविकर्णवाक्पीयूषप्रयाणकालकोलाहलसमुच्छल[3]त्पाथोधिपाथ प्लाविताशेषभुवनमण्डल, भयङ्करभेरीभाङ्कारसम्मर्द्दसभ्रान्तखण्डलातिचपलचलच्चारुचतुरचतुरङ्गचमूचक्रचक्रमणभरभङ्गुरितफणिपतिफणानिकायविश्वविख्यातनिजान्ववायप्रखरतरतुरगखुरपुटोद्भूतधूलीधारान्धकाराकुलितचक्राङ्गनासमूहनीतिनिरस्तसमस्तप्रत्यूहव्यूहप्र तिनृपतिविलासिनीताटङ्कापसारणसावधानचतुर्दशविद्या-

१ क चरणै। २ ख कोदण्डि। ३. समुल्लसत्।

निधानदानपथातीतसुरद्रुमकथासमारम्भरम्भादिविषनारीगणोद्गीयमानकमनीय - कीर्त्तिभरभरणीयजनप्रवृद्धकृपापारावारवारणेन्द्रसमानसारसादितारातियुवतिवचोे-वर्णदत्तकर्णकर्णवलिदीयमानोपमानमानवतीमानापमानोदनविशारदशारदेन्दुकुला-वदातकीर्त्तिप्रीणिताशेषजनहृदयानुरूपसमरसीमव्यापादितारातिवर्गचक्रवर्त्तिमहा - महोग्रप्रतापमार्त्तण्डसमरविजयी महाराजाधिराज. समाज्ञापयत्यशेषसामन्तगणान्। इत्यादि ।

यथा वा –

प्रणिपातप्रवणप्रधानाशेषसुरासुरादिवृन्दसौन्दर्यप्रकटकिरीटकोटिनिविष्टस्पष्ट-मणिमयूखच्छटाच्छुरितचरणनखचक्रविक्रमोद्दामवामपादाङ्गुष्ठनखरशिखरखण्डित-ब्रह्माण्डभाण्डविवरनिस्सरत्क्षरदमृतकरप्रकरभास्वरसुरवाहिनीप्रवाहपवित्रीकृत - विष्टपत्रयकैटभारे क्रूरतरससारापारसागरनानाप्रकारावर्त्तविवर्त्तमानविग्रहं मामनु-गृहाण । इत्यादि ।

इत्युत्कलिकाप्राय गद्यम् २.

३ अथ वृत्तगन्धि गद्यम् ।

यथा–

समरकण्डूलनिविडभुजदण्डमण्डलीकृतकोदण्डसिञ्जिनीटङ्कारोज्जागरितवैरि-नागरजनसस्तुतानेकविरुदावलीविराजमानमानोन्नतमहाराजाधिराज जय जय । इत्यादि ।

यथा वा, मालतीमाधवे[1]*—

गतोऽहमवलोकितालनितकौतुक[1] कामदेवायतनम् । इत्यादि ।

यथा वा, कादम्बर्याम्—

पातालतालुतलवासिषु दानवेषु । इत्यादि ।

हरद्रवजितमन्मथो गुह इवाप्रतिहतशक्ति । इत्यादि ।

यथा वा–

जय जय जनार्दन सुकृतिजनमनस्तडागविकस्वरचरणपद्म पद्मनयन पद्मिनी-विनोदराजहसभास्वरयश.पटलपूरितभुवनकुहर हरकमलासनादिवृन्दारकवृन्दवन्द-नीयपादारविन्द द्वन्द्वनिर्मुक्त[2] योगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्कृतनिरञ्जनज्योति स्वरूप नीरूप विश्वरूप स्वर्नाथनाथ जगन्नाथ मामनवधिदुःखव्याकुल रक्ष रक्ष ।

इति वृत्तगन्धिगद्यम् ३.

---

१. ख. जनितकौतुकः । २. ख द्वन्द्व द्वन्द्वनिर्मुक्त ।

*टिप्पणी—१ मालतीमाधवम्, प्रथमाङ्के विंशतिपद्यानन्तर गद्यभागः ।

ग्रन्थान्तरे तु प्रकारान्तरेण चतुर्विधमेव गद्यं तल्लक्षणमुपलक्षितं विचक्षणैः। यथा–

वृत्तबन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च।
भवेदुत्कलिकाप्रायं कुलकं च चतुर्विधम्॥ ८॥

तत्र–

आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परम्।
अन्यं दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम्॥ ९॥

तत्र मुक्तकं, यथा—

गुरुर्वचसि[1] पृथुरुरसि। इत्यादि।

वृत्तगन्धि—'समरकण्डूल' इत्यादिनैवोदाहृतम्।

उत्कलिकाप्रायं तु—व्यपगतघनपटलममलजलनिधिसदृशमम्बरतलं विलोक्यते अञ्जन-चूर्णपुञ्जश्यामलं शार्वरं तमस्त्यायतं। इत्यादि।

यथा वा, प्राकृते चापि—

अणिसविसुमरणि[2] सिदसरविदलिदसमरपरिगदपवरपरबलहृणिदमअगलहल-हलिदसअलजलणिहिसरिससमत्तुसमूहसखुहिअवैरिणअरणाअरीणिवहं जअ महाराअ चक्कवट्टि करुणाअरा। इत्यादि।

कुलकम्, यथा–

गुणरत्नसागर जगदेकनागर कामिनीमदनजनचित्तरञ्जन करुणापरायणनारा-यणचरणस्मरणसमासादितपुरुपार्थचतुष्टयप्रार्थनीयगुणगण शरणागतरक्षणविच-क्षण जय जय। इत्यादि।

इति श्रीकविशेखरचन्द्रशेखरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके
गद्यनिरूपणमष्टमं प्रकरणम्॥८॥

---

१ ख गुरुवञ्चसि। २. ख- सुमर·णि।

नवमं विरुदावली-प्रकरणम्

[प्रथम कलिकाप्रकरणम्]

अथ विरुदावली

अथाऽत्र विरुदावल्या. सोदाहरणमुच्यते ।
लक्षणं लक्षिताशेष-विशेषपरिकल्पनम् ।। १ ।।

तत्र–

गद्य-पद्यमयी राजस्तुतिर्विरुदमुच्यते ।
तदावली समाख्याता कविभिर्विरुदावली ।। २ ।।

किञ्च–

कलिकाभिस्तु कलिता विरुदावलिका मता ।
सवर्णा कलिका प्रोक्ता विरुदाढ्या मनोहरा ।। ३ ।।

तत्र च

द्वादशार्द्धकला' कार्याः चतु'षष्टिकलावधि ।
तद्भेदाश्चात्र कथ्यन्ते लक्ष्यलक्षणसयुता. ।। ४ ।।
द्विगा रादिश्च मादिश्च नादिर्गलादिरेव च ।
मिश्रा मध्या द्विभङ्गी च त्रिभङ्गी कलिका नव ।। ५ ।।

तत्र–

१. द्विगाकलिका

चतुर्भिस्तुरगै. निजैर्द्विगा मैत्री हयद्वये ।

यथा–

जय जय वीर ! क्षितिपति हीर !

इत्यादि । एवं चरणचतुष्टय बोद्धव्यमत्र । ग्रन्थविस्तरभयादस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र पादमात्र-मुदाह्रियते ।

इति द्विगाकलिका १.

२. अथ रादिकलिका

वेदै' पञ्चकलै' कार्या मैत्र्यर्द्धे रादिका कला ।। ६ ।।

यथा –

कामिनीकलितसुख यामिनीरमणमुख ।

इत्यादि ।

इति रादिकलिका २

३ अथ मादिकलिका

अष्टभिः षट्कलैर्मादिर्मैत्र्यर्द्धे विरतिर्मता ।

यथा–

भूमीभानो प्रभवसि भुवने बहुलारम्भ.
सत्तत्तदा नोन्नता बहुमानोज्वलतरदम्भ ।

इत्यादि ।

इति मादिकलिका ३.

४ अथ नादिकलिका

सानुप्रासस्तु नो नादि —

यथा–

दलितशकट कलितलकुट
ललितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति नादिकलिका ४.

५. अथ गलादिकलिका

—गाद्या गलादिरुच्यते ॥ ७ ॥

यथा–

वीरवर हीररद
चीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति गलादिकलिका ५.

६. अथ मिश्राकलिका

तिलतन्दुलवन्मिश्राः—

गलयोस्तिलतन्दुलवद्विन्यासो मिश्रा । यथा–

क्षीरनीरविवेकधीर सङ्गरवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिश्राकलिका ६

७. अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्यदि ।

मध्ये गद्य कलावापि गद्ययो रसपद्ययोः[1] ॥ ८ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—मध्याकलिका तावत् द्विभेदा, तथा चादावन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्य भवतीत्येको भेद ।१। तथा असवर्णयोर्मैत्रीरहितयोर्गद्ययोर्मध्ये वा कला-कलिका भवतीत्यपरो भेदः ।२। इत्येव द्विभेदा मध्याकलिका भवति । ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति मध्याकलिका ७

८ अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुर्यौ मधुरश्लिष्टौ पड्गा लान्ताश्चतुर्गुरुः ।
अत्र भङ्गात्तयोर्मैत्री पड्भङ्गा स्यात् द्विभङ्गिका ॥ ९ ॥

यथा–

रङ्गरक्त सङ्गसक्त
चण्डचक्र दण्डशक्र
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
विष्णो जिष्णो !

इत्यादि ।

इति द्विभङ्गी कलिका ८

९, अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र–

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते ।
विदग्ध-तुरगौ पद्य-हरिणप्लुत-नर्त्तका ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगते सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका ।
युग्मार्णभङ्गौ व्यावृत्तौ तनौ भौ मित्रितौ तत ॥ ११ ॥

तत्र–

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा–

सदीपितशर-मन्दीकृतपर-नन्दीश्वरपद-भावन-पावन ।

इत्यादि ।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१].

९[२] अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तभला शेषगो गुरुः ।

---

1 क. ख. रसवर्णयो. ।

यथा–

चण्डीपतिप्रवण-पण्डीकृतप्रबल-खण्डीकृताहितविभो ।

इत्यादि ।

इति तुरगत्रिभङ्गी कलिका ६[२].

६[३]. अथ पद्मत्रिभङ्गी कलिका

त्रिभङ्गीभिः पदैः पद्मत्रिभङ्गी—

यथा–पद्मावतीत्रिभङ्गीदण्डकलादयोऽत्र स्पष्टा. पूर्वखण्डे समुदाहृतास्तास्तत एव द्रष्टव्या ।*१

इति पद्मत्रिभङ्गी कलिका [६]३.

६[४]. अथ हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका

—हरिणप्लुते ॥ १२ ॥

षष्ठभङ्गा त्रिरावृत्ता नयभा१मिश्रितौ च भौ ।

यथा–

अतिनत-देवाराधित बहुविधसेवासाधित
सुरतरुरेवासि प्रिय-दायक　　ायक !

इत्यादि ।

इति हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका ६[४].

६[५] अथ नर्त्तकत्रिभङ्गी कलिका

हरिणो नजलान्तश्चेन्नर्त्तकः—

[व्या०] हरिणप्लुत एव नयभानन्तरं यदि नगण-जगण-लघ्वन्तो भवेत् तदा नर्त्तको भवतीति शेष' । यथा–

मनसिजरूपाराधित बहुबलभूपाबाधित
बहुतरयूपासञ्जक निजकुलरञ्जक ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तकत्रिभङ्गी कलिका ६[५].

६[६]. अथ भुजङ्गत्रिभङ्गी कलिका

—भुजगे पुन. ॥ १३ ॥

त्र्यावृत्ता मभला लान्ता युग्मे तुर्ये च भङ्गिन ।
क्वचित्तुर्ये न भङ्ग स्यान् मिश्रितौ भगणौ तत. ॥ १४ ॥

---

१. क नयना ।

*१टिप्पणी—२१, ३७, ४२, पृष्ठे द्रष्टव्या. ।

यथा–

दम्भारम्भामितवल जम्भालम्भाधिकवल
जम्भासम्भावितरण-मण्डित पण्डित ।

क्वचित्तुर्ये न भङ्ग', इति समुदाह्रियते । यथा–

जम्भारातिप्रतिवल-दम्भाबाधानतदल
सम्भारासादनचण-दारणकारण ।

इति भुजगत्रिभङ्गी कलिका ६[६]

६[७] अथ त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

तृतीये कृतभङ्गा त्रिर्मनना भौ च वलिगता ।
त्र्यावृत्तास्तनभा भोऽन्ते ललितात्रिगता द्वये ॥ १५ ॥

[व १०] अस्यार्थ — त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका तावद् द्विविधा, यत्र मनना –मगण-नगण-नगणास्त्रयो गणास्त्रिर्वारत्रयं भवन्ति, अन्ते भौ–भगणद्वय, तृतीये च वर्णे भङ्गः सा वलिगता-भिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका । यस्या च त्र्यावृत्तास्तनभा –तगण-नगण-भगणास्त्रयो गणा भवन्ति, एतस्यान्ते भो–भगण एक एव भवति । परन्तु द्वये–द्वितीये वर्णे भङ्ग सा ललिता-भिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका इति द्वैविध्यम् । क्रमेण यथा–

६[७-१] अथ वलिगता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

वाणाली-हृतरिपुगण तालाली-तत-शरवण
मालाली-वृततनुवर-दायक नायक !

इत्यादि ।

इति वलिगताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

[६[७-२]. अथ ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

नाकाधिपसमनायक पाकाधिकसुखदायक
राकाधिपमुखसायक सुन्दर !

इति ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका
एव त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका द्विविधोदाहृता ६[७] *]

६[८] अथ वरतनुत्रिभङ्गी कलिका

षष्ठभङ्गा वरतनुस्त्र्यावृत्ता नयना लघु ।
भौ च—

यथा–

अविकलताराधिपमुख अधिगतनारायणसुख
बहुविधपारायणपर पण्डित मण्डित !

---

*[-] कोष्ठगतोंश' क. प्रतौ नास्ति ।

इत्यादि । किञ्च–

—भङ्गान्तसयुक्ता छविरेषैव कथ्यते ।। १६ ।।

यथा–

चतुरिमचञ्चद्गुणगण विवलदुदञ्चद्रणचण
मधुरिमचन्द्रस्तवकित कुङ्कुमभूषित ।

इत्यादि ।

इति द्विविधा वरतनुत्रिभङ्गी कलिका ६[८]

६[९]. अथ द्विपादिका युग्मभङ्गा कलिका

द्विपादिका च कलिका षड्विधा परिकीर्तिता ।
द्व्यावृत्ता सा तु विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदैः ।। १७ ।।

तत्र–

मुग्धा प्रगल्भा मध्या च शिथिला मधुरा तथा ।
तरुणी चेत्यमी भेदा द्विपदाया उदीरिता ।। १८ ।।

तत्र–

६[९–१]. मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मतला मतलाश्चैव युग्मभङ्गा भयुग्मकम् ।
मुग्धा स्यात्—

यथा–

दण्डादेशाकम्पित चण्डाधीशालम्बित
वन्दन नन्दन !

इत्यादि ।

इति मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[९–१]

६[९–२] अथ प्रगल्भा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

—भद्वये कर्णौ चेत् प्रगल्भा तदा मता ।। १९ ।।

[व्या०] भद्वये– भगणद्वयस्थाने आदेशरूपेण चेत् कर्णौ भवतस्तदा मुग्धैव प्रगल्भा मता इत्यर्थ । यथा–

देवाधीशाराधक सेवादेशासाधक
भूमीमानो

इत्यादि ।

इति प्रगल्भा-द्विपादिका-द्विभङ्गी कलिका ६[९-२].

६[६-३] अथ मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

उक्ता मभौ समौ मध्या भौ नलौ वा भनौ जलौ ।
ननसा लद्वय वापि शेषे वा नजना लघू ॥ २० ॥

[व्या०] अस्यार्थ —मध्यायास्तावत् चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । यथा—मभौ–मगण-भगणौ, अन्य च समौ–सगण-मगणौ, ततो भौ–भगणद्वयं यत्र भवति, एतादृशी मध्या उक्ता–कथिता इत्यर्थ. । इति प्रथमो भेदः ।

यथा–

नित्य नृत्य कलयति काली केलीमञ्चति-चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाः प्रथमो भेदः ।१।

अथ मध्याया द्वितीयो भेद.

[व्या०] 'नलौ वा भनौ जलौ' इति । यत्र नलौ–नगणलघू, अथ च भनौ–भगणनगणौ, ततश्च जलौ —जगणलघू भवत. । इति द्वितीयो भेद ।

यथा–

रणभुवि अञ्चति रणभुवि चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया द्वितीयो भेद ।२।

अथ मध्याया तृतीयो भेद

[व्या०] 'ननसा लद्वय वापि' इति । ननसा –नगण-नगण-सगणा , अथ च लघुद्वय भवति यत्र स तृतीयो भेद । यथा—

अतिशयमधिरणमञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया तृतीयो भेद ।३।

अथ मध्यायाश्चतुर्थो भेद.

[व्या०] 'शेषे वा नजना लघू' इति । शेषे–चतुर्थे भेदे नजनाः–नगण-जगण-नगणाः, अथ च लघू–लघुद्वय यत्र भवति स चतुर्थो भेद । यथा–

अतिशयमञ्चति रणभुवि ।

इत्यादि ।

इति [illegible] ।४।

एव मध्याया असकीर्णश्चत्वारो भेदाः सलक्षणाः समुदाहृत्य प्रदर्शिता ।

इति मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–३].

६[६–४]. अथ शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मुग्धाया भद्वये विप्रो यदि सा शिथिला मता ।

[व्या०] मुग्धाया – प्रथमोक्तताया भद्वये–भगणद्वयस्थाने आदेशन्यायेन यदि विप्र–चतुर्लघ्वात्मको गणो भवति तदा सा शिथिला मता भवतीत्यर्थ ।

यथा–

केलीरङ्गारञ्जित–नारीसङ्गासञ्जित मनसिज ।

इत्यादि ।

इति शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–४].

६[६–५] अथ मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

द्व्यावृत्ता मभला लान्ता भद्वय मधुरा मता ॥ २१ ॥

[व्या०] अत्रत्य द्व्यावृत्तात्व पूर्वत्र सर्वत्र सबद्धम् । तथा च मभला – मगण-भगणलघवश्चेत् द्व्यावृत्ता सन्तो लान्ता–लघ्वन्ता भवन्ति । अथ च भद्वय–भगणद्वयं भवति तदा मधुरा मता–सम्मता भवतीत्यर्थः । यथा–

तारादाराधिकमुख–पारावाराशयसुख–दायक नायक ।

इत्यादि ।

इति मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–५].

६[६–६] अथ तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मधुरा भद्वये कर्णौ तरुणी समनन्तरम् ।

[व्या०] उक्ताया – मधुराया मगणभगणलान्ताया. भद्वये–भगणद्वयस्थाने पूर्वोक्तन्यायेन यदि कर्णौ भवतस्तदा तरुणी भवति ।

ताराहारानतमुख आरादारागतसुख-पाता-दाता ।

इत्यादि ।

इति तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६–६].

इति द्विपादिका कलिका युग्मभङ्गिनो भेदा. प्रोक्ता इति शेषः ।

इति विरुदावल्यामवान्तर–द्विभङ्गी-त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरण प्रथमम् ।

[विरुदावल्यां द्वितीय चण्डवृत्त-प्रकरणम्]

अथाभिधीयते चण्डवृत्त विरुदमुत्तमम् ।
शुद्धादिभेदसहित कलिका-कल्पनान्वितम् ॥ १ ॥

[व्या०] आदिपदेन सकीर्णा गर्भितमिश्रिता गृह्यन्ते तांश्च यथास्थानमुदाहरिष्यामः। अथ महाकलिकारूपं चण्डवृत्तम्, तच्च द्विविध—सलक्षण-साधारणभेदेन ।

तत्र—

उक्तलक्षणसम्पूर्णं सलक्षणमुदीरितम् ।
अन्यत् साधारणं प्रोक्त चण्डवृत्त द्विधा बुधै ॥ २ ॥

अथ परिभाषा

तत्र—

मधुर-श्लिष्ट-सश्लिष्ट-शिथिल-ह्रादिभेदतः ।
सयोगा. पञ्चह्रस्वाच्च दीर्घाच्च दशधा मता· ॥ ३ ॥
अनुस्वारविसर्गौ तु न दीर्घव्यवधायकौ ।
स्वस्ववर्गान्त्यसंयुक्ता मधुरा इतरे पुनः ॥ ४ ॥
श्लिष्टा. सरेफशिरस सश्लिष्टास्त्वन्ययोगिन ।
यमात्रयुक्ता इत्युक्ता शिथिला ह्रादिनस्त्वमी ॥ ५ ॥
हशेखरा साम्यमत्र नणयो. खषयोस्तथा ।
जययोर्वब्वयोरह.[1] सच्चयो[2] सशयोरपि ॥ ६ ॥
ह्यप्ययो[3]र्भ्वब्वयोश्चैव क्षच्छयोरित्सवर्णयो ।
शषयो त्सच्छयोश्चैव क्षख्ययोरपि वर्णयो ॥७॥
श्लिष्टसश्लिष्टयोरुक्तौ सग्राह्या मधुरेतरा ।
इत्येषा परिभाषाऽत्र राजते वृत्तमौक्तिके ॥ ८ ॥

इति परिभाषा.

अथ चण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य व्यापकस्य व्याप्यव्यापकभावेन पुरुषोत्तमादि—कुसुमान्त चतुस्त्रिंशतिः ३४ प्रभेदा भवन्ति । तेषा चोद्देशक्रमोऽनुक्रमणिकाप्रकरणे स्फुटतर वक्ष्यमाणत्वान्नेह प्रपञ्च्यते ।

---

१. ख. जययो बवयोरहः । २ ख. सच्चयो । ३ क त्ययय्यो ।

तत्र प्रथमम्–

१. पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम्

एव सर्वत्र–

श्लिष्टौ तुर्याष्टमौ दीर्घौ त्रि-षष्ठौ सगणौ च भः।
पुरुषोत्तमचण्ड स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र चतुर्थाष्टमौ वर्णौ श्लिष्टौ-सरेफशिरस्कौ च, तृतीय-षष्ठौ च दीर्घौ भवत । तत्र गणनियममाह—'सगणौ' इति । सगणौ भवत । ततश्च भ –भगणो भवति, तत् पुरुषोत्तमाख्य महाकलिकारूप चण्डवृत्त भवति । नवाक्षरमिद वृत्तम् । अस्मिन् प्रकरणे सर्वत्र विरामद्वयमेव भवतीत्युपदिश्यते । यथा–

दितिजार्द्दन जातप्रभ ।

इत्यादि ।

इति पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम् १.

२. अथ तिलक चण्डवृत्तम्

—सादी नौ शेषगौ च नौ ॥ ९ ॥

मधुरो दशमो वर्णस्तिलकम्—

[व्या०] अयमर्थ.— यत्र सादौ–सगणस्यादिभूतौ नौ–नगणौ यत्र च सगणस्य शेषगौ–शेषे च वर्त्तमानौ नगणावेव भवत । मध्यभूतस्य सगणस्याद्यन्तयोर्नगणौ भवत इति फलितोऽर्थ । किञ्च—दशमो वर्णो मधुर –स्ववर्गान्त्यसयुक्त परसवर्णो भवति । तत्तिलक नाम चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । पञ्चदशाक्षरमिद पदम् । यथा–

विषमविशिखगणगञ्जितपरबल ।

इत्यादि । यथा वा–

अमलकमलरुचिखण्डनपट्टपद
नटनपटिमहृतकुण्डलिपतिमद
नवकुवलयकुलसुन्दररुचिभर
घनतडिदुपमितवन्धुरपटधर
तरणिदुहितृतटमञ्जुलनटवर
नयननटनजितखञ्जनपरिकर
भुजतटगतहरिचन्दनपरिमल
पशुपयुवतिगणनन्दन वरकल
नवमदमधुरदृगञ्चलविलसित
मुखपरिमलभरसञ्चलदलिवृत

शरदुपमितशशिमण्डलवरमुख
कनकमकरमयकुण्डलकृतसुख
युवतिहृदयशुकपञ्जरनिभ(ज)भुज
परिहितविचकिलमञ्जर(ञ्जुल)शिरसिज
सुतनुवदनविधुचुम्बनपटुतर
दनुजनिबिडमदडुम्बनरणखर
धीर !

रणति हरे[1] तव वेणौ नार्यो दनुजाश्च कम्पिता खिन्ना. ।
वनमनपेक्षितदयिता करवालान्प्रोज्झ्य धावन्ति ।

कुङ्कुमपुण्ड्रक गुम्फितपुण्ड्रक-
सकुलकङ्कण कण्ठगरङ्गण
देव !

सारङ्गाक्षीलोचनभृङ्गावलिपानचारुभृङ्गार ।
त्वा मङ्गलश्रृङ्गार श्रृङ्गाराधीश्वर स्तौमि ।

विरुदमिद तिलकम् २.

३. अथ अच्युतं चण्डवृत्तम्

——वाऽच्युत पुन ।

[व्या०] अत्राथ शब्दार्थश्चकार । तेन अच्युताख्य चण्डवृत्तमुच्यत इत्युक्तं भवति । लक्षण गणनियमपूर्वकमाह—

नयौ चेत् पञ्चमो दीर्घ. षष्ठ. श्लिष्टपरो नजौ ॥ १० ॥
सर्वशेषे—

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र नयौ–नगणयगणौ चेद् भवतः, किञ्च पञ्चमो वर्णो यत्र दीर्घो भवति, षष्ठो वर्णः श्लिष्टपर –श्लिष्ट परः स सप्तमो यस्य स तादृशो भवति । एव चत्वारोऽष्टौ वा पादा यथेष्ट भवन्ति । सर्वशेषे नजौ–नगण-जगणौ भवत सोऽच्युताख्यश्चण्डवृत्तस्यावान्तरो भेद इति । चतुर्विशत्यक्षरमिदं पदम् । यथा—

प्रसरदुदार-द्युतिभरतार-प्रगुणितहार-स्थिरपरिवार ।

इत्यादि । शेषेषु—

कृतरणरग । इत्यादि ।

यथा वा—

जय जय वीर स्मररसधीर द्विजजितहीर प्रतिभटवीर
स्फुरदुप(रु)हार-प्रियपरिवारच्छुरितविहार-स्थिरमणिहार

---

१. क. हते ।

प्रकटितरास स्तवकितहास स्फुटपटवास-स्फुरितविलास
ध्वनदलिजाल-स्तुतवनमाल व्रजकुलपाल प्रणयविशाल
प्रविलसदस-भ्रमदवतस क्वणदुरुवश-स्वनहृतहस
प्रशमितदाव प्रणयिषु तावद्विलसितभाव स्तनितविराव
स्तनघनरागश्रितपरभाग क्षतहरियाग त्वरितधृताग
कृतरससग[1]
वीर !

स्थितिनियतिमतीते धीरताहारिगीते,
प्रियजनपरिवीते कुङ्कुमालेपपीते ।
कलितनवकुटीरे काञ्च्युदञ्चत्कटीरे,
स्फुरतु रसगभीरे गोष्ठवीरे रतिर्न: ॥

अम्बाविनिहतचुम्बामलतर-
बिम्बाधरमुखलम्बालक जय !
देव !

दृष्ट्वा ते पदनखकोटिकान्तिपूर,
पूर्णानामपि शशिना शतैर्दुरापम् ।
निर्विण्णो मुरहर मुक्तरूपदर्प:,
कन्दर्प. स्फुटमशरीरतामयासीत् ॥

इति अच्युत चण्डवृत्तम् ३.

४ अथ वर्द्धितञ्चण्डवृत्तम्

—यदि श्लिष्टा, द्वि-नव-द्वादशा अपि ।
वर्द्धितो भनजा जोल:—

[व्या०] एतदुक्त भवति, यदि द्वि-नव-द्वादश अपि वर्णा: श्लिष्टा –सरेफशिरस्काश्चेत्– स्युस्तदा वर्द्धित इति नाम चण्डवृत्तं भवतीति । तत्र च गणनियममाह—भनजा –भगण-नगणजगणा, अथ च जो–जगण , ततो ल.–लघुरित्यर्थ । त्रयोदशाक्षरमिद पद स्वेच्छया यत्र विनिवेशित भवति तद् वर्द्धिताख्य चण्डवृत्तम् । यथा–

दुर्जयपरवलगर्जनवर्जित ।

इत्यादि ।

यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

ब्रह्मा ब्रह्माण्डभाण्डे सरसिजनयन स्रष्टुमाक्रीडनानि,
स्थाणुर्भक्तु च खेलाखुरलितमतिना तानि येन न्ययोजि ।

---

१. गोवि० कृतरसमङ्ग नास्ति ।

तादृक्क्रीडाण्डकोटीवृतजलकुडवा यस्य वैकुण्ठकुल्या ,
कर्त्तव्या तस्य का ते स्तुतिरिह कृतिभि. प्रोज्झ्य लीलायितानि ।।

अपि च–

निविडतरतुराषाडन्तरीणोष्मसपद्[1]-
विघटनपटुखेलाडम्बरोर्मिच्छटस्य ।
सगरिमगिरिराजच्छत्रदण्डायितश्री-
र्जगदिदमघशत्रोः सव्यबाहूर्[2]धिनोतु ।।

अभ्रमुपतिमदमर्द्दिपदक्रम
विभ्रमपरिमललुप्तसुहृच्छ्रम
दुष्टदनुजदलदर्पविमर्द्दन
तुष्टहृदयसुरपक्षविवर्द्धन
दर्प्पकविलसितसर्गनिरर्गल
सर्पतुलितभुजकर्णगकुण्डल[3]
निर्मलमलयजर्चचितविग्रह
नर्म्मलसितपरिवर्जितविग्रह[4]
दुष्करकृतिभरलक्षणविस्मित-
पुष्करभवभयमर्द्दनसुस्मित
वत्सलहलधरतर्क्कितलक्षण
वत्सरविरहितवत्ससुहृद्गण
गर्जितविजयिविशुद्धतरस्वर-
तर्जितखलगण दुर्जनमत्सर
धीर !

तव मुरलीध्वनिरमरीकामाम्बुधिवृद्धिशुभ्राशु ।
अचटुलगोकुलकुलजाधैर्याम्बुधिपानकुम्भजो जयति ।

धृतगोवर्द्धन सुरभीवर्द्धन
पशुपालप्रिय रचितोपक्रिय
वीर !

भुजङ्गरिपुचन्द्रकस्फुरदखण्डचूडाङ्कुरे,
निरङ्कुशदृगञ्चलभ्रमिनिवद्धभृङ्गभ्रमे ।

---

१ गोवि सम्यग् । २. गोवि. सत्यबाहु । ३. गोवि. कुड्मल । ४. गोवि. नर्मल-
लितकृतसर्पविनिग्रह ।

प्रचुरपरमहसै. काममाचम्यमाने,
प्रणतमकरचक्रैः शश्वदाक्रान्तकुक्षौ ।
अघहर जगदण्डाहिण्डिहिन्दोलहासे,
स्फुरतु तव गभीरे केलिसिन्धौ रतिर्न ।
उद्गीर्णतारुण्य विस्तीर्णकारुण्य
गुञ्जालतापिञ्छपुञ्जाढ्यतापिञ्छ ।
धीर !

उचितः पशुपत्यलक्रियायै नितरा नन्दितरोहिणीयशोदः ।
तव गोकुलकेलिसिन्धुजन्मा जगदुद्दीपयति स्म कीर्तिचन्द्र ।

सविरुद वीरभद्रोदाहरणमिदम् ।

इति वीरश्चण्डवृत्तम् ।६।

७. अथ शाकश्चण्डवृत्तम्

भौ रो ल. पञ्चम श्लिष्टो दीर्घौ नवम-सप्तमौ ।। १३ ।।
द्वितीयो मधुर शाके—

[व्या०] अयमर्थ —शाके–शाकाख्ये चण्डवृत्ते प्रथम भौ–भगणौ, अथ च रो–रगण, ततो लो–लघुः । किञ्च–पञ्चमो वर्ण श्लिष्ट–संयुक्तो भवति, नवमसप्तमौ दीर्घौ भवतः, द्वितीयो मधुर–परसवर्णो वर्णो यत्र भवतीत्यर्थः । तत् शाकनामक चण्डवृत्त भवति । दशाक्षर पदं, विन्यासः पूर्ववत् । यथा–

सञ्चितचक्र-भुजाभिराम ।

इत्यादि ।

इति शाकश्चण्डवृत्तम् । ७ ।

८ अथ मातङ्गखेलित चण्डवृत्तम्

—ह्यथ मातङ्गखेलितम् ।
श्लिष्टौ वा मधुरौ बाणदशमौ रौ यलौ यदि ।। १४ ।।
बाणे भङ्गश्च[1] मैत्री च प्रथमाष्टमषष्ठका ।
तृतीयश्चात्र दीर्घा स्यु —

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम्— अथ मातङ्गखेलित–मातङ्गखेलिताभिधान चण्डवृत्तं लक्ष्यत इति शेष. । अत्र चार्थे वाकार । तथा च यत्र 'बाणदशमौ' बाण–पञ्चम दशमश्चेति द्वौ वर्णौ श्लिष्टौ मधुरौ–परसवर्णौ च भवत. । तथा रौ–रगणौ, अथ च यलौ–यगणलघू यदि

१. क. बाणंभङ्गश्च ।

भवतस्तथा बाणे–पञ्चमे भङ्गश्च–मैत्री च यदि भवति, तथा प्रथमाष्टमषष्ठकाः वर्णा-स्तृतीयश्च वर्णश्चेच्चत्वारोऽत्र वर्णा दीर्घा स्युस्तदा मातङ्गखेलिताभिधानं चण्डवृत्तं भवति। दशाक्षर पदमिदम्। अत्र पदविन्यासः स्वेच्छया विधेय। यथा–

साधितानन्तसारसामन्त।

इत्यादि। यथा वा–

नाथ हे नन्द-गेहिनीशन्द
पूतनापिण्डपातने चण्ड
दानवे दण्डकारकाखण्ड-
सारपौगण्डलीलयोद्दण्ड
गोकुलालिन्दगूढ गोविन्द
पूरितामन्द-राधिकानन्द
वेतसीकुञ्ज-माधुरीपुञ्ज
लोकनारम्भजातसरम्भ-
दीपितानङ्गकेलिभागङ्ग-
गोपसारङ्ग-लोचनारङ्ग-
कारिमातङ्गखेलितासङ्ग-
सौहृदाशङ्कयोषितामङ्क-
पालिकालम्ब चारुरोलम्ब-
मालिकाकण्ठ कौतुकाकुण्ठ
पाटलीकुन्दमाधवीवृन्द-
सेवितोत्तुङ्गशेखरोत्सङ्ग
मां सदा हन्त पालयानन्त
वीर !

स्फुरदिन्दीवरसुन्दर सान्द्रतरानन्दकन्दलीकन्द।
मां तव पदारविन्दे नन्दय गन्धेन गोविन्द॥

कुन्ददशन मन्दहसन[1]
बद्धरसन रुक्मवसन[2]
देव !

प्रपन्नजनतातमःक्षपणशारदेन्दुप्रभा-
व्रजाम्बुजविलोचना स्मरसमृद्धिसिद्धौषधि.।

---

१. क. 'मन्दहसन' नास्ति। २ गोवि. रुक्मवसन रम्यहसन।

पतङ्गदुहितुस्तटीवनकुटीरकेलिप्रिये,
परिस्फुरतु मे मुहुस्त्वयि मुकुन्द शुद्धा रतिः ।

इति विरुदमिदं वर्द्धित ४.

५. अथ रणश्चण्डवृत्तम्

—त्रि-पञ्च-नव-सप्तमाः ॥ ११ ॥

आदिरेकादशश्चैव श्लिष्टा जो रो जरौ लघु. ।
सर्वशेषे रणाख्ये स्यात्—

[व्या०] इदमत्राकूलम् । यत्र त्रि-पञ्च-नव-सप्तमा. वर्णा', आदिरेकादशश्चेति च षड्वर्णा श्लिष्टा भवन्ति । तत्र गणनियममाह—'जो रो जरौ लघु' जो–जगण रो–रगण भवतीति शेष । अथ च जरौ–जगणरगणौ एव भवत, तत सर्वशेषे पदे चैको लघुर्भवति । तत् रणाख्य सविरुद महाकलिकारूपचण्डवृत्त भवति । द्वादशाक्षरमिद पदम् । चतुर्दशाक्षर चान्त्य पदं भवति । विरामद्वयेपि एकैकस्याधिकस्य लघोर्दानादित्याशय [1] । पदविन्यासस्तु स्वेच्छया भवतीत्युपदेश । तथा चान्त्यपदे विरामद्वयेपि लघुदानाज्जभला'–जगण-भगणौ लघवो भवन्तीति वा [2] । यथा—

प्रगल्भविक्रम प्रसर्प्पिसत्क्रम ।

इत्यादि ।

प्रपन्नवर्द्धनक प्रसन्नगर्द्धनक ।

इत्युत्तरम् [3] ।

एतस्य चान्यत्र समग्र इति नामान्तरम् । तथोदाहृतमपि श्रीरूपस्वामिभिः श्रीगोविन्दविरुदावल्याम् । यथा–

अनिष्टखण्डन [4] स्वभक्तमण्डन
प्रयुक्तचन्दन प्रपन्ननन्दन
प्रसन्नचञ्चल स्फुरद्दृगञ्चल
श्रुतिप्रलम्बक-भ्रमत्कदम्बक
प्रविष्टकन्दरप्रकृष्टसुन्दर-
स्थविष्ठसुन्दरक-प्रसर्पबन्धुरक [5]
देव !

वृन्दारकतरुवीते वृन्दावनमण्डले वीर ।
नन्दितवान्धववृन्द सुन्दरवृन्दारिका रमय ।

१ ख लघ्योर्दानादित्याशय' । २. ख. घ । ३. ख. इत्यन्तम् । ४. गोवि. अरिष्टमदन । ५. गोवि. स्थविष्ठसिन्धुरप्रसर्पबन्धुर ।

खलिनीडुम्बक मुरलीचुम्बक
जननीवन्दक-पशुपीनन्दक
वीर ।

अनुदिनमनुरक्तः पद्मिनीचक्रवाले,
नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्षी ।
कलितमधुरपद्मः कोऽपि गम्भीरवेदी,
जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्रः ।

इति सविरुद समग्रोदाहरणम् ।

इति रणश्चण्डवृत्तम् ५.

६. अथ वीरश्चण्डवृत्तम्

—मभौ नौ वीरचण्डके ।। १२ ।।
आद्यवर्णात्तु चत्वारो वर्णा स्युर्मधुरेतराः ।

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र मभौ–मगणभगणौ, अथ च नौ–नगणौ भवत । किञ्च, आद्यवर्णात्–प्रथमाक्षरात् चत्वारो वर्णाः मधुरेतरा – केवल श्लिष्टा एवेत्यर्थः । तत् वीरचण्डकाख्य चण्डवृत्त भवति । इदमपि द्वादशाक्षरमेव पदम् । अत्रापि पदविन्यास पूर्ववदेव । बाहुल्येन द्वादशपदमिद भवति, तथा दृष्टत्वादिति । यथा–

युद्धक्रुद्धप्रतिभटजयपर ।

इत्यादि ।

एतस्यैव अन्यत्र **वीरभद्र** इति नामान्तरम् । यथा–

उद्यद्विद्युद्द्युतिपरिचितपट
सर्प्पत्सर्प्पस्फुरदुरुभुजतट
स्वस्थस्वस्थत्रिदशयुवतिनुत
रक्षद्दक्षप्रियसुहृदनुसृत
मुग्धस्निग्धव्रजजनकृतसुख
नव्यश्रव्यस्वरविलसितमुख
हस्तन्यस्तस्फुटसरसिजवर
सज्जद्गर्ज्जत्खलवृषमदहर
युद्धक्रुद्धप्रतिभटलयकर
वर्णस्वर्णप्रतिमतिलकधर
रुष्यत्तुष्यद्युवतिषु कृतरस
भक्तव्यक्तप्रणय मनसि वस
वीर !

विडम्बितसुधाम्बुधिप्रबलमाधुरीडम्बरा,
विभर्त्तु तव माधव स्मितकदम्बकान्तिर्मुदम् ।
इति श्रीगोविन्दविरुदावल्यां मातङ्गखेलितप्रत्युदाहरणम् ।

सविरुदमिद मातङ्गखेलितम् ।८।

९ अथ उत्पल चण्डवृत्तम्

—भद्वय चोत्पल मतम् ॥ १५ ॥

श्लिष्टौ द्विपञ्चमौ—

[व्या०] अयमर्थः—भद्वय–भगणयोर्द्वयं, भगणचतुष्टयमित्यर्थः। लक्ष्ये तथा दर्शनादेवं ख्यातम्। किञ्च–तस्मिन्नेव भगणद्वये द्विपञ्चमौ–द्वितीयपञ्चमौ वर्णौ . श्लिष्टौ–सरेफशिरस्कौ च भवतो यत्र तद् उत्पलनामक चण्डवृत्त भवतीत्यर्थः। षडक्षर भगणद्वयपक्षे, भगणचतुष्टयपक्षे तु द्वादशाक्षरमेव पदम्। पदविन्यासस्तु पूर्ववदेव। यथा–

सर्वजनप्रिय
सर्वसमक्रिय

इत्यादि। यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

नर्त्तितशर्क्कर-चर्क्कृतकर्क्कर-
वृद्धमरुद्भर-तर्द्दन निर्भर-
दुष्टविमर्द्दन शिष्टविवर्द्धन
सर्वविलक्षण मित्रकृतक्षण
सद्भुजलक्षित-पर्वतरक्षित-
निष्ठुरगर्ज्जन-खिन्नसुहृज्जन
रुष्टदिवस्पति-गर्वसमुन्नति-
तर्जनविभ्रम निर्गलितभ्रम-
शक्रकृतस्तव विस्फुरदुत्सव
वीर !

बुद्धीनां परिमोहन· किल ह्रियामुच्चाटन. स्तम्भनो
दर्भोदग्रधिया[1] मन करटिनां वश्यत्वनिष्पादनः ।
कालिन्दीकलहस हन्त वपुषामाकर्षण. सुभ्रुवां,
जीयाद् वैणवपञ्चमध्वनिमयो मन्त्राधिराजस्तव ।

---

१ गोवि. दर्भोदग्रभियाम् ।

काननारब्ध-काकलीशब्द-
पाटवाकृष्ट-गोपिकादृष्ट
चातुरीजुष्ट-राधिकातुष्ट
कामिनीलक्ष-मोदने दक्ष
भामिनीपक्ष[1] मामनु रक्ष,
देव !

अजर्जरपतिव्रताहृदयवज्रभेदोद्धुराः,
कठोरतरमानिनी[2]-निकरमानमर्मच्छिदः[3] ।
अनङ्गधनुरुद्धतप्रचलचिल्लिचापच्युता,
क्रियासुरघविद्विषस्तव मुद कटाक्षेषवः ।

सविरुदमिदमुत्पलम् ।९।

१०. अथ गुणरतिश्चण्डवृत्तम्

—सो नो, लश्च दीर्घं तृतीयकम् ।
गुणरत्याख्यं—

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र सः–सगणः नो–नगणः ततो लश्च–लघुर्भवति । अत्र चतुर्दशाक्षर-पदविन्यासस्य अन्यत्रापि दृष्टत्वात् सनलानामावृत्तिरवगन्तव्या, तेन प्रकृतोद्दृवणिका सिद्धि-र्भवति । किञ्च, तृतीयकं–तार्तीयमक्षरं दीर्घं भवति । तद् गुणरत्याख्य चण्डवृत्तं भवति । चतुर्दशाक्षर पदम् । पदविन्यासः पूर्ववदेव । यथा–

विदिताखिलसुख
सुख(ष)माधिकमुख ।

इत्यादि । यथा वा–

प्रकटीकृतगुण शकटीविघटन
निकटीकृतनवलकुटीवर वन-
पटलीतटचर नटलोल मधुर
सुरभीकृतवन सुरभीहितकर
मुरलीविलसित-खुरलीहृतजग-
दरुणाधर नव-तरुणायतभुज[4]
वरुणालयसमकरुणापरिमल
कलभायितबल-शलभायितखल

---

१. गोवि भाविनीपक्ष । २. गोवि. कठोरवरर्वाणिनी । ३. गोवि. वर्मच्छिदः ।
४. गोवि. करुणायतभुज ।

धवलाधृतिधर[1] गवलाश्रितकर
सरसीकृतनर सरसीरुहधर
कलशीलितमुख कलशीदधिहर
ललितारतिकर ललितावलिपर
धीर !

हरिणीनयनावृत प्रभो करिणीवल्लभकेलिविभ्रम ।
तुलसीप्रिय दानवाङ्गनाकुलसीमन्तहर प्रसीद मे ॥

चन्दनर्चित गन्धसमर्चित
गण्डविवर्त्तन-कुण्डलनर्त्तन
सन्दलदुज्ज्वल कुन्दलसद्गल
वञ्जुलकुन्तल[2] मञ्जुलकज्जल
सुन्दरविग्रह नन्दलसद्ग्रह
वीर !

रतिमनुबध्य गृहेभ्य कर्षति राधां वनाय या निपुणा ।
सा जयति निसृष्टार्था[3] वरवशजकाकली दूती ।

सविरुदा गुणरतिरियम् ।१०।

११. अथ कल्पद्रुमश्चण्डवृत्तम्

तत्र–

—अन्त्यान्त्यो नवम. श्लिष्टपूर्वगः ॥ १६ ॥

कल्पद्रुमे तजौ यश्च श्लिष्टाः षट्-त्रि-नव-द्विका. ।

[व्या०] कोऽर्थ ? उच्यते—यत्र कल्पद्रुमे चण्डवृत्ते अन्त्यो–यमगणः तस्यान्त्यो नवमो वर्ण. श्लिष्टपूर्वग –श्लिष्टो वर्ण पूर्वगो यस्य स तादृशो भवति । तत्र च गणनियममाह— तजौ–तगणजगणौ, अथ च यश्च–यगणोपि भवति । एवं गणत्रयं यत्र भवति तदेतत् कल्पद्रुमाख्य चण्डवृत्त भवति । नवाक्षरमिद पदम् । पदविन्यासोपि पूर्ववत् । किञ्च–षट्त्रिनवद्विकाः– षष्ठतृतीयनवमद्वितीयका वर्णा श्लिष्टा भवन्ति । यत्र च नवमश्लेषादेव द्वितीये पदे प्रथमवर्णस्य गुरुत्व भवतीति भाव ।

यथा–

उद्रिक्ततरस्थितगर्व
प्रव्यक्तपरिस्थितसर्व ।[4]

---

१. गोवि. हर । २. गोवि. कुड्मल । ३. गोवि. निसृष्टार्या तव । ४. ख. ।स्यक्तपरिस्थितशव ।

एवं पदान्तरमपि बोद्धव्यम् ।

इति कल्पद्रुम ।११।

१२ अथ कन्दलश्चण्डवृत्तम्

कन्दले पञ्चमः श्लिष्टो द्वितीये मधुरोऽनु भौ ॥ १७ ॥

[व्या०] कन्दले–कन्दलाख्ये चण्डवृत्ते पञ्चमो वर्ण. श्लिष्टो भवति। द्वितीयो वर्णो मधुर.–परसवर्णो भवति। तत्र गणनैयत्यमाह—अत्रास्मिन् भौ–भगणौ एव स्तः। षडक्षरमेव पदम्। तत्कन्दलाभिधान चण्डवृत्तं भवतीति। यथा–

पण्डितवर्द्धन ।

इत्यादि ।

इति कन्दलः ।१२।

१३. अथ अपराजितञ्चण्डवृत्तम्

षडष्टदशमा दीर्घा द्वितीयो मधुरो यदि ।
अपराजितमेतत्तु भसजाश्च गुरुर्लघु. ॥ १८ ॥

[व्या०] एतदुक्त भवति। यत्र षडष्टदशमाः–षष्ठाष्टमदशमा वर्णा दीर्घा भवन्ति। द्वितीयो वर्णो यदि मधुर–परसवर्णो भवति। यदि च भसजा–भगणसगणजगणा भवन्ति। अथ च गुरुस्ततो लघुश्चेद् भवति। तदेतत् अपराजिताख्यं चण्डवृत्त भवति। एकादशाक्षरं पदम्। यथा–

गञ्जितपरवीर धीर हीर ।

इत्यादि ।

इति अपराजितम् ।१३।

१४. अथ नर्त्तनञ्चण्डवृत्तम्

चतु.सप्तमकौ श्लिष्टौ सौ रो लौ यदि नर्त्तनम् ।
अष्टमो मधुर —

[व्या०] अस्यार्थ —यदि चतु.सप्तमकौ वर्णौ श्लिष्टौ भवतः, अष्टमो वर्णो मधुर –परसवर्णो भवति। किञ्च, यदि सौ–सगणौ स्याताम्। अथ च रो–रगण., ततो लौ–लघुद्वय स्यात् तदा नर्त्तन–नर्त्तनाख्य चण्डवृत्त भवति। इदमप्येकादशाक्षर पदम्। यथा–

भुवनत्रयशत्रुम्प्रमर्द्दय ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तनम् ।१४।

१५. अथ तरलसमस्तञ्चण्डवृत्तम्

—श्लिष्ट-संश्लिष्टमधुरा यदि ॥ १९ ॥

षट्त्रिपञ्चमका जो म. सगणो लघुयुग्मकम् ।
तरत्समस्तमित्याहुः—

[व्या०] एवमुक्त भवति । यदि षट्त्रिपञ्चमका – षष्ठतृतीयपञ्चमा वर्णाः श्लिष्ट-सश्लिष्ट-मधुराः स्यु' । तत्र गणनियममाह—जो–जगणः, मो–मगण', सगणः गुर्वन्तश्चतुष्कलो गणस्ततो लघुयुग्मक–लघुयुगल च यदि भवति तदा तरत्समस्तमिति नामक चण्डवृत्तमाहुश्छान्द-सिका' । एकादशाक्षरमेव पदम् । यथा–

निरस्तचण्डद्वेषिधराधर

इत्यादि ।

इति तरत्समस्तम् ।१५।

१६. अथ वेष्टनञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घौ षट्पञ्चमौ यदि ।। २० ।।
वेष्टने सप्तम. श्लिष्टो नयौ लघुचतुष्टयम् ।

[व्या०] अयमर्थ.—वेष्टने–वेष्टनाख्ये चण्डवृत्तप्रभेदे यदि षट्पञ्चमौ–षष्ठपञ्चमकौ वर्णौ दीर्घौ स्याताम् । सप्तमश्च वर्ण. श्लिष्टो भवेत् । गणनियममाह—नयौ–नगणयगणौ स्त, ततो लघुचतुष्टय यत्र भवति । दशाक्षरं च पद भवति । तत् वेष्टनाभिधान चण्डवृत्तं भवतीति । यथा–

मलयजसाराञ्चितहर ।

इत्यादि ।

इति वेष्टनम् ।१६।

१७. अथ अस्खलितञ्चण्डवृत्तम्

तरौ भलावस्खलिते त्र्यष्टपञ्चमसप्तमा ।। २१ ।।
सश्लिष्टा दीर्घ आद्य' स्यात्—

[व्या०] कोऽर्थ ? उच्यते—अस्खलिते–अस्खलिताभिधाने चण्डवृत्ते यदि तरौ–तगणरगणौ स्याताम् । अथ च भलौ–भगणलघूस्त' । किञ्च, त्र्यष्टपञ्चमसप्तमा –तृतीयाष्टमपञ्चम-सप्तमा वर्णाश्चेत् सश्लिष्टा अन्त्ययोगिन' स्युः । आद्य –प्रथमो वर्णश्चेद् दीर्घ' स्यात् तदा अस्खलिताभिधान चण्डवृत्त भवति । दशाक्षरमेव पदं भवति । यथा–

आबद्धशुद्धयुद्धप्रणय ।

इत्यादि ।

इति अस्खलितम् ।१७।

१८ अथ पल्लवितञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घौ चेत्तुर्यपञ्चमौ ।
शिथिलो मधुरो वाऽत्र द्वितीयो भतनद्विजा ।। २२ ।।
एतत् पल्लवितम्—

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम्। अत्र पल्लविताख्ये चण्डवृत्ते तुर्यपञ्चमौ वर्णौ चेद् दीर्घौ भवतः। द्वितीयो वर्णः शिथिलो मधुरो वा भवति। तत्र प्रायेण मधुर एव श्रुतिसौख्यकृत्। तत्र गणनैयत्यमाह—भतनद्विजाः—भगण-तगण-नगण-द्विजगणा क्रमेण यत्र भवन्ति। एतत् पल्लविताभिधानमिदं चण्डवृत्तं भवति। त्रयोदशाक्षरमिदं पदं भवति। यथा—

रञ्जितनारीजननवमनसिज।

इत्यादि। मधुरद्वितीयवर्णोदाहरणमिदम्।

शिथिलद्वितीयवर्णोदाहरणं, यथा—

वल्लवलीलासमुदयपरिचित
पल्लवरागाधरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवणित मुनिगण-
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकण
मल्लविहाराद्भुततरुणिमधर
फुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासार्पितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहरसुमधुरकल
हल्लकमालापरिचितकचकुल
धीर !
जय चारुहास कमलानिवास
ललनाविलास परिवीतदास
वीर !

वल्लवललनावल्ली-करपल्लवशीलितस्कन्धम्।
उल्लसितं परिफुल्लं भजाम्यहं कृष्णकङ्केल्लिम्।

इति पल्लवितम् ।१८।

१९. अथ समग्रं चण्डवृत्तम्

—जो रः समग्रं श्लिष्टपञ्चमम्।
तृतीयं मधुरं सर्व-कलान्ते लः—

[व्या०] अस्यार्थः—जो—जगणः रो—रगणश्चेति गणद्वयं आन्ते लघुरित्युपदेशः। तथा च द्वादशाक्षरपदमिदं समग्र—समग्राख्यं चण्डवृत्तं भवति। किंविशिष्टं ? श्लिष्टपञ्चम—श्लिष्टः—सरेफशिरस्कः पञ्चमो वर्णो यत्र। किञ्च, तृतीयमक्षरं मधुर—परसवर्णं यत्र। सर्वकलान्ते—

अर्धादन्त्ये पदे लः-एको लघुरधिको देय इत्यर्थ, तेनान्त्य पद त्रयोदशाक्षर भवति। तच्च, जरनभलान्तमित्युपदिश्यते। पदविन्यासस्तु स्वेच्छया विधेय। यथा–

अनङ्गवर्जन प्रसङ्गसज्जन।

इत्यादि।

अनङ्गमङ्गल प्रसङ्गसञ्जनक।

इत्यन्तम्।

अत्र च मधुरतृतीयत्वादेव विरुदावल्यन्तर-समग्राद् भिन्नमिद समग्रमिति।

इति समग्रम् ।१९।

२०. अथ तुरग[1]श्चण्डवृत्तम्

—भनौ जलौ ॥ २३ ॥

मधुरौ[2] युग्मनवमौ चेच्चण्डतुरगाह्वयम्।

[व्या०] अयमर्थ —यत्र भनौ–भगण-नगणौ भवत, ततो जलौ–जगणलघू स्याताम्। किञ्च, युग्मनवमौ वर्णौ चेत् मधुरौ–परसवर्णौ स्तस्तदा तुरगाह्वयचण्डवृत्त भवतीत्यर्थ। दशाक्षर पदमिदम्। पदविन्यास पूर्ववत्। यथा–

पण्डितगुणगणमण्डित।

यथा वा–

सँव्वल[3] विचकिलकुण्डल
मण्डितवरतनुमण्डल
कुण्डलिपतिकृतसङ्गर
दण्डित[4] भुवनभयङ्कर
शङ्करकमलजवन्दित
किङ्करनुतिलवनन्दित[5]
गञ्जितसमदपुरन्दर
चञ्चलदमनधुरन्धर
बन्धुरगतिजितसिन्धुर
चन्दनसुरभितकन्धर
सुन्दरभुजलसदङ्गद[6]
सन्ततसखिगणरङ्गद
झङ्कृतिकरमणिकङ्कण

---

१ गोवि तुरंग। २. क. मधुर। ३. गोवि सचल। ४. गोवि. खण्डित।
५ क किङ्करतुलितवनन्दित। ६ क. भुजवलदङ्गद।

कुन्तललुठदुरुरङ्ग
कुङ्कुमरुचिलसदम्बर
लङ्गिमपरिमलडम्बर
नन्दभवनवरमङ्गल-
[मञ्जुलघुसृणसुपिङ्गल
हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज
सञ्चितयुवतिसदङ्गज][1]
सन्ततमृगपदपङ्किल
सतनु मयि कुशलङ्किल
वीर !

गिरितटीकुनटीकुलपिङ्गले खलतृणावलिसञ्ज्वलदिङ्गले ।
प्रखरसङ्गरसिन्धुतिमिङ्गिले मम रतिर्वलता व्रजमङ्गले ।

जय चारुदाम-ललनाभिराम
जगतीललाम रुचिहारिवाम[2]
वीर !

उन्दितहृदयेन्दुमणिः पूर्णकल कुवलयोल्लासी ।
परित शार्वरमथनो विलसति वृन्दाटवीचन्द्र ।

इति तुरगः ।२०।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य विंशतिः शुद्धा. प्रभेदाः ।

अथ सङ्कीर्णा

तत्र–

२१. पङ्केरुहं चण्डवृत्तम्

पङ्केरुह नयौ षष्ठे भङ्गो मैत्री च दृश्यते ।। २४ ।।
सा चेत् कवर्गरचिता यथा लाभमनुक्रमात् ।
तथैव षष्ठो मधुर स्वरभेदेऽपि तद्भिदा ।। २५ ।।

[व्या०] एतस्यार्थं —यत्र नयौ–नगणयगणौ भवतः। तथा षष्ठे वर्णे भगो मैत्री च दृश्यते । किञ्च, सा मैत्री चेत् कवर्गेण यथालाभमनुक्रमात् रचिता स्यात । तथा षष्ठो वर्णो मधुर–परसवर्णो यदि स्यात् तदा पङ्केरुह नाम चण्डवृत्त भवति । किञ्च, स्वरभेदेपि–इकारादिस्वर-भेदेपि सति तद्भिदा पङ्केरुहभेदो भवतीति बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोपि पूर्व-वदिति बोद्धव्यम् ।

१. [-] कोष्ठगतोश. नास्ति क. प्रतौ । २ गोवि रुचिहृतवाम ।

यथा–

जय गतशङ्क
प्रणयविटङ्क
प्रियजनवङ्क
स्मितजितगङ्ग
स्फुटतरशृङ्ग-
ध्वनिधृतरङ्ग
क्षणनटनङ्ग
प्रणयिकुरङ्ग-
व्रजकृतसङ्ग
श्रुतितटरिङ्ग-
न्मधुरसपिङ्ग-
ग्रथितलवङ्ग
स्वनटनभङ्ग-
व्रणितभुजङ्ग
स्तवकिततुङ्ग-
क्षितिरुहशृङ्ग-
स्थितबहुभृङ्ग-
क्वणिततरङ्ग-
प्रवलदनङ्ग-
भ्रमदुरुभृङ्गी-
मुदितकुरङ्गी-
दृगुदितभङ्गी-
भ्रदिमभिरङ्गी-
कृतनवसङ्गी-
तक दरवङ्के-
क्षण नवसङ्के-
तकसुदृगङ्के-
शय सकलङ्के-
तरपृपदङ्के-
दितमुख पङ्के-
रुहपद रङ्के

कृपय सपङ्के
किल मयि धीर !

उत्तुङ्गोदयशृङ्गसङ्गमजुषा बिभ्रत्पतङ्गत्विषा,
वासस्तुङ्ग[1]मनङ्गसङ्गरकलाशौटीर्यपारङ्गत ।
स्वान्त रिङ्गदपाङ्गभङ्गिभिरलं गोपाङ्गनानां किल[2],
भूयास्त्व पशुपालपुङ्गव दृशोरव्यङ्ग रगाय मे ॥

विलसदलिकगतकुङ्कुमपरिमल
कटितटधृतमणिकिङ्किणिवरकल
नवजलधरकुललङ्घिमरुचिभर
मसृणमुरलिकलभङ्गिमधुरतर
धीर !

अवतसितमञ्जुमञ्जरे तरुणीनेत्रचकोरपञ्जरे ।
नवकुङ्कुमपुञ्जपिञ्जरे रतिरास्ता मम गोपकुञ्जरे ।

पङ्केरुहं सविरुदमिदम् । २१ ।

अथ सितकञ्जादयश्चण्डवृत्तस्य चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । तत्र—

एतावेव गणौ यत्र भङ्गो मैत्री च पूर्ववत् ।
क्रमेण चादिवर्गैस्तु रचिता साऽपि पूर्ववत् ॥ २६ ॥

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र एतौ—नगणयगणौ एव—पूर्वोक्तौ गणौ भवत. । किञ्च, भङ्गो मैत्री च पूर्ववत्, षष्ठाक्षर एव भवतीत्यर्थ । एतच्च षष्ठवर्णस्य मधुरत्वमपि लक्षयतीति बोद्धव्यम् । पूर्ववद् इत्यनेनैवोपस्थापितत्वात् । किञ्च, साऽपि मैत्री चादि—चतुर्भिर्वर्गै पूर्ववत् यथालाभ रचिता चेद् भवति । अपि शब्दात् स्वरान्तरेणाभेदेपि सति तदा तत्तद्भेदो भवतीत्यपि बोद्धव्यम् । षडक्षरमेव पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्ववदेवेति च ॥२६॥

तद्भेदचतुष्टयमाह सार्द्धेन श्लोकेन—

सितकञ्ज तथा पाण्डूत्पलमिन्दीवर तथा ।
अरुणाम्भोरुहञ्चेति ज्ञेय भेदचतुष्टयम् ॥ २७ ॥
विरुदेन सम चापि चण्डवृत्तस्य पण्डितै. ।

[व्या०] सितकञ्ज, पाण्डूत्पल, इन्दीवर, अरुणाम्भोरुहं चेति सविरुदचण्डवृत्तस्य भेदचतुष्टयं पण्डितै'—अधीतछन्द शास्त्रनिपुणमतिभिर्ज्ञेयमित्युपदिश्यते ।

उदाहरणमेतेषा क्रमेणैवोच्यतेऽधुना ॥ २८ ॥

---

१. गोवि. स्तुल्य ।　२. गोवि. गिलन् ।

[व्या०] एतेषां सितकञ्जादिभेदानाम्, शेषं स्पष्टम् । तत्र–

२२. सितकञ्जञ्चण्डवृत्तम्

जय कचचञ्चद्-
द्युतिसमुदञ्च-
न्मधुरिमपञ्च-
स्तवकितपिञ्छ-
स्फुरित विरिञ्च-
स्तुत गिरिगञ्ज[1]-
व्रजपरिगुञ्ज-
न्मधुकरपुञ्ज-
द्रुतमृदुशिञ्ज
द्विषदहिगञ्ज
व्रततिषु खञ्ज-
न्नवरजसञ्ज[2]-
न्मरुदतिपिञ्ज
प्रवलित[3]मुञ्जा-
नलहर गुञ्जा-
प्रिय गिरिकुञ्जा-
श्रित रतिसञ्जा-
गर नवकञ्जा-
मलकर भञ्जा-
निलहर मञ्जी-
रजरवपञ्ज
परिमलसञ्जी-
वितनवपञ्चा-
शुगगरसञ्चा-
रणजितपञ्चा-
ननमद धीर ।

---

१. गोवि. गिरिकुञ्ज- । २. गोवि. रसमञ्ज- । ३. गोवि. प्रवणित ।

कर्णिकारकृतकर्णिकाद्युति. कर्णिकापदनियुक्तगैरिका ।
मेचका मनसि मे चकास्तु ते मेचकाभरण भारिणी[1] तनु: ।

मदनरसङ्गत सङ्गतपरिमल
युवतिविलम्बित लम्बितकचभर
कुसुमविटङ्कित टङ्कितगिरिवर
मधुरससञ्चित सञ्चितनरवर[2]
वीर !

भ्रूमण्डलताण्डवितप्रसूनकोदण्डचित्रकोदण्ड ।
हृतपुण्डरीकगर्भं मण्डय मे[3] पुण्डरीकाक्ष ।

सविरुद सितकञ्जमिदम् ।२२।

२३. अथ पाण्डूत्पलञ्चण्डवृत्तम्

जय जय दण्ड-
प्रिय कचखण्ड-
ग्रथितशिखण्ड-
द्रज शशिखण्ड-
स्फुरणसपिण्ड-
स्मितवृतगण्ड
प्रणयकरण्ड
द्विजपतितुण्ड
स्मररसकुण्ड
क्षतफणिमुण्ड
प्रकटपिचण्ड-
स्थितजगदण्ड
क्वणदणुघण्ट
स्फुटरणघण्ट
स्फुरदुरुशुण्डा-
कृतिभुजदण्डा-
हृतखलचण्डा-
सुरगण पण्डा-

---

१. गोवि. भाविनी । २. गोवि. पक्तिरियं नास्ति । ३. गोवि. मम ।

जनितवितण्डा-
जितबल भण्डी-
रदयित खण्डी-
कृतनवडिण्डी-
गण कलकुण्डी[1]-
कृतकलकण्ठी-
कुल मणिकण्ठी-
स्फुरितसुकण्ठी-
प्रिय वरकण्ठी-
रवरण वीर !

दण्डी कुण्डलिभोगकाण्डनिभयोरुद्दण्डदोर्दण्डयोः,
शिलष्टश्चण्डिमडम्बरेण निविडश्रीखण्डपुण्ड्रोज्ज्वलः ।
निर्द्धूतोद्यदचण्डरश्मिघटया तुण्डश्रिया मामक
काम मण्डय पुण्डरीकनयन त्व हन्त हृन्मण्डलम् ।
कन्दर्पकोदण्ड-दर्प्पक्रियोद्दण्ड-
दृग्भङ्गिकाण्डीर सजुष्टभाण्डीर
धीर !
त्वमुपेन्द्र कलिन्दनन्दिनी-तटवृन्दावनगन्धसिन्धुर ।
जय सुन्दरकान्तिकन्दलैः स्फुरदिन्दीवरवृन्दबन्धुभि ।
सविरुदं पाण्डूत्पलमिदम् ।२३।

२४. अथ इन्दीवरम्

जय जय हन्त
द्विष दभिहन्त-
मधुरिमसन्त-
पितजगदन्त-
मृदुल वसन्त-
प्रिय सितदन्त-
[स्फुरितदिगन्त
प्रसरदुदन्त][2]

---

१. गोवि. फुण्ठी । २. पंक्तिद्वयं नास्ति क. प्रतौ ।

प्रभवदनन्त-
प्रियसख सन्त-
स्त्वयि रतिमन्त-
स्त्वमुदहरन्त][1]
प्रभुवर नन्दा-
त्मज गुणकन्दा-
सितनवकन्दा-
कृतिधर[2] कुन्दा-
मलरद तुन्दा-
त्तभुवन वृन्दा-
वनभवगन्धा-
स्पदमकरन्दा-
न्वितनवमन्दा-
रकुसुमवृन्दा-
र्चितकच वन्दा-
रुनिखिलवृन्दा[3]-
रकवरबन्दी-
डित विधुसन्दी-
पितलसदिन्दी-
वरपरिनिन्दी-
क्षणयुग नन्दी-
श्वरपतिनन्दी-
हित जय वीर !

स्मितरुचिमकरन्दस्यन्दि वक्त्रारविन्द,
तव पुरुपरहसान्विष्ट गन्ध मुकुन्द ।
विरचित[4]पशुपालीनेत्रसारङ्गरङ्ग,
मम हृदयतडागे सङ्गमङ्गीकरोतु ।

अम्बरगतसुरविनतिविलम्बित
तुम्बरुपरिभविमुरलिकरम्बित

[—] १. पंक्तिचतुष्टयं नास्ति क. प्रतौ । २. गोवि. घृतिधर । ३. ख. पंक्तिरियं नास्ति । ४. गोवि. परिचित ।

शम्बरमुखमृगनिकरकुटुम्बित
सभ्रमवलयितयुवतिविचुम्बित
धीर !

अम्बुजकुटुम्बदुहितु कदम्बसम्बाधवन्धुरे पुलिने ।
पीताम्बर कुरु केलिं त्व वीर ! नितम्बिनीघटया ॥

सविरुदमिदमिन्दीवरम् ।२४।

२५. अथ अरुणाम्भोरुहञ्चण्डवृत्तम्

जय रससम्पद्-विरचितझम्प
स्मरकृतकम्प-प्रियजनशम्प
प्रवणितकम्प-स्फुरदनुकम्प
द्युतिजितशम्प-स्फुटनवचम्प-
श्रितकचगुम्प श्रुतिपरिलम्ब-
स्फुरितकदम्ब स्तुतमुख डिम्भ-
प्रिय रविबिम्बो-दयपरिजृम्भो-
न्मुखलसदम्भो-रुहमुख लम्बो-
द्भटभुज लम्बो-दरवरकुम्भो-
पमकुचबिम्बो-ष्ठयुवतिचुम्बो-
द्भट परिरम्भोत्सुक कुरु श भो-
स्तडिदवलम्बो-र्जितमिलदम्भो-
घरसुविडम्बो-द्धुर नतशम्भो
रपिजितदम्भो[1]-लिगरिमसम्भा-
वितभुजजृम्भा[2]-हितमद लम्पा-
कमनसि सम्पादय मयि त पा-
किममनुकम्पालवमिह धीर !

दिव्ये दण्डधरस्वसुस्तटभवे फुल्लाटवीमण्डले,
वल्लीमण्डपभाजि लब्धमदिरस्तम्बेरमाडम्बरः ।
कुर्वन्नञ्जनपुञ्जगञ्जनमति श्यामाङ्गकान्तिश्रिया,
लीलापाङ्गतरङ्गितेन तरसा मा हन्त सन्तर्पय ।

---

१. गोवि. परिजितदम्भो । २. ख. तृम्भा; गोवि. जम्भा ।

अम्बुजकिरणविडम्बक खञ्जनपरिचलदम्बक
चुम्बितयुवतिकदम्बक कुन्तललुठितकदम्बक
वीर !

प्रेमोद्वेल्लितवल्गुभिर्वलयितस्त्व वल्लवीभिर्विभो !
रागोल्लापितवल्लकीविततिभिः कल्याणवल्लीभुवि ।
सोल्लुण्ठ मुरलीकलापरिमल[1] मल्लारमुल्लासयन्,
वाल्येनोल्लसिते दृशौ मम तडिल्लीलाभिरुत्फुल्लय ।

सविरुदमिदमरुणाम्भोरुहम् ।२५।

एते कादिपञ्चवर्गोत्थापिता पञ्चचण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य सङ्कीर्णाः प्रभेदा ।

अथ गर्भिताः

तत्र प्रभेदा —

२६. फुल्लाम्बुजञ्चण्डवृत्तम्

षष्ठे भङ्गश्च मैत्री च नयावेव गणौ यदि ।
अन्तस्थस्य तृतीयेन यदि मैत्रीकृता भवेत् ।। २९ ।।

स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा रमणीयतरा क्वचित् ।
फुल्लाम्बुज तदुद्दिष्ट चण्डवृत्त सुपण्डितैः ।। ३० ।।

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—यदि नयावेव—नगणयगणावेव गणौ स्तः । षष्ठे वर्णे भङ्गो मैत्री च यदि अन्तस्थस्य यवर्गस्य तृतीयेन लकारेण कृता भवेत् । सापि क्वचित् स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा च स्यात् । तदा एतद्देशादृतमिदं नामत. फुल्लाम्बुज इति प्रसिद्ध सुपण्डितैश्चण्ड-वृत्तमुद्दिष्टं—कथितमित्यर्थः । यथा—

व्रजपृथुवल्ली[2]-परिसरवल्ली-
वनभुवि तल्लीगणभृति मल्ली-
मनसिजभल्ली-जितशिवमल्ली-
कुमुदमतल्लीजुषि गत झिल्ली-
परिषदि हल्ली-सकसुखझिल्ली[3]-
रत परिफुल्ली-कृतचलचिल्ली-

---

१. गोवि. कलाभिरमलं । २. गोवि. पल्ली । ३. गोवि. झल्ली ।

जितरतिमल्लीमद भर सल्ली-
लतिलक कल्या-तनुशततुल्या-
ह्वरसकुल्या-चटुतिलखल्या-
प्रमथन कल्याणचरित धीर ।

गोपीः सम्भृतचापल-चापलताचित्रया भ्रुवा भ्रमयन् ।
विलस यशोदावत्सल वत्सलसद्धेनुसवीत ।

[1]*वल्लवललनालीलावलयित
पल्लवरचना मल्लीविलसित
वल्लभकलनाखेलासमुदित
तल्लवघटना नीलालकवृत ।

तव चरणाम्वुजमनिश विभावये नन्दगोपाल ।
गोपालनाय वृन्दावनभुवि यद् रेणुरञ्जिता धरणी ।*

सविरुदं फुल्लाम्बुजमिदम् ।२६।

---

१ *-*टिप्पणी—सङ्केतान्तर्गतांशस्य स्थाने निम्नांशो वर्त्तते गोविन्दविरुदावल्याम् । परञ्च वृत्तमौक्तिककृता चायमंश पल्लवितञ्चण्डवृत्तस्य शिथिलद्वितीयवर्णोदाहरणरूपेण स्वीकृतः, स च २३३ पृष्ठेऽवलोकनीयो विद्वद्भि ।

वल्लवलीलासमुदयसमुचित
पल्लवरागाधरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवणित मुनिगण-
दुर्लभकेलीभरमधुरिमकण
मल्लविहाराद्भुततरुणिमधर
फुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासार्पितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहरसुमधुरकल
हल्लकमालापरिवृतकचकुल
वीर !

वल्लवललनावल्ली-करपल्लवशीलितस्कन्धम् ।
उल्लसित परिफुल्ल भजाम्यहं कृष्णकङ्केलिम् ॥

२७. अथ चम्पकञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयो मधुरो यत्र श्लिष्ट क्वापि भवेद् यदि ।
भनौ षडक्षर चैतत् स्वेच्छात पदकल्पनम् ।। ३१ ।।
चम्पक चण्डवृत्त स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थः—[1]यत्र द्वितीयो वर्णो मधुर –परसवर्णो भवेत् । क्वापि–कुत्रचित् यदि श्लिष्टोपि स्यात् ।[1] तत्र गणनियममाह– भनौ–भगणनगणौ गणौ भवेताम् । षडक्षरं चैतत् पदम् । किञ्च, पदकल्पनं स्वेच्छातो यत्र भवति तदेतच्चम्पकं नाम चण्डवृत्तं स्यात् । यथा—

सञ्चलदरुण[2]-सुन्दरनयन
कन्दरशयन वल्लवशरण
पल्लवचरण मङ्गलघुसृण-
पिङ्गलमसृण चन्दनरचन
नन्दनवचन खण्डितशकट
दण्डितविकट-गर्वितदनुज
पर्वितमनुज रक्षितधवल
लक्षितगवल पन्नगदलन
सन्नगकलन वन्धुरवलन
सिन्धुरचलन[3] कल्पितसदन[4]-
जल्पितमदन[5] मञ्जुलमुकुट
वञ्जुललकुट-रञ्जितकरभ
गञ्जितशरभ-मण्डलवलित
कुण्डलचलित-सन्दितलपन
नन्दिततपन-कन्यकसुषम
धन्यककुसुम[6]-गर्भक धरण[7]-
दर्भकशरण तर्णकवलित
वर्णकललित श वरवलय
डम्बर कलय
देव

१-१. ख. प्रतौ नास्ति पाठः । २. गोवि. संचलदरुणचञ्चलकरुणसुन्दरनयन । ३. क. चदन । ४. गोवि. मदन । ५. गोवि. सदन । ६. गोवि. वन्यककुसुम । ७. गोवि. विरण ।

दानवघटालवित्रे धातुविचित्रे जगच्चित्रे ।
हृदयानन्दचरित्रे रतिरास्ता वल्लवीमित्रे ।
रिङ्गदुरुभृङ्ग-तुङ्गगिरिशृङ्ग-
शृङ्गरुतभङ्ग-सङ्गधृतरङ्ग
वीर !

त्वमत्र चण्डासुरमण्डलीना रण्डावशिष्टानि गृहाणि कृत्वा ।
पूर्णान्यकार्षीर्निजसुन्दरीभिर्वृन्दाटवीपुण्ड्रकमण्डपानि ।।

सविरुद चम्पकमिदम् ।२७।

२८. अथ वञ्जुलञ्चण्डवृत्तम्

—वञ्जुल नजला यदि ।
पञ्चमो मधुरस्तत्र पद मुनिमित मतम् ।। ३२ ।।

[व्या०] अयमर्थः—यदि नजलाः—नगणजगणलघवः स्युः । किञ्च, तत्र पदे पञ्चमो वर्णो मधुरः—परसवर्णो भवति । पदमपि मुनिभि.—सप्तभिर्वर्णैर्मितं—परिमितं यत्र तत् वञ्जुलं—वञ्जुलाख्यमतिमञ्जुल चण्डवृत्तं मतं—सम्मतमित्यर्थः । पदकल्पनं तु पूर्ववत् । यथा—

जय जय सुन्दर-विहसित मन्दर-
विजितपुरन्दर निजगिरिकन्दर-
रतिरसशन्धर मणियुतकन्धर
गुणमणिमन्दिर हृदि वलदिन्दिर
गतिजितसिन्धुर परिजनबन्धुर
पशुपतिनन्दन तिलकितचन्दन
विधिकृतवन्दन पृथुहरिचन्दन-
परिवृतनन्दन[1]-मधुरिमनिन्दन[2]-
मधुवन वन्दित-कुसुमसुगन्धित-
वनवररञ्जित रतिरभसञ्जित[3]
शिखिदलकुण्डल-सहकृतभण्डिल
नवसिततण्डुल-जयिरदमण्डल
रतिरणपण्डित वरतनुभण्डित
नखपदमण्डित दशनविखण्डित
धीर !

---

१. पक्तिरियं नास्ति ख. प्रतौ । २. क. मधुरिमनन्दन- । ३. गोवि. रतिभरसञ्जित ।

निनिन्द निजमिन्दिरा वपुरवेक्ष्य यासां श्रिय,
विचार्य गुणचातुरीमचलजा च लज्जा गता ।
लसत्पशुपनन्दिनीततिभिराभिरानन्दित,
भवन्तमतिसुन्दरं व्रजकुलेन्द्र वन्दामहे ।

रसपरिपाटी स्फुटतरुवाटी
मनसिजधाटी प्रियनतशाटी[1]-
हर जय वीर !

सम्भ्रान्तैः सपडङ्गपातमभितो वेदैर्मुदा वन्दिता,
सीमन्तोपरि गौरवादुपनिषद्देवीभिरप्यर्पिता ।
आनम्रं प्रणयेन च प्रणयतो तुष्टामना[2] विकृतो[3],
मृद्वी ते मुरलीरुतिर्मुररिपो शर्माणि निर्मातु नः ।

सविरुदं वञ्जुलमिदम् ।२८।

२९. अथ कुन्दञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयषष्ठौ मधुरौ श्लिष्टौ वा क्वापि तौ यदि ।
स्यातां भजौ तदा कुन्दम्—

[व्या०] एतदुक्तं भवति । यदि द्वितीयषष्ठौ वर्णौ मधुरौ–परसवर्णौ क्वापि पदे श्लिष्टौ वा, तौ वर्णौ स्याताम् । अथ च भजौ–भगणजगणौ भवतः, तदा कुन्दं इति नाम चण्डवृत्तं भवति । षडक्षरमिदं पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववत् । यथा–

नन्दकुलचन्द्र लुप्तभवतन्द्र
कुन्दजयिदन्त दुष्टकुलहन्त
रिष्टसुवसन्त मिष्टसदुदन्त
संदलितमल्लि-कन्दलितवल्लि-
गुञ्जदलिपुञ्ज-मञ्जुतरकुञ्ज-
लब्धरतिरङ्ग हृद्यजनसङ्ग-
शर्मलसदङ्ग हर्षकृदनङ्ग
मत्तपरपुष्ट-रम्यकलघुष्ट
गन्धभरजुष्ट पुष्पवनतुष्ट
कृत्तखलक्ष[4] युद्धनयदक्ष

---

१. गोवि. प्रियनवशाटी- । २. गोवि. हृष्टात्मना । ३. गोवि. भिष्टुता । ४. गोवि. यक्ष ।

वल्गुकचपक्ष-[बद्धशिखिपक्ष][1]
पिष्टनततृष्ण तिष्ठ हृदि कृष्ण
वीर !
तव कृष्ण केलिमुरली हितमहित च स्फुट विमोहयति ।
एव सुधोर्मिसुहृदा विषविषमेणापर ध्वनिना ।
सन्नीतदैतेयनिस्तार कल्याणकारुण्यविस्तार
पुष्पेषुकोदण्डटङ्कार-विस्फारमञ्जरीझङ्कार
धीर !
रङ्गस्थले ताण्डवमण्डनेन[2] निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।
कसद्विप चण्डमखण्डयद् यो हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।

सविरुदं कुन्दमिदम् ।२९।

३०. अथ वकुलभासुरञ्चण्डवृत्तम्

—अथो[3] वकुलभासुरम् ॥ ३३ ॥
चतुर्भिस्तुरगै निर्जै. पद यत्रातिसुन्दरम् ।
रसेन्दुमात्र सोल्लाल—

[व्या०] अस्यार्थ.—अथ–कुन्दानन्तरं वकुलभासुरं इति नामकं चण्डवृत्तं कथ्यत इति शेषः । यत्र चतुर्भिः–चतुःसङ्ख्याकैः निर्जैः–जगणविरहितैः चतुर्विधैस्तुरगैः–चतुष्कलैः द्विजगण-कर्ण-भगण-[4] सगणैरेवातिसुन्दर–अतिरमणीयं, रसेन्दुमात्र–षोडशमात्रं पदं भवति । तच्च पदं उत्सर्गसिद्धं षोडश-विंशकावधिबाणाधिक विधेयमित्युपदेशः । किञ्च, सोल्लालं–उल्ललनमेव उल्लालः परावर्त्तन तेन सहितं शृङ्खलाबद्धन्यायेन घटितमित्यर्थः । तदीदृश वकुलभासुर चण्डवृत्तं सविरुद भवतीति वाक्यार्थः । यथा–

जय जय वशीवाद्यविशारद
शारदसरसीरुहपरिभावक-
भावकलितलोचनसञ्चारण
चारणसिद्धवधूधृतिहारक
हारकलापरुचाश्रितकुण्डल[5]
कुण्डलसित[6]गोवर्द्धनभूपित
भूपितभूषणविच्छन[7]विग्रह
विग्रहखण्डितखलवृषभासुर

---

१. [-] क. ख. नास्ति पाठः । २. गोवि. मण्डलेन । ३. ख. अथ । ४. ख. तगणसगणै- । ५. गोवि. रुचाञ्चितकुण्डल । ६. गोवि. कुण्डलसद् । ७ गोवि. चिद्घन- ।

भासुरकुटिलकचार्पितचन्द्रक
चन्द्रकदम्ब[1]रुचाभ्यधिकानन
काननकुञ्जगृहस्मरसङ्गर
सङ्गरसोद्धुरबाहुभुजङ्गम
जङ्गमनवतापिञ्छनगोपम
गोपमनीषितसिद्धिषु दक्षिण
दक्षिणपाणिगदण्डसभाजित
भाजितकोटिशशाङ्कविरोचनं
रोचनया कृतचारुविशेषक
शेषकमलभवसनकसनन्दन-
नन्दनगुण मा नन्दय सुन्दर
[2]सुन्दर मामव भीतिविनाशन[2]
वीर !

भवत. प्रतापतरणावुदेतुमिह लोहितायति स्फीते ।
दनुजान्धकारनिकरा: शरण भेजुर्गुहाकुहरम् ।।

पुलिनधृतरङ्ग-युवतिकृतसङ्ग
मदनरसभङ्ग-गरिमलसदङ्ग
धीर !

पशुषु कृपां तव दृष्ट्वा दुष्ट[3]महारिष्टवत्सकेशिमुखा: ।
दर्पं विमुच्य भीता पशुभाव भेजिरे दनुजा. ।।

सविरुदं बकुलभासुरमिदम् ।३०।

३१. अथ बकुलमङ्गलञ्चण्डवृत्तम्

—अन्तो बकुलमङ्गलम् ।। ३४ ।।

चतुर्भिर्भगणैरेव हयैर्यत्र पद भवेत् ।
रसेन्दुकलक तत्र तृतीये शृङ्खलास्थिता ।। ३५ ।।

[व्या०] कोऽर्थः ? उच्यते । अन्तः—बकुलभासुरानन्तरं बकुलमङ्गलं—बकुलमङ्गलाख्यं चण्डवृत्तमुच्यत इति शेष ।।३४।।

यत्र चतुर्भि.—चतुःसख्याकै केवलैरादिगुरुकैः—भगणैरेव हयैः—चतुष्कलैः रसेन्दुकलकं—षोडशमात्र पद भवेत् । किञ्च, तत्र—तस्मिन्पदे तृतीये अर्थात् तृतीये भगणे शृङ्खलास्थिता चेद्—

---

१ गोवि चन्द्रकलाप- । २-२. गोवि. पंक्तिरियं नास्ति । ३ गोवि. नून ।

भवति, तदा बकुलमङ्गलाभिधानं चण्डवृत्तं सविरुद भवतीति वाक्यार्थ. । पदविन्यासोपदेशस्तु पूर्ववदेव । षोडशमात्रत्वमुभयत्र समानं । पर तु चतुर्थभगणघटनमध्यशृङ्खलाबन्धनमात्रमेव बकुलभासुराद् भेदं बोधयतीत्यवधेयं सुधीभिरिति शिवम् ॥३५॥

यथा–

त्व जय केशव केशवलस्तुत
वीर्यविलक्षण लक्षणबोधित
केलिषु नागर नागरणोद्धत
गोकुलनन्दन नन्दनतिव्रत-
सान्द्रमुदर्प्पक दर्प्पकमोहन
हे सुषमानवमानवतीगण-
माननिरासक रासकलाश्रित
सस्तनगौरवगौरवधूवृत[1]
कुञ्जशतोषित तोषितयौवत
रूपभराधिकराधिकयार्चित
भीरुविलम्बित लम्बितशेखर
केलिकलालस[2]लालसलोचन
शेषमदारुणदारुणदानव-
मुक्तिदलोकन लोकनमस्कृत-
गोपसभावक भावकशर्मद
हन्त कृपालय पालय मामपि
देव ![3]

पलायन[4] फेनिलवक्त्रता च बन्ध च भीतिं च मृतिं च कृत्वा ।
पवर्गदातापि शिखण्डमौले त्व शात्रवाणामपवर्गदोऽसि ॥

प्रणयभरित - मधुरचरित
भजनसहित - पशुपमहित
देव !

अनुभूय विक्रम ते युधि लब्धा कादिशीकत्वम् ।
हित्वा[5] किल जगदण्ड प्रपलायाचक्रिरे दनुजाः ।

सविरुद बकुलमङ्गलमिदम् ।३१।

---

१ क कृत । २ गोवि. केलिकुलालस- । ३. गोवि. वीर । ४. गोवि. पराभव । ५. गोवि भित्त्वा ।

३२. अथ मञ्जर्या कोरकश्चण्डवृत्तम्

मञ्जरी चात्र पूर्वं श्लोको लेखस्तदनन्तरम् ।
कोरकाख्य चण्डवृत्त पदसख्यानखैर्यदि ।। ३६ ।।

[व्या०] अस्यार्थः—अभिधीयत इत्यर्थः । प्रथमतो मञ्जरी ततः कलिका भवतीति लौकिकानां प्रसिद्धेः । तत्र चतुर्भिः भगणै. शुद्धैराद्यन्तयमकाङ्कितै. कोरकाख्यं चण्डवृत्तं । यदि पदस्य आद्यन्तयोर्यमकाङ्कितै·—यमकेन अङ्कितैः सयमकैरिति यावत्, शुद्धै –शृङ्खलारहितैश्चतुर्भिः भगणैः–आदिगुरुकैर्गणैः पदम् । अथ च पदसंख्या यदि नखैः–विंशत्या भवति, तदा कोरकाख्य चण्डवृत्त भवति । शृङ्खलाराहित्यमेवात्र पूर्वस्माद् भेदं गमयतीति ॥३६॥

तत्र प्रथम मञ्जरी, यथा–

नवशिखिशिखण्डशिखरा[1] प्रसूनकोदण्डचित्रशस्त्रीव ।
क्षोभयति कृष्ण वेणी श्रेणीरेणीदृशां भवत. ।।

कोरकम्, यथा–

मानवतीमदहारिविलोचन
दानवसञ्चयघूकविरोचन
डिण्डिमवादिसुरालिसभाजित
चण्डिमशालिभुजार्गलराजित
दीक्षितयौवतचित्तविलोभन-
वीक्षित सुस्मितमार्दवशोभन
पर्वतसम्भृति[2] निर्धुतपीवर-
गर्वतम परिमुग्धशचीवर[3]
रञ्जितमञ्जुपरिस्फुरदम्बर
गञ्जितकेशिपराक्रमडम्बर
कोमलताङ्कितवागवतारक
सोमललाममहोत्सवकारक
हसरथस्तुतिशसितवशक
कसवधूश्रुतिनुन्नवतसक
रङ्गतरङ्गितचारुदृगञ्चल
सङ्गतपञ्चशरोदयचञ्चल
लुञ्चितगोपसुतागणशाटक
सञ्चितरङ्गमहोत्सवनाटक
तारय मामुरुससृतिशातन

---

१. क. शिखण्डिशिखराः । २. गोवि. पर्वतसंघृति- । ३. ख. शशीवर ।

धारय लोचनमत्र सनातन
धीर !

तुरगदनुसुताङ्गग्रावभेदे दधानः,
कुलिशघटितटङ्कोद्दण्डविस्फूर्जितानि ।
तदुरुविकटदंष्ट्रोन्मु(मृ)ष्टकेयूरमुद्रः,
प्रथयतु पटुतां वः कैशवो वामवाहु ।
माधव विस्फुर दानवनिष्ठुर
यौवतरञ्जित सौरभसञ्जित
वीर !

पलितकरणी दशा प्रभो मुहुरन्धकरणी च मा गता ।
सुभगकरणी कृपा शुभैर्न तवाढ्यंकरणी च मय्यभूत् ॥

सविरुद. कोरकोऽयम् ।३२।

३३. अथ गुच्छकचण्डवृत्तम्

नसौ जनौ जलौ क्रमात् प्रयोजितौ बुधा यदा ।
तदा तु चण्डवृत्तक विभावयन्तु गुच्छकम् ॥ ३७ ॥

[व्या०] अयमर्थ —हे बुधा ! यदा नसौ–नगणसगणौ, अथ च जनौ–जगणनगणौ, ततश्च जलौ–जगणलघू क्रमात्–प्रतिपद प्रयोजितौ भवत., तदा तु गुच्छकं नाम चण्डवृत्त विभावयन्तु–कुर्वन्तु । अत्रोभयत्र स्वार्थे कः ॥३७॥ किञ्च–

षोडशार्णं पद चात्र पदान्यपि च षोडश ।
सानुप्रासानि यमकैरङ्कितानि च गुच्छके ॥ ३८ ॥

[व्या०] सुगमम् । यथा–

जय जलदमण्डलीद्युतिनिवहसुन्दर
स्फुरदमलकौमुदीमृदुहसितबन्धुर
व्रजहरिणलोचनावदनशशिचुम्बक
प्रचलतर[1]खञ्जनद्युतिविलसदम्बक
स्मरसमरचातुरीनिचयवरपण्डित
प्रणययुतराधिकापटिमभरभण्डित
क्वणदतुलवशिका[2]हृतपशुपयौवत
स्थिरसमरमाधुरीकुलरमितदैवत

---

१ गोवि. प्रचुरतर- । २. क. वीशिका ।

ग्रथितशिखिचन्द्रकस्फुटकुटिलकुन्तल
श्रवणतट[1]सञ्चरन्मणिमकरकुण्डल
प्रथित तव[2] ताण्डवप्रकटगतिमण्डल
द्विजकिरणधोरणीविजितसिततण्डुल
स्फुरित तव दाडिमीकुसुमयुतकर्णक[3]
छदनवरकाकलीहृतचटुलतर्णक
[4]प्रकटमिह मामके हृदि वससि माधव
स्फुरसि ननु सतत सकलदिशि मामव[4]
धीर !

पुनागस्तवकनिवद्धकेशजूट,
कोटीरीकृतवरकेकिपक्षकूट ।
पायान्मा मरकतमेदुर. स तन्वा,
कालिन्दीतटविपिनप्रसूनधन्वा ।[5]

गर्गप्रिय् जय भर्गस्तुत रस
सर्गस्थिरनिज-वर्गप्रवणित
धीर !

दनुजवधूवैधव्यव्रतदीक्षाशिक्षणाचार्य ।
स जयति विदूरपाती मुकुन्द तव शृङ्गनिर्घोष ।

सविरुद गुच्छाख्य चण्डवृत्तम् ।३३।

३४. अथ कुसुमञ्चण्डवृत्तम्

चतुर्भिर्नगणैर्यत्र पद यमकित भवेत् ।
अनन्तनेत्रप्रमित कुसुम तत्प्रकीर्तितम् ॥ ३९ ॥

[व्या०] अनन्तं–शून्य नेत्र–द्वय ताभ्या प्रमितं–गणितं पदं यत्र तत्, विंशतिपदमित्यर्थः । शेषं सुगमम् ॥३९॥

यथा–

कुसुमनिकरनिचितचिकुर[6]
नखरविजितमणिजमुकुर
सुभटपटिमरमितमथुर
विकटसमरनटनचतुर

---

१. गोवि. श्रवणनट- । २ गोवि. प्रथितनव- । ३. गोवि स्फुरितवरदाडिमीकुसुमयुग-कर्णक । ४-४. गोवि. पक्तिद्वय नास्ति । ५. क. नत्वा । ६. गोवि. रचितचिकुर ।

समदभुजगदमनचरण
निखिलपशुपनिचयशरण[1]
[2]अमलकमलविशदचरण
सकलदनुजविलयकरण[2]
मुदितमदिरमधुरनयन
शिखरिकुहररचितशयन
रमितपशुपयुवतिपटल
मदनकलहघटनचटुल
विषमदनुजनिवहमथन
भुवनरसदविशदकथन
कुमुदमृदुलविलसदमल-
हसितमधुरवदनकमल
मधुपसदृशविचलदलक
मसृणघुसृणकलिततिलक
निभृतमुषितमथितकलश
सततमजित मनसि विलस
धीर !

सखि! चातकजीवातुर्माधव सुरकेकिमण्डलोल्लासि ।
तव दैत्यहसभयद शृङ्गाम्बुदगर्जित जयति ॥

पुरुषोत्तम वीरव्रत यमुनाद्भुततीरस्थित
मुरलिध्वनिपूरक्रिय सुरभीव्रजनादप्रिय !
वीर !

जगतीसभावलम्ब स तव जयत्यम्बुजाक्ष दोस्तम्भ ।
रभसाद्बिभेद दनुजान् प्रतापनहरिर्यतोऽभ्युदित ॥

सविरुदं कुसुममिदम् ।३४।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य नवभिर्मता[3] प्रभेदा । इत्येव चतुस्त्रिंशति ३४ प्रभेदा. ।

[4]इति श्रीवृत्तमौक्तिके विरुदावल्यां महाकलिकारूप-पुरुषोत्तमादिकुसुमान्तं[4] सविरुदमवान्तरं चण्डवृत्तप्रकरणं द्वितीयम् ।२।

---

१. क. चरण । २-२. गोवि. पक्तिद्वयं नास्ति । ३. ख. नवगर्भिताः । ४-४. पंक्तिरियं नास्ति क प्रतौ ।

[विरुदावल्यां तृतीय त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्]

१. अथ दण्डकत्रिभङ्गी कलिका

अथ त्रिभङ्गीकलिकासु दण्डकत्रिभङ्गीकलिकागर्भितं तद्गतैव[1] लक्ष्यते। तद्भङ्गानां[2] बाहुल्यादेवास्याः कलिकायाः दण्डकत्रिभङ्गीति संज्ञा।

अथाऽस्या लक्षण सम्यक् सोदाहरणमुच्यते।
भङ्गबाहुल्यतश्चास्या सज्ञाप्यान्वर्थिका[3] भवेत् ॥१॥

यथा–

नगणयुगलादनन्तरमिह चेद् रगणा भवन्ति रन्ध्रमिता।
विरुदावल्या कलिका कथितेय दण्डकत्रिभङ्गीति ॥ २ ॥

[व्या०] रन्ध्राणि–नव कथिता इत्यत्र तदित्यध्याहारः। भङ्गबहुत्वाच्चास्याः दण्डक-त्रिभङ्गी संज्ञेति फलितोऽर्थ.। अत्र च पदरचनायां पदविन्यासः स्वेच्छया भवतीति सिंहाव-लोकनरीत्यावगन्तव्यम्। यथा–

चित्र मुरारे सुरवैरिपक्ष-
स्त्वया समन्तादनुबद्धयुद्ध।
अमित्रमुच्चैरविभिद्य भेद,
मित्रस्य कुर्वन्नमित[4] प्रयाति ॥

श्रितमघजलधेर्वहित्र चरित्र सुचित्र विचित्र
फणित्र समित्र पवित्रं लवित्र रुजाम्।
जगदपरिमितप्रतिष्ठ पटिष्ठ बलिष्ठ गरिष्ठ
[5]म्रदिष्ठ सुनिष्ठ लघिष्ठ दविष्ठ[5] धियाम्।
निखिलविलसितेऽभिराम सराम मुदा मञ्जुदाम-
न्नभाम ललाम धृतामन्दधाम नये।
मघुमथनहरे मुरारे पुरारेरपारे ससारे
विहारे सुरारेरुदारे च दारे प्रभुम्।
स्फुरितमिनसुतातरङ्गे विहङ्गेशरङ्गेण गङ्गे-
ऽष्टभङ्गे भुजङ्गेन्द्रसङ्गे सदङ्गेन भो.।

---

१. ख. अन्तर्गतैव। २. क. तद्भाना। ३. ख. संज्ञाप्यान्नर्थिकी। ४. गोवि. कुर्वन्नमृतं। ५-५. गोवि. वरिष्ठ म्रदिष्ठं सुनिष्ठ दविष्ठं।

शिखरिवरदरीनिशान्त प्रयान्त सकान्त विभान्त
नितान्त च कान्त प्रशान्त कृतान्त द्विषाम् ।
दनुजहर भजाम्यनन्त सुदन्त नुदन्त दृगन्त
हसन्त [1]भजन्त चरन्त[1] भवन्त सदा ।
वीर !

पीत्वा बिन्दुकण मुकुन्द भवत: सौन्दर्यसिन्धो: सकृत्-
कन्दर्पस्य वश गता विमुमुहु: के वा न साध्वीगणा: ।
दूरे राज्यमयन्त्रितस्मितकला भ्रूवल्लरीताण्डव-
क्रीडापाङ्गतरङ्गितप्रभृतय. कुर्वन्तु ते विभ्रमा: ।।

चारुतट - रासनट
गोपभट पीतपट
पद्मकर दैत्यहर
कुञ्जचर वीरवर
नर्ममय कृष्ण जय
नाथ !

ससाराम्भसि दुस्तरोर्मिगहने गम्भीरतापत्रयी-
कुम्भीरेण गृहीतमुग्रगतिना[2] क्रोशन्तमन्तर्भयात् ।
दीप्रेणाद्य सुदर्शनेन बिबुधक्लान्तिच्छिदाकारिणा,
चिन्तासन्ततिरुद्धमुद्धर हरे मच्चित्तदन्तीश्वरम् ।

इति सविरुदा दण्डकत्रिभङ्गी कलिका ।१।

२. अथ सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका

अथापरा सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका लक्ष्यते.। यथा–

युग्मे भङ्गस्तनौ त्र्युक्तौ भौ चान्ते यत्र मित्रितौ ।
वसुसख्य परे ह्यत्र[3] पदे सा स्यात् त्रिभङ्गिका ।। ३ ।।
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा कलिकाऽतिमनोहरा ।
आद्यान्ताशी पद्ययुक्ता—

[व्या०] एतद् युक्त भवति । यत्र पदे–यस्यां कलिकाया वा युग्मे–द्वितीयाक्षरे भङ्गो भवति । तथा तनौ–तगणनगणौ स्त । तौ च त्र्युक्तौ–वारत्रयमुक्तौ चेत् । अन्ते–तना त्रयान्ते[4] मित्रितौ–

१. गोवि. वसन्तं भजन्तं । २. गोवि. मतिना । ३. ख. भवेद् यत्र । ४ ख तनत्रयान्ते ।

संलग्नौ भौ–भगणौ च यदि स्तः। यत्र चैवंविधं वसुसंख्यं पदं भवेत्, सा विदग्धपूर्वा–विदग्ध-शब्दपूर्वा सम्पूर्णा प्रथमलक्षितलक्षणविलक्षणा अतिमनोहरा विदग्धत्रिभङ्गीकलिका स्यात् इत्यन्वयः। अष्टपदत्वमेव पूर्वोक्तायाः सकाशात् वैलक्षण्यं स्फुटमेव लक्षयति। एतदेव चास्या. सम्पूर्णत्वमिति। किञ्च, आद्यन्तयोः कलिकाया इति शेषः, आशी.पद्ययुक्ता–आशी.पद्याभ्यां युक्ता आशीर्वादयुक्तपद्याभ्यां संयुक्ता इत्यर्थः। आद्यन्तपदसाहित्य च तत्कलिकायुक्तेषु पूर्वोक्तेषु सर्वेषु चण्डवृत्तेषु ज्ञेयं सुधीभिरित्युपदेशरहस्यं, अग्रेपि तथैव वक्ष्यमाणत्वादिति। इयमेव च खण्डावलीति व्यपदिश्यते, तथा चाग्रे तथैव लक्षयिष्यमाणत्वादिति। यथा–

उद्वेलत्कुलजाभिमानविकचाम्भोजालिशुभ्राशवः[1]
केलीकोपकषायिताक्षिललनामानाद्रिदम्भोलयः।
कन्दर्पज्वरपीडितव्रजवधूसन्दोहजीवातवो,
जीयासुर्भवतश्चिर यदुपते स्वच्छा. कटाक्षच्छटा ॥[2]

चण्डीप्रियनत चण्डीकृतबलरण्डीकृतखलवल्लभ वल्लव
पट्टाम्बरधर भट्टारक बककुट्टाक ललितपण्डितमण्डित
नन्दीश्वरपति-नन्दीहितभर सदीपितरससागर नागर
अङ्गीकृतनवसङ्गीतक वर-भङ्गीलवहृतजङ्गमलङ्गिम
गोत्राहितकर गोत्राहितदय गोत्राधिपधृतिशोभनलोभन
वन्यास्थितवहुकन्यापटहर धन्याशयमणिचोर मनोरम
शम्पारुचिपट सम्पालितभव-कम्पाकुलजन फुल्ल समुल्लस
उर्वीप्रियकर खर्वीकृतखल दर्वीकरपतिगर्वितपर्वत
वीर !

पिष्ट्वा सङ्ग्रामपट्टे पटलमकुटिले[3] दैत्यगोकण्टकाना,
क्रीडालोठीविघट्टै स्फुटमरतिकर नैचिकीचारकाणाम्[4]।
वृन्दारण्य चकाराखिलजगदगदङ्कारकारुण्यकारो[5],
य सञ्चारोचित व. सुखयतु स पट्टु कुञ्जपट्टाधिराज ।

पिच्छलसद्घननीलकेश
चन्दनचर्चितचारुवेश
खण्डितदुर्जनभूरिमाय,
मण्डितनिर्मलहारिकाय।
धीर !

१. क शुभ्रांशन·। २. गोवि. पद्यं नास्ति। ३. क पटलमकुलिते। ४ गोवि चारुकाणाम्। ५ गोवि कारुण्यधारः।

गीर्वाण स्फुटमखिल विवर्द्धयन्त,
निर्वाण दनुजघटासु सघटय्य ।
कुर्वाण व्रजनिलय निरन्तरोद्यत्-
पर्वाण मुरमथन स्तुवे भवन्तम् ॥

द्वितीया सम्पूर्णा सविरुदा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ।२।

एते चण्डवृत्तस्य गर्भितान्तर्गताः प्रभेदाः ।

अथ मिश्रिताः

तत्र–

३. मिश्रकलिका

—मिश्रिता चाथ कथ्यते ॥ ४ ॥
आद्यन्ताशीःपद्ययुक्ता गद्याभ्या चापि सयुता ।
मध्यत कलिका कार्या सदण्डैर्भनजैर्गणै ॥ ५ ॥
विरुदेनान्विता चापि रमणीयतरा मता ।
षट्पदा सापि विज्ञेया छन्द शास्त्रविशारदै ॥ ६ ॥

[व्या०] अस्यार्थ.—अथ–विदग्धत्रिभङ्गीकलिकानन्तर मिश्रिता-मिश्राकलिका कथ्यते–उच्यत इत्यर्थ. । ता विशिनष्टि—कलिकाया आद्यन्तयोराशी पद्याभ्या युक्ता, तथा आद्यन्तयोरेव गद्याभ्या च सयुता मध्यतस्तयोरित्यर्थ, कलिका कार्या । कलिका विशिनष्टि सदण्डै.-दण्डो लघु [1] तत्सहितै. भनजैः–भगणनगणजगणैरन्विता–सयुक्ता इत्यर्थ ॥४-५॥

तथा विरुदेन चाप्यन्विता । अतएवातिरमणीयतरा मता–सम्मता । साऽपि च छन्द-शास्त्रविशारदै. षट्पदा विज्ञेया इत्युपदिश्यत इति वाक्यार्थ. । विरुदसाहित्य च विदग्ध-त्रिभङ्गीकलिकालक्षणकारिकायामप्यवधेय सुधीभिरिति शिवम् ॥६॥

अत्र चादौ आशी-पद्य, ततो गद्यं, ततश्च षट्पदीकलिका, तदनन्तरमपि गद्य, ततो विरुद, अनन्तरमपि गद्यमेव । ततोपि विरुद धीर सम्बोधनोपलक्षित, सर्वान्ते चाशी पद्यम्, इति क्रमेणोक्तलक्षणोपलक्षिता मिश्रा कलिका कार्या, इति फलितोऽर्थ ।

यथा–

उदञ्चदतिमञ्जुलस्मितसुधोर्मिलीलास्पद,
तरङ्गितवराङ्गनास्फुरदनङ्गरङ्गाम्बुधि ।
दृगिन्दुमणिमण्डलीसलिलनिर्भरस्यन्दनो,
मुकुन्द मुखचन्द्रमास्तव तनोतु शर्म्मातुलम् । [2]

---

१ ख लघ्व । २. गोवि. तनोति शर्माणि न ।

दुष्टदुर्दमारिष्टकण्ठीरवकण्ठविखण्डनखेलदष्टापद नवीनाष्टापदविस्पर्द्धिपदाम्बरपरीत गरिष्ठगण्डशैलसपिण्डवक्ष.पट्ट पाटव—

दण्डितचटुलभुजङ्गम
कन्दुकविलसितलङ्घिम
भण्डिल[1] विचकिल[2] मण्डित
सङ्गरविहरणपण्डित
दन्तुरदनुजविडम्बक
कुण्ठितकुटिलकदम्बक ।

खचिताखण्डलोपलविराजदण्डजराजमणिम[य][3] कुण्डलमण्डितमञ्जुलगण्डस्थलविशङ्कटभाण्डीरतटीताण्डवकलारञ्जितसुहृन्मण्डल

नन्दविचुम्बित-कुन्दनिभस्मित
गन्धकरम्बित शन्दविवेष्टित
तुन्दपरिस्फुर-दण्डकडम्बर ।

[4] दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककण्ठकन्दोद्धरणो[4] द्दामकुद्दाल विनम्रविपद्दारुणध्वान्तविद्रावणमार्तण्डोपमकृपाकटाक्ष शारदचन्द्र[5] मरीचिमाधुर्यविडम्बितुण्डमण्डल

लोष्ठीकृतमणि-कोष्ठीकुलमु[नि-
गोष्ठीश्वर मधुरोष्ठीप्रिय पर-
मेष्ठी][6] डित परमेष्ठीकृतनर
धीर !

उपहितपशुपालीनेत्रसारङ्गतुष्टि,
प्रसरदमृतधाराधोरणीधौतविश्वा ।
पिहितरविसुधांशु प्रांशुतापिञ्छरम्या,
रमयतु बकहन्तु[7] कान्तिकादम्बिनी व ।

इति मिश्रकलिका ।३।

अथ चण्डवृत्तस्य मिश्रित प्रभेद । एवमन्येपि ।

इति विरुदावल्या चण्डवृत्तमेव दण्डकत्रिभङ्गयाद्यवान्तर-
त्रिभङ्गीकलिका प्रकरणं तृतीयम् ।३।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके सलक्षण चण्डवृत्तप्रकरणं समाप्तम् ।१।

---

१. ख तण्डिल । २ क. विचकित । ३ गोवि मणिम[य]नास्ति । ४ गोवि दुर्जनभोजेन्द्रकटककदम्बोद्धरणो । ५. गोवि. शारदाचण्ड- । ६ [-] कोष्टगतोशो नास्ति क प्रतौ । ७ क. ख. वहकंतुः ।

[विरुदावल्यां साधारणमत चण्डवृत्त चतुर्थप्रकरणम्]

अथ साधारणं चण्डवृत्तम्

तत्र–

स्वेच्छया तु कलान्यास. साधारणमिद मतम् ।
न च सप्तदशादूर्ध्वं न वर्णत्रितयादध ॥ १ ॥
क्रियते यैर्गणैराद्यान्तैरेव सकला: कला· ।
प्रस्वादिवर्णसयोगेप्यत्र वर्णस्य लाघवम् ॥ २ ॥

[व्या०] अस्यार्थ·—स्वेच्छया इत्यादि सुगमम् । तत्राक्षरनियममाह—न चेति । न च सप्तदशवर्णादूर्ध्वं न वा वर्णत्रितयादधः कला कार्या इति शेष. । किञ्च नियमान्तरमाह—क्रियत इति । आद्यात्–वर्णात् यैरेव गणैः कलाप्रारम्भ· क्रियते तैरेव सकला अपेक्षिता कला· कर्त्तव्या इति शेष. । अपि च 'प्रस्वादीति' प्रस्वेति आदिशब्देन-ङ्ग-ग्र स्फु-स्मि-स्म-क्वेत्यादीनां सयुक्ताना वर्णानां सयोगेपि सति अत्र छन्द.शास्त्रे तत्प्रकरणस्थले वा पूर्वपूर्ववर्णस्य लाघव–लघुत्व अवगन्तव्यमित्युत्सर्गः ।

तत्र अक्षरे, यथा–

अङ्गण रिङ्गण ।

इत्यादि । सयुक्ते, यथा–

प्रणयप्रवण ।

इत्यादि । एव गणान्तरेपि बोद्धव्यम् ।

चतुर्वर्णे सर्वलघौ यथा–

विधुमुख कृतमुख ।

इत्यादि । एव प्रस्तारान्तरेपि सर्वलघ्वादिस्थले स्वेच्छात. कलान्यासोद्रष्टव्यः ।

मात्रावृत्ते, यथा–

चतुष्कलद्वयेनापि कला जगणवर्जिता ।

[व्या०] कर्त्तव्या इति शेष । यथा—

तारापतिमुख सारायितमुख ।

इत्यादि ।

प्रस्तारद्वितयेप्येव कलान्यास स्वत. स्मृत. ॥३॥

[व्या०] स्वत –स्वेच्छातो भवतीति स्मृत इत्यर्थ· ॥३॥

साधारणमत चैतद् दिङ्मात्रमिह दर्शितम् ।
विशेषस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तारशङ्कया ॥ ४ ॥

[व्या०] तत्र तत्रापीति–तत्तत्प्रस्तारेषु इत्यर्थ. ॥४॥

इति विरुदावल्यामवान्तरं साधारणमतं चण्डवृत्त-प्रकरणं चतुर्थम् ।४।

१ अथ साप्तविभक्तिकी कलिका

स्तुतिर्विधीयते विष्णो सप्तभिस्तु विभक्तिभि. ।
यत्र सा कलिका सद्भिर्ज्ञेया साप्तविभक्तिकी ॥ १ ॥
अथोच्यते विभक्तीना लक्षण कविसम्मतम् ।
तत्तद्गणोपनिहित यथाशास्त्रमतिस्फुटम् ॥ २ ॥
भसौ तु घटितौ यत्र प्रथमा सा प्रकीर्तिता ।
नयाभ्या तु द्वितीया स्यात् तृतीया ननसा लघु ॥ ३ ॥
त्रिभिस्तैस्तु चतुर्थी स्यात् यत्र यौ पञ्चमी तु सा ।
ताभ्या तु षष्ठी विज्ञेया यत्र सौ सप्तमी तु सा ॥ ४ ॥
विहाय प्रथमा ज्ञेया सर्वा साधारणे मते ।
स्थितास्तु गणसाम्येन स्वेच्छयैव यतः[1] कला ॥ ५ ॥
उदाहरणमेतासा क्रमतो **वृत्तमौक्तिके** ।
कथ्यते कविसन्तोपहेतवे* हरिकीर्त्तनै. ॥ ६ ॥

[व्या०] सुलभार्थास्तु कारिका इति न व्याख्यायन्ते । क्रमेणोदाहरणानि, यथा–

य स्थिरकरुण-स्तर्जितवरुणः ।
तर्पितजनक सम्मदजनक ॥ १ ॥
प्रणतविमाय जगुरनपायम् ।
घनरुचिकाय सुकृतिजना यम् ॥ २ ॥
सुजनकलितकथनेन प्रबलदनुजमथनेन ।
प्रणयिषु रतमभयेन प्रकटरतिपु किल येन ॥ ३ ॥
यस्मै परिध्वस्तदुष्टाय चक्रु. स्पृहां माल्यदुष्टाय[2] ।
दिव्या स्त्रिय केलितुष्टाय कन्दर्परङ्गेण पुष्टाय ॥ ४ ॥
धृतोत्साहपूराद् द्युतिक्षिप्तसूरात् ।
यतोऽरिर्विदूराद् भय प्राप शूरात् ॥ ५ ॥
यस्योज्वलाङ्गस्य सञ्चार्यपाङ्गस्य ।
वेणुर्ललामस्य हस्तेऽभिरामस्य ॥ ६ ॥
स्मितविस्फुरिते-ऽजनि यत्र हिते ।
रतिरुल्लसिते सदृशा ललिते ॥ ७ ॥

इति सप्तविभक्तयः ।*

- . चिह्नान्तर्गतोयमंशो नास्ति ख. प्रतौ । १. ख. यता । २. गोवि. जुष्टाय ।

*अथ सम्बुद्धिः

तनौ [तु] घटितौ यत्र तत्सम्बोधनमीरितम् ।
एव सम्बोधनान्तेय विभक्तिः सप्तकीर्त्तिता ॥ ७ ॥

यथा–

स त्वं जय ! जय ! दुष्टप्रतिभय !
भक्तस्थितदय[1] ! लुप्तव्रजभय ! ॥ ८ ॥
वीर !
मित्रकुलोदित नर्मसुमोदित
रञ्जितराधिक शर्म्मभराधिक ।

विरुदमिदम्—

धीर !
हसोत्तमाभिलषिता सेवकचक्रेषु दर्शितोत्सेका ।
मुरजयिन कल्याणी करुणाकल्लोलिनी जयति ।

इति साप्तविभक्तिकी कलिका ।१।

२. अक्ष अक्षमयी कलिका

अकारादि-क्षकारान्त-मातृकारूपधारिणी ।
विष्णोः स्तुतिपरा सेय, कलिकाऽक्षमयी मता ॥ ८ ॥
अत्र स्युस्तु*रगा सर्वे गणा. जगणवर्जिताः ।
मातृकावर्णघटिताः क्रमात् भगवत स्तुतौ ॥ ९ ॥

[व्या०] अस्यार्थ.— अत्राक्षमयी भगवत· स्तुतौ सर्वे तुरगा.—चतुष्कला· कर्ण-द्विजगण-भगण-सगणाः, जगणवर्जिता गणाः क्रमात् मातृकावर्णेषु यथायथं घटिताश्चेत् स्युस्तदा पूर्वोक्तविशेषण-विशिष्टा सेय अक्षमयी कलिका मता-सम्मता इति पूर्वश्लोकेन अन्वय· । मात्रावृत्ते तु 'चतुष्कल-द्वयेनापि कलाजगणवर्जिता·' इत्यत्रैव उक्तत्वाद् अक्षमयीमात्रावृत्तमेवेति युक्तितः समुत्प-श्याम । सर्वत्र च मात्रावृत्तेष्वेव जगणस्य हेयत्वेन निर्देशाच्च । यथा–

मधुरेश ! माधुरीमय माधव मुरलीमतल्लिकामुग्ध ।
मम मदनमोहन मुदा मर्दय मनसो महामोहम् ॥
अच्युत जय जय आर्त्तकृपामय ।
इन्द्रमखार्द्दन ईतिविशातन ॥ १ ॥
उज्ज्वलविभ्रम ऊर्जितविक्रम ।
ऋद्धिधुरोद्धुर[2] ऋभुदयापर ॥ २ ॥

---

१. गोवि. भक्तस्थिरदय । २. गोवि. धुरोद्धर । *-*चिह्नगतोऽशो नास्ति ख. प्रतौ ।

लृदिवक्रपेक्षित लॄवदलक्षित ।
एधितवल्लव ऐन्दवकुलभव ॥ ३ ॥
ओज:स्फूर्जित औग्र्यविवर्जित ।
असविशङ्कट अष्टापदपट ॥ ४ ॥

इति षोडशस्वरादयः।

अथ कादयः पञ्चवर्गाः

कङ्कणयुतकर खण्डितखलवर[1] ।
गतिजितकुञ्जर घनघुसृणाकर[2] ॥ ५ ॥
ङुतमुरलीरत चलच्चिल्लीलत ।
छलितसतीशत जलजोद्भवनत[3] ॥ ६ ॥
झषवरकुण्डल ञोडूयितदल ।
टङ्कितभूधर ठसमाननवर[4] ॥ ७ ॥
डमरघटाहर ढक्कितकरतल ।
णखरधृताचल तरलविलोचन ॥ ८ ॥
थूत्कृतखञ्जन दनुजविमर्द्दन ।
धवलावर्द्धन नन्दसुखास्पद ॥ ९ ॥
पङ्कजसमपद फणिनुतिमोदित ।
बन्धुविनोदित भङ्गुरितालक ॥ १० ॥
मञ्जुलमालक—

इति कादिपञ्चवर्गाः।

अथ यादयः

—यष्टिलसद्भुज
रम्यमुखाम्बुज ललितविशारद ॥ ११ ॥
वल्लवरङ्गद शर्म्मदचेष्टित ।
षट्पदवेष्टित सरसीरुहधर ॥ १२ ॥
हलधरसोदर क्षणदगुणोत्कर ॥ १३ ॥

इति यादयः।

वीर ।

---

१. क. खलधर। २. गोवि. घनघुसृणाम्बर। ३. गोवि. जलजोद्भवनुत। ४. गोवि. ठनिभाननवर।

कर्णे कल्पितकर्णिक. कलिकया कामायित: कान्तिभि:,
कान्ताना किलकिञ्चित किसलय कीलालधि. कीर्त्तिभि: ।
कुर्वन् कूर्दनकानि केशरितया कैशोरवान् कोटिश',
कोपीकौकुलकसकुष्टक्कृतिक:[1] कृष्णः क्रियात् काक्षितम् ।
सौरीतटचर गौरीव्रतपर-
गौरीपटहर चौरीकृतकर ।
धीर !
प्रेमोरुहट्टहिण्डक कक्खटसुभटेन्द्रकण्ठकुट्टाक ।
कुरु कौकुमपट्टाम्बर भट्टारक ताण्डव हृदि[2] मे ॥
इति अक्षमयी कलिका ।२।

३. अथ सर्वलघुककलिका

अथ सर्वलघुकं कलिकाद्वयं युगपदेव लक्ष्यते । तत्र–

नगणैर्पञ्चभिर्यत्र लघ्वन्तैर्वापि तैः पुन ।
क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णै· षोडशभिस्तथा ॥ १० ॥
प्रस्तारद्वयमन्त्यं स्याल्लघुभि सकलाक्षरै: ।
तत्सर्वलघुक प्रोक्त कलिकाद्वयमुत्तमम् ॥ ११ ॥

[व्या०] अस्यायमर्थः—यत्र पञ्चभि:–पञ्चसख्याकैर्नगणै –त्रिलघुकैर्गणै: पद यत्र, च–पुन लघ्वन्तैर्वापि तैरेव पञ्चभिर्नगणै.–क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिर्वा पदं भवति । वा शब्देन सप्तदशाक्षरमपि पद कर्त्तव्यम् । एतदूर्ध्वं तु न कर्त्तव्यमेवेत्युपदेशः । न च सप्तदशादूर्ध्वमित्यत्रैव निषेधस्य उक्तत्वात् । स्वेच्छया कलान्यासस्तु सप्तदशवर्णपर्यन्तमेव साधारणमते चमत्कारकारी नैतदूर्ध्वमिति, प्रस्तारद्वयेपि सर्वलघुभिस्समस्तैर्वर्णैर्यदन्त्य प्रस्तारद्वयं भवति तत् सर्वलघुकमुत्तमं कलिकाद्वय भवतीत्यर्थः ।

तत्र पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका यथा–

गोपस्त्रीविद्युदालीवलयितवपुष नन्दगोपादिकेकि-
व्यूहानन्दैकहेतु दनुजशतभयोद्दामदावाग्निशत्रुम् ।
ईषद्धास्याम्बुधारावितरणभृतसद्वन्धुचेतस्तडाग,
चित्त श्रीकृष्ण मेऽद्य श्रय शरणमहो दु खदाहोपशान्त्यै[3] ।
चरणचलनहतजठरशकटक[4]
रजकदलन वशगतपरकटक

१. गोविं. कौपीकौकुरकसकष्टक्कृतिकः । २. क. ब्रूहि । ३. गोवि. पूर्णपद्य नास्ति । ४. गोवि. जरठ शकटक ।

नटनघटनलसदगवरकटक
सकनकमरकतमयनवकटक ॥ १ ॥

इति पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।

अथ षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका

कपटरुदितनटदकठिनपदतट-
विघटितदधिघट निबिडितसुशकट
रुचितुलितपुरटपटलरुचिरपट-
घटितविपुलकट[1] कुटिलचिकुरघट ।
रविदुहितृनिकटलुठदजठरजट-[2]
विटपनिचितवटतटपटुतरनट-
निजविलसितहठविचटितसुविकट-
चटुलदनुजभट[3] जय युवतिषु शठ ।
धीर !

स्फुटनाटचकडम्बदण्डित-द्रढिमोड्डामर[4]दुष्टकुण्डली ।
जय गोष्ठकुटुम्बसवृतस्त्वमिडाडिम्ब्रकदम्बडुम्बक ॥

रशनमुखर सुखरनखर
दशनशिखर-विजितशिखर ।
वीर !

विवृतविविधबाधे भ्रान्तिवेगादगाधे,
धवलित[5]भवपूरे मज्जतो मेऽविदूरे ।
अशरणगणबन्धो हा[6] कृपाकौमुदीन्दो,
सकृदकृतविलम्ब देहि हस्तावलम्बम् ॥

नामानि प्रणयेन ते सुकृतिना तन्वन्ति तुण्डोत्सव,
धामानि प्रथयन्ति हन्त जलदश्यामानि नेत्राञ्जनम् ।
सामानि श्रुतिशष्कुली मुरलिकाजातान्यलकुर्वते,
कामा निर्वृतचेतसामिह विभो ! नाशापि न शोभते ॥

इति षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।३।

---

१. गोवि. विपुलघट । २. गोवि. जरठजट । ३ गोवि. चटुलदनुजघट । ४. क. घटितोडामर । ५. गोवि. बलवति । ६. गोवि. हे ।

अथ सर्वासु कलिकासु स्थिताना विरुदाना युगपदेव लक्षणमुच्यते—

वसुषट्पक्तिरविभिर्मनुभिश्चापि सर्वतः ।
कलिकासु कवि कुर्याद् विरुदाना तु कल्पनम् ॥ १२ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—सर्वासु कलिकासु वस्वादिभिः पञ्चभिः संख्यासकेतैश्चकारोक्तैरपि कविर्विरुदाना कल्पनं कुर्यात् । तथा हि—कस्याश्चित् कलिकायामष्टकलिक विरुद, कस्याश्चित् षट्कलिक विरुद, अपरस्या दशकलिक विरुद, अन्यस्याञ्च द्वादशकलिक विरुद, कस्याश्चित् कलिकाया चतुर्दशकलिक विरुदम् । कुत्रापि चकारोपदिष्ट च विरुदत्रितयमिति क्रमेण सर्वत्र विरुदकल्पन कविना कार्यमित्युपदिश्यते ॥१२॥

किञ्च—

धीर-वीरादिसबुद्ध्या कलिका विरुदादिकम् ।
देव-भूपतितत्तुल्यवर्णनेषु प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥
सस्कृतप्राकृतश्रव्यै शौर्यवीर्यदयादिभि ।
कीर्त्तिप्रतापप्राधान्यै कुर्वीत कलिकादिकम् ॥ १४ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१३, १४॥

अपि च—

गुणालङ्कारसहित सरस रीतिसयुतम् ।
मैत्र्यानुप्राससच्छब्दाडम्बर[१] जीवित द्वयो ॥ १५ ॥

[व्या०] द्वयो –कलिकाविरुदयोरित्यर्थः ॥१५॥

कलिकाश्लोकविरुदत्रिक त्रिंशत्त्रिकावधि ।
पञ्चत्रिकोर्ध्वं विरुदावली कविभिरिष्यते ॥ १६ ॥

[व्या०] अस्यार्थ —अस्या कारिकायां सम्पूर्णा विरुदावलीं लक्षयति—विरुदावली तावत् कलिकाश्लोकविरुदैस्त्रिभि सम्पद्यते । तत्र कलिकाश्लोकविरुदमिति त्रिक, पञ्चत्रिकोर्ध्व–पञ्चत्रिकं, पञ्चदश तदूर्ध्वं एतदारभ्य इत्यर्थ. । कियदवधीत्यपेक्षायामुच्यते—त्रिंशत्त्रिकावधि–त्र्यस्त्रिंशावधिश्चेत् क्रियते तदा अखण्डा विरुदावली भवति । एतादृशी विरुदावली कविभिरिष्यते कर्त्तुं यत्यत इत्यर्थ. । यथा श्रुतव्याख्याने तु महती विरुदावली स्यात् । तथा च पञ्चदशादारभ्य त्रिंशत्त्रिक नवतिस्सम्पद्यते, तत्पर्यन्त सति महती विरुदावली भवतीति । सकोचात्तथा व्याख्यातमस्माभिरिति सर्वं समञ्जसम् ॥१६॥

क्वचित्तु कलिकास्थाने केवल गद्यमिष्यते ।
पदमाद्यन्तयोराशी. प्रधान सुमनोहरम् ॥ १७ ॥
त्रिचतु.पञ्चकलिका श्लोकास्तावन्त एव हि ।

---

१. ख. छन्दाडम्बर ।

[व्या०] इति, सार्द्धेन श्लोकेन विरुदावलीलक्षणे कस्यचिन्मत उपन्यस्यति । क्वचित्तु–कस्याश्चित् कलिकाया–कलिकास्थाने गद्यमेवोभयत्र केवलं सविरुदं वा भवतीतीष्यते । किञ्च, आद्यन्तयोः–कलिकाविरुदयोः, आशी.प्रधान–आशीर्वादोपलक्षित पद्यमतिसुमनोहर भवतीति च[1] ॥१७॥

[व्या०] कियन्त्यः कलिका, कियन्तश्च श्लोकाः कार्या इत्यपेक्षायामुच्यते – त्रिचतुः-पञ्चकलिकाः स्वेच्छया कर्त्तव्याः । श्लोका अपि तावन्त एव हि स्वेच्छयैव विधेया इत्युपदेशः[2] ।

एतत् सर्वं यथास्थानमस्माभि समुदाहृतम् ॥ १८ ॥

[व्या०] सुगमम् ॥१८॥

विरुदावलीपाठफलमुपदिशति–-

रम्यया विरुदावल्या प्रोक्तलक्षणयुक्तया ।
स्तूयमान प्रमुदित श्रीगोविन्द[3] प्रसीदति ॥ १९ ॥

श्री[4]

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके विरुदावली-
प्रकरण नवमम् ॥९॥



१. ख. 'च' नास्ति । २. ख. इत्युपेक्षायामुच्यते । ३. गोवि. वासुदेवः । ४. ख. 'श्रीः' नास्ति ।

दशमं खण्डावली-प्रकरणम्

अथ खण्डावली

आशीःपद्यं यदाद्यन्तयोः[1] स्यात् खण्डावली त्वसौ ।
विनैव विरुदं नानागणभेदैरनेकधा ॥ १ ॥

तत्र-

१. अथ तामरस खण्डावली

पदे चेद् रगणः सौ च लघुद्वयनिवेशनम् ।
तदा तामरसं नाम साधारणमते भवेत् ॥ २ ॥

[व्या०] अनयोः कारिकयोरयमर्थः । यदा कलिकाया आद्यन्तयोः विरुदं विनैव आशीः-पद्यं भवति तदा नानागणभेदैरनेकधा असौ खण्डावली स्यादित्यन्वयः । किञ्च, तत्र पदे चेत् रगणो भवति, अथ च सौ–सगणौ भवतः, ततो लघुद्वयनिवेशनं–लघुद्वयस्थापनं चेत्–स्यात्तदा साधारणमते स्वेच्छाकलाविन्यासलक्षणे तामरसं इति नाम खण्डावली भवतीति वाक्यार्थः । १–२॥

यथा–

कलक्वणितवंशिकाविकलनागरीसागरी-
भवद्विषमशायकद्विगुणवृद्धिशुभ्रद्युति ।
पतङ्गतनयातटी-वननटी-भवद्विग्रहं,
नवीनघनमण्डलीरुचिरमाविरास्तां महः ॥
देव !

जय वंशीरवोल्लास ! जय वृन्दावनप्रिय ! ।
जय कृष्ण ! कृपाशील! जय लीलासुधाम्बुधे! ॥
वीर !

छन्दसामपि दुर्गमसन्तत-
मिन्दुबिम्बसमानशुभानन !
मन्दहासविकस्वरसुन्दर !
कुन्दकोरकदन्तरुचिव्रज !

---

१. ख. पदाद्यन्तयोः ।

सुन्दरीजनमोहनमन्मथ
चन्दनद्रवरज्यदुरःस्थल
नन्दनालयशीलितसद्गुण-
वृन्द कच्छपरूपसमुद्धृत-
मन्दराचलवाहभुजार्गल-
कन्दलीकृतसारसमर्थ पु-
रन्दरेण चिर परिवेपित.[1]
नन्दिनाथसमञ्चितदिव्यक-[2]
लिन्दशैलसुताजलजन्यर-
विन्दकाननकोपकदम्बमि-
लिन्दशावक निर्जरनायक
वृन्दया सह कल्पितकौतुक
दन्दशूकफणावलिगञ्जन
चन्द्रिकोज्ज्वलनिर्गलितामृत-
विन्दुदुर्दिनसूनृतसार मु-
कुन्ददेव कृपाल[3]दशि (दृशि) त्वयि
किं दुरापमिहास्ति ममेश्वर
किं दयावरुणालय दुर्जन-
निन्दयापि जगत्त्रयवल्लभ !
कन्दनीलिमदेहमह कुरु-
विन्दखण्डजपाकुसुमस्फुरद्
इन्द्रगोपकबन्धुरिताधर
चन्द्रकाद्भुतपिञ्छशिरस्तद-
रिन्दम स्वमतिं दयसे यदि
विन्दते सुखमेन[4]जनस्तव
वन्दिवद्गुणगानकर ध्रुव-
मिन्दयन् विदितो गरुडध्वज
नन्दयन्निजयासनयानय
नन्दगोपकुमार जयीभव ।
देव !

१. ख. परिवेवितः । २. ख. दिकृक । ३. ख. कृपालु । ४. ख. मेव ।

जय नीपावलीवास जय वेणुसुधाप्रिय ।
जय वल्लभसौभाग्य जय ब्रह्मरसायन ।
धीर !
पशुपललनावल्लीवृन्दैः श्रितः करपल्लवै-
र्विपुलपुलकश्रेणि[1]स्फीतस्फुरत्कुसुमोद्गम ।
तपनतनयातीरे तीरे तमालतरुप्रभः,
कलयतु मम क्षेम कश्चिन्नव कमलेक्षणम्[2] ॥१॥

इति तामरसं नाम खण्डावली ।१।

२. अथ मञ्जरी खण्डावली

नरेन्द्रवर्जिता यत्र रचिता स्युस्तुरङ्गमा. ।
आद्यन्तपदसयुक्ता मञ्जरी सा निगद्यते ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—यत्र-यस्या मञ्जर्यां नरेन्द्रेण-जगणेन वर्जिताः-रहिताः तुरङ्गमाः चतुर्विधाश्चतुष्कला रचिता यदि स्युः । किञ्च, आद्यन्तयोः पद्याभ्या सयुक्ता चेद् भवति तदा सा मञ्जरीति नाम्ना प्रसिद्धा खण्डावली निगद्यते छान्दसिकैरिति शेषः ॥३॥

यथा–

पिशङ्गसिचयाञ्चित चटुलनैचिकीचारक[3],
चमत्कृतदृगञ्चलैश्चलुकिता[4]वलानिश्चयम् ।
चलद्रुचिरचन्द्रिकाभरणचुम्बिचूडाञ्चल,
तमालदलमेचक सुचिरमाविरास्ता मह ॥
देव !
जय लीलासुधासिन्धो ! जय शीलादिमन्दिरम्[5] ।
जय राधैकसौहार्द जय कन्दर्पविभ्रम ॥
वीर !
जय जय जम्भारि भुजस्तम्भा-
कलिताहम्भा-वाहिनजम्भा-[6]
मुदवष्टम्भा-पहसररम्भा-[7]
श्रय निर्दम्भा-सादितरम्भा-
लघुकुचकुम्भा-दरपरिरम्भा-
निधुवनपुम्भा-वप्रारम्भा-

---

१. ख. श्रेणी । २. ख. कमलेक्षण । ३. ख. वारक । ४. ख. चुलुकिता । ५. ख. न्दिर' । ६. वाहितजृम्भा । ७. ख. पहसरंभा ।

धिकसुखसम्भा-वनविश्रम्भा-
भाषणसम्भारैरिह सम्भा-
वय न. सम्भावितमुज्जृम्भा-
म्बुजसदृशम्भाषणमधुरम्भा-
रत्यालम्भा-न्यायतनम्भा-
क्तमुख सम्भालयत [1] किम्भा-
लाक्षरसम्भावनया देव !

कुमारपत्रपिञ्छेन विराजत्कुन्तलश्रियम् ।
सुकुमारमह वन्दे नन्दगोपकुमारकम् ॥
धीर !

नित्यं यन्मधुमन्थरा मधुकरायन्ते सुधास्वादिन-
स्तन्माधुर्यधुरीणतापरिणते प्राय परीक्षाविधिम् ।
कर्त्तुं स्वांघ्रिसरोरुह करपुटे कृत्वा मुहु., सलिहन्,
दोलान्दोलनदोलिताखिलतनुः पायाद् यशोदार्भकः ॥

इति मञ्जरी खण्डावली ।२।

इत्थ खण्डावलीनां तु भेदा' सन्ति सहस्रश ।
साकल्येन मया नोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥४॥

सुकुमारमतीनां च मार्गदर्शनतो भवेत् ।
विज्ञानमिति मत्वैव मया मार्गः प्रदर्शित ॥५॥

सहस्रेण मुखेनैतद् वक्तु शेषोऽपि न क्षमः ।
कथमेकमुखेनाहमशेष वाङ्मय ब्रुवे ॥६॥

श्रीः

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके खण्डावलीप्रकरणं दशमम् ।१०।

श्रीः

---

१. ख. वत्सुकं सम्भालयः ।

एकादशं दोष-प्रकरणम्

अथ दोषाः

अथैतयोर्निरूप्यन्ते दोषा. कविसुखावहा ।
यान्विदित्वैव सुकवि' काव्य कर्त्तु मिहार्हति ॥१॥

[व्या०] अथेति । विरुदावली-खण्डावली-कथनानन्तरमेतयोः–विरुदावली-खण्डावली-भेदयोर्दोषाः निरूप्यन्ते । शेषं सुगमम् ॥१॥

तान् आह–

अमैत्री निरनुप्रासो दौर्बल्य च कलाहृति. ।
असाम्प्रत हतौचित्य विपरीतयुत पुनः ॥ २ ॥
विश्रृङ्खल स्खलत्ताल नवदोषान्न वेत्ति यः ।
कुर्याच्चैतत् तमोलोके उलूकोऽसौ भवेन्नरः ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थः— अमैत्री–अक्षरमैत्रीराहित्यं । निरनुप्रास.–अनुप्रासाऽभावः । दौर्बल्यं–श्लथवर्णता इति निगदेनैव व्याख्यात । कलाहृतिः–अन्यपदे पूर्ववर्णस्थानेऽन्यवर्णपाठः । यथा–

कमलवदन सुविमलजल ।
रञ्जितरण सञ्जितगुण ।

अयुक्तवर्णन–हतौचित्य । स्पष्टमुदाहरणम् । श्लिष्टवर्णस्थाने मधुरवर्णस्थितिः, मधुरस्थाने वा श्लिष्टस्थापन, विपरीतयुत । विश्रृङ्खलं–न्यूनाधिकश्लिष्टादिवर्णाना ग्रथनम् । स्खलत्तालं–यतिभ्रष्ट लक्षणानुसाराद् ऊह्यानि उदाहरणानि । इत्येतावन्नवदोषान् यः कविः न वेत्ति–न जानाति अविद्वाश्च यदि एतत्–पूर्वोक्त विरुदावली–खण्डावलीलक्षणं यो नर.–कविः काव्य कुर्यात् तदा तमोलोके–गाढान्धकाराज्ञानलक्षणे लोके असौ उलूको–दिवान्धःपक्षी भवेदित्यर्थ । तस्माद् दोषज्ञाने महान् गुणः, तद्वैपरीत्ये महदनिष्टं इत्यन्वयव्यतिरेकसिद्धोऽयमर्थ. । इति सर्वं निर्मल मङ्गलम् ।

लक्ष्मीनाथतनूजेन चन्द्रशेखरसूरिणा ।
छन्द शास्त्रे विरचित वार्त्तिक वृत्तमौक्तिकम् ॥

इति दोषनिरूपण-प्रकरणमेकादशम् ॥११॥

द्वादशं अनुक्रमणी -- प्रकरणम्

प्रथमखण्डानुक्रमणी

रविकर-पशुपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धान् ।
सद्वृत्तमौक्तिकमिद चक्रे श्रीचन्द्रशेखरः सुकविः ॥१॥

अथाऽभिधीयते चाऽत्राऽनुक्रमो वृत्तमौक्तिके ।
अत्र खण्डद्वय प्रोक्तं मात्रा-वर्णात्मक पृथक् ॥ २ ॥

तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमेऽनुक्रमः स्फुटम् ।
प्रोच्यते यत्र विज्ञाते समूहालम्बनात्मकम् ॥ ३ ॥

ज्ञान भवेदखण्डस्य[1] खण्डस्य[2] छन्दसोऽपि च ।
मङ्गलाचरण पूर्वं ततो गुरुलघुस्थिति. ॥ ४ ॥

तयोरुदाहृतिं पश्चात् तद् विकल्पस्य कल्पनम् ।
काव्यलक्षणवैलक्ष्ये अनिष्टफलवेदनम् ॥ ५ ॥

गणव्यवस्थामात्राणा प्रस्तारद्वयलक्षणम् ।
मात्रागणानां नामानि कथितानि तत. स्फुटम् ॥ ६ ॥

वर्णवृत्तगणानां च लक्षण स्यात् तत परम् ।
तद्देवता च तन्मैत्री तत्फलं चाप्यनुक्रमात् ॥ ७ ॥

मात्रोद्दिष्ट च तत्पश्चात्तन्नष्टस्याथ कीर्त्तनम् ।
वर्णोद्दिष्ट ततो ज्ञेय वर्णनष्टमत. परम् ॥ ८ ॥

वर्णमेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ।
मात्रामेरुश्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्त्तिता ॥ ९ ॥

ततो वृत्तद्वयस्थस्य गुरोर्ज्ञान लघोरपि ।
वर्णस्य मर्कटी पश्चात् मात्रायाश्चापि मर्कटी ॥ १० ॥

तयो. फल च कथित षट्प्रकारं समासत ।
ततस्त्वेकाक्षरादेश्च षड्विंशत्यक्षरावधेः ॥ ११ ॥

प्रस्तारस्यापि सख्याऽत्र पिण्डीभूता प्रकीर्त्तिता ।
ततो गाथादिभेदानां कलासख्या प्रकीर्त्तिता ॥ १२ ॥

---

१ ख भवेदखण्डलस्य । २. ख. 'खण्डस्य' नास्ति ।

गाथोदाहरण पश्चात् सप्रभेदं सलक्षणम् ।
विगाथा च तथा ज्ञेया ततो गाहू प्रकीर्त्तिता ॥ १३ ॥
अथोद्गाथा गाहिनी च सिंहिनी च ततः परम् ।
स्कन्धक चापि कथित सप्रभेद सलक्षणम् ॥ १४ ॥
इति गाथाप्रकरण प्रथमं वृत्तमौक्तिके ।
द्वितीय षट्पदस्याथ द्विपथा तत्र सस्थिता ॥ १५ ॥
सलक्षणा सप्रभेदा रसिका स्यात् तत. परम् ।
अथ रोला समाख्याता गन्धाणा स्यात् तत. परम् ॥ १६ ॥
चौपैया च तत. प्रोक्ता ततो घत्ता प्रकीर्त्तिता ।
घत्तानन्दमतः काव्य सोल्लाल सप्रभेदकम् ॥ १७ ॥
षट्पदं च ततः प्रोक्त सप्रभेदमतः परम् ।
काव्यषट्पदयोश्चापि दोषाः सम्यङ् निरूपिता ॥ १८ ॥
प्राकृते सस्कृते चापि दोषाः कविसुखावहा. ।
द्वितीय षट्पदस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरण त्विह ॥ १९ ॥
अथ **रड्डाप्रकरण तृतीयं** परिकीर्त्यते ।
तत्र पज्झटिकाछन्दोऽडिल्लाछन्दस्ततः परम् ॥ २० ॥
ततस्तु पादाकुलक चौबोला - छन्द एव च ।
रड्डाछन्दस्ततः प्रोक्त भेदा सप्तैव चास्य तु ॥ २१ ॥
रड्डाप्रकरण चैव तृतीयमिह कीर्त्तितम् ।
पद्मावतीप्रकरण चतुर्थमथ कथ्यते ॥ २२ ॥
तत्र पद्मावती पूर्वं ततः कुण्डलिका भवेत् ।
गगनाङ्ग तत प्रोक्तं द्विपदी च तत. परम् ॥ २३ ॥
ततस्तु झुल्लणा-छन्द खञ्जा-छन्दस्ततः परम् ।
शिखाछन्दस्ततश्च स्यात् मालाछन्दस्ततो भवेत् ॥ २४ ॥
ततस्तु चुलिआला स्यात् सोरठा तदनन्तरम् ।
हाकलीर्मधुभारश्चाऽऽभीरश्च स्यादनन्तरम् ॥ २५ ॥
अथ दण्डकला प्रोक्ता तत. कामकला भवेत् ।
रुचिराख्य ततश्छन्दो दीपकश्च तत स्मृतम् ॥ २६ ॥
सिंहावलोकित छन्दस्ततश्च स्यात् प्लवङ्गम. ।
अथ लीलावतीछन्दो हरिगीत तत स्मृतम् ॥ २७ ॥

हरिगीत[1] ततः प्रोक्तं मनोहरमतः परम् ।
हरिगीता ततः प्रोक्ता यतिभेदेन या स्थिता ॥ २८ ॥

अथ त्रिभङ्गी छन्द. स्यात् ततो दुर्मिलका भवेत् ।
हीरच्छन्दस्तत. प्रोक्तमथो जनहर मतम् ॥ २९ ॥

तत. स्मरगृह छन्दो मरहट्ठा ततः स्मृता ।
पद्मावतीप्रकरणं चतुर्थमिह कीर्त्तितम् ॥ ३० ॥

सवैयाख्य प्रकरण पञ्चमं परिकीर्त्यते ।
तत्र पूर्वं सवैयाख्यं छन्दः स्यादतिसुन्दरम् ॥ ३१ ॥

भेदास्तस्यापि कथिता रससंख्या मनोहराः ।
ततो घनाक्षर वृत्तमतिसुन्दरमीरितम् ॥ ३२ ॥

पञ्चम तु प्रकरणं सवैयाख्यमिहोदितम् ।
अथो **गलितकाख्यं** तु **षष्ठं प्रकरण** भवेत् ॥ ३३ ॥

पूर्वं गलितक तत्र ततो विगलितं मतम् ।
अथ सङ्गलित ज्ञेयमत. सुन्दर-पूर्वकम् ॥ ३४ ॥

भूषणोपपद तच्च मुखपूर्वं तत. स्मृतम् ।
विलम्बितागलितक समपूर्वं ततो मतम् ॥ ३५ ॥

द्वितीय समपूर्व चापर सङ्गलित तत ।
अथापर गलितकं लम्बितापूर्वक भवेत् ॥ ३६ ॥

विक्षिप्तिकागलितक ललितापूर्वक तत ।
ततो विषमितापूर्वं मालागलितक तत. ॥ ३७ ॥

मुग्धमालागलितकमथोद्गलितक भवेत् ।
षष्ठ गलितकस्यैतत् प्रोक्त प्रकरण शिवम् ॥ ३८ ॥

रन्ध्रसूर्यशिवसख्यात (७९) मात्रावृत्तमिहोदितम् ।
सप्रभेद वसुद्वन्द्व-शतद्वय-(२८८) मुदीरितम् ॥ ३९ ॥

तथा **प्रकरण** चात्र **रससख्य**[2] प्रकीर्त्तितम् ।
मात्रावृत्तस्य खण्डोऽय **प्रथमः** परिकीर्तितः ॥ ४० ॥

इति प्रथमखण्डानुक्रमणिका ।

---

१ हरगीतं ख. । २. क. रससख्या ।

द्वितीयखण्डानुक्रमणी

अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य च क्रमात् ।
वृत्तानुक्रमणी स्पष्टा क्रियते वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
आरभ्यैकाक्षर वृत्तं षड्विंशत्यक्षरावधि ।
तत्तत्प्रस्तारगत्याऽत्र वृत्तानुक्रमणी स्थिता ॥ २ ॥
तत्र श्रीनामकं वृत्तं प्रथम परिकीर्त्तितम् ।
तत इ. कथित वृत्त द्वौ भेदावत्र कीर्तितौ ॥ ३ ॥
एकाक्षरे, द्व्यक्षरे तु पूर्वं कामस्ततो मही ।
तत. सार मधुश्चेति भेदाश्चत्वार एव हि ॥ ४ ॥
त्र्यक्षरे चात्र ताली स्यान्नारी चापि शशी ततः ।
तत. प्रिया समाख्याता रमण· स्यादनन्तरम् ॥ ५ ॥
पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च मन्दरश्च तत. स्मृत ।
कमल चेति चात्र स्युरष्टौ भेदाः प्रकीर्त्तिता[1] ॥ ६ ॥
अथातो द्विगुणा भेदाश्चतुर्वर्णादिषु स्थिता ।
यथासम्भवमेतेषामाद्यान्तानुक्रमात् स्फुटम् ॥ ७ ॥
वृत्तानुक्रमणी सेयमङ्कसकेतत कृता ।
प्रतिप्रस्तारविस्तार षड्विंशत्यक्षरावधि ॥ ८ ॥

तत्र–

चतुर्वर्णप्रभेदेषु तीर्णा कन्याऽपि चान्यत. ।
धारी[2] ततस्तु विख्याता नगाणी च तत परम् ॥ ९ ॥
शुभ चेति समाख्यातामत्र भेदचतुष्टयम् ।
शेषभेदा न सप्रोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥ १० ॥
प्रस्तारगत्या ते भेदा. षोडशैव व्यवस्थिताः ।
सुधीभिरूह्या प्रस्तार्य यथाशास्त्रमशेषत. ॥ ११ ॥
अथ पञ्चाक्षरे[3] पूर्वं सम्मोहा वृत्तमीरितम् ।
हारी तत समाख्याता ततो हसः प्रकीर्तित. ॥ १२ ॥

१. ख. भेद. क्रमात् स्थिता । २ ख. धारी । ३. क. पञ्चाक्षरै. ।

प्रिया ततः समाख्याता यमक तदनन्तरम् ।
प्रस्तारगत्या चैवाऽत्र भेदा द्वात्रिंशदीरिता. (३२) ॥ १३ ॥

षडक्षरेऽपि पूर्वं तु शेषाख्यं वृत्तमीरितम् ।
तत. स्यात्तिलका वृत्त विमोह तदनन्तरम् ॥ १४ ॥

विजोहे'त्यन्यतः ख्यात चतुरसमत. परम् ।
पिङ्गले चउरसेति स्त्रीलिङ्ग परिकीर्तितम् ॥ १५ ॥

मन्थान च ततः प्रोक्त मन्थानेत्यन्यतो भवेत् ।
शङ्खनारी ततः प्रोक्ता सोमराजीति चान्यतः ॥ १६ ॥

स्यात् सुमालतिका चात्र मालतीति च पिङ्गले ।
तनुमध्या तत' प्रोक्ता ततो दमनक भवेत् ॥ १७ ॥

प्रस्तारगत्या चाप्यत्र भेदा वेदरसैर्मताः (६४) ।
अथ सप्ताक्षरे पूर्वं शीर्षाख्य वृत्तमीरितम् ॥ १८ ॥

तत. समानिका वृत्त ततोऽपि च सुवासकम् ।
करहञ्चि तत प्रोक्तं कुमारललिता तत. ॥ १९ ॥

ततो मधुमती प्रोक्ता मदलेखा ततः स्मृता ।
ततो वृत्त तु कुसुमतति' स्यादतिसुन्दरम् ॥ २० ॥
प्रस्तारगतिभेदेन वसुनेत्रात्मजेरिता[२] (१२८) ।
भेदा. सप्ताक्षरस्यान्या ऊह्याः प्रस्तार्य पण्डितै. ॥ २१ ॥
अथ वस्वक्षरे पूर्वं विद्युन्माला विराजते ।
ततः प्रमाणिका ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ २२ ॥
तुङ्गावृत्त तत प्रोक्त कमल तदनन्तरम् ।
माणवकक्रीडितक ततश्चित्रपदा मता ॥ २३ ॥
ततोऽनुष्टुप् समाख्याता जलदं च तत स्मृतम् ।
अत्र प्रस्तारगत्यैव रसबाणयुगैर्मता. (२५६) ॥ २४ ॥
भेदा वस्वक्षरे शेषा सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।
नवाक्षरेऽथ पूर्वं स्याद् रूपामाला मनोरमा ॥ २५ ॥
ततो महालक्ष्मिका स्यात् सारङ्ग तदनन्तरम् ।
सारङ्गिका पिङ्गले तु पाइन्त तदनन्तरम् ॥ २६ ॥

---

१. ख. विड्गोहे । २. क. वसुनेत्रात्मतेडिताः ।

पाइन्ता पिङ्गले तु स्यात् कमल तदनन्तरम् ।
[बिम्बवृत्त ततः प्रोक्त तोमरं तदनन्तरम्][1] ॥ २७ ॥

भुजगशिशुसृतावृत्त मणिमध्य ततः स्मृतम् ।
भुजङ्गसङ्गता च स्यात् ततः सुललितं स्मृतम् ॥ २८ ॥

प्रस्तारगत्या चात्रास्य नेत्रचन्द्रशरैरपि (५१२) ।
भेदा नवाक्षरे शिष्टाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ॥ २९ ॥

अथ पक्त्यर्णके पूर्वं गोपाल परिकीर्तित ।
सयुत कथितं पश्चात् ततश्चम्पकमालिका ॥ ३० ॥

क्वचिद् रुक्मवती चेय क्वचिद् रूपवतीति च ।
तत· सारवती च[2] स्यात् सुषमा तदनन्तरम् ॥ ३१ ॥

ततोऽमृतगतिः प्रोक्ता मत्ता स्यात्तदनन्तरम् ।
पूर्वमुक्ताऽमृतगति. सा चेद् यमकिता भवेत् ॥ ३२ ॥

प्रतिपाद तदोक्तैषा त्वरिताऽनन्तर गति· ।
मनोरम ततः प्रोक्तमन्यत्र च मनोरमा ॥ ३३ ॥

ततो ललित-पूर्व तु गतीति समुदीरितम् ।
प्रस्तारान्त्य सर्वलघुवृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ ३४ ॥

प्रस्तारगत्या भेदाः स्यु तत्त्वाकाशात्मसख्यका. (१०२४) ।
दशाक्षरेऽपरे भेदाः सूच्या प्रस्तार्य पण्डितै ॥ ३५ ॥

अथ रुद्राक्षरे[3] पूर्वं मालतीवृत्तमीरितम् ।
ततो बन्धु समाख्यातो ह्यन्यत्र दोधक भवेत् ॥ ३६ ॥

ततस्तु सुमुखीवृत्तं शालिनी स्यादनन्तरम् ।
वातोर्मी तदनु प्रोक्ता छन्द शास्त्रविशारदै ॥ ३७ ॥

परस्पर चैतयोश्चेत् पादा एकत्रयोजिता ।
तदोपजातिनामानो भेदास्ते च[4] चतुर्दश ॥ ३८ ॥

ततो दमनक प्रोक्त चण्डिका तदनन्तरम् ।
सेनिका श्रेणिका चेति तथा नामान्तर क्वचित् ॥ ३९ ॥

नाममात्रे पर भेद फलतो न तु किञ्चन ।
इन्द्रवज्रा तत प्रोक्ता ततश्चोपेन्द्रपूर्विका ॥ ४० ॥

---

१. [-] कोष्ठगर्तोंशो नास्ति क ख. प्रतौ। २ ख 'तत. सारवती च' नास्ति । ३. क. रुद्राक्षरै । ४. ख, तु ।

उपजातिस्ततः प्रोक्ता पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
भेदाश्चतुर्दशैतस्या. विज्ञेयाः पिण्डतो बहिः ॥ ४१ ॥

ततो रथोद्धतावृत्त स्वागतावृत्ततस्तथा ।
भ्रमरान्ते विलसिताऽनुकूला च ततो भवेत् ॥ ४२ ॥

ततो मोट्टनक[1] वृत्त सुकेशी च ततो भवेत् ।
तत सुभद्रिकावृत्त बकुलं कथित तत. ॥ ४३ ॥

रुद्रसख्याक्षरे भेदा वसुवेदखनेत्रकैः (२०४८) ।
प्रस्तारगत्या जायन्ते शिष्टान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ४४ ॥

अथ रव्यक्षरे पूर्वमापीडः कथितोऽन्यत. ।
विद्याधरस्ततश्च स्यात् प्रयातं भुजगादनु ॥ ४५ ॥

ततो लक्ष्मीधर वृत्तमन्यत्र स्रग्विणी ततः ।
तोटक स्यात् तत. सारङ्गकं मौक्तिकदामतः ॥ ४६ ॥

मोदक सुन्दरी चापि ततः स्यात् प्रमिताक्षरा ।
चन्द्रवर्त्म ततो ज्ञेयमतो द्रुतविलम्बितम् ॥ ४७ ॥

ततस्तु वशस्थविला क्वचित् क्लीबमिद भवेत् ।
क्वचित्तु वशस्तनितमिन्द्रवशा ततो भवेत् ॥ ४८ ॥

अनयोरपि चैकत्रपादानां योजन यदि ।
तदोपजातयो नाम भेदा. स्युस्ते चतुर्दश ॥ ४९ ॥

सर्वत्रैव स्वल्पभेदे भवन्तीहोपजातय. ।
वृत्ताभ्यामल्पभेदाभ्यामुपदेशः पितुर्मम ॥ ५० ॥

ततो जलोद्धतगतिर्वैश्वदेवी ततो मता ।
मन्दाकिनी ततो ज्ञेया तत. कुसुमचित्रिता ॥ ५१ ॥

ततस्तामरस वृत्त ततो भवति मालती ।
कुत्रचिद् यमुना चेति मणिमाला ततो भवेत् ॥ ५२ ॥

ततो जलधरमाला स्यात् ततश्चापि प्रियवदा ।
ततस्तु ललिता सैव सुपूर्वान्यत्र लक्षिता ॥ ५३ ॥

---

१. ख. मोटनकम् ।

ततोऽपि ललित वृत्तं ललनेत्यपि च क्वचित् ।
कामदत्ता ततः प्रोक्ता ततो वसन्तचत्वरम् ॥ ५४ ॥
प्रमुदितवदना-मन्दाकिन्योर्भेदो न वास्तवो घटितः ।
नामान्तरेण भेदो गणतो यदितो न चोद्दिष्टः ॥ ५५ ॥[1]
प्रमुदितादूर्ध्वं[2] वदने[3] वदनाऽन्यत्र च प्रभा ।
विख्याता कविमुख्यैस्तु तत. स्यान्नवमालिनी ॥ ५६ ॥
सर्वान्त्य नयनात् पूर्वं तरलं वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्ताररीत्या तु भेदा रव्यक्षरे स्थिता ॥ ५७ ॥
रसरन्ध्रखवेदैस्तु(४०९६) शेषा सूच्या[4] सुबुद्धिभि. ।
त्रयोदशाक्षरे पूर्वं वाराहः कथितो मया ॥ ५८ ॥
मायावृत्त ततस्तु स्यात् क्वचिन्मत्तमयूरकम् ।
ततस्तु तारक वृत्तं कन्द पङ्कावली तथा ॥ ५९ ॥
तत. प्रहर्षिणीवृत्त रुचिरा तदनन्तरम् ।
चण्डीवृत्त ततः प्रोक्त तत. स्यान्मञ्जुभाषिणी ॥ ६० ॥
शम्भो सुनन्दिनी चेय चन्द्रिका तदनन्तरम् ।
क्वचिदुत्पलिनीवृत्तं चन्द्रिकैवोच्यते बुधै. ॥ ६१ ॥
कलहसस्ततश्च स्यात् सिंहनादोप्यय क्वचित् ।
ततो मृगेन्द्रवदनं क्षमा पश्चात् ततो लता ॥ ६२ ॥
ततस्तु चन्द्रलेखाख्य चन्द्रलेखेत्यपि क्वचित् ।
ततश्च सुद्युति पश्चाल्लक्ष्मीवृत्त मनोहरम् ॥ ६३ ॥
ततो विमल-पूर्वं तु गतीतिरुचिर भवेत् ।
प्रस्तारान्त्य वृत्तमेतद् भावित कविपुङ्गवै. ॥ ६४ ॥
प्रस्तारगत्या विज्ञेया भेदा. कामाक्षरे बुधै ।
नेत्रग्रहेन्दुवसुभि· (८१९२)शेषान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ६५ ॥
अथ मन्वक्षरे पूर्वं सिंहास्य कथितो बुधै ।
ततो वसन्ततिलका ततश्चक्र प्रकीर्तितम् ॥ ६६ ॥
असम्बाधा ततश्च स्यात् तत स्यादपराजिता ।
कलिकान्त प्रहरण वासन्ती स्यादनन्तरम् ॥ ६७ ॥

---

१. पद्यं नास्ति प. प्रतौ । २. ख. प्रमुदितशब्दस्यान्ते । ३. क. वान्ते । ४. ख. शेषास्तूह्या ।

लोला नान्दीमुखी तस्माद् वैदर्भी तदनन्तरम् ।
प्रसिद्धमिन्दुवदन स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत. ।। ६८ ।।

ततस्तु शरभी प्रोक्ता ततश्चाहिधृतिः स्थिता ।
ततोऽपि विमला ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ।। ६९ ।।

ततो मणिगण वृत्तमन्त्यं मन्वक्षरे भवेत् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा वेदाष्टतो गुणाः[1] ।। ७० ।।

रसेन्दुप्रमिताश्चापि(१६३८४) विज्ञेयाः कविशेखरैः ।
यथासम्भवसम्प्रोक्ता. शेषास्तूह्याः स्वबुद्धितः ।। ७१ ।।

लीलाखेलमथो वक्ष्ये वृत्त **पञ्चदशाक्षरे** ।
सारङ्गिकेति यन्नाम **पिङ्गले** प्रोक्तमुत्तमम् ।। ७२ ।।

ततस्तु मालिनीवृत्त ततः स्याच्चारु चामरम् ।
तूणक चान्यतश्चापि भ्रमरावलिका ततः ।। ७३ ।।

भ्रमरावली **पिङ्गले** स्यान् मनोहसस्ततस्तत ।
शरभ वृत्तमन्यत्र मता शशिकलेति च ।। ७४ ।।

मणिगुणनिकरः स्रगिति च भेदौ द्वावस्य यतिकृतौ भवत ।
तत्प्रागेवाभिहित वृत्तद्वयमस्य शरभतो न भिदा ।। ७५ ।।

ततस्तु निशिपालाख्यं विपिनात्तिलक तत ।
चन्द्रलेखा तत प्रोक्ता चण्डलेखाऽपि चान्यत ।। ७६ ।।[2]

ततश्चित्रा समाख्याता चित्र चान्यत्र कीर्तितम् ।
ततस्तु केसर वृत्तमेला स्यात्तदनन्तरम् ।। ७७ ।।

तत प्रिया समाख्याता यतिभेदादलिः पुन ।
उत्सवस्तु तत प्रोक्तस्ततश्चोडुगण मतम् ।। ७८ ।।
प्रस्तारगत्या सम्प्रोक्ता भेदाः पञ्चदशाक्षरे ।
वसुशास्त्राश्वनेत्राग्निप्रमिता. (३२७६८) कविपण्डितै ।।७९।।
प्रस्तार्य शेषभेदास्तु कृत्वा नामानि च स्वत. ।
अस्मदीयोपदेशेन सूचनीया. सुबुद्धिभि ।। ८० ।।
अथ प्रथमतो राम. प्रस्तारे **षोडशाक्षरे** ।
ब्रह्मरूपकमित्यस्य नाम प्रोक्त च **पिङ्गले** ।। ८१ ।।

---

१. क. गुणः । २. ख. पद्य नास्ति ।

नराचमिति यन्नाम ततः स्यात् पञ्चचामरम् ।
ततो नील समाख्यात ततः स्याच्चञ्चलाभिधम् ॥ ८२ ॥

इदमेवान्यतश्चित्रसङ्गमित्येव भाषितम् ।
ततस्तु मदनादूर्ध्वं ललिता स्यादनन्तरम् ॥ ८३ ॥

वाणिनीवृत्तमाख्यातं प्रवराल्ललित तत. ।
अनन्तर तु गरुडरुत स्याच्चकिता तत. ॥ ८४ ॥

चकितैव यतिविभेदात् क्वचिदपि गजतुरगविलसित भवति ।
क्वचिदिदमेव ऋषभगजविलसितमिति नाम सधत्ते ॥ ८५ ॥

तत शैलशिखावृत्त ततस्तु ललित मतम् ।
तत· सुकेशर वृत्तं ललना स्यादनन्तरम् ॥ ८६ ॥

ततो गिरिधृति कुत्राप्यचलानन्तर धृतिः ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा स्यु. षोडशाक्षरे ॥ ८७ ॥

रसाग्निपञ्चेषुरसैः (६५५३६) मिताः प्रख्यातबुद्धिभि. ।
प्रस्तार्य सूच्याश्चान्येपि भेदा इत्युपदिश्यते ॥ ८८ ॥

अथ सप्तदशे वर्णप्रस्तारे वृत्तमीर्यते ।
लीलाधृष्ट प्रथमतस्तत पृथ्वी प्रकीर्तिता ॥ ८९ ॥

ततो मालावतीवृत्त मालाधर इति क्वचित् ।
तत शिखरिणीवृत्त हरिणीवृत्ततस्तथा ॥ ९० ॥

मन्दाक्रान्ता वशपत्रपतित पतिता क्वचित् ।
शम्भौ तु वशवदनमेतन्नाम प्रकीर्तितम् ॥ ९१ ॥

ततो नर्दटक वृत्त यतिभेदात्तु कोकिलम् ।
ततस्तु हारिणीवृत्त भाराक्रान्ता ततो भवेत् ॥ ९२ ॥

मतङ्गवाहिनीवृत्त तत. स्यात् पद्मक तथा[1] ।
दशशब्दान्मुसहरमिति वृत्तं समीरितम् ॥ ९३ ॥

प्रस्तारगत्या भेदा. स्युरत्र सप्तदशाक्षरे ।
नेत्राश्वव्योमचन्द्राग्निचन्द्रै.(१३१०७२)परिमिताः परे ॥९४॥

भेदा गुरुबुद्धिभिरूह्या प्रस्तार्य स्वमनीषया ।
अथाष्टादशवर्णानां प्रस्तारे प्रथम भवेत् ॥ ९५ ॥

१ ग नन्त ।

लीलाचन्द्रस्ततश्च स्यान्मञ्जीरा चर्चरी ततः ।
क्रीडाचन्द्रस्ततश्च स्यात् ततः कुसुमिताल्लता ॥ ९६ ॥
ततस्तु नन्दन वृत्त नाराचः स्यादनन्तरम् ।
मञ्जुलेत्यन्यतः प्रोक्ता चित्रलेखा ततो भवेत् ॥ ९७ ॥
ततस्तु भ्रमराच्चापि पदमित्यतिसुन्दरम् ।
शार्दूलललित पश्चात् ततः सुललितं भवेत् ॥ ९८ ॥
अनन्तरं चोपवनकुसुमं वृत्तमीरितम् ।
अत्र प्रस्तारगतितो भेदाः ह्यष्टादशाक्षरे ॥ ९९ ॥
वेदश्रुत्यवनीनेत्ररसयुग्मैः(२६२१४४)मिता मताः ।
शेषा. स्वबुद्धया प्रस्तार्य विज्ञेया. स्वगुरूक्तित ॥ १०० ॥
अथ प्रथमतो नागानन्दश्चैकोनविंशके ।
शार्दूलानन्तर विक्रीडितं वृत्त तत स्मृतम् ॥ १०१ ॥
ततश्चन्द्र समाख्यातं चन्द्रमालेति च क्वचित् ।
ततस्तु धवलं वृत्त धवलेति च पिङ्गले ॥ १०२ ॥
तत. शम्भुः समाख्यातो मेघविस्फूर्जिता ततः ।
छायावृत्तं ततश्च स्यात् सुरसा तदनन्तरम् ॥ १०३ ॥
फुल्लदाम ततश्च स्यान्मृदुलात् कुसुम ततः ।
प्रस्तारगत्या भेदाश्चैकोनविंशाक्षरे कृताः ॥ १०४ ॥
वस्वष्टनेत्रश्रुतिदृग्भूतैः (५२४२८८) परिमिता परे ।
भेदाः प्रस्तार्य बोद्धव्याः स्वबुद्धया शुद्धबुद्धिभिः ॥ १०५ ॥
अथ विंशाक्षरे पूर्वं योगानन्दः[1] समीरित. ।
ततस्तु गीतिकावृत्तं गण्डका तदनन्तरम् ॥ १०६ ॥
गण्डकैव क्वच्चित्रवृत्तमन्यत्र वृत्तकम् ।
शोभावृत्त तत प्रोक्त ततः सुवदना भवेत् ॥ १०७ ॥
प्लवङ्गभङ्गाच्च पुनर्मङ्गलं वृत्तमुच्यते ।
तत शशाङ्कचलित ततो भवति भद्रकम् ॥ १०८ ॥
ततो गुणगण वृत्तमन्त्य स्यादतिसुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा रसमुनीषुभि ॥ १०९ ॥

---

१. क. ख. नागानन्दः ।

वसुवेदखचन्द्रैश्च (१०४८५७६) मिताः स्युश्चापरे[1] बुधैः ।
प्रस्तार्य बुद्धया ससूच्या छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ११० ॥

अथैकविंशत्यक्षरेऽस्मिन् ब्रह्मानन्दादनन्तरम् ।
स्रग्धरा मञ्जरी च स्यान्नरेन्द्रस्तदनन्तरम् ॥ १११ ॥

ततस्तु सरसीवृत्तं क्वचित् सुरतरुर्भवेत् ।
सिद्धकं चान्यतः प्रोक्तं रुचिरा तदनन्तरम् ॥ ११२ ॥

ततश्च स्यान्निरुपमतिलकं वृत्तमन्त्यगम् ।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदाः नेत्रेषुचन्द्रकैः ॥ ११३ ॥

मुनिरन्ध्रखनेत्रैश्च (२०९७१५२) विज्ञेयाः कविशेखरैः ।
प्रस्तार्यान्यित्समुन्नेय भेदजातं सुबुद्धिभिः ॥ ११४ ॥

अथ प्रथमतो विद्यानन्दवृत्तमुदीरितम् ।
द्वाविंशत्यक्षरे हंसीवृत्तं स्यात्तदनन्तरम् ।
ततस्तु मदिरावृत्तं मन्द्रकं तदनन्तरम् ॥ ११५ ॥
तदेव यतिभेदेन शिखरं परिकीर्तितम् ।
ततः स्यादच्युतं वृत्तं मदालसमनन्तरम् ॥ ११६ ॥
ततस्तरुवरं वृत्तमन्त्यं भवति सुन्दरम् ।
प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा वेदखवह्निभिः ॥ ११७ ॥
वेदग्रहेन्दुवेदैश्च (४१९४३०४) भवन्तीति विनिश्चितम् ।
तथैवान्येपि ये भेदास्ते प्रस्तार्यं स्वबुद्धितः ॥ ११८ ॥
सूचनीयाः कविवरैः छन्दःशास्त्रविशारदैः ।
अथात्र त्र्यधिके विंशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ॥ ११९ ॥
दिव्यानन्दः सर्वगुरुस्ततः सुन्दरिका भवेत् ।
ततस्तु यतिभेदेन सैव पद्मावती भवेत् ॥ १२० ॥
ततोऽद्रितनया प्रोक्ता सैवाश्वललितं क्वचित् ।
ततस्तु मालतीवृत्तं मल्लिका स्यादनन्तरम् ॥ १२१ ॥
मत्ताक्रीडं ततः प्रोक्तं कनकाद्वलयं ततः ।
प्रस्तारगतितो भेदास्त्रयोविंशाक्षरे स्थिताः ॥ १२२ ॥
वसुव्योमरसक्ष्माभृद्वस्वग्निवसुभिर्मिताः (८३८८६०८) ।
शेषभेदाः सुधीभिस्तु सूच्याः प्रस्तार्य शास्त्रतः ॥ १२३ ॥

---

१. क. चाक्षरे ।

अथ तत्त्वाक्षरे पूर्वं रामानन्दोऽथ दुर्मिला।
किरीट तु ततः प्रोक्त ततस्तन्वी प्रकीर्तिता ॥ १२४ ॥

ततस्तु माधवीवृत्त तरलान्नयन ततः।
अत्र प्रस्तारभेदेन भेदा षड्भूमियुग्मकैः ॥ १२५ ॥

सप्तर्षिमुनिशास्त्रेन्दु(१६७७७२१६)मिता स्युरपरे पुन ।
गुरूपदेशमार्गेण सूचनीया मनीषिभिः ॥ १२६ ॥

अथ **पञ्चाधिके विंशत्यक्षरे** पूर्वमुच्यते।
कामानन्दस्ततः क्रौञ्चपदा मल्ली ततो भवेत् ॥ १२७ ॥

ततो मणिगण वृत्तमिति वृत्तचतुष्टयम्।
प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नेत्राग्निसिन्धुभि ॥ १२८ ॥

वेदपञ्चेषुवह्निभ्यामपि(३३५५४४३२)स्युरपरेपि च।
छन्द शास्त्रोक्तमार्गेण सूचनीया स्वबुद्धित ॥ १२९ ॥

षड्भिरभ्यधिके विंशत्यक्षरेऽप्यथ गद्यते।
श्रीगोविन्दानन्दसज्ञ वृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ १३० ॥

ततो भुजङ्गपूर्वं तु विजृम्भितमिति स्मृतम्।
अपवाहस्ततो वृत्त मागधी तदनन्तरम् ॥ १३१ ॥

ततश्चान्त्य भवेद् वृत्त कमलाऽनन्तर दलम्।
प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा सम्यग् विभाविताः ॥ १३२ ॥

वेदशास्त्रवसुद्वन्द्वखेन्द्वश्वरससूचिताः। (६७१०८८६४)।
प्रस्तार्य शास्त्रमार्गेणापरे सूच्याः स्वबुद्धित ॥ १३३ ॥

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कीर्तितम्।
यथालाभं वर्णवृत्तमन्यदूह्यं महात्मभिः ॥ १३४ ॥

रसलोचनमुन्यश्वचन्द्रनेत्राब्धिवह्निभिः।
शशिना योजितैरङ्कै(१३४२१७७२६)पिण्डसख्या भवेदिह ॥ १३५ ॥

भेदेष्वेतेषु चाद्यन्तसहितै भेदकल्पनै.।
पञ्चषष्ठ्यधिक नेत्रशतक (२६५) वृत्तमीरितम् ॥ १३६ ॥

द्वितीये खण्डके वर्णवृत्ते सवृत्तमौक्तिके।
वृत्तानुक्रमणी रूपमाद्यं प्रकरण त्विदम् ॥ १३७ ॥

प्रकीर्णकप्रकरण द्वितीयमथ कथ्यते।
प्रस्तारोत्तीर्णवृत्तानि कानिचित्तत्र चक्ष्महे ॥ १३८ ॥

आदौ पिपीडिका तत्र ततस्तु करभः स्मृतः ।
अनन्तर च पणव माला स्यात्तदनन्तरम् ॥ १३९ ॥
द्वितीयाऽथ त्रिभङ्गी स्यात् शालूर तदनन्तरम् ।
इति प्रकीर्णक नाम द्वितीय वृत्तमौक्तिके ॥ १४० ॥
प्रोक्तं **प्रकरण** चाथ तृतीयमिदमुच्यते ।
दण्डकानां प्रकरण क्रमप्राप्त मनोरमम् ॥ १४१ ॥

तत्र–

चण्डवृष्टिप्रयातस्तु प्रथमं परिकीर्तित ।
तत. प्रचितकश्चाथ ततोऽप्यर्णादयो मताः ॥ १४२ ॥
ततस्तु सर्वतोभद्रस्ततश्चाऽशोकमञ्जरी ।
कुसुमस्तबकश्चाथ मत्तमातङ्ग एव च ॥ १४३ ॥
अनङ्गशेखरश्चेति तृतीय परिकीर्तितम् ।
अथार्द्ध**समक** नाम **चतुर्थं** परिकीर्त्यते ॥ १४४ ॥
पुष्पिताग्रा भवेत्तत्र प्रथम वृत्तमुत्तमम् ।
ततश्चैवोपचित्र स्यादथ वेगवती भवेत् ॥ १४५ ॥
हरिणाऽनन्तर चापि प्लुता सपरिकीर्तिता ।
ततश्चापरवक्त्र स्यात् सुन्दरी च ततो मता ॥ १४६ ॥
अथ भद्रविराट् वृत्त तत. केतुमती स्थिता ।
ततस्तु वाङ्मतीवृत्तमथ स्यात् षट्पदावली ॥ १४७ ॥
इत्यर्द्धसमक नाम तुर्य प्रकरण मतम् ।
अथोच्यते **प्रकरण विषमं** वृत्तमौक्तिके ॥ १४८ ॥
पञ्चम यत्र पूर्वं स्याद् उद्गता वृत्तमुत्तमम् ।
ततस्तु सौरभ वृत्त ललित तदनन्तरम् ॥ १४९ ॥
अथ भावस्ततो वक्त्र पथ्यावृत्तमत. स्मृतम् ।
ततस्त्वानुष्टुभ वृत्तमष्टाक्षरतया कृतम् ॥ १५० ॥
इत्थं विषमवृत्ताना प्रोक्त प्रकरण त्विह ।
अथ **षष्ठं प्रकरण वैतालीय** प्रकीर्त्यते ॥ १५१ ॥
वैतालीय प्रथमतस्तत्र वृत्त निगद्यते ।
ततश्चोपच्छन्दसिकमापातलिकमेव च ॥ १५२ ॥

द्विविध नलिनाख्य च ततः स्याद् दक्षिणान्तिका ।
अथोत्तरान्तिका पश्चात् [प्राच्यवृत्तिरुदीरिता ॥ १५३ ॥

उदीच्यवृत्तिस्तत्पश्चात् प्रवृत्तकमतः परम् ।
अथापरान्तिका पश्चा][1]च्चारुहासिन्युदीरिता ॥ १५४ ॥

वैतालीय प्रकरण षष्ठमेतदुदीरितम् ।
यतिप्रकरणं चाथ सप्तमं परिकीर्त्यते ॥ १५५ ॥

यतीना घटन यत्र सोदाहरणमीरितम् ।
अथ **गद्यप्रकरणमष्टम वृत्तमौक्तिके** ॥ १५६ ॥

नानाविधानि गद्यानि गद्यन्ते यत्र लक्षणै ।
तत्र तु प्रथम शुद्ध चूर्णक गद्यमुच्यते ॥ १५७ ॥

अथाऽऽविद्ध चूर्णक तु ललित चूर्णक तत. ।
ततस्तूत्कलिकाप्राय वृत्तगन्धि तत स्मृतम् ॥ १५८ ॥

ग्रन्थान्तरमत चात्र लक्षित गद्यलक्षणे ।
इति गद्यप्रकरणमष्टम परिकीर्तितम् ॥ १५९ ॥

विरुदावलीप्रकरण नवमं चाथ कथ्यते ।

तत्र–

द्विगाद्या च त्रिभङ्ग्यन्ता कलिका नवधा पुरा ॥ १६० ॥

ततस्त्रिभङ्गी कलिका [2]नोधा साऽपि[2] प्रकीर्तिता ।
विदधाद् या द्विपाद्यन्ता सापि षोढा तत स्मृता ॥ १६१ ॥

मुग्धादिका तरुण्यन्ता मध्ये मध्या चतुर्विधा ।
अवान्तरप्रकरण कलिकाया प्रकीर्तितम् ॥ १६२ ॥

अथातो व्यापक चण्डवृत्त विरुदमीरितम् ।
सलक्षण तथा साधारण चेति द्विधैव तत् ॥ १६३ ॥

ततोऽस्य परिभाषा स्यात् तद्भेदाना व्यवस्थिति. ।

तत्र–

पुरुषोत्तमाख्यं प्रथमं ततस्तु तिलकं भवेत् ॥ १६४ ॥

अच्युतस्तु ततः प्रोक्तो वर्द्धितस्तदनन्तरम् ।
ततो रणः समाख्यातस्ततः स्याद् वीरचण्डकम् ॥ १६५ ॥

---

१. [–] कोष्ठगतोंशो क. प्रतौ नोपलभ्यते । २-२. 'नवधा सा' इति सुष्ठु ।

अन्यत्र वीरभद्रः स्यात् ततः शाकः प्रकीर्तितः ।
मातङ्गखेलित पश्चादथोत्पलमुदीरितम् ॥ १६६ ॥
ततो गुणरतिः प्रोक्ता तत. कल्पद्रुमो भवेत् ।
कन्दलश्चाथ कथितस्तत. स्यादपराजितम् ॥ १६७ ॥
नर्त्तन तु ततः प्रोक्त तरत्पूर्वं समस्तकम् ।
वेष्टनाख्य चण्डवृत्त ततश्चास्खलित मतम् ॥ १६८ ॥
अथ पल्लवित पश्चात् समग्र तुरगस्तथा ।
पङ्केरुह ततः प्रोक्त सितकञ्जमतः परम् ॥ १६९ ॥
पाण्डूत्पल ततश्च स्यादिन्दीवरमतः परम् ।
अरुणाम्भोरुहं पश्चादथ फुल्लाम्बुज मतम् ॥ १७० ॥
चम्पक तु तत प्रोक्त वञ्जुल तदनन्तरम् ।
ततः कुन्द समाख्यातमथो बकुलभासुरम् ॥ १७१ ॥
अनन्तर तु बकुलमङ्गलं परिकीर्तितम् ।
मञ्जर्यां कोरकश्चाथ गुच्छः कुसुममेव च ॥ १७२ ॥
अवान्तरमिदं चापि प्रोक्तं प्रकरण त्विह ।
अथ त्रिभङ्गी कलिका दण्डकाख्या प्रकीर्तिता ॥ १७३ ॥
विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा त्रिभङ्गी कलिका तत ।
ततस्तु मिश्रकलिका कथिता वृत्तमौक्तिके ॥ १७४ ॥
अवान्तर प्रकरण तृतीयमतिसुन्दरम् ।
इत्थ सलक्षण चण्डवृत्ताप्रकरण कृतम् ॥ १७५ ॥
ततः साधारणमत चण्डवृत्तमिहोदितम् ।
साधारणमत चैकदेशतः प्रोक्तमत्र हि ॥ १७६ ॥
अवान्तरप्रकरण साधारणमते स्थितम् ।
चतुर्थ विरुदावल्या[1] विज्ञेय कविपण्डितै ॥ १७७ ॥
ततस्त्वत्रैव कलिका ज्ञेया सप्तविभक्तिकी ।
अनन्तर चाक्षमयीकलिका[2] कथिता त्विह ॥ १७८ ॥
ततस्तु सर्वलघुक कलिकाद्वयमीरितम् ।
ततश्च विरुदाना तु युगपल्लक्षण कृतम् ॥ १७९ ॥

---

१. ख. विरुदावल्यो । २. क. कलिका* ।

ततस्तु विरुदावल्याः सम्पूर्णं लक्षणं कृतम् ।
विरुदावलीप्रकरण नवम वृत्तमौक्तिके ॥ १८० ॥

अथ खण्डावली तत्र पूर्वं तामरस भवेत् ।
ततस्तु मञ्जरी नाम भवेत् खण्डावली त्विह ॥ १८१ ॥

खण्डावलीप्रकरण दशम परिकीर्तितम् ।
अथानयोस्तु दोषाणां निरूपणमुदीरितम् ॥ १८२ ॥

एकादश प्रकरणमिदमुक्तमतिस्फुटम् ।
तत. खण्डद्वयस्यापि प्रोक्ताऽनुक्रमणी क्रमात् ॥ १८३ ॥

एतत् प्रकरण चात्र द्वादश परिकीर्तितम् ।
वृत्तानि यत्र गण्यन्ते तथा प्रकरणानि च ॥ १८४ ॥

पूर्वखण्डे षडेवात्र प्रोक्त प्रकरण स्फुटम् ।
द्वितीयखण्डे चाप्यत्र रविसख्यमुदीरितम् ॥ १८५ ॥

अवान्तर प्रकरण चतु सख्य प्रकीर्तितम् ।
सम्भूय चात्र गदित रसेन्दुमितमुत्तमम् ॥ १८६ ॥

उभयो खण्डयोश्चापि सम्भूयैव प्रकाशितम् ।
द्वाविंशति[1]प्रकरणं रुचिर वृत्तमौक्तिके ॥ १८७ ॥

मात्सर्यमुत्सार्य मुदा सदा सहृदयैरिदम् ।
अन्तर्मुखै. प्रकरण विज्ञैरालोक्यता मम ॥ १८८ ॥

इति खण्डद्वयानुक्रमणीप्रकरण द्वादशम् ।१२।

---

१. ख. नेत्रद्वयं ।

ग्रन्थकृत्-प्रशस्तिः

दुस्थीभूतमिम जलाशयमधिस्थित्वा नयान्त क्वचि-
न्मोहान्धीकृतगोव्रजं मनसिजस्फूर्जद्विषज्वालया ।
गर्वाग्निं पदपद्मयुग्मवलनैर्निर्वाप्य सर्वात्मना,
त्व निर्वासय मन्मनोह्रदगत दुर्वासनाकालियम् ॥ १ ॥

यद्दोर्मण्डलचण्डमन्दरतटीनिष्पेषणालोडिता,
दैत्याम्भोनिधयो विनाशमगमन्निस्सारभूता भुवि ।
कालिन्दीतटगन्धसिन्धुरममु लीलाशतैर्वन्धुरै[1]-
राभीरीनिकुरुम्बभीतिशमन[2] वन्दे गभीराशयम् ॥ २ ॥

नि कामतुच्छीकृतकामधाम-
श्चव्यस्फुरन्नाम जगल्ललाम ।
उद्दामचिन्ताशतदामबद्ध ,
श्रीराम मामुद्धर वामबुद्धिम् ॥ ३ ॥

श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
अक्षरवृत्तविधायकखण्डस्सम्पूर्णतामगमत् ॥ ४ ॥

लक्ष्मीनाथसुभट्टवर्य्य इति यो वासिष्ठवशोद्भव-
स्तत्सूनु. कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भु वि ।
बालाना सुखबोधहेतुमतुल सच्छन्दसा मन्दिरं,
स्पष्टार्थं वरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रन्थ मुदा निर्ममे ॥ ५ ॥

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैक्रमेऽब्दे,
सितदलकलितेऽस्मिन्कार्त्तिके पौर्णमास्याम् ।
अतिविमलमतिः श्रीचन्द्रमौलिर्वितेने,
रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिक वृत्तपूर्वम् ॥ ६ ॥

छन्द शास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रापतिं पितरम्[3] ।
श्रीमल्लक्ष्मीनाथ सकलागमपारग वन्दे ॥ ७ ॥

---

१. ख. बन्धुरा । २. ख. भातिशमनं । ३. ख. पिगन्तरं ।

याते दिव सुतनये विनयोपपन्ने,
श्रीचन्द्रशेखरकवौ किल तत्प्रबन्ध. ।
विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
पूर्णीकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ।। ८ ।।

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
जीयादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ।। ९ ।।

श्रीः

इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्दःशास्त्र[1]परमाचार्य-सकलोपनिषद्रहस्यार्णव-कर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कवि[2]-चन्द्रशेखरभट्टविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्त्तिके वर्णवृत्ताख्यो द्वितीयः परिच्छेदः ।२।

श्रीः

समाप्तश्चायं वार्त्तिके द्वितीयः खण्डः[3] ।

श्रीकृष्णायानन्तशक्तये नमः । श्रीरस्तु ।

समाप्तमिदं श्रीवृत्तमौक्तिकं नाम पिङ्गलवार्त्तिकम् ।

शुभमस्तु ।

संवत् १६६० समये श्रावनवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने अर्गलपुरनगरे लालमनिमिश्रेण । शुभम् । इदं ग्रन्थसंख्या ३८५०।।



१ ख. छन्द.शास्त्रे । २. ख. कविशेखरश्री । ३. ख. द्वितीयखण्डः ।

छन्दःशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टप्रणीतो

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारः

प्रथमो विश्रामः

श्रीगणेशाय नमः

प्रणम्य जगदाधार विश्वरूपिणमीश्वरम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
अन्त सार समालोच्य नष्टोद्दिष्टादिदुष्करम् ।
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन सुकरीक्रियतेतराम् ॥ २ ॥

अथानन्तर छान्दसिकपरीक्षार्थं कौतुकार्थञ्च मात्राणामुद्दिष्टमुच्यते । तत्र त्रयोदशविभेदभिन्नेषु षट्कलप्रस्तारगणेषु इद कातिम रूपम् इति लिखित्वा पृष्ठ रूपमुद्दिष्ट प्रथमप्रत्ययस्वरूप, तत्प्रकारमाह सार्द्धेन श्लोकेन ।

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उर्वरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

दद्यादिति । तस्मिन् लिखिते रूपे पूर्वयुगाङ्कान् दद्यात् । तत्र च लघोरुपर्येव गुरोस्तु उभयत –उपर्यधश्चेत्यर्थ । अथ पश्चादन्त्याङ्के–शेषाङ्के गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कान् विलुम्पेत् । तथा कृते सति उर्वरितैश्च अङ्कै मात्राणामुद्दिष्ट जानीयात् । एतदुक्त भवति । षट्कलप्रस्तारे तावदेको गुरु , द्वौ लघू, एको गुरुश्च एवरूपो गण ऽ।।ऽ कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते, तदाकार गण लिखित्वा पूर्वयुगेन समाना: क्रमादङ्का दातव्या २ त. १३ [त]त्रादिकलाया प्रथमोऽङ्को देय', तत पूर्वयुगाङ्काभावादुत्सर्गसिद्धो द्वितीयोऽङ्कस्तदधः । तदनन्तर पूर्वाङ्कद्वयमेकीकृत्य तत्सख्यकोऽङ्कोऽग्रे देय । एव च पूर्वयुगसमानाङ्कास्त्रिपञ्चादिर्देय इति पूर्वयुगक्रमार्थ । अत्र गुरोरुपर्यधश्चाङ्को देयो द्विकलत्वात् । एतच्च गुरुशीर्षपदाल्लभ्यते । एवं तेषु अङ्केषु अन्त्याङ्के–चरमाङ्के त्रयोदशरूपे १३ यावन्तो गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कास्तान् विलुम्पेत् । ते च नव तथा च त्रयोदशात्मनि चरमेऽङ्के नवाङ्के लुप्ते सति उर्वरितैरङ्कैश्चतुर्भिश्चतुर्थं स्थान लिखित्वा तत्समानाङ्कस्थानको यद्गण इति जानीयात् । तदेतन्मात्राणामुद्दिष्टम् । उद्दिष्टस्य गणस्य स्थानमात्रानयनादिति भाव. ।

एव चाष्टभेदविभिन्नो पञ्चकलप्रस्तारे—द्वौ लघू, एको गुरु', एको लघुश्च इत्येवरूपो गण. ।।ऽ। कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु द्वितीयलघोरुपरि द्वितीयाङ्कस्ततो गुरोरुपरि तृतीयाङ्कस्तदध. पञ्चमाङ्कस्तदनु लघोरुपरि अष्टमाङ्कश्च देयः। अतोऽन्त्याङ्के–अष्टमाङ्के ८ गुरुशिरोऽङ्कस्तृतीयोऽङ्को ३ लोप्योऽवशिष्टः पञ्चमाङ्को भवति। तस्मात् पञ्चमो गणस्तादृशो भवतीति एव जानीयादिति।

तथा च पञ्चभेदे चतुष्कलप्रस्तारे जगणः ।ऽ। कुत्रास्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्कस्तदनु गुरोरुपरि द्वितीयाङ्कस्तदधस्तृतीयाङ्क शेषो लघोरुपरि पञ्चमाङ्को देय । अत. शेषे पञ्चमाङ्के ५ गुरुशिरोऽङ्को द्वितीयो लोप्य । अवशिष्टस्तृतीयाऽङ्को भवति। तस्मात् तृतीयस्थाने जगणो वर्त्तत इति जानीयादिति।

एवञ्च सप्ताष्टकलादिकेषु समस्तेषु प्रस्तारेषु प्रथमे शेषे च गणे शङ्कैव नावतरीतर्त्तीति। द्वितीयस्थानादारभ्य उपान्त्यस्थानपर्यन्त प्रश्ने कृते प्रोक्तप्रकारेण उद्दिष्ट बोद्धव्यमतिविशुद्धबुद्धिभिरित्यास्ता विस्तारेण इत्युपरम्यते। इति शिवम्।

श्रीनागराजाय नमः

प्रस्तारविस्तारणकौतुकेन प्रस्तारयन्त पतगाधिराजम्।
मध्येसमुद्र प्रविशन्तमन्तर्भजामि हेतु भुजगाधिराजम्॥

अथ मात्रा-वर्णोद्दिष्टौ वक्तव्ये तत्र प्रस्तारमन्तरेणोद्दिष्टादीनामशक्यकथनत्वात् समस्तप्रस्तारस्य वसुधावलयेऽप्यसमावेशात् केचन प्रस्तारा. प्रस्तुतोपयोगिनो लिख्यन्ते। एव अन्येपि षड्विंशत्यक्षरपर्यन्त प्रस्ताराः बोद्धव्याः सुबुद्धिभि'।

द्विकलप्रस्तारो यथा–

ऽ	१
।।	२

त्रिकलप्रस्तारो यथा–

।ऽ	१
ऽ।	२
।।।	३

चतुष्कलप्रस्तारो यथा–

ऽऽ	१
।।ऽ	२
।ऽ।	३
ऽ।।	४
।।।।	५

पञ्चकलप्रस्तारो यथा-

। ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ	२
। । । ऽ	३
ऽ ऽ ।	४
। । ऽ ।	५
। ऽ । ।	६
ऽ । । ।	७
। । । । ।	८

षट्कलप्रस्तारो यथा—

ऽ ऽ ऽ	१
। । ऽ ऽ	२
। ऽ । ऽ	३
ऽ । । ऽ	४
। । । । ऽ	५
। ऽ ऽ ।	६
ऽ । ऽ ।	७
। । । ऽ ।	८
ऽ ऽ । ।	९
। । ऽ । ।	१०
। ऽ । । ।	११
ऽ । । । ।	१२
। । । । । ।	१३

मात्राणामुद्दिष्ट द्विलोप्यः

१	३
।	ऽ
	३

मात्राणामुद्दिष्ट प्रथमप्रत्ययः

१	३	५	८
ऽ	।	।	ऽ
२			१३

लोपो नवाङ्क ९

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वार्त्तिके दुष्करोद्धारे मात्राप्रस्तारो-द्दिष्टगणसमुद्धारो नाम प्रथमो विश्रामः ॥ १ ॥

द्वितीयो विश्रामः

अथ मात्राणामदृष्ट रूप नष्ट द्वितीयप्रत्ययस्वरूपम् । तच्च षट्कलप्रस्तारे प्रस्तारान्तरे वा अमुकस्थाने कीदृश इति प्रश्नोत्तरमध्यर्द्धेन श्लोकद्वयेनाह—

अथ मात्राणां नष्ट यददृष्टं पृच्छ्यते रूपम् ॥ ५२ ॥
यत्कलकप्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्तः ।
दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्कं लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
उर्वरितोर्वरितानामङ्कानां यत्र लभ्यते भागः ।
परमात्रां च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

अथेति । पूर्वार्द्धं अवतारिकयैव व्याख्यातप्रायम् ॥ ५२ ॥

यत्कलकप्रस्तारः कृत तत्कलकप्रस्तारकृते तावन्त एव लघवः कार्याः । चकारोऽवधारणार्थ. । तत्र च दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशा-दीन् । यथा— । । । । । । तत पृष्ठाङ्क अन्त्ये–शेषे लोपयेत् ॥ ५३ ॥

एव चोर्वरितोर्वरिताना अवशिष्टानामङ्काना यत्र यत्राङ्के भागो लभ्यते स स एवाङ्कः शेषाङ्के लोपयितु शक्यते । सः पुनस्तदध स्थितकल परमात्रां च गृहीत्वा गुरुतामुपागच्छेत्—गुरुर्भवतीत्यर्थ । गुरुत्वे चाऽध स्थितकलाया अपि सग्रहोऽर्थाद् भवतीति । अन्यथा लघुगुरुरित्येव ब्रूयादिति ॥ ५४ ॥

अनेन व्याख्यानेनाव्युत्पन्नतमः शिष्यो बोधयितु न शक्यत इति स्फुटीकृत्य सोदाहरणं विलिख्यते । यथा—

षट्कलप्रस्तारे द्वितीयस्थाने कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, पूर्वोक्ताङ्कसहिताः लघुरूपाः षट्कला. स्थापनीया. । पूर्वयुगलसदृशा अङ्का देया । ततः शेषाङ्के त्रयोदशे १३ पृष्ठाङ्कलोपे द्वितीयाङ्क २ लोपे सति एकादशावशिष्टा ११ भवन्ति । तत्राव्यवहिताष्टलोपे शेषकलाद्वयेन एको गुरुर्भवति । अवशिष्टाङ्क त्रय भवति । तत्र च पञ्चलोपाशक्यत्वात् परमात्रा गृहीत्वा गुरुर्भवतीत्युक्तत्वाच्च त्रिलोपे ३ तृतीयचतुर्थाभ्यामपरो गुरुर्भवति । शेषाङ्को नावशिष्यत इति । प्रथम लघुद्वयमेव । तथा चादौ लघुद्वयमनन्तर गुरुद्वयमित्येतादृशो । । ऽ ऽ द्वितीयो गणो भवतीत्यर्थं । एवमन्यत्रापि ।

यद्यप्याद्यन्तयोस्सन्देहाभावस्तथापि प्रथमे कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, गुरु-त्रयात्मक प्रथम गण लिखित्वा तत्रोपर्यध. क्रमेण पूर्वयुगाङ्का एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-

त्रयोदशाकारा देया: । यथा— ऽ ऽ ऽ तत्र शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि १३ गुरुशीर्षस्था ये अङ्का एकत्र्यष्टरूपास्तैर्जातो द्वादशाङ्को लोप्यस्तथा च लुप्ते तस्मिन् प्रथमो गणस्तादृशो भवतीति वेदितव्यम् ।

अथ च त्रयोदशस्थाने कीदृशो गण: ? इति प्रश्ने, पूर्व[व]देव लघूनामुपर्यङ्कान् दत्त्वा शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि पृष्ठाङ्कलोपे अवशिष्टाङ्काभावान्न गुरुकल्पना । अतो लघव एवावशिष्यन्ते इति । । । । । ।

चतुर्दशादिप्रश्ने चाङ्कलोपासम्भवादसत्यत्वमात्र वाच्यम् । तदधिकप्रस्ताराभावादित्थ च मात्राप्रस्तारे सर्वत्रैव शेषाङ्कसमसख्यागणा भवन्तीत्यपि निश्चीयते । इति गुरुमुखादवगतार्थो लिखित इति शिवम् ।

मात्राणा नष्टम्

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
		।	।	ऽ	ऽ

द्वितीय: प्रत्यय:

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्द:शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-
भट्टारकरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-
प्रस्तारनष्टगणसमुद्धारो नाम द्वितीयो विश्राम: ॥ २ ॥

तृतीयो विश्रामः

अथ तथैव क्रमप्राप्तं वर्णानामुद्दिष्टमाह—द्विगुणानिति श्लोकेन ।

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीत ॥ ५५ ॥

वर्णानामुपरिप्रसृतानां इति अध्याहार्यम् । तथा च तेषामुपरि द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा ततो लघुशिरःस्थितानङ्कान् सयोज्येति शेषः । तथा च त-सयुक्तं अङ्क एकेनाधिकेन अङ्केन पूरयित्वा-एकीकृत्य वर्णोद्दिष्ट विजानीत शिष्या इति शेष. ॥ ५५ ॥

एवमुक्त भवति । एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिप्रस्तारेषु प्रतिप्रस्तारमाद्यभेदे लघ्वाभावादुद्देशः सर्वथा नास्त्येव । अतो द्वितीयभेदादारभ्य उपान्त्यभेदपर्यन्त उद्देशो भवतीति तत्प्रकारबोधनार्थं शिष्यानभिमुखीकृत्य प्रस्तारा निर्द्धारपूर्वक वर्णोद्दिष्टमुच्यते । तथा च—

एकाक्षरप्रस्तारे भेदद्वय भवति । तत्र प्रथमभेदस्य उद्देशासम्भवात् । द्वितीयभेदे च एकलघुरूपे द्वितीयाक्षराभावादेकमेवाङ्क तस्मिन् दत्त्वा तदुपरि एकमङ्कमधिक दत्त्वा द्वितीयभेदमुद्दिशेत् । इत्येकाक्षरप्रस्तार ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे भेदचतुष्टय ४ भवति । तत्र द्वितीये एको लघुरेकोगुरुरित्येवं भेदे । ऽ, प्रथमे लघावेकोऽङ्को, द्वितीये गुरौ द्वितीयोऽङ्को दातव्य , तदनु लघोरुपरि एकमधिकं दत्त्वा द्वितीयभेदं उद्दिशेत् । एव तृतीये एको गुरुरेको लघुरित्येवं भेदे ऽ ।, प्रथमे गुरावेकोऽङ्को, द्वितीये लघौ द्वितीयोऽङ्कोऽन्त्यस्ततो लघोरुपरि स्थिते द्वितीयेऽङ्के एकमधिक दत्त्वा तृतीय भेदमुद्दिशेत् । एवमेव लघुद्वयात्मके ॥ चतुर्थे भेदे प्रथमे लघौ प्रथमाऽङ्क दत्त्वा, द्वितीयेऽपि लघौ द्वितीयमङ्क विधाय तयोरुपरिस्थयो प्रथमद्वितीयाङ्कयोर्मेलने कृते जाते त्रिके एकाङ्क अधिक दत्त्वा तस्य चतुष्टय सम्पाद्य चतुर्थं भेदमुद्दिशेदिति । इति द्व्यक्षरप्रस्तार ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे तु भेदाष्टक ८ भवति । तत्र एको लघुः द्वौ गुरू चेति गण कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते पृष्ठ गण । ऽ ऽ लिखित्वा तत्र प्रथमे लघौ प्रथमाङ्को दातव्य , द्वितीये गुरौ तद्द्विगुणो द्वितीयोऽङ्को दातव्य , तृतीये गुरौ तद्द्विगुणश्चतुर्थाऽङ्को दातव्य. । अत्र सर्वत्र प्रथमादिपदेन वर्णो लक्ष्यते, ततो लघोरुपरि योऽङ्कस्तस्मिन्नेकमधिक दत्त्वा तेन सह एकीकृत्य द्व्यङ्को भवति तस्मात् द्वितीयो यगणाख्याक्षरप्रस्तारे गणो भवतीत्येव वेदितव्यम् ।

एव चात्रैव प्रथम लघुद्वयं ततो गुरुरित्येव गणः ।।ऽ कस्मिन् स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकार गण १, २ लिखित्वा प्रथमे लघावेकाङ्क दत्त्वा १, द्वितीयेऽपि तद्द्विगुण द्वयङ्क २ विधाय, तृतीये गुरौ तद्द्विगुण चतुर्थमङ्कं कृत्वा ४, ततो लघोरुपरिस्थयोः प्रथमद्वितीयाङ्कयो' सयोगकृतत्रय भवति ३, तस्मिन्नेकेऽधिके दत्ते सति चतुरङ्को भवति ४ । अतश्चतुर्थस्सगणाख्यस्त्र्यक्षरप्रस्तारे गणो भवतीति ज्ञेयम् । एवमन्यत्र । इति त्र्यक्षरप्रस्तार ।

अथ चतुरक्षरप्रस्तारे षोडश भेदा १६ भवन्ति । तत्र द्वौ गुरू, एको लघुरेको गुरुश्चेत्येवरूपो गण कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते, त पृष्ठ गण लिखित्वा ऽऽ।ऽ तत्र प्रथमगुरोरुपरि प्रथमाङ्को १ देय, ततो द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, ततश्च द्वितीयगुरोरुपरि द्वितीयोऽङ्को देय, तृतीयो लघौ चतुरङ्कः, चतुर्थो गुरावष्टमाङ्को देयः ८। इति द्वैगुण्यम् । ततो लघोरुपरिश्चतुर्थोऽङ्कस्त एकेन पूरयित्वा तस्य पञ्चत्व विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति विज्ञातव्यम् । इत्युद्दिष्ट वर्णप्रस्तारे प्रथमप्रत्ययस्वरूप विजानीत शिष्या इति ।

अत्र सर्वत्र गणशब्देन तत्तद्भेदो लक्ष्यते । तथा चात्रैव प्रथम लघुत्रयमनन्तर एको गुरुरित्येवमाकारको गणः कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकार गण लिखित्वा ।।।ऽ तत्र प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्क दत्त्वा, ततोऽपि द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, तदनु द्वितीयलघोरुपरि तद्द्विगुण द्वितीयमङ्कं विलिख्य, तृतीये लघौ तद्द्विगुण चतुरङ्क विधाय, चतुर्थे गुरावष्टमाङ्क तद्द्विगुण दत्त्वा, एव द्विगुणत्व सम्पाद्यते । लघुशिर स्थितान् एक-द्वि-चतुरङ्कान् एकीकृत्य जातं सप्ताङ्कं ७, एकेन ग्रन्थिस्थेन पूरयित्वा तस्याष्टत्व विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति ज्ञेयम् । इत्युद्दिष्टं विस्पष्ट विजानीत विज्ञाः। इति चतुरक्षरप्रस्तार. ।

किञ्च—

विपरीतप्रस्तारोद्दिष्टे क्रियमाणे लघुशिर स्थितान् अङ्कान् इत्यत्र गुरुशिर-स्थितान् इति पाठस्तत्रोद्दिष्टप्रकार. सुलभ. । एवञ्च सर्वप्रत्ययेषु पाठविपर्ययः कार्य इत्युपदिश्यते । एवञ्च ते सर्वेऽपि प्रत्यया विपरीता भवन्तीति रहस्यान्तरम् । एवमन्येष्वपि प्रस्तारेषु तत्तद्गणस्थानावस्थान बोद्धव्यमिति विशदबुद्धिभि. । इति संक्षेप. । इति सर्वमवदातम् ।

एकाक्षरप्रस्तारो यथा–

ऽ १

। २

द्व्यक्षरप्रस्तारो यथा-

ऽ	ऽ	१
।	ऽ	२
ऽ	।	३
।	।	४

त्र्यक्षरप्रस्तारो यथा-

ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	३
।	।	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	५
।	ऽ	।	६
ऽ	।	।	७
।	।	।	८

चतुरक्षरप्रस्तारो यथा-

ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	१
।	ऽ	ऽ	ऽ	२
ऽ	।	ऽ	ऽ	३
।	।	ऽ	ऽ	४
ऽ	ऽ	।	ऽ	५
।	ऽ	।	ऽ	६
ऽ	।	।	ऽ	७
।	।	।	ऽ	८
ऽ	ऽ	ऽ	।	६
।	ऽ	ऽ	।	१०
ऽ	।	ऽ	।	११
।	।	ऽ	।	१२
ऽ	ऽ	।	।	१३
।	ऽ	।	।	१४
ऽ	।	।	।	१५
।	।	।	।	१६

वर्णाना उद्दिष्ट तथैव प्रथम· ।

[इति] श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारप्रस्तारे विस्तारप्रकार. ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्द.शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मी-
नाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करो-
द्धारे वर्णप्रस्तारोद्दिष्टगणसमुद्धारो नाम
तृतीयो विश्रामः ॥ ३ ॥



चतुर्थो विश्रामः

अथ क्रमप्राप्त तथैव वर्णाना नष्टमाह—'नष्टे पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

नष्टे पृष्ठे भागः कर्त्तव्यः पृष्ठसख्यायाः ।
समभागे ल कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् ।। ५६ ।।

नष्टे–अदृष्टरूपे पृष्ठे सति पृष्ठसख्याया –पृष्ठाया. सख्याया भाग. कर्त्तव्यः–विधेय । तत्र समभागे सति ल–लघु कुर्यात्, विषमेऽवशिष्टे सतीति शेषः । एक दत्त्वा तस्यापि भाग कृत्वा गुरुकमानयेत्–गुरु लिखेदित्यर्थः । एव कृते सति प्रकृतप्रस्तारस्थितादृष्टरूपगणस्थानसिद्धिर्भवतीति भावः ।। ५६ ।।

इदमत्रानुसन्धेयम्—

अत्र तावद् भागो नाम नष्टाङ्कस्य यावत्सख्यापूरणम् । तथाहि सोदाहरणमुच्यते । यथा–

चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो गण किमाकार. ? इति प्रश्ने, षडङ्कभाग कृत्वा तदर्द्धं त्रय ३ स्थापनीयम् । अयं च समो भाग., उभयकोटिसाम्यात् । अथ एको १ गुरुर्लेख्य. । अनन्तर अवशिष्टस्य त्रयस्य विषमत्वात् एक १ दत्त्वा चतुष्टयं सम्पाद्य तस्य भाग कृत्वा द्वय २ स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्य, ततो द्वयोर्भाग कृत्वा एक १ स्थापनीयम् । तदा एको १ लघुर्लेख्यः । ततोऽप्यवशिष्टे विषमे एक १ दत्त्वा द्वित्व सम्पाद्य तस्यापि भाग कृत्वा एकमेव स्थापनीयम् । तदा एको गुरुर्लेख्य. । एवञ्च प्रथम लघुरनन्तर गुरुस्ततो लघुरन्तरे गुरुरेवमाकारश्चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो । ऽ । ऽ गण इति वेदितव्यम् ।

तथा चात्रैव सप्तमस्थाने किमाकारको गणः ? इति प्रश्ने, सप्तमस्य विषमत्वात् पूर्वमेको गुरुर्लेख्य । तत सप्तसु एक दत्त्वा अष्टौ कृत्वा विभागः कार्यस्तेन अवशिष्टाश्चत्वार । अय च समो भागस्तत एको १ लघुर्लेख्यः । पुनश्चतुष्टयस्यावशिष्टस्य भागं कृत्वा द्वय सम स्थापनीयम् । अत एको लघुरेव लेख्यः । अनन्तर अवशिष्टस्य एकाङ्कस्य विषमीभूतत्वाद् गुरुरेव लेख्य. । एवञ्च प्रथम गुरुरनन्तर लघुस्ततोऽपि लघुरेव चरमे च गुरुरेव ऽ । । ऽ आकारश्चतुरक्षर- ... रे सप्तमो गण इति च विज्ञेयम् । एव पुन. पुनर्भागे समे विभजनीये लघु- ... । विषमे एक दत्त्वा भागे कृते गुरुर्ज्ञातव्यः । प्रकृते च लघावधिको गण

आयातीति षड्विंशतिवर्णप्रस्तारपर्यन्तं विषमस्थलेषु एकैक दत्त्वा गुरुर्लेख्य इति सक्षेपः । सर्वमिदमतिमञ्जुलवञ्जुलवर्णनष्टमिति शिवम् ।

वर्णानां नष्टम्

। ऽ । ऽ	६
ऽ । । ऽ	७

तथैव द्वितीयप्रत्ययः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-
मणिसाहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्यश्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारवर्णप्रस्तार-
नष्टगणसमुद्धारो नाम चतुर्थो विश्रामः ॥ ४ ॥

पञ्चमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपवर्णमेरुमाह—श्लोकद्वयेन कोष्ठानिति ।

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णैः कुर्यादाद्यन्तयोः पुन ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥
वर्णमेरुरय सर्वगुर्वादिगणवेदकम् ।
प्रस्तारसख्याज्ञानञ्च फल तस्योच्यते बुधैः ॥ ५८ ॥

तत्र च क्रमाद् एकाधिकान् कोष्ठान् वर्णैरक्षरैरुपलक्षितान्, पुनराद्यन्तयोरेकाङ्क च कुर्याद् विलिख्य रचयेत् । ततश्च मध्यस्थकोष्ठकस्योपरि स्थिताङ्कद्वयैरेकीकृतैरित्यर्थ । अन्यान् शून्यान् कोष्ठान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

एव कृते सत्यय वर्णमेरुर्मेरुरिव भवतीति शेषः । तस्यैवप्रकारेण विरचितस्य मेरोर्बुधैः–अधीतछन्द शास्त्रै भाष्यवार्त्तिकतात्पर्याभिज्ञैरिति यावत् । सर्वगुरुरादौ येषामेवविधाना गणाना वेदक–ज्ञापक अवबोधकमिति, यावत् प्रस्तार सख्याज्ञान च यतो भवतीति उभयमपि फलविशेषणम् । तथा च तत्तत्पक्तिस्थ-कोष्ठगत-तत्तद्वर्णप्रस्तारसख्याव्यापक फल उच्यते–प्रकाश्यत इत्यर्थ ॥५८॥

अस्य निर्गलितार्थस्त्वेव समुल्लसति—

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरपर्यन्त स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरव, कत्येकादिगुरव, कति सर्वलघव, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते वर्णमेरुणा प्रत्युत्तर देयम् । तत्र एकाक्षरादिक्रमेण यावदिष्ट कोष्ठकान् विरचय्य, आदावन्ते च कोष्ठके प्रथमाङ्को दातव्य । ततो मध्यस्थकोष्ठके च तदीयशिर कोष्ठकद्वयाङ्क श्रृङ्खलाबन्धन्यायेन एकीकृत्य पर शून्य कोष्ठक एकीकृताङ्के पूरयेत् । एवं अन्यत्रापि पूरणीये कोष्ठके कोष्ठानामुपरिस्थितकोष्ठद्वयाङ्कमुक्तबन्धन्यायेन पूरण विधेय इति सक्षेप । एव पूरितेपु कोष्ठेषु एकाक्षरप्रस्तारे आदावेकगुर्वात्मकस्तदन्ते च एकलघ्वात्मकः सकेत इति ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे तु सर्वगुरुरादौ त्रिगुरु-द्विगुरुर्वारिभावात् स्थानद्वयेप्येकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

त्र्यक्षरप्रस्तारे चादौ सर्वगुरुस्त्रिगुरोरन्यत्रासम्भवात्, स्थानत्रये द्विगुरु., स्थानत्रये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

चतुरक्षरप्रस्तारेपि सर्वगुरुरादौ च चतुर्गुरोरन्यत्राभावात्, स्थानचतुष्के त्रिगुरु, स्थानपट्के द्विगुरु, स्थानचतुष्टये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

एवमनया प्रणालिकया सुधीभिः षड्विंशत्यक्षरप्रस्तारपर्यन्त अङ्कसञ्चार-प्रकार. समुन्नेय ।

किञ्चात्र तत्तत्पङ्क्तिकोष्ठगततत्तद्वर्णप्रस्तारपिण्डसख्यापि तत्तत्पङ्क्ति-स्थिताङ्कैः समुल्लसतीति वर्णमेरुरय मेरुरिवादिभागसकुचितान्तविस्ताररूपो विभातीति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णमेरुलिखनक्रमप्रकार प्रकाशित इति शिवम् ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरय वर्णप्रस्तारस्यातिसुन्दर ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

वर्णमेरुर्यथा तृतीयः

१	१

१	२	१

१	३	३	१

१	४	६	४	१

१	५	१०	१०	५	१

१	६	१५	२०	१५	६	१

१	७	२१	३५	३५	२१	७	१

१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१

१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१

नववर्णमेरुरयम् । एव अग्रेपि समुन्नेय सुधीभिः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकाक्षराद् षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारमेरूद्धारो नाम पञ्चमो विश्रामः ॥५॥

षष्ठो विश्रामः

अथ मेरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपां वर्णानां पताकामाह—श्लोकत्रयेण दत्त्वेत्यादि ।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्के योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै भृतस्ततः पक्तिसञ्चारः ॥५६॥
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्कभरण त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत् ॥६०॥
प्रस्तारसख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेय विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

तत्र पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-चतुरष्टादीन् अङ्कान् प्रथम दत्त्वा पूर्वाङ्कैरेकद्वया-दिभिरपरान् त्र्यादीन् अङ्कान् योजयेत् विभृयात् भरणं कुर्यादिति यावत् । किञ्च, य एवाङ्क पूर्वं भृत -पूरित , ततस्तस्मादेव अङ्कात् वै-नियमेन पक्तिसञ्चारः विधेय इति शेष ॥ ५६ ॥

अङ्का इति । नियमान्तर च, येन-अङ्केन पूर्वमङ्का भृता -पूरिता तमङ्क पुनर्भरणं त्यजेत्, प्रयोजनाभावात् । किञ्च, अङ्कश्च पूर्वं य सिद्धस्तमङ्क पुनर्न साधयेत्-न स्थापयेदित्यर्थ ॥ ६० ॥

पताकाप्रयोजनमाह—

प्रस्तारेति । एवं प्रस्तारसख्यया अत्राङ्कविस्तारकल्पना भवतीति शेष । एतादृशी चेय पताका विशिष्य-विशिष्टा कृत्वा, तु-अवधारणे, सर्वगुर्वादिसर्व-लघ्वन्तवेदिका-ज्ञापिका विज्ञातव्यैवेति वाक्यार्थ ॥ ६१ ॥

एवमुक्त भवति—

भो शिष्याः! उद्दिष्टसदृशा अङ्का देयाः । पूर्वाङ्कैः परभरण कुर्यात्, पूरयितव्य. । पक्ते प्रधानाङ्कस्य पश्चात् स्थिता पूर्वाङ्का भरण पूरणम् । एकत्राधिकस्य अङ्कस्य प्राप्तौ सा पक्तिरेव तदङ्कभरणे त्यज्यत इत्यवधेयम् ।

एवञ्च मेरुक्तप्रस्तारसंख्यया पताकाङ्का वर्द्धयितव्याः । तथाहि—

चतुर्वर्णप्रस्तारे एक-द्वि-चतुरष्टाङ्का देया. । यथा—१ । २ । ४ । ८ । अत्रैकाङ्कस्य पूर्वाङ्कासम्भवात् द्वितीयाङ्कादारभ्य पक्ति पूर्यते । तत्र

पूर्वाङ्का एकाङ्क एव प्रस्तारादिभूत. सर्वगुरुरूप', तस्य परे द्वितीयादय. ते च अव्यवहितानतिक्रमेण पूर्यन्ते । तथा च एकेन द्वाभ्या मिलित्वा त्र्यङ्को भवति सः द्वितीयाङ्काधस्तात् स्थापनीय. । तत एकेन अष्टभिश्च मिलित्वा नवाङ्को भवति स पञ्चमाङ्काध स्थात् स्थापनीय. । तत पक्तिपरित्याग: । मेरौ त्रिगुरूणा रूपाणा चतु सख्यादर्शनादिति भाव । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे प्रथम रूपं सर्वगुरु ब्रूयात् । द्वि-त्रि-पञ्च-नवस्थानस्थानि चतूरूपाणि त्रिगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कचतुष्टयं साधयित्वा, ततश्चतुरङ्कस्य अधस्तात् पूरित-पक्तिस्था पराङ्कमिलिता षडङ्का देया: । तत्र प्रथम पूरित एवेति त्यज्यते । ततो द्वाभ्या चतुर्भिर्मिलित्वा षष्ठोऽङ्को ६ भवति, स चतुरङ्काधस्तात् स्थापनीय । ततः त्रिभि. चतुर्भि: सम्भूय सप्तमोऽङ्को भवति, स च षडङ्काधस्तात् स्थापनीय । एव च पञ्चभिश्चतुर्भिर्मिलित्वा जायमानो नवाङ्को न स्थापनीयः । 'अङ्कश्च पूर्वं य. सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत्' इत्युक्तत्वात् सिद्धस्य साधनायोगादिति युक्ति-सिद्धत्वाच्च इति । ततो द्वाभ्यां अष्टभिर्मिलित्वा दशाङ्को भवति, स च सप्ताङ्का-धस्तात् स्थापनीयः । ततश्च त्रिभिरष्टभिर्मिलित्वा एकादशाङ्को भवति, स च दशाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत. पञ्चभिरष्टभिर्मिलित्वा त्रयोदशाङ्को भवति, स चान्त एकादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय इति । तत पङ्क्तिपरित्याग । मेरु-सख्यापरिमाणदर्शनादिति पूर्ववद् हेतुरिति भाव. । एतेन च चतुर्वर्णप्रस्तारे चतु -षट्-सप्त-एकादश-त्रयोदशस्थानस्थानि षड्रूपाणि द्विगुरूणि जानीयादिति । एवमङ्कषट्क पूर्ववदेव साधयित्वा, ततोऽष्टाङ्काधस्तात् पूरितपक्तिस्था पराङ्क-मि लिताश्चत्वारोऽङ्का देया: तथा च चतुर्भिरष्टभि सम्भूय द्वादशाङ्को भवति, स चाष्टमाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत षड्भिरष्टभिश्च सभूय चतुर्दशाङ्को भवति, स तु द्वादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय । तत सप्तभिरष्टभिश्च सभूय पञ्चदशाङ्को भवति, सोऽपि चतुर्दशाङ्काधस्तात् स्थापनीय । ततोऽपि पक्तिपरित्याग । मेरावेकगुरूणा चतुस्सख्यादर्शनादिति भाव । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे अष्टमद्वादश-चतुर्दश-पञ्चदशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरूणि ब्रूयादिति । एव अङ्कचतुष्टय साधयित्वा, ततो दशभिरष्टभिस्तु प्रस्ताराधिकाङ्कसभवान्नष्टादशाङ्कसञ्चार । तर्हि षोडशाङ्कः सर्वलघुरूप' १६ क्वास्तामित्यपेक्षायामष्टमाङ्काग्रे दीयता सर्व-लघुज्ञानार्थमिति सम्प्रदाय । तथा च प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो सदृशन्यायेन अवस्थान भवतीति ज्ञेयम् ।

पताकाप्रयोजन तु मेरौ चतुर्वर्णप्रस्तारस्य एक रूप चतुर्गुरूपलक्षितम् । सर्वगुर्वात्मक चत्वारि त्रिगुरूणि रूपाणि, षड् द्विगुरूणि रूपाणि, चत्वारि एक-गुरूणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

तत्र षोडशभेदाभिन्ने चतुर्वर्णप्रस्तारे कतमस्थाने सर्वगुर्वात्मक, कतमस्थाने च त्रिगुर्वात्मक, कतरस्थाने द्विगुर्वात्मक, कतमस्थाने च एकगुर्वात्मक, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते पताकया उत्तर दातव्यमिति ।

पताकाज्ञानफलमिति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णपताकालिखनप्रकार प्रकाशित इति दिगुपदर्शनम् । उत्तरत्र च षड्विंशतिवर्णपर्यन्त पताकाविरचनप्रकार समुन्नेय सुधीभि, ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभि. प्रपञ्च्यत इति शिवम् ।

अत्र चतुर्वर्णपताकाया तु सिद्धाङ्कान् पिङ्गलोद्योताख्यायां प्राकृतपिङ्गलसूत्रवृत्तौ श्रीचन्द्रशेखरः श्लोकाभ्या सजग्राह । यथा—

एक-द्वि-त्रि-शराङ्काश्च वेदर्त्तु-मुनि-दिक्-शिवाः ।
कामाष्ट-सूर्य-मनवस्तिथि-क्षोणीशसम्मिता ॥१॥
सिद्धाङ्काः स्युश्चतुर्वर्णपताकानुक्रमे स्फुटम् ।
पञ्चकोष्ठे लिखेदङ्कान् शेषानेव लिखेदिति ॥ २ ॥

शेषान् प्रस्तारान्तरपताकाङ्कान् एव क्रमात् कोष्ठवर्द्धनपूर्वकक्रमात् लिखेत्-विन्यसेदित्यर्थ ।

अत्र अङ्कविन्यासक्रमस्तु श्रीगुरुमुखादेवावगन्तव्य इति सर्वं मङ्गलम् ।

चतुर्वर्णपताका यथा प्रत्ययकाख्यः—

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-मणि—साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे वर्णपताकाङ्कोद्धारो नाम षष्ठो विश्रामः ॥६॥

सप्तमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपमेवात्र [मात्रा]मेरुमाह—एकाधिककोष्ठानामित्यादिना सार्द्धेन श्लोकचतुष्टयेन—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पंक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्क पूर्वभागे तु ॥६२॥
एकाङ्कमयुक्पक्तेः समपंक्ते. पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पक्तिप्रपूर्तिः स्यात् ॥६३॥
आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थैः ।
उपरिस्थितेन कोष्ठं विषमायां पूरयेत् पक्तौ ॥६४॥
समपक्तौ कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।
उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिसंस्थैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥६५॥
मात्रामेरुरयं प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति ।

तत्र क्रमादेकैकेनाधिकेन कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठाना मध्ये द्वे द्वे पक्ती समे-समाने कार्ये-लिखनीये इत्यर्थः । तासां-सर्वासा पक्तीना अन्तिमकोष्ठेषु एकाङ्क-प्रथमाङ्क यावदित्थं दद्यात् इत्यन्वयः । अथ च सर्वासा पंक्तीना पूर्वभागे तु अङ्कविन्यास उच्यत इति शेषः ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमिति । तत्रायुक्पक्ते –विषमपक्तेरादिमकोष्ठे–प्रथमकोष्ठे एकाङ्क–प्रथमाङ्कं समपक्तेरादिमकोष्ठे–प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्क एकान्तरित प्रथमाङ्क यावत् पक्तिप्रपूर्त्ति –पूरण स्यात्–भवति तावद् दद्यात्–विन्यसेद् इत्यर्थ. ॥ ६३ ॥

तदेवाह—

आद्याङ्केनेति । ततश्च सर्वत्र विषमायां पङ्क्तौ उपरिस्थितेन आद्याङ्केन–प्रथमाङ्केन वामभागस्थैः तदीयै. शीर्षाङ्कैश्च कोष्ठशून्यमिति शेष प्रपूरयेत्–साङ्क कुर्यादित्यर्थः ॥ ६४ ॥

किञ्च–

समपङ्क्ताविति । समपङ्क्तौ चाद्याङ्कं अपहाय–त्यक्त्वा उपरिस्थिताङ्कै.–तदुपरिसस्थै. वामभागस्थितैरङ्कैश्च शून्यानां कोष्ठानां पूरणं विधेयमिति शेषः ॥ ६५ ॥

उक्त मात्रामेरुमुपसहरति—मात्रामेरुरयमित्यर्द्धेन ।

भो शिष्या. ! पूर्वोक्तफलभागय मात्रामेरुरिति प्रकारेणोक्तः । यथा, वर्णमेरो फल तथा मात्रामेरोरपीत्यर्थः ।

अत्रैतदुक्त भवति । द्विमात्रादि-निरवधिकमात्रापक्तिपर्यन्त स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरव, कत्येकादिगुरव, कति सर्वलघव, कति वा प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते मात्रामेरुणा प्रत्युत्तर देयम् ।

तत्र च क्रमेणैव एकैकेनाधिके कोष्ठेनोपलक्षिताना कोष्ठकाना मध्ये द्वे द्वे कोष्ठे अर्थात् पङ्क्ती समे-सदृशे लिखनीये । तत्र प्रथमे कोष्ठद्वय । तथा द्वितीयेऽपि कोष्ठद्वयमेव । तृतीये कोष्ठत्रय । चतुर्थेऽपि कोष्ठत्रयमेव । पञ्चमे चत्वारि । षष्ठेऽपि चत्वार्येव । अत्र कोष्ठपदेन कोष्ठाङ्क पक्तिश्च लक्ष्यते, उपचारात् एककलायाः प्रस्तारो नास्तीति प्रथम न कोष्ठगणनाकल्पना । अत कोष्ठद्वयात्मिकैव आदौ पक्तिरिति प्रथम इत्युक्तिरिति समञ्जसम् ।

एवञ्च कोष्ठपक्तिषु अधोधः क्रमेणाङ्कान् लिखेत् । सर्वत्र च शेषकोष्ठे प्रथमाङ्को देय । तत्र तत्र च कोष्ठद्वयमध्ये आदावुपरिकोष्ठे च एकरूपोऽङ्को देय । उपरिस्थितस्योपरिस्थिताङ्काभावाद् उत्सर्गसिद्धैकरूपाङ्केन सहित कृत्वा द्वितीयकोष्ठे द्वितीयाङ्को देय इति । तृतीयकोष्ठे तु उपरिस्थिताङ्कसहित कृत्वा अर्थात् शिर स्थेनाङ्कद्वयेन मिलित कृत्वा, अतस्त्रिरूपोऽङ्कस्समायाति । तथा चार्थात् शिर स्थेनाङ्केन सह प्रथमो द्वितीयेऽध.स्थे मेलनीय ।

यद्वा, आद्यद्वयमधो मिलतीय तु प्रक्रिया । तथा च प्रथमकोष्ठद्वयस्य पूरितत्वात् द्वितीयादारभ्याङ्का दातव्या. । तत्र द्वितीये द्वय, तृतीये पुनरेक, चतुर्थे त्रयम्, पञ्चमे पुनरेक, षष्ठे चत्वारि, सप्तमे पुनरेक, अष्टमे पञ्च, नवमे पुनरेक, दशमे षट्, एकादशे पुनरेक, द्वादशे सप्तमेति प्रक्रियया अङ्का देया । एवमाद्ये । तदध कोष्ठेऽन्तकोष्ठे च पूर्णे मध्यस्थशून्यकोष्ठे चैषा प्रक्रिया पूरणीया । कोष्ठशिर -कोष्ठस्थाङ्क परकोष्ठस्थाङ्कौ द्वावङ्कौ चैकीकृत्य मध्यकोष्ठे-शून्यकोष्ठे मेलितोऽङ्को देय. । एव सर्वत्र निरवधिकत्वात् यावदित्थ कोष्ठक विरच्य मात्रामेरुः पूर्वोक्तरूप कर्त्तव्य इति ।

अयं त्रयोदशमात्रामेरुलिखनक्रमप्रकार. श्रीगुरुमुखादवगत प्रकाशित इत्युपरम्यते ।

अत्रेदं अनुसन्धेयम् । समविषमरूपा द्वि-द्वि-मात्रादिप्रस्तारमारभ्य निरवधिकमात्राप्रस्तारपर्यन्त स्वस्वप्रस्तारे कति समकले लघव., कति च गुरव, कति

विषमकले लघव, कति च गुरव, कति वोभयत्र प्रस्तारसख्येति प्रश्ने कृते मात्रा-मेरुणा प्रत्युत्तर देयम् ।

तत्र द्विकले समप्रस्तारे एकः सर्वगुरु, द्वितीयो द्विकलात्मक. सर्वलघुरिति द्विभेद प्रस्तारसकेत ।

त्रिकले विषमप्रस्तारे द्वावेककलकावेकगुरुकौ चान्ते त्रिकलात्मक सर्वलघु-रिति द्विभेद. प्रस्तारसकेत ।

समकले चतुष्कलप्रस्तारे चादौ द्विगुरुः स्थानत्रये च एकगुरुर्द्विकलश्चान्ते चतुष्कलात्मक सर्वलघुरिति पञ्चभेदः प्रस्तारसकेत ।

विषमकले पञ्चकलप्रस्तारे त्रयो गणा एकलघव, चत्वारो गणास्त्रिलघव, स्थानत्रये द्विगुरु., स्थानचतुष्टये चैकगुरुरन्ते च पञ्चकलात्मकः सर्वलघु-रित्यष्टभेदः प्रस्तारसकेतः ।

समकले षट्कलप्रस्तारे आदौ सर्वगुरु., षड्गणा द्विकलाः, पञ्चगणाश्चतु-ष्कला, स्थानषट्के द्विगुरु, स्थानपञ्चके चैकगुरुरन्ते च षट्कलात्मक. सर्वलघुरिति त्रयोदशभेद. प्रस्तारसङ्केत इति ।

एवमनेन प्रकारक्रमेण यावदित्थं मात्रामेर्वभीष्टमात्राप्रस्तारे लघुगुर्वादि-प्रकारप्रक्रिया अवगन्तव्या ।

अथवा पूर्वरूपप्रश्ने यावदित्थ यावत्कलकप्रस्तारमात्रामेरु कोष्ठकैर्विरच्य समकलप्रस्तारे वामत क्रमेण द्वौ चत्वार षडष्टावनेन प्रकारेण गुरुज्ञानम् । विषमकलप्रस्तारे तु एक-त्रि-पञ्च-सप्तानेन प्रकारक्रमेण लघुज्ञानम् । अन्ते च सर्वत्र लघुरिति । उभयत्रापि एक द्वौ त्रय पञ्चेत्याद्यनया सारण्या दक्षिणतो व्युत्क्रमेण शृङ्खलाबन्धन्यायेन तत्तत्प्रभेदज्ञानम् ।

किञ्चात्र वामभागे सर्वत्रैकैकाङ्कस्थले सर्वगुरुज्ञान भवतीति विज्ञातव्य-मित्युपदेशरहस्यम् । इति शिवम् । सर्वत्राऽत्र च दक्षिणभागे शृङ्खलाबन्धन्यायेन अग्रिमाङ्कपिण्डोत्पत्तिर्भवतीति रहस्यान्तरमिति च ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।
कृतो मेरुरयं मात्राप्रस्तारस्यातिदुर्गम. ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

तथैव तृतीयप्रत्ययः मात्रामेरुः । मात्रामेरुर्यथा--

वि० १	।	१					
स० २	ऽ	१	१				
वि० ३	।ऽ	२	१				
स० ४	ऽऽ	१	३	१			
वि० ५	।ऽऽ	३	४	१			
स० ६	ऽऽऽ	१	६	५	१		
वि०	।ऽऽऽ	४	१०	६	१		
स०	ऽऽऽऽ	१	१०	१५	७	१	
वि०	।ऽऽऽऽ	५	२०	२१	८	१	
स०	ऽऽऽऽऽ	१	१५	३५	२८	९	१
वि०	।ऽऽ ऽऽ	६	३५	५६	३६	१०	१

एकादशमात्रामेरुरयम् । एव अग्रेऽपि समुन्नेय. ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारमेरूद्धारो नाम सप्तमो विश्रामः ॥७॥

अष्टमो विश्रामः

अथ मेरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपामेव मात्राणा पताकामाह—अथेत्यादि अर्द्धेन श्लोकद्वयेन—

अथ मात्रापताकापि कथ्यते कवितुष्टये ॥६६॥
दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्त्तेन लोपयेदन्त्ये ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पक्तिसञ्चार ॥६७॥
एकैकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।
द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पक्तिर्द्वित्र्यादिबोधिनी ॥६८॥

अथेति । मात्रामेरुकथनानन्तर मात्राणां पताकापि कवितुष्टये-कवीना सन्तोषार्थं कथ्यते-उच्यत इत्यर्थ ॥ ६६ ॥

तत्प्रकारमाह—

दत्वेति । तत्र उद्दिष्टवत्-उद्देशक्रमवत् अङ्कान्-एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् दत्वा-लिखित्वा, ततो वामावर्त्तेन-वामभागत अन्त्ये-त्रयोदशाङ्के लोपयेत् पूर्वमङ्कमिति शेष । अवशिष्टो वै योऽङ्क लोपे सतीति शेष । ततोऽङ्कात् पक्तिसञ्चारो भवेदिति-जानीयादित्यर्थ. ॥६७॥

अपराङ्कलोपेन प्रकारमाह—

एकैकाङ्कस्येति । एकैकाङ्कस्य लोपे तु अन्त्य इति शेषः । एकगुरोर्ज्ञान भवेत् । द्विव्यादीना अङ्काना विलोपे तु पक्ति द्वित्र्यादिगुरुबोधिनी भवतीति शेष ॥ ६८ ॥

अयमर्थ —उद्दिष्टसदृशा अङ्का स्थाप्या । ते यथा—१, २, ३, ५, ८, १३ । एकः द्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशाद्या. । ततो वामावर्त्तेन पर लोपयेत्-सर्वान्तिम अङ्क तत्पूर्वेणाङ्केन लोपयेदित्यर्थः । तत एकेनाङ्केन अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति एकगुरुरूपज्ञान भवति । द्वाभ्या अन्तिमाङ्के लोपे सति द्विगुरुरूपज्ञान भवति । त्रिभिरन्तिमाङ्कलोपे सति त्रिगुरुरूपज्ञान भवतीत्यादि ज्ञेयम् । एव कृते मात्रापताका सिद्ध्यति ।

तत्र षट्कलप्रस्तारे यथा—उद्दिष्टसमाना अङ्का एकद्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशरूपाः स्थापनीया. । ततः सर्वापेक्षया परस्त्रयोदशाङ्क तत्पूर्वोऽष्टमाङ्क, तेनाष्टमाङ्केन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अवशिष्टा. पञ्च । तस्य पञ्चमाङ्कस्य

तत्पूर्वं त्रिविद्यमानत्वात् अष्टमाङ्कलोपात् परकलया सह गुरुभावाच्च पञ्चमाङ्काद् एकगुरुपक्तिक्रमो विधेय इति । तत्र च पञ्चमस्थाने आदौ चतुर्लघुकमन्ते चैक-गुरुकमेव ।।।। ऽ आकार रूपमस्तीति ज्ञानपताकाफलम् । एवमन्यत्रापि गुरुभावो ज्ञात० ।

तथा पञ्चभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अष्टावशिष्यन्ते, ते तु पञ्चाधो लेख्य । तथा त्रिभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति दशावशिष्यन्ते ते च अष्टाधो लेख्या । तथा द्वाभ्यां द्वाभ्या त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकादशावशिष्यन्ते तेऽपि दशाधो लेख्य. । तथा एकेन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वादशावशिष्यन्ते त एकादशाधो लेख्या । अत्र सर्वत्र पूर्व एव हेतुरुन्नेय ।

अतश्च मेरावेकगुरुकचतुर्लघुकरूपगुरुस्थानानि प्रस्तारगत्या पञ्चैव भवन्तीति नाग्रे पक्तिसञ्चार. । एतेन षट्कलप्रस्तारे पञ्चमाष्टमदशमैकादश-द्वादशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरुकानि ब्रूयादिति । एव अङ्कपञ्चमके एक-गुरुकमुक्तम् ।

अथ द्विगुरूणि रूपाणि उच्यन्ते—तत्र द्वाभ्यामङ्काभ्या अन्तिमाङ्कलोपे कृते सति द्विगुरुक रूपमिति । पञ्चाष्टभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति भागाभावात् तद्वामावर्त्तस्थैस्त्रिभिस्तदग्रस्थैरष्टभिश्च जातैरेकादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति द्वावशिष्येते, द्वयोस्तत्पूर्वत्र छिद्यमानत्वात् । तत्रैकादशाङ्कलोपात् पर-कलया सह गुरुभावाच्च द्वितीया मारभ्य द्विगुरुकपक्तिसचारो भवतीति । तथा च द्वितीयस्थाने प्रथम द्विलघुक ततो द्विगुरुक ।। ऽऽ एवमाकारक रूप-मस्तीति पूर्ववदेव पताकाफलमुदेतीति ।

एवमन्यत्रापि प्रस्तारान्तरे गुरुभावोऽवगन्तव्य । तथा च द्वाभ्या अष्ट-भिश्च जातैर्दशभि त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति त्रयोऽवशिष्यन्ते, ते द्वयधो लेख्या । तत एकेन अष्टभिश्च जातैर्नवभि त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति चत्वारो-ऽवशिष्यन्ते, ते च अधो लेख्या. । तत पञ्चभिस्त्रिभिश्च जातैरष्टभिस्त्रयोदशाका-वयवलोपाद् अवशिष्ट. पञ्चमाङ्को वृत्त एवेति न स्थाप्यते । 'अङ्कश्च पूर्वं य. सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेदिति ।' वर्णपताकातो अनुवृत्तित्वादिति । तत पञ्चभि-र्द्वाभ्या च जातो सप्तभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति सप्तावशिष्यन्ते, ते तु षडधो लेख्या. । द्वित्रिलोप पञ्चमात्मको वृत्त एवेति न स्थापनीय, अनुवृत्तसिद्धत्यादि-निषिद्धत्वादिति । तत एकेन त्रिभिश्च जातैश्चतुर्भिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति नवावशिष्यन्ते, तेऽपि सप्ताधो लेख्या । एषु च पूर्ववद् हेतुरुन्नेय । अतश्च मेरौ द्विगुरुक-द्विलघुकरूपस्थानानि प्रस्तारगत्या षडेव भवतीति नाग्रे पक्तिसञ्चार ।

एतेन षट्कलप्रस्तारे द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-षष्ठ-सप्तम-नवमस्थानस्थानि रूपाणि द्विगुरूणि ब्रूयादिति ।

तथा च त्रिलोपे त्रिगुरुक रूप भवतीति, त्रिपञ्चाष्टलोपे भागो नास्तीति, द्वि-त्रि-पञ्चलोपोऽप्यष्टात्मको वृत्त एवेति, पञ्च-द्वयेकलोपोऽप्यष्टलोपात्मको वृत्त एवेति । एक-द्वि-त्रिलोपोपि वृत्त इति प्रकारेण जायमाना अङ्का न स्थापनीया प्रकृतप्रस्तारसमाप्तेरिति भाव ।

ननु प्रथम रूप सर्व गुर्वात्मक कुत्रास्तीत्यपेक्षाया एक-त्र्यष्टभिर्मिलित्वा जातैर्द्वादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकोऽवशिष्ट, स आद्ये स्थाने त्रिगुर्वात्मक रूपं भवतीति विज्ञातव्यमिति । चरम रूप तु अष्टमाङ्काग्रे उद्दिष्टाङ्काऽऽकारत्वेन स्थापितमेवास्ति । तथा चात्रापि प्रथमाङ्कचरमाङ्कयो पूर्वोक्तन्यायेनाऽवस्थानं भवतीति वेदितव्यम् ।

पताकाप्रयोजन तु मेरौ षट्कलप्रस्तारस्यैक प्रथम रूप त्रिगुरूपलक्षित सर्वगुर्वात्मक, षड्द्विगुरूणि रूपाणि, पञ्चैकगुरूणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

तत्र त्रयोदशभेदभिन्ने षट्कलप्रस्तारे कुत्र स्थाने सर्वगुर्वात्मक, कतमस्थाने द्विगुर्वात्मक, कतरस्थाने चैकगुर्वात्मक, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक, कति वा प्रस्तार-सख्येति प्रश्ने कृते पताकयोत्तर दातव्यमिति पताकाज्ञानफलमिति । श्रीगुरुमुखादवगतो मात्रापताकालिखनप्रकार प्रकाशित । एवमन्यत्रापि निरवधिकमात्राप्रस्तारेषु पञ्चसप्ताष्टकलाना यथाक्रम मात्रापताकाविरचनप्रकार समुन्नेयः सुधीभि, ग्रन्थविस्तारभयान्नेहास्माभि प्रपञ्चित इति शिवम् ।

अत्रापि **पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ** सार्द्धेन श्लोकेन षण्मात्रापताकाया सिद्धाङ्का सगृहीता । यथा–

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुन्यङ्काश्च त्रयस्तथा ।
> पञ्चाष्ट-दिक्-शिवेनाः स्यु तथाष्टौ च त्रयोदश ।।
> षण्मात्रिकापताकायामङ्कानुक्रमणी स्मृता ।

इति । इहापि च पंक्त्या विन्यासक्रमो गुरुमुखादवगन्तव्य ।

किञ्च–

> एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुनि-वह्नि-शरस्तथा ।
> वसु-दिग्-रुद्र-सूर्याष्टक्रमादङ्कान् समालिखेत् ।।
> पञ्चमात्रापताकायामङ्कानुक्रमणी मता ।

इति सार्द्धेन श्लोकेन सूत्रवृत्तौ पञ्चमात्रापताकायां सिद्धाङ्कानुक्रमणिका सगृहीता इति ।

अत्राप्यङ्कविन्यासक्रमः पूर्ववदेव । इत्थं सप्ताष्टनवसु कलासु अङ्कान् समुन्नयेत् । दिङ्मात्रमुक्तमस्माभिः ग्रन्थविस्तरशङ्कया इति सर्वमनवद्यम् ।

पञ्चमात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८
	३		८	
	४		१०	
	६		११	
	७		१२	

षण्मात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८	१३
	३		८		
	४		१०		
	६		११		
	७		१२		
	९				

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिक-चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-पताकोद्धारो नामाष्टमो विश्रामः ॥ ८ ॥

नवमो विश्रामः

अथ वृत्तजातिसमार्द्धसमविषमपद्यस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारमाह 'पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

> पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णास्तथा मात्राः ।
> वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते ।। ६९ ।।

तत्राऽमुकसख्याक्षरप्रस्तारेऽमुके छन्दसि कति गुरव, कति च लघव इति प्रश्ने कृते गुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारप्रक्रिया प्रकाश्यते ।

तत्रोद्भावितचतुष्पदे वर्णप्रस्तारच्छन्दसि समवृत्ते पृष्ठे सति वर्णान्- तत्रस्थ वर्णान् गुरुलघुरूपतया समुदायमापन्नान् मात्रा.-कला· कृत्वा, तथा गुरुलघुरूपसमुदायतयैव कलारूपतामापद्येत्यर्थः । तत कलाया इति जात्या एकवचन । अतः कलानां मध्यत इत्यवधेयम् । वर्णाङ्केन पृष्ठस्य वृत्तस्य वर्णसख्याङ्केन लोपे लोपावशिष्टकलासख्यया गुरवोऽवशिष्यन्ते, तत्तद्वृत्तगतगुरून् जानीयादित्यर्थ. । गुरुज्ञाने सति परिशेषादवशिष्टवृत्ताक्षरसख्यया लघूनपि जानीयादित्यर्थ. ।। ६९ ।।

अत्र समवृत्तस्यैकपादज्ञानेनैव चतुर्णामपि पादानामुट्टवणिका विधाय लिखनेन गुरुलघुज्ञान भवतीत्यनुसन्धेयं सुधीभिः । यथा—

समवृत्ते एकादशाक्षरप्रस्तारे षोडशमात्रात्मके रथोद्धतावृत्तपादे 'रात्परैन्नर-लगै रथोद्धता' इत्यत्र ऽ। ऽ, ।।।, ऽ। ऽ, । ऽ वर्णा ११, मात्रा. १६ षोडशकलासु पिण्डरूपासु संख्यातासु वृत्तस्यैकादशवर्णसख्यायां लुप्तायां सत्यामवशिष्ट-पञ्चगुरव षड्लघव परिशेपाद् विज्ञेया। इति समवृत्तस्थगुरुलघुज्ञानप्रकार । एवं पादचतुष्टयेऽपि पादसाम्यात् विंशतिर्गुरव चतुर्विंशतिर्लघवश्च भवन्तीति ज्ञेयम् । एव प्रस्तारान्तरेऽपि समवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानमूह्य सुधीभिरित्युपदिश्यते ।

एवञ्च षर्ड्त्रिंशदक्षरायाम्—

> गोकुलनारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
> यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरि पायाद् ।।

इत्यस्यां देहीसमाख्याया गाथाजातौ सप्तपञ्चाशत् सख्यातासु पिण्डरूपासु कलासु षर्ड्त्रिंशदक्षरलोपे कृते सति एकविंशतिगुरवोऽवशिष्यन्ते । पारिशोष्यात् पञ्चदश लघवोऽपीति च ज्ञेयम् । इति गाथाजातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार. ।

[illegible] यथा—

SII SSS IIS SSS ISI SSS

IIS SII SSI III SSI SSS

[illegible] ३० मात्रा, उत्तरार्द्धे २७ मात्रा । मात्रा ५७, अक्षर ३६ ।

[illegible] जातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीय इत्युपदेश ।

[illegible] प्रथम-तृतीयविषमपादे द्वितीयचतुर्थसमपादे च—

सहचरि कथयामि ते रहस्य,
न [illegible] तद्गृह व्रजेथाः ।
[illegible] विष-विषमागिर. सखीना,
[illegible] पुरस्सरन्ति ॥

[illegible] छन्दस्य[ष्ट]षष्टिकलात्मके ६८ पिण्डे छन्दोक्षर-[illegible] ५० लुम्पेत् । एवं लोपे सति अष्टादश १८ गुरवोऽव-[illegible] २२ तत्र वर्तन्त इत्यर्द्धसमवृत्तस्य-[illegible] ।

[illegible] यथा—

III III SIS ISS [१२]

III ISI ISI SIS S [१३]

III III SIS ISS [१२]

III ISI ISI SIS S [१३]

उट्टवणिका यथा—

IIS ISI IIS I [१०]

III IIS ISI S [१०]

SII III SII S [१०]

IIS ISI IIS ISI S [१३]

मात्रा ५७ अक्षर ४३ ।

एवमन्येष्वपि विषमवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीयः सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तरभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति सर्वं चतुरस्रम् ।

वृत्तस्थगुरुलघूनां युगपज्ज्ञान न जायते येषाम् ।
तेषां तदवगमार्थे सुकरोपायो मया रचितः ॥ १ ॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे वृत्तजातिसमार्द्ध-समविषमसमस्तप्रस्तारेषु तत्तद्वृत्तस्थगुरुलघुसंख्याज्ञान-प्रकारसमुद्धारो नाम नवमो विश्रामः ॥ ९ ॥

दशमो विश्रामः

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपां वर्णमर्कटीमाह—'मर्कटी लिख्यते' इत्यादिना श्लोकषट्केन—

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसंख्यात पङ्क्ती रचय षट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरायां तु द्विगुणानक्षरसंख्येषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपक्तिस्थितैरङ्कैर्विभाव्य परपक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्थपक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
पूरयेत् षष्ठपञ्चम्यावर्द्धैस्तुर्याङ्कसम्भवैः ।
एकीकृत्य चतुर्थस्थ-पञ्चमस्थाङ्ककान् सुधीः ॥ ७३ ॥

कुर्यात् तृतीयपक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेय पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोपि ।
प्रस्तारस्य षडेते ज्ञायन्ते पंक्तितः क्रमतः ॥ ७५ ॥

तत्र एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिवर्णवृत्तप्रस्तारेषु तत्तद्वर्णवृत्तप्रस्तारे कति कति प्रभेदा, कियन्त्य कियन्त्यो मात्रा., कियन्त कियन्तो वर्णा, कति कति गुरव., कति कति च लघव. ? इति महाप्रश्ने कृते, वर्णमर्कटिकया वक्ष्यमाण-स्वरूपया प्रत्युत्तर देयमिति ।

वर्णमर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

मर्कटीति । भो शिष्य ! वर्णप्रस्तारस्य एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कृतस्येति शेष । अतिदुर्गमा-अतिदुष्करा मर्कटीव मर्कटी-तन्तुजालैरिव विरचिता अङ्कजालपक्तिस्तावल्लिख्यते-विरच्यत इति प्रतिज्ञा । तत्र वा स्वेच्छया अक्षर-सख्यात-कोष्ठ रचय तथा षट्सख्याविशिष्टा पक्तीश्च रचय-कुरु इत्यर्थ ॥७०॥

अथ प्रथमा वृत्तपक्ति साधयति—

प्रथमायामिति । तत्र प्रथमाया-प्रथमपक्तौ वृत्तपक्काविति यावत् सर्वकोष्ठेषु पूर्वविरचितेपु आद्यादीन्-प्रथमादीन् एकद्वित्र्यादीन् अङ्कान् १ २ ३ यावदित्थ दद्यात्-विन्यसेत् । एव कृते प्रथमवृत्तपक्ति सिद्धयति ।

अथ द्वितीया प्रभेदपक्ति साधयति—

अपरायामिति । चकार-आनन्तर्यार्थ । तत अपराया तु द्वितीयाया प्रभेद-पक्कावित्यर्थ । अक्षरसख्येपु-तत्प्रस्ताराक्षरसख्येषु तेष्वेव विन्यस्तेषु कोष्ठेषु द्विगुणान्-द्विचतुरष्टादिक्रमेण द्विगुणानङ्कान् २ ४ ८ यावदित्थमित्यस्य सर्व-त्रानुवृत्ति, दद्यात् इति पूर्वेणैव अन्वय ॥ ७१ ॥ एव कृते द्वितीयाप्रभेदपक्ति सिद्धयति ।

अथ क्रमप्राप्तामपि तृतीया मात्रापक्तिमुल्लघ्य तन्मूलभूता चतुर्थी वर्ण-पक्ति साधयति—

आदिपक्तिस्थितैरिति । आदिपक्तिस्थितै-प्रथमपक्तिस्थितै वृत्तपक्तिस्थितै-रेकद्वित्र्यादिभिरङ्कै परपक्तिगान्-द्वितीयपक्तिस्थितान् द्विचतुरष्टादिक्रमेण स्थितानङ्कान् विभाव्य-गुणयित्वा, ततस्तद्गुणितै-द्वयष्टचतुर्विंशत्यादिभिरङ्कै २ ८ २४ चतुर्थपक्तिस्थकोष्ठकान् पूरयेदित्यन्वय । अपि एवार्थे । अवि-शिष्टानि पूरयेदेवेत्यर्थः । ७२ ॥ एव कृते चतुर्थी वर्णपक्ति. सिद्धयति ।

अथ षष्ठ-पञ्चमपङ्क्त्योः पूरणोपायमुपदिशति—

पूरयेदिति । षष्ठपञ्चम्यौ पङ्क्ती कर्मीभूते तुर्याङ्कसम्भवैः-चतुर्थ्यां पङ्क्ति-स्थिताङ्कोत्पन्नैरर्द्धैरेकचतुर्द्वादशादिभिरङ्कै १ ४ १२ पूरयेत् । एवं कृते षष्ठपञ्चम्यौ गुरुलघुपङ्क्ती सिद्धयतः । अत्र पङ्क्त्योर्व्यत्ययः छन्दोऽनुरोधेन कृतः, फलतस्तु न कश्चिद् विशेषोऽङ्कसाम्यादिति पङ्क्तिद्वयं सिद्धम् ।

अथोर्वरिता तृतीया मात्रापङ्क्तिं साधयति—

एकीकृत्येति उत्तरार्द्धपूर्वार्द्धाभ्याम् । तत्र सुधी—अङ्कमेलनकुशलो गणकः चतुर्थपङ्क्तिस्थितान् द्वयष्टचतुर्विंशत्यादिकान् अङ्कान् पञ्चमपङ्क्तिस्थितान् एकचतुर्द्वादशादिकानङ्कांश्च, अत्र चकारोऽध्याहार्यः, एकीकृत्य—मेलयित्वा त्रि-द्वादश-षट्त्रिंशदादिरूपतामापाद्येति यावत् उर्वरितान्-तृतीयपङ्क्तिस्थितकोष्ठकानपि त्रि-द्वादश-षट्त्रिंशदादिरूपैर्मेलितैरङ्कै ३ १२. ३६ पूरितान् कुर्यादि-त्यन्वयः । अत्राप्यपि एवार्थः । अविचारितं पूरितान् कुर्यादेवेत्यर्थः । एवं कृते तृतीयामात्रापङ्क्तिः सिद्धयति ।

फलितार्थमाह— परमार्द्धेन 'वर्णानां' इति ।

सोऽयं पूर्वोक्तप्रकारेण घटिता वर्णानां मर्कटीव मर्कटी—अङ्कजालरूपिणी पिङ्गलेन—श्रीनागराजेन प्रकाशिता—प्रकटीकृता ॥ ७४ ॥

एवं विरचनप्रकारेण पङ्क्तिषट्कं साधयित्वा वर्णमर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्तं वृत्तानि—एकाक्षरादीनि 'एकवचनं तु जात्यभिप्रायेण' भेदः—प्रभेदः वृत्तानां प्रभेदा इत्यर्थः । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः । मात्रा—तत्तद्-वृत्तमात्रा, वर्णाः-तत्तद्वृत्तवर्णाः, गुरव – तत्तद्वृत्तगुरवः, तथा च लघवोऽपि—तत्तद्वृत्तलघव इत्यर्थः । प्रस्तारस्येति सम्बन्धे षष्ठी । एते वृत्तादयः षट्-षट्-संख्याविशिष्टाः पङ्क्तितः—षट्पङ्क्तितः क्रमतः—क्रमाद् ज्ञायते—हृदयङ्गमता आपद्यन्त इत्यर्थः ॥ ७५ ॥

श्रीलक्ष्मीनाथकृतो मर्कटिकायाः प्रकाशोऽयम् ।
तिष्ठतु बुधजनकण्ठे वरमुक्ताहारभूषणप्रख्यः ॥

अस्याः स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् । इत्यलं पल्लवेनेति ।

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमषष्ठस्थितान् विद्वान् ।
कुर्याच्चतुर्थपङ्क्ति पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥
वृत्त प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरू तथा ।
एते षट्पङ्क्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥
नष्टोद्दिष्ट यद्वन् मेरुद्वितय तथा पताका च ।
मर्कटिकापि च तद्वत् कौतुकहेतोर्निबद्धयते तज्ज्ञैः ॥ ८६ ॥

तत्र च एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारेषु च तत्तज्जातिप्रस्तारे कति कति प्रभेदा, कियन्त्य. कियन्त्यो मात्रा, कियन्तः कियन्तो वर्णा., कति कति लघव, कति कति गुरवः ? इति महाप्रश्ने कृते मात्रामर्कटिकया वक्ष्यमाणस्वरूपया प्रत्युत्तर दातव्यमिति मात्रामर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

कोष्ठानिति । तत्र-तावन्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो -मात्रामर्कटीसिद्धयर्थं पङ्क्ति-षट्क यथा स्यात्तथा मात्रासम्मितान्-मात्राभिः परिमितान् मात्राणा सख्यया सयुक्तानिति यावत् कोष्ठान् कुर्यात्-विरचयेदित्यर्थं । तेषु-कोष्ठेषु आदिपङ्क्तौ-प्रथमपङ्क्तौ वृत्तपङ्क्तौ इति यावत् द्वयादीन्-द्वितीयादीन् द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-पञ्चम-षष्ठादीनङ्कान् २ ३ ४ ५ ६ इत्यादीन् क्रमेण यावदित्थ प्रथम दद्यात्-विन्यसेत् । किं कृत्वा? अथ चेत्यर्थ. । सर्वकोष्ठेषु-षट्स्वपि कोष्ठेषु आद्याङ्क-प्रथमाङ्क त्यक्त्वा-परित्यज्य । अत्र सर्वकोष्ठेषु प्रथमाङ्कत्यागो न सर्वथा सर्व-कोष्ठत्यागपर, किन्तु षष्ठगुरुप्रथमपङ्क्तिकोष्ठत्यागपर इति प्रतिभाति । तत्र गुरोरभावादेवेति ब्रूमः । अतश्च सम्प्रदायात् पञ्चसु कोष्ठेषु प्रथमाङ्कविन्यास कर्त्तव्य । अन्यथा वक्ष्यमाणाङ्कविन्यासभङ्गापत्तेरिति भाव. ॥ ७६ ॥

एव अङ्कविन्यासे कृते सति प्रथमा वृत्तपङ्क्ति सिद्धयति ॥ १ ॥

अथ द्वितीया प्रभेदपङ्क्ति साधयति—

दद्यादिति । अथेति-प्रथम पङ्क्तिसिद्धयनन्तर पक्षपङ्क्तावपि-द्वितीय-पङ्क्तावपि आद्याङ्क-प्रथमाङ्क त्यक्त्वा-परित्यज्य, प्रथमाङ्कस्य पूर्वाङ्काभावात् द्वितीयकोष्ठादारभ्य प्रथमाङ्कशिरस्थ प्रथमाङ्क गृहीत्वा पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान् उद्देशक्रमानुसारेण एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् अङ्कान् १, २, ३, ५, ८, १३ शृङ्खलाबन्धन्यायेन क्रमतो यावदित्थ दद्यात्-विन्यसेदित्यर्थ ।

एवं अङ्कविन्यासे कृते सति द्वितीयाप्रभेदपङ्क्ति सिद्धयति ।२।

अथ तृतीया मात्रापङ्क्ति साधयति—

पूर्वस्थाङ्कैरिति । पूर्वस्याङ्कैः-प्रथमपङ्क्तिस्थिताङ्कै ततो द्वितीयपङ्क्ति-पूरणानन्तरं ता द्वितीय प्रत्येक-प्रतिकोष्ठं भावयित्वा-गुणयित्वा इत्यर्थ. । नेत्र-

पक्तिस्थकोष्ठान्–तृतीयपक्तिस्थितकोष्ठान् पूर्णान् कुर्यात्। अतश्चात्रैकचतुर्नव-विंशति-चत्वारिंशदष्टसप्तत्यादिभिरङ्कै १, ४, ६, २०, ४०, ७८ तृतीय पक्तिस्थितकोष्ठान् पूरितान् कुर्यादित्यर्थः। अत्र नेत्रसख्या रौद्रीति विज्ञातव्या। पाठान्तरे—अग्निपर्यायत्वात् स एवार्ऽथः। एवमन्यत्रापि। शालिनीछन्दसि ।।७७।।

एवमङ्कविन्यासे कृते सति तृतीया मात्रापक्तिः सिद्धचति ।।३।।

अथ क्रमप्राप्तां चतुर्थी वर्णपक्तिमुल्लघ्य चतुर्थ-षष्ठपक्तयो युगपदेव साधनार्थं तन्मूलभूता प्रथम तावत् पञ्चमपक्ति साधयति–

प्रथमे इति। तत्र षट्स्वपि प्रथमपक्तिषु प्रथमकोष्ठस्य त्यक्तत्वात्, द्वितीय-कोष्ठकमेवात्र प्रथम कोष्ठकम्। अतः तस्मिन् प्रथमे कोष्ठके द्वितीयमङ्क, तद-पेक्षायाः द्वितीयकोष्ठके च पञ्चमाङ्क च दत्त्वा, ततो बाणद्विगुणं–पञ्चद्विगुण दश १०, तद्द्विगुण–दशद्विगुण विंशतिश्च २०, तौ–द्वावङ्कौ नेत्रतुर्ययो तदपेक्षयैव तृतीयचतुर्थयो कोष्ठकयोः दद्यात्–विन्यसेदित्यर्थ. ।।७८।।

तथा चात्र पञ्चमपक्तौ प्रथमकोष्ठ विहाय द्वि-पञ्च-दश-विंशतिभिरङ्कै. २, ५, १०, २० कोष्ठचतुष्टयं पूरयित्वा अग्रिमैतत्पञ्चमकोष्ठपूरणार्थं उपाया-न्तरमाह–

एकीकृत्येति। तथा च–इति आनन्तर्यार्थे। तत. पञ्चमपक्तिस्थितान् पूर्वान् पूर्वाङ्कान्–द्वयादीन् चतुष्कोष्ठस्थान् एकीकृत्य–मेलयित्वा, तथा ततोऽपीत्यर्थ। तस्मिन्नेकीकृताङ्के एकमधिकं दत्त्वा निष्पन्ने एतेनाङ्केन अष्टात्रिंशता ३८ अङ्केनैव पञ्चमं पूर्वापेक्षाया पञ्चम कोष्ठकं पूर्णं कुर्यात् ।।७९।।

अत्रत्य षष्ठकोष्ठपूरणोपायमाह—

त्यक्त्वेति। विद्वान्–अङ्कमेलनकुशलो गणक पूर्वाङ्कान्–द्वितीयादीन् एक-भावमापाद्य–एकीकृत्य सयोज्येति यावत्। ततः पिण्डीकृतेषु एतेषु अङ्केषु पञ्चमाङ्क प्रथमाङ्कवत् त्यक्त्वा। तथा पुनरित्यर्थ.। एकमङ्कमधिक दत्त्वा पूर्ववज्जातेन तेन एकसप्तत्या ७१ षष्ठ कोष्ठ प्रपूरयेदिति ।।८०।।

अथ तथैवात्रस्थसप्तमकोष्ठपूरणोपायमाह—

कृत्वेति। पञ्चमपक्तिस्थिताना द्वयादीना एकसप्तत्यन्तानां षण्णामङ्का-नामैक्य–पिण्डीभाव कृत्वा तेषु पूर्ववत् पञ्चदशाङ्कं त्यक्त्वा। ततस्तेष्वपि चैकं हित्वा मुने. कोष्ठ–सप्तम कोष्ठं त्रिंशदधिकेन शताङ्केन १३० पूरयेत्। इति सप्तमकोष्ठकपूरणप्रकार ।। ८१ ।।

वर्णमर्कटी यथा—

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
प्रभेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६	८१९२
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४	३०७२	६९१२	१५३६०	३३७९२	७३७२८	१५९७४४
वर्णा.	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६	२०४८	४६०८	१०२४०	२२५२८	४९१५२	१०६४९६
गुरव.	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८
लघव	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८

इति त्रयोदशवर्णा मर्कटी । एवमन्यापि वर्णमर्कटी समुन्नेया । पचमः प्रत्ययो वर्णमर्कटिकाख्यः ।

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-
मणि-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-साहित्यार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्तिक-दुष्करोद्धारे एकाक्षरादि-
षड्विंशत्यक्षरावधिवर्णप्रस्तारेषु वर्णमर्कटीप्रस्तारोद्धारो
नाम दशमो विश्रामः ॥ १० ॥

एकादशो विश्रामः

श्रीनागराजमानस्य सम्प्रदायानुमानत ।
श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
वर्णमर्कटिकामुक्त्वा मात्रामर्कटिकामपि ।
दुष्करा दुष्करोद्धारे सुकरा रचयाम्यहम् ॥ २ ॥

अथ पचमप्रत्ययस्वरूपामेव मात्रामर्कटीमाह—'कोष्ठान्' इत्यादिना 'नष्टोद्दिष्ट' इत्यन्ते एकादशश्लोकेन—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पक्तिषट्क,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्वयादीनादिपक्तावथाङ्कां-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपङ्क्तावथाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपक्तिस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥

प्रथमे द्वितीयमङ्क द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
दत्त्वा बाणद्विगुण तद्द्विगुण नेत्रतुर्ययोर्दद्यात् ॥ ७८ ॥

एकीकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्त्वा तथैकमङ्कं कुर्यात्तेनैव पञ्चम पूर्णम् ॥ ७९ ॥

दत्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वाङ्कानेकभावमापाद्य ।
दत्त्वा तथैकमङ्क षष्ठ कोष्ठं प्रपूरयेद् विद्वान् ॥ ८० ॥

कृत्वैक्य चाङ्कानां पञ्चमपक्तिस्थितानां च ।
त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्क हित्वैक पूरयेन् मुने कोष्ठम् ॥ ८१ ॥

एव निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यम् ।
प्रकृतानुपयोगवशान् न कृतोऽङ्कानां च विस्तार ॥ ८२ ॥

एव पञ्चमपक्ति कृत्वा पूर्णां प्रथममेकाङ्कम् ।
दत्त्वा पञ्चमपक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥

एवमङ्कसप्तकेन द्वि-पञ्च-दश-विंशत्यष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशतक-रूपेण २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० पञ्चमपङ्क्तौ कोष्ठसप्तक पूरयेदिति । एव चात्रत्ये पूरणीये तत्तत्कोष्ठे अत्रत्याना द्व्यादीनामङ्काना एकीभावं कृत्वा, यथासम्भव तत्तदङ्क त्यक्त्वा, तेष्वपि यथासम्भव एकादिक हित्वा तत्तत्कोष्ठकं पूरयेदिति सक्षेप ।

एव अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थषष्ठपक्तिगर्भा: पञ्चमी लघुपक्ति सिद्ध्यति । ननु अस्या पङ्क्तावग्रिमकोष्ठाऽङ्कसञ्चारः क्रियता इत्याकाक्षाया प्रकृतानुपयोगादङ्कबाहुल्याद् ग्रन्थविस्तरशङ्कया न क्रियत इत्याह—

एवमिति । सुगमम् ॥ ८२ ॥

अथ पचमपक्तिपूरणमुपसहरन् षष्ठगुरुपक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एवमिति । एव पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चमपक्ति पूर्णां कृत्वा तत्र गुरुस्थानीय प्रथम कोष्ठ विहाय अग्रिमकोष्ठ–प्रथम प्रथमत एवाङ्क दत्त्वा पूरणीयम् । अथ–अनन्तर पञ्चमपक्तिस्थितै द्वितीयादिभिरङ्कै पूर्वस्थापितैरेव प्रतिकोष्ठ षष्ठी प्रपूरये-दिति । तथा च षष्ठपङ्क्तौ ०, १, २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० शून्यैक-द्वि-पञ्च-दश-विंशति-अष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशताङ्कविन्यस्ता दृश्यन्त इति ॥ ८३ ॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति षष्ठी गुरुपक्तिः सिद्ध्यति ॥ ६ ॥

अथोर्वरितचतुर्थवर्णपक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति–

एकीकृत्येति । विद्वान्–अङ्कमेलनकुशलो गणक तथा पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चम-षष्ठपक्तिस्थितान् द्व्येकादीन् अङ्कान् प्रतिकोष्ठ एकीकृत्य–सयोज्य नागाज्ञया–श्रीपिङ्गलनागोक्तमार्गेण चतुर्थपक्तितत्पक्तिस्थकोष्ठकरूपा तूर्णं–अविचारितमेव पूर्णं कुर्यादिति । अत्रत्यप्रथमकोष्ठे असयुक्त पञ्चमकोष्ठस्थप्रथमाकः सम्प्रदाय-लभ्यो देय इति रहस्यम् ॥ ८४ ॥

तथा चतुर्थपङ्क्तौ १, ३, ७, १५, ३०, ५८, १०९, २०१ एक-त्रि-सप्त-पञ्चदश-त्रिंशद्-अष्टपञ्चाशन्-नवाधिकशतैकोत्तरद्विशताङ्का विन्यस्ता दृश्यन्त इति ।

एव अङ्कविन्यासे कृते सति चतुर्थी वर्णपक्ति सिद्ध्यतीति ॥ ४ ॥

एव विरचनप्रकारेण पक्तिषट्क साधयित्वा मात्रामर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्त–वृत्तानि एकमात्रादिनिरवधिकमात्राजातय । एकवचन जात्यभिप्रायेण । प्रभेदजातीनां प्रभेदा इत्यर्थ । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः ।

मात्रा:–तत्तज्जातिमात्रा, वर्णा:–तत्तज्जातिवर्णा: तथा–तत इत्यर्थ:। लघुगुरू–तत्तज्जातिलघवस्तत्तज्जातिगुरवश्चेत्यर्थ:। एते वृत्तादय षट्प्रकारा: पूर्णप्रस्तारस्य समुदिता: षट्पक्तितो निश्चित विभान्ति–प्रकाशन्त इत्यर्थ ॥ ८५ ॥

ननु एतत्करण आवश्यकमनावश्यक वा ? इति परामर्शे छान्दसिकपरीक्षारूपत्वात् केवल कौतुकमात्राधायकत्वाच्च अस्य करण अनावश्यकमेवेत्याह–

नष्टोद्दिष्टमिति। यथा नष्टोद्दिष्टादिकं कौतुकावह तथैव तद्विरचनमपीत्यर्थ इति सर्वमवदातम् ॥ ८६ ॥

मात्रामर्कटी यथा–

वृत्तम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
प्रभेदा.	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	८९	१४४
मात्रा:	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	८९०	१५८४
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५		
लघव.	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५		
गुरव:	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०		

इति एकादशमात्रामर्कटी। एव अन्येऽपि मात्रामर्कटी समुन्नेया। तथैव मात्रामर्कटिकाख्य. पचम प्रत्यय.।

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

श्रीमत्पिङ्गलनागेन प्रोक्तो यो मर्कटीक्रम ।
विविच्य स मया प्रोक्तः शिष्यानुग्रहहेतवे ॥ १ ॥

मुनीभभूपतिमिते १६८७ वैक्रमेऽब्दे प्रमाथिनि ।
कार्त्तिकेऽसितपञ्चम्या लक्ष्मीनाथो व्यरीरचत् ॥ २ ॥

वार्त्तिके दुष्करोद्धारमुदारं छान्दसप्रियम् ।
अन्त.सारं स्फुटार्थं च कवीनां कौतुकावहम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्दास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-चूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्रादिनिरवधिक-मात्राप्रस्तारेषु तत्तज्जातिमात्रामर्कटीप्रस्तारोद्धारो नामैकादशो विश्रामः ॥ ११ ॥

समाप्तश्चायं वृत्तमौक्तिकवार्त्तिके दुष्करोद्धारः ।

शुभमस्तु । श्रीनागराजाय नमः ।

सवत् १६६० समये भाद्रपदशुदि ३ भौमे शुभदिने अर्गलपुरस्थाने लिखितं लालमनि-मिश्रेण । शुभं भूयात् । श्रीविष्णवे नमः ।

महोपाध्यायश्रीमेघविजयगणिसन्दृब्धः

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोधः

[उद्दिष्टादिप्रकरणव्याख्या]

[मङ्गलाचरणम्]

प्रणम्य फणिना नम्य सम्यक् श्रीपार्श्वमीश्वरम् ।
उद्दिष्टादिषु सूत्रार्थं कुर्वे श्रीवृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥

अथ वृत्तमौक्तिके उद्दिष्ट नष्ट वर्णतो मात्रातो वा विव्रियते—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गस्य तूभयतः ।
अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्कांश्च ॥ ५१ ॥
उद्धरितैश्च तथाङ्कैर्मात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

षड्भिः पदैः सूत्र तद्व्याख्या—

केनापि नरेण लिखित्वा दत्त । ऽ । ऽ । इद कतमत् रूपम् ? इति प्रश्ने उद्दिष्टं ज्ञेयम् । तत्र पूर्वयुगलाङ्काः प्रत्येक धार्या । पूर्वयुगलाङ्का इति सज्ञा अङ्कानाम् । तत्कथम् ? इति चेत्, मात्रोद्दिष्टे १।२।३।५।८।१३।२१।३४।५५।८९ इति । अत्र १ मध्ये २ योजने ३ । पुन ३ मध्ये पूर्वाङ्क २ मेलने ५ । पुनः ५ मध्ये स्वपूर्वाङ्क ३ मेलने ८ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ५ मेलने १३ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ८ क्षेपणे २१ । तस्मिन्नपि स्वपूर्वाङ्क १३ एकीकरणे ३४ । तन्मध्ये स्वपूर्वाङ्क २१ क्षेपे ५५ । अत्रापि स्वपूर्वाङ्क ३४ योगे ८९ इत्येव योजनारीति । पूर्वं पूर्वमेलनाज्जातत्वात् पूर्वयुगाङ्का इति सज्ञाभाज । तद्धरणरीतिः—

```
१   २   ५   ८   २१
।   ऽ   ।   ऽ   ।
    ३       १३
```

एव लघोरुपरि एक अङ्कन्यास गस्य-गुरोस्तु उभयत –उपरि अधश्च पार्श्वद्वयेऽपि अङ्कधरणम् । एतत् कृत्वा अन्त्याङ्के २१ रूपे गुरोरुपरिस्था अङ्का २।८ मेलने १०, एते २१ मध्यात् विलुम्पयेत्–पराकुर्यात्, उद्धरितोऽङ्कः ११ एव निश्चित ज्ञात सप्तमात्रे मात्राच्छन्दसि एकादश रूपमिदम् । ईदृश ।ऽ।ऽ। अन्यत्रापि ।

त्रिकले छन्दसि ।ऽ इद कतमं रूपम् ? इति पृच्छाया पूर्वयुगाङ्कधरण १ २
। ऽ
३
तत्रात्याङ्कः ३ तन्मध्यात् गुरुशीर्षस्थाङ्क २ विलोपने शेष १ इति प्रथम रूपम् । ऽ ईदृशम् । परत्राऽपि ऽ । इद कतमत् ? इति प्रश्ने १ ३ अन्त्याङ्के ३
। ऽ
२
गुरुशीर्षस्थ १ विलोपे शेष २ इति द्वितीय रूप त्रिकले ऽ। ईदृशम् ।

चतु कले छन्दसि ऽ ऽ इद कतमत् ? इति पृच्छाया १ ३ अङ्केषु धृतेषु
ऽ ऽ
२ ५
अन्त्याङ्कः ५ तन्मध्याद् गुरुशीर्षस्थ अङ्कद्वय १।३ एतयोर्मेलने ४ तद्विलोपने शेष १ प्रथम रूपम् ऽऽ, द्वितीऽयेऽपि १ २ ३ अङ्केषु न्यस्तेषु अन्त्याङ्क ५
। । ऽ
५
तन्मध्यात् २ गुरुशिर स्थाङ्क ३ तल्लोपे शेष २ इति द्वितीय रूपम् । तृतीये । ऽ । ईदृशेऽङ्का १ २ ५ अन्त्याङ्क ५ ततः गुरुशिरःस्थः २ लोपे शेष ३ तृतीय
। ऽ ।
३
रूपम् । तुर्ये ऽ । । ईदृशेऽङ्का १ ३ ५ अन्त्याङ्क ५ ततः गुरुशिर स्थ १
ऽ । ।
२
लोपे शेष तुर्य रूप ऽ । ।, पञ्चम सर्वलघुकम् ।

पञ्चकले । ऽ ऽ ईदृशेऽङ्का १ २ ५ अत्रान्त्याङ्क ८ तत गुरुशिर स्थ
। ऽ ऽ
३ ८
२।५ एव ७ लोपे प्रथम रूपम्, ऽ । ऽ ईदृशेऽङ्का १ ३ ५ अन्त्य.
ऽ । ऽ
२ ८
८ तन्मध्यात् १।५ एव ६ तल्लोपे शेष २ द्वितीय रूपम् । तृतीय । । । ऽ ईदृशेऽङ्का. १ २ ३ ५ अत्र प्राग्वत् ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ ५ लोपे शेष
। । । ऽ
८

३ तृतीयम् । तुर्येऽपि १ ३ ८ प्राग्वत् ८ मध्यात् १। ३ गुरुशीर्षस्थ ४
ऽ ऽ ।
२ ५

लोपे शेषं ४ तुर्यं रूपम् । पञ्चमेऽपि १ २ ३ ८ इत्यत्र गुरुशीर्षस्थ
। । ऽ ।
५

३ लोपे अन्त्याङ्क ८ मध्ये शेष ५ इति [पञ्चमं रूपम्] । षष्ठे १ २ ५ ८
। ऽ । ।
३

अन्त्याङ्क ८ मध्यतः गुरुशिरःस्थ २ लोपे शेष ६ [इति षष्ठं रूपम्] । सप्तमेऽपि
१ ३ ५ ८ तत्र अन्त्याक ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ १ लोपे शेषं ७ इति
ऽ । । ।
२
सप्तमं रूपम् ।

एव षट्कले मात्राच्छन्दसि १ ३ ८ अत्रान्त्याङ्कः १३ तत. गुरुशीर्ष-
ऽ ऽ ऽ
२ ५ १३

स्थिताङ्क १।३।८ एषां लोपे शेष १ प्रथम रूपम्; १ २ ३ ८ अत्रापि
। । ऽ ऽ
५ १३

प्राग्वत् ३।८ एवं ११ तेषा १३ मध्याल्लोपे शेषं २ द्वितीयं रूपम् । तृतीये
१ २ ५ ८ अन्त्याङ्क १३ तत २।८ एव १० गुरुशीर्षस्थ लोपे शेष ३ ।
। ऽ । ऽ
३ १३

१ २ ५ १३ २१ ५५ अत्र गुरुशीर्षस्थाङ्क सर्वमेलने ८३ तल्लोपः
। ऽ ऽ । ऽ ऽ
३ ८ ३४ ८९

८९ मध्ये शेषं ६ रूपमिद दशकले छन्दसि ।

पुव्व जुयल सरि अका दिज्जसु, गुरु सिर अक सेस मेटिज्जसु ।
उवरिल अ लेखि कहुआण, ते परि धुअ उद्दिट्ठा जाण ।।

[प्राकृतपैङ्गलम्, परि. १, पद्य ३९]

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कं गुरुशीर्षाङ्कं विलुप्य शेषाङ्के ।
अङ्कैरितोऽवशिष्टैः शिष्टैरुद्दिष्टमुद्दिष्टम् ॥

[वाणीभूषणम् परि १, पद्य ३१]

मत्त मत्त धुग्र ग्रक, लघु सिर गुरुतर हू धरो ।
जोर ग्रक सरवंक, सव्वहि घाट उद्दिट्ठ कहु ॥

लघो' शीर्ष एवाङ्क. धार्यः गुरोः शीर्षे तथा 'तर' इति भाषाविशेषात् तले अधोऽपि अङ्क' धार्यः । यथा—पञ्चकले प्रस्तारे १ २ ५ अत्रान्त्याङ्के ८
। ऽ ऽ
३ ८

ततः गुरुशीर्षस्थाङ्का २, ५. ...७ सप्तम रूपम् ।

१ २ ५ ८ २१ गुरु सिर अकेयोजने १० ते २१ मध्ये ऊन शेष ११
। ऽ । ऽ ।
३ १३

सख्या प्राप्ता इति एकादशमिद रूपमिति छन्दोरत्नावलीग्रन्थे ।

१ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र प्रश्नः—सप्तकलप्रस्तारे एकादश
। । । । । । । ११
। ऽ । ऽ ।

रूप कीदृशम् ? इति, तदा प्राप्त । ऽ । ऽ । इदम् ।

इति मात्रोद्दिष्टसूत्रव्याख्या पूर्णा ।

मात्रानष्ट-प्रकरणम्

अथ मात्रानष्ट यथा—

यत्कलकः प्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्त. ।
दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्टाङ्क लोपयेदन्त्ये ।। [।। ५३ ।।]
उद्दरितोद्दरितानामङ्कानां यत्र लभ्यते भागः ।
परमात्राञ्च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ।। [।। ५४ ।।]

अस्यार्थ —यावत्य. कलाः प्रस्तारे एककलस्य एक एव लघुः । ईदृशः द्विकलस्य द्वे रूपे, आदौ एक एव गुरुः ऽ ईदृश., द्वितीयरूपे लघुद्वयम् ।। ईदृशम् । अत्र पृच्छानवकाशात् न इष्टरूपलाभ', असम्भवात् । त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रीणि रूपाणि । चतु कले पञ्चरूपाणि १।२।३।५ इति पूर्वयुगाङ्कात् । पञ्चकले अष्टरूपाणि १।२।३।५।८ इति पूर्वयुग्माङ्कात् । षट्कले १३ रूपाणि तावत् एव पूर्वयुग्माङ्कात् । सप्तकले २१ रूपाणि तथैव ।

एव कलाप्रमाणा लघवो लेख्या , यथा—सप्तकले मात्राच्छन्दसि इष्ट एकादशं रूप कीदृश ? इति, मुखेन केनचित् पृष्टम्, तदा सप्तैव लघव. ।।।।।।। अनया रीत्या लेख्या । तेषामुपरि १।२।३।५।८।१३।२१ एते धार्या । अत्र पृष्टे इष्टाङ्क ११, तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष १।२।३।५।८।१३।१० इति । तदा दशमध्ये त्रयोदश न पतन्तीति भागाभाव , तदा ८ अङ्क १३ मध्ये पात्य., एव अष्टाध कलामाकृष्य त्रयोदशाधो गुरु स्थाप्य', दशाध एका कलाऽवशिष्टा, अष्टकस्य लोप परमात्राग्रहेण गुरुभावात् । अथ त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते, मुख्यैककस्य द्विकेन गृह्यते तदा ऽ ऽ ऽ । ईदृश नवमरूपतापत्ते । यद्वा त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते १।२ अनयो कलाद्वय लघुरूपमेव ध्रियते तदा दशम रूप ईदृश स्यात् ।।ऽऽ, तेन पञ्चकाऽधः कला एका भिन्नैव रक्ष्या, अग्रे द्वितीयाङ्कस्य त्रिके कलाग्रहेण त्रिकाधो गुरु , मुख्यैककलाशेषात्, एव ।ऽ।ऽ। ईदृशं एकादश रूप व्यवस्थितम । द्विकाष्टकयोर्लोप 'उवरिल अकलोपके लेख' इति वचनात् । यदुक्त छन्दोरत्नावल्याम्—

सब लघु सिर ध्रुव अक, प्रश्नहीन शेषाङ्क धरि ।
पर लघु ले लिख वङ्क उवरि भाग जह जह परइ ।।

यद्वा, दशाना भागस्त्रयोदशे प्राप्यते 'दश एके दश' शेषं ३ विषमत्वात् परस्य-अन्यस्य त्रयोदशात् पूर्वस्य अष्टकस्य कलाग्रहेण त्रयोदशस्थानजातत्रिकाधो

ग:, त्र्यष्टकलोप:, दशाधो ल., पञ्चके त्रिकस्य भागे शेष २ इति समत्वात् पञ्चाधो ल: ऽ।, द्विकस्य त्रिके भागाप्तौ शेषं १ इति विषमाङ्कत्वाद् गुरु:, द्विकस्य कलाग्रहात् द्विकलोप', मुख्यैकाधो यथास्थितो लघुरेव, एव । ऽ । ऽ । इत्येकादश व्यवस्थित सप्तकले ।

अथ बालवोधाय इयमेव व्याख्या विस्तरत.—

प्रथम त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रिलघुकरण तस्य न्यास: १ २ ३ तदुपरि
। । ।
पूर्वयुगाङ्कदानम् । तत्र पृष्ट प्रथमरूप त्रिकले कीदृग् ? इति, एव इष्ट एकरूप तत् त्रिकात् अन्त्याङ्कात् पराकृत-लुप्तमिति यावत् शेष १ । २ । २ 'उद्वरितोद्वरिताना अङ्काना यत्र लभ्यते भाग:' इति वचनात् द्विकस्य द्विकेन भागे परद्विकाधो ग, पूर्वस्य द्विकस्य कलाग्रहात् तस्य लोप, शेष । ऽ इति प्रथम रूपम् । पृष्टे द्वितीये, अन्त्यत्रिकात् २ लोपे शेष १ । २ । १, अत्र अन्त्यैककस्य भागलाभो द्विके तदधो ग, मुख्यैककलाग्रहात् तस्य लोप:, अन्त्यैकाधो ल. ऽ। इति द्वितीय रूपम् । तृतीयं सर्वलघुकमेव ।

अथ चतु:कले १ २ ३ ५ अत्र पृष्टे १ लोपे शेष १ । २ । ३ । ४,
। । । ।
त्रिकस्य भाग: चतुष्के प्राप्य तदधो ग., त्रिकस्य कलाग्रहात् त्रिकलोप', द्विकेपि मुख्यैकस्य भाग. तेन द्विकाधो ग:, एककस्य लोप', जात ऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेप १ । २ । ३ । ३, त्रिके-त्रिकस्य भागे परत्रिकाधो ग, पूर्वत्रिकलोप: कलाग्रहात्, शेपे द्विके एकस्य भागापत्तौ कलाङ्कसाम्यादपि पूर्वरूपापत्ति, तेन नैकस्यापि लोप', लघुद्वय ।।ऽ द्वितीयम् । पृष्टे ३ लोपे शेष १ । २ । ३ । २, एव द्विकस्य अन्त्यस्य भागस्त्रिके तदधो ग., पूर्वद्विकस्य कलाग्रहाल्लोप, एव । ऽ । तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेप १ । २ । ३ । १ एकस्य भागोऽत्र त्रिके, एवमन्त्यैकाधो ल', त्रिकेऽपि शेपाभावादधो ल, 'त्रिण एकुं ३' लघु १ तस्य भाग: द्विके तदधो ग', एकलोप, अत्र मुख्यैकस्य भागो द्विके तदधो ग, कलापूर्त्तें. त्रिके चान्त्यैकके न प्रत्येक कला मुख्यैककलोप, ऽ।। तुर्यम् । पञ्चम लघुमकलरूपम् ।

पञ्चकले १ २ ३ ५ ८ अत्र पृष्टे १ लोपे शेप १, २, ३, ५, ७,
। । । । ।
अत्र सप्तके पञ्चकस्य भाग:, तेन सप्ताधो ग:, पञ्चकस्य लोप:, द्विकस्य त्रिके भाग तदधो ग., द्विकलोप', मुख्यैकाध: कला स्थितैव । ऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेप १ २, ३, ५, ६, पट्के पञ्चकस्य भागे

षडधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके–त्रिकलस्य द्वितीयरूपस्य गुर्वधिकत्वे तादरूप्यात् द्विकस्य भाग पूर्वरूपे कृत तेनात्र द्विके एकस्य भागे द्विकाधो ग, मुख्यैकलोपः, त्रिकाध कला, द्वितीय ऽ । ऽ रूपम् । पृष्टे ३ लोपे शेष १, २, ३, ५, ५, पञ्चकेन पञ्चकस्य भागे परपञ्चकाधो ग., पूर्वपञ्चकलोप, शेष कलात्रयमङ्कत्रय चेति साम्यात् ५, ५ इति समभागाच्च प्रत्येक लघवस्त्रय, एव । । । ऽ तृतीयम् । पृष्टे ४ लोपे शेष १, २, ३, ५, ४, अत्र चतुष्के पञ्चकभागो न प्राप्य, पञ्चके चतु कस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकस्य कलाग्रहाल्लोप, चतु काधः कला, एव कलात्रये सिद्धे शेषमङ्कद्वय कलाद्वय चेति साम्याल्लघुद्वय कार्यमिति न विचार्यं द्वाभ्या कलाभ्या गुरुसिद्धेर्गु रु स्थाप्य । पञ्चकलेऽष्टरूपात्मके तुर्यरूपे लघ्वन्ते गुरुद्वयेनापि कलापूर्त्ते इति एकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोपः, एव ऽ ऽ । तुर्यम् । पृष्टे ५ लोपे शेष १, २, ३, ५, ३, अत्र त्रिकस्यान्त्यस्य पञ्चके भागात् पञ्चकाधो ग, अन्त्यत्रिकाधो ल, पूर्वत्रिकलोप, अत्रापि समकलाङ्कत्वे गुरुरिति न कार्यं पूर्वरूपापत्ते, अर्द्धोपरि लघूनामेव वृद्धे. । तेन लघुद्वय । । ऽ । पञ्चमम् । पृष्टे ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, २, अत्र पञ्चकस्य त्रिके भागो नेति द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप., पञ्चाधो ल, अन्त्यद्विकाधो ल, मुख्यैकाधोऽपि लः, तेन । ऽ । । षष्ठम् । पृष्टे ७ लोपे शेष १, २, ३, ५, १, अत्र पूर्वरूपे द्विकस्य त्रिके भागलाभात् त्रिकाधो ग, उक्त. सप्तमे पुना रूपे द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग., मुख्यैकलोपः त्रि-पञ्च अन्त्यैकानामध. प्रत्येक लघुत्रय, ऽ । । । सप्तमम् । पर सर्वलमष्टमम् ।

षट्कले १, २, ३, ५, ८, १३, इह पृष्टे १ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, १२,
। । । । । ।

अत्र १२ मध्ये ८ भागे द्वादशाधो ग, अष्टकलोप, एव पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकलोपः, द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप. सर्वत्रकलाग्रहात् ऽऽऽ प्रथमम् । पृष्टे २ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ११, अत्रापि ११ मध्येऽष्टभागात् तत्कलाग्रहे ११ अधो ग, ८ लोप, पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, शेषाङ्ककलासाम्यात् । । ऽऽ द्वितीयम् । पुनः पृष्टे ३ लोपेऽन्त्यदशाधो ग., अष्टाना भागे तत्कलाग्रहात् त्रिकाधो ग, द्विकस्य कलाग्रहात् पञ्चाधो ल, मुख्यैकाधो ल., एव । ऽ । ऽ तृतीयम् । पुन पृष्टे ४ लोपे शेष ९, अन्ते तत्राप्यष्टकलाग्रहादधो ग, द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहे द्विकाधो ग., त्रिकाधो लः, परस्य अष्टकस्य लोपात् पञ्चाधो ल, भागासम्भवात्, एवं ऽ । । ऽ चतुर्थम् । पृष्टे ५ तस्य १३ मध्यात् लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ८, पूर्वाष्टककलाग्र हात् पराष्टकाधो ग, पूर्वाष्टकलोप, शेषे कलाङ्कसाम्यात्

चतस्र कला एव । यद्यत्र पञ्चके त्रिकभागात् द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहणादि क्रियते तदा पूर्वरूपापत्ति , सा तु सर्वत्रापि निषिद्धा 'उवरिल अक लोपिके लेख' इति वचनात्, । । । । ऽ पञ्चमम् । षष्ठे पृष्टे १३ मध्यात् ६ लोपे अन्ते ७, तदष्टाना भागो नाप्य', किन्तु सप्ताना भागोऽष्टके, तेनाष्टाधो ग', सप्ताधो लः, पञ्चकस्य लोपोऽष्टकेन कलाग्रहात् द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग', द्विकलोप , मुख्यैकाधो लः, एव । ऽ ऽ । षष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते ६, तदधो ल', अष्टके षट्कस्य भागात् अष्टाधो गः, पञ्चके लोपात् द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग , एकस्य कलाग्रहात् एकस्य लोप', त्रिकाधो ल', एव ऽ । ऽ । सप्तमम् । पृष्टे ८ तल्लोपेऽन्ते ५ तदधो ल , पञ्चकस्य अष्टके कलाग्रहात् अष्टाधो ग., पञ्चकस्य अन्त्यस्य भागलाभाच्च शेषे कलाङ्कसाम्यात् त्रय प्रत्येक लघव , । । । ऽ । अष्टमम् । पृष्टे ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ४, चतुष्कस्य अष्टसु भागात् चतु'काधो ल , अष्टाधोऽपि ल , पञ्चके त्रिकभागात् तत्कलाग्रहेण पञ्चाधो ग , त्रिकलोपः, द्विके एकस्य भागात् तत्कलाग्रहे द्विकाधो गः, एकस्य लोप , एव ऽ ऽ । । नवमम् । अत्र पञ्चकस्य कला नाष्टके क्षेप्या पूर्वरूपापत्ते., गुरूणा रूपाद्यभागसञ्चारात् पश्चिमभागे लघूनामाधिक्याच्च । पृष्टे १० लोपे, शेष १, २, ३, ५, ८, ३, तदा त्रिकस्यान्त्यस्य अधो ल , अष्टाधोऽपि लः, त्रिकस्य पञ्चके भागात् पञ्चाधो ग , त्रिकलोप , शेष १ । २ कलाङ्कसाम्याल्लघुद्वय । । ऽ । । दशमम् । पृष्टे ११ लोपे प्रान्ते २, तदधो ल', द्विकस्य त्रिके भागात् कलाग्रहे त्रिकाधो ग , द्विकलोप , शेष १, ५, ८, एषु प्रत्येक लः, एव । ऽ । । । एकादशम । पृष्टे द्वादशे १२ लोपे, शेष १, २, ३, ५, ८, १, अत्र द्विकेन मुख्यैकाध , कलाग्रहात् द्विकाधो ग , मुख्यैकलोप', शेष ३, ५, ८, १, एषामधो लघव., एवं ऽ । । । । द्वादशम् । पर सर्वलघुरूम् ।

सप्तकले १ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र पृष्टे १ लोपे शेष १, २, ३, ५,
। । । । । । ।

पृष्टे पञ्चलोपे शेषमन्ते १६, तदधो ग., १३ कलाग्रहात् लोप., अष्टाधो ल., पञ्चकेऽधो ग , त्रिके कलाग्रहाल्लोप , शेषे समकलाङ्कत्वाल्लघुद्वय । । ऽ । ऽ पञ्चमम् । पृष्टे ६ तल्लोपे शेषमन्ते १५, तदधो ग., अष्टाधो ल', पञ्चाधो ल:, त्रिकाधो ग., द्विकस्य कलाग्रहात् मुख्याध. कला एव, एव । ऽ । । ऽ षष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते १४, तदधो ग:, १३ न्यूनत्वात् लोप. ८।५।३ अधो ल', द्विकाधो ग:, मुख्यकलाग्रहात लोप. ऽ । । । ऽ सप्तमम् । पृष्टे ८ लोपे शेषमन्ते १३, पूर्व १३ अधो ग:, समभागबलात् पूर्व १३ लोप', एव कलाद्वय, शेषपञ्चाङ्का: पञ्चकला. चेति साम्यात् पञ्च लघव एव । । । । । ऽ अष्टमम् । पृष्टे ९ लोपे शेषमन्ते १२, तेन भाग: पूर्व १३ मध्ये, यदुक्त **वाणीभूषणे**—

> नष्टे कृत्वा कला: सर्वा. पूर्वयुग्माङ्कयोजिता' ।
> पृष्ठाङ्कहीनशेषाङ्क येन येनैव लुप्यते ॥
> परा कलामुपादाय तत्र तत्र गुरुर्भवेत् ।
> मात्राया नष्टमेतत्तु फणिराजेन भाषितम् ॥
>
> (वाणीभूषणम्, परि १, पद्य ३२-३३)

तेन १३ अधो ग:, १२ अधो ल , अष्टकस्य लोप: कलाग्रहात् एवं पञ्चाधो ग:, त्रिकभागेन कलाग्रहात् द्विकाधो ग:, मुख्यलोपात्, एव ऽ ऽ ऽ । नवमम् । पृष्टे सप्तकले छन्दसि दशम रूप कीदृग् ? इति, तदा १ २ ३ ५ ८ १३ २१ एव

। । । । । । ।

कला. कृत्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता. पृष्टाङ्क १०, ते २१ मध्यात् अपकृष्टा: शेष ११, तेषां १३ मध्ये भागात् तदधो ग , ११ अधो ल:, अष्टकलोप', पञ्चाधो ग , त्रिककलाग्रहात्, शेष कलाङ्कयो: साम्याल्लघुद्वय । । ऽ ऽ । दशम रूपम् । पृष्टे ११ तस्य लोपे १०, तत १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग , अष्टलोप , त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग: द्विकलोप , एव रूप । ऽ । ऽ । एकादशम् । पृष्टे १२ तल्लोपे शेष ९ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग , ९ अधो ल , अष्टलोप , द्विके मुख्यैकस्य भागात् द्विकाधो ग , मुख्यलोप त्रिकपञ्चकयो. अधो ल प्रत्येक, एव ऽ । । ऽ । द्वादशम् । पृष्टे १३ तल्लोपे शेष ८ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग , ८ अधो ल , पूर्वाष्टकलोप , शेष समाङ्ककलाभावात् १, २, ३, ५ एषामधो लघव प्रत्येक, । । । । ऽ । त्रयोदशम् । पृष्टे १४ तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष ७, तस्य १३ मध्ये भागे शेष ६ इति परात्–सप्तमात् न्यूनता इति हेतो. १३ अधो ल , सप्ताधोऽपि ल , अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग , पञ्चकलोप:, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग , द्विकलोप., मुख्यैकाध. कला, । ऽ ऽ । । चतुर्दशम् । पृष्टे १५ लोपे

शेष ६ तदधो लः, १३ अधोऽपि प्राग्सिद्धत्वात् ल एव, अष्टके पञ्चकभागादष्टाधो ग, पञ्चकलोपः, द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो गः, त्रिकाधो लः, एव ऽ।ऽ।। पञ्चदशम् । पृष्टे १६ तल्लोपे शेषं ५ तस्य १३ मध्ये भागे शेष ८ तदधो ल., पञ्चाधो ल, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग., पूर्वपञ्चलोपः, शेषे समकलाङ्कत्वात् त्रयोपि लघवः, ।।।ऽ।। षोडशम् । पृष्टे १७ तल्लोपे शेष ४ तदधो लः, तस्य १३ मध्ये भागे शेष ९, अय परोङ्कः पूर्वस्थाष्टकादधिक इति हेतो. तस्याप्यधो लः पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो ग., त्रिकलोप., द्विके मुख्यैकभागाद् द्विकाधो गः, मुख्यैकलोप, ऽऽ।।। सप्तदशम् । पृष्टे १८ तल्लोपे शेष ३ तदधो ल., तस्य १३ मध्ये भागे शेष १० तदधो ल, अष्टकादधिकाः १० इति अष्टकाधो लः, पञ्चके त्रिकभागात् पञ्चाधो गः, त्रिकलोपः, शेषे समकलाङ्कत्वात् लघुद्वय, ।।ऽ।।। अष्टादशम् । पृष्टे १९ तल्लोपे शेष २ तस्य १३ मध्ये भागे शेष ११ तस्य अष्टमध्ये भागाभावात्, अष्टकस्य पञ्चके भागाभावात् सर्वत्र ५, ८, ११, २ एषु लघवः, द्विकस्य त्रिकेऽभावात् त्रिकाधो गः, द्विकलोप, मुख्याधो लः, एव ।ऽ।।।। एकोनविंशम् । अथ पृष्टे २० तस्य २१ मध्याल्लोपे शेष १ तत्र १३ मध्यात् भागे शेष १२ तस्य नाष्टसु भाग., अष्टानां न पञ्चके भाग, पञ्चकस्य न त्रिके इति सर्वत्र लघवः, पञ्चस्वङ्केपु द्विके मुख्यैकभागात् द्विकाधो गः, एकस्य लोप., एव ऽ।।।।। विंशतितम रूपम् । परत. सर्वलघुकम् इति भाव्यम् । एव सर्वत्र मात्राच्छन्दसि इष्टज्ञानम् ।

एककले—

।	१

द्विकले द्वे—

ऽ	१
।।	२

त्रिकले त्रीणि—

।ऽ	१
ऽ।	२
।।।	३

चतुष्कले पञ्च—

ऽऽ	१
।।ऽ	२
।ऽ।	३
ऽ।।	४
।।।।	५

पञ्चकले अष्ट—

।ऽऽ	१
ऽ।ऽ	२
।।।ऽ	३
ऽऽ।	४
।।ऽ।	५
।ऽ।।	६
ऽ।।।	७
।।।।।	८

षट्कले अष्ट—

ऽ ऽ ऽ	१
। । ऽ ऽ	२
। ऽ । ऽ	३
ऽ । । ऽ	४
। । । । ऽ	५
। ऽ ऽ ।	६
ऽ । ऽ	७
। । ऽ ।	८
ऽ ऽ । ।	९
। । ऽ । ।	१०
। ऽ । । ।	११
ऽ । । । ।	१२
। । । । । ।	१३

षट्कलं पूर्णम्।

सप्तकले एकविंशति—

। ऽ ऽ ऽ	१
ऽ । ऽ ऽ	२
। । । ऽ ऽ	३
ऽ ऽ । ऽ	४
। । ऽ । ऽ	५
। ऽ । । ऽ	६
ऽ । । । ऽ	७
। । । । । ऽ	८
ऽ ऽ ऽ ।	९
। । ऽ ऽ ।	१०
। ऽ । ऽ ।	११
ऽ । । ऽ ।	१२
। । । । ऽ ।	१३
। ऽ ऽ । ।	१४
ऽ । ऽ । ।	१५
। । । ऽ । ।	१६
ऽ ऽ । । ।	१७
। । ऽ । । ।	१८
। ऽ । । । ।	१९
ऽ । । । । ।	२०
। । । । । । ।	२१

सप्तकलं पूर्णम्।

अष्टकले चतुस्त्रिंशत्—

ऽ ऽ ऽ ऽ	१
। । ऽ ऽ ऽ	२
। ऽ । ऽ ऽ	३
ऽ । । ऽ ऽ	४
। । । । ऽ ऽ	५
। ऽ ऽ । ऽ	६
ऽ । ऽ । ऽ	७
। । । ऽ । ऽ	८
ऽ ऽ । । ऽ	९
। । ऽ । । ऽ	१०
। ऽ । । । ऽ	११
ऽ । । । । ऽ	१२
। । । । । । ऽ	१३
। ऽ ऽ ऽ ।	१४
ऽ । ऽ ऽ ।	१५
। । । ऽ ऽ ।	१६
ऽ ऽ । ऽ ।	१७
। । ऽ । ऽ ।	१८
। ऽ । । ऽ ।	१९
ऽ । । । ऽ ।	२०
। । । । । ऽ ।	२१
ऽ ऽ ऽ । ।	२२
। । ऽ ऽ । ।	२३
। ऽ । ऽ । ।	२४
ऽ । । ऽ । ।	२५
। । । । ऽ । ।	२६
। ऽ ऽ । । ।	२७
ऽ । ऽ । । ।	२८
। । । ऽ । । ।	२९

I I I I S S S	५
I S S I S S	६
S I S I S S	७
I I I S I S S	८
S S I I S S	९
I I S I I S S	१०
I S I I I S S	११
S I I I I S S	१२
I I I I I I S S	१३
I S S S I S	१४
S I S S I S	१५
I I I S S I S	१६
S S I S I S	१७
I I S I S I S	१८
I S I I S I S	१९
S I I I S I S	२०
I I I I I S I S	२१
S S S I I S	२२
I I S S I I S	२३
I S I S I I S	२४
S I I S I I S	२५
I I I I S I I S	२६
I S S I I I S	२७
S I S I I I S	२८
I I I S I I I S	२९
S S I I I I S	३०
I I S I I I I S	३१
I S I I I I I S	३२
S I I I I I I S	३३
I I I I I I I I S	३४
I S S S S I	३५
S I S S S I	३६
I I I S S S I	३७
S S I S S I	३८
I I S I S S I	३९
I S I I S S I	४०

S I I I S S I	४१
I I I I I S S I	४२
S S S I S I	४३
I I S S I S I	४४
I S I S I S I	४५
S I I S I S I	४६
I I I I S I S I	४७
I S S I I S I	४८
S I S I I S I	४९
I I I S I I S I	५०
S S I I I S I	५१
I I S I I I S I	५२
I S I I I I S I	५३
S I I I I I S I	५४
I I I I I I I S I	५५
S S S S I I	५६
I I S S S I I	५७
I S I S S I I	५८
S I I S S I I	५९
I I I I S S I I	६०
I S S I S I I	६१
S I S I S I I	६२
I I I S I S I I	६३
S S I I S I I	६४
I I S I I S I I	६५
I S I I I S I I	६६
S I I I I S I I	६७
I I I I I I S I I	६८
I S S S I I I	६९
S I S S I I I	७०
I I I S S I I I	७१
S S I S I I I	७२
I I S I S I I I	७३
I S I I S I I I	७४
S I I I S I I I	७५
I I I I I S I I I	७६

S S S I I I I I	७७
I I S S I I I I	७८
I S I S I I I I	७९
S I I S I I I I	८०
I I I I S I I I I	८१
I S S I I I I I	८२
S I S I I I I I	८३
I I I S I I I I I	८४
S S I I I I I I	८५
I I S I I I I I I	८६
I S I I I I I I I	८७
S I I I I I I I I	८८
I I I I I I I I I I	८९

दशकल सम्पूर्णम् ।

३

इष्टशब्देन चित्तेष्ट पृष्टरूपमिहोच्यते ।
प्राचां वाचा नष्टमिहममाङ्गल्यं न चोदितम् ॥ १ ॥

उपान्त्यतोऽन्त्येऽभ्यधिके ह्यधो गः,
साम्येपि गो लस्तु ततोऽन्त्यहानौ ।
पश्चाद्गुरोर्लोपनमङ्ककस्य,
कलाङ्कसाम्ये लघवो निधेयाः ॥ २ ॥

शेषाङ्कपूर्वापरयोरघो गः,
स्थाप्योऽत्र वृद्धस्य ल एकशेषे ।
न पूर्वरूपं पुनरेव कार्यं,
यो यत्र लुप्येदिति तद्विचार्यम् ॥ ३ ॥

पृष्टं पञ्चकले पञ्चम १ २ ३ ५ ८, तदा पृष्ट पञ्चम तस्य अन्त्येऽष्टके
I I I I I
लोपे शेषमन्ते ३ तस्याधो ल, उपान्त्यात् हीनत्वात् शेषाङ्का १, २, ३, ५, अत्र त्रिकस्य पञ्चके भाग. वृद्धत्वात् तदधो गः, पश्चात् त्रिकस्य लोप, शेष १।२ कलानां अङ्कानां च साम्यात् प्रत्येकं लघव, इति ।। S। पञ्चम रूपम् । यद्यत्र एकात् द्विकस्य वृद्धस्याधः गुरुर्दीयते तदा तु पञ्चकले तुर्यरूपापत्ति । अत्र हि प्रथमरूपत्रये त्रिकलवत् न्यस्ते प्रान्तगुरुत्वम् । पञ्चकत्वाच्छन्दसः त्रिकले पूर्वपूर्वत्वात् प्रश्ने तदतिक्रमे चतु कल. स्वत. पूर्वस्य द्वितीयरूपप्राप्तिस्तद्भगश्च दोषश्च । अथ यो नरः पूर्वरूप न जानाति तस्य का गतिः ? इति चेत्, तेन पुसा विचार्यं यत् पञ्चकले सर्वरूपाण्यष्ट, तर्हि त्रिरूपव्यतिक्रान्ते गुर्वधिकता न युक्ता । यस्य यावत् कलच्छन्दस स्वपूर्वच्छन्दस ५१ परस्य यावद् रूपाधिक्यं तावति रूपे अर्द्धं प्रान्तगुरुता च । यथा– अत्र पञ्चकले स्वपूर्वचतुःकलात् पञ्चरूपात्मकात् रूपत्रयमधिकमिति त्रिरूपी यावदर्द्धेऽन्तगुरुता च ।

पूर्व-पूर्वत्रिकलरूपतापि । तत्र गुर्वाधिक्य परार्द्धे लघूनामाधिक्य प्रान्तलघुता च । यथा, त्रिकलत चतु कले रूपद्वयाधिक्य तेन प्रथमरूपद्वये न गुरुत्व, शेषद्वये चान्तलघुत्व, पञ्चम तु चतुर्लम् । पञ्चकलेपि प्रथमत्रिरूपीत्रिकलस्य पश्चात् पञ्चरूपी चतु.कलस्य तत्रापि प्रान्तलघुता । पञ्चसु रूपेष्वपि द्विकलाद् रूपद्वयं प्रान्तगुरुक तस्याप्यग्रे एक लघु । ततोऽपि रूपद्वय त्रिकलवत् प्रान्तलघुद्वय चतु-कलापेक्षया पञ्चम, पञ्चकलापेक्षयाऽष्टम सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलात् षट्कले पञ्चरूपाधिक्य, पञ्चापि रूपाणि चतु कलवत् प्रान्ते एकगुरोरधिकस्य दानात् कलापूर्ति, पञ्चमे रूपे एको गुरुरन्ते शेष लघुचतुष्टयम् ।

परतोऽष्टरूपाणि पञ्चकलवत् प्रान्ते एकलघुनाऽधिकानि । तत्राप्यष्टमे प्रान्ते एकगुरु. शेषं लघुपञ्चक, अष्टाष्वपि रूपत्रय त्रिकलवत् प्रान्ते गुरुलघुभ्यामधिक षट्सप्तमाष्टरूप, पर रूपपञ्चक चतु कलवत् प्रान्ते लघुद्वयाधिक इत्यादौ विचार एव बलवान् ।

एव पृष्टे पञ्चकले षष्ठरूपे तदा प्रान्त्याष्टमध्ये ६ लोपे शेषं १, २, ३, ५, २, अन्त्यद्विकाधो ल., तस्य पञ्चके भागात् उपान्त्यादूनत्वाच्च पञ्चकेपि द्विकस्य भागे लब्ध २ शेष १ तेन पञ्चकाधोपि ल, त्रिकाधो ग, द्विकलोप, तुर्ये पञ्चमे च रूपे पञ्चकाधो ग, त्रिकलोपः। पञ्चकले हि त्रिकलवत् त्रिरूपी गुरुणान्तेऽधिका इद पृष्टं षष्ठ रूप इति विचारात् लब्धस्य द्विकस्य त्रिके भागाच्च, मुख्यैकाधः कला । ऽ । । इति षष्ठ रूपम् । यथा उपान्त्ये–अन्त्यस्य भागे उपान्त्याधो ग', अन्त्याधो ल, उपान्त्यपूर्वस्य लोप, तथा द्विकस्य पञ्चके शेष १ तस्य त्रिके भागेपि सभवति त्रिकाधो गः, पञ्चकस्थानीयद्विकाधो ल, पूर्वद्विकलोप, मुख्याधो ल. । इति रूपनिर्णय. ।

पञ्चकले सप्तमेपि अन्त्याष्टके सप्तलोपे शेष १ तदधो ल. शेषैकस्यापि पञ्चके भागे शेष पूर्णम् । अग्रे त्रिकस्य द्विके भागाभाव. वृद्धत्वात्, मुख्यैकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, त्रिकाधो ल., इति ऽ । । । सप्तमम् ।

> यो यस्मात् पूर्वपूर्वोऽङ्कस्तावद्रूपेषु चान्त्यगः ।
> तत्पर प्रान्त-लान्येव स्वत. पूर्वाङ्कसख्यया ।। ४ ।।

एव सप्तकले पृष्टे एकादशे रूपे अन्त्याङ्के २१ मध्ये ११ पाते शेषं १० तस्य उपान्त्याङ्के १३ मध्ये भाग प्राप्त., तत्र अष्टकस्य कलाग्रहात् १३ स्थानीयत्रिकाधो ग, अष्टकलोपः, दशाधो ल, द्विकस्य त्रिके भाग, तेन त्रिकाधो गः, द्विकलोप., मुख्यैकाधो लः, पञ्चकाधो ल., एव । ऽ । ऽ । इत्येकादशरूपसिद्धिः ।

ननु अत्र पञ्चके त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो गः, पूर्वत्रिक-लोप., अग्रे १,२ अनयोरध कलाद्वयमिति कथं न क्रियते ? इति चेत्, न, दशम-रूपापत्ते । परस्य १० अङ्कस्य पूर्वस्मिन् १३ अङ्के भागाधिकारात् पूर्वत्रिके भागश्चेन् सम्भवति तदाऽय विधिर्युक्त । यद्यपि त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य परस्य पूर्वस्मिन् पञ्चके भागसम्भव., पर मध्येष्टकलोपेन व्यवधानान्नाय विधिर्घटते ।

यद्यपि सप्तकले दशमे रूपे अयमेव विधिर्दृश्यते, तथापि सप्तकले पूर्वपूर्व पञ्चकल तस्याष्टरूपाणि प्रथमतोऽतिक्रान्तानि शेष ९।१०।११ इति षट्कलस्य तृतीय रूप प्रश्ने प्राप्त, तच्च । ऽ । ऽ ईदृशमिति, तद्भङ्गापत्तेरानीयमध्वाप्रध्वरः ।

षट्कलेपि तादृग् रूप चतु कले स्वपूर्वपूर्वे तृतीयरूपे । ऽ । ईदृशे प्रान्ते गुरु-दानात् सिद्धम् । चतु कलेपि द्विकलवत् रूपद्वये प्रान्ते गुरुणाधिकेप्यतीते त्रिकलस्य प्रथम रूप प्राप्त, चतु.कलापेक्षया तृतीयं, तत्रान्ते लघोरधिकारात् प्रश्ने । ऽ । ईदृशस्यैव सिद्धेः ।

स्वपूर्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे, गोऽन्तः स्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे ।
लोऽन्तो विचिन्त्येति निवेद्यमेव, छन्दोविदा पृष्टमिहेंऽष्टरूपम् ॥

नट्ठे सव्व कला कारिज्जसु, पुव्व जुयल सरि अका दिज्जसु ।
पुच्छिल अक मेटावहु सेख, उवरिल अंक लोपि के लेख ॥
जत्थ जत्थ पाविज्जह भाग, एह कहें फुर पिंगलनाग ।
परमत्ता लेइ गुरुताइ, जत लेवेहु तत लेवेहु आइ ॥

नष्टाङ्के कल्पयेद् भाग समभागे लघुर्भवेत् ।
दत्त्वैक विषमे भागे कार्यस्तत्र गुरुर्भवेत् ॥
[वाणीभूषणम्, परि० १, पद्य ३५]

अथ सिलमिली [शाल्मली] प्रस्तार:

गुरु पढम हिट्ठ ठाण, लहुया परि ठवहु अप्पबुद्धेण ।
सरिसा सरिसा पती, उव्वरिया गुरु-लहू देहु ॥

इति मात्रानष्ट न्यासः।

वर्णोद्दिष्ट-नष्ट-प्रकरणम्

अथ वर्णोऽ[? द्दि]ष्टरूपज्ञानमाह—

द्विगुणानङ्कान् दत्वा वर्णोपरि लघुशिरःस्थितानङ्कान् ।
अङ्केन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीयात् [॥ ५५ ॥]

अस्यार्थ. सोदाहरण । यथा, । ऽ । ऽ इद चतुरक्षरे छन्दसि कतम रूपम् ? इति, उद्दिष्टे द्विगुणा अङ्का उपरि देया १ २ ४ ८ इति न्यासे लघूपरि १,४
। ऽ । ऽ
मेलने ५, तत्र सैककरणे षष्ठ रूप इत्युद्देश्यम् ।

उद्दिष्टे वर्णोपरि दत्वा द्विगुणक्रमेणाङ्कम् ।
एक लघुवर्णाङ्के दत्त्वोद्दिष्ट विजानीयात् ॥
[वाणीभूषणम्, परि० १. पद्य ३४]

इ[? न]ष्टज्ञानमपि आह—

नष्टे पृष्टे भागः कर्त्तव्य पृष्टसख्यायाः ।
समभागे ल कुर्याद् विषमे दत्त्वैकमानयेद् गुरुकम् [॥ ५६ ॥]

यथा चतुरक्षरे छन्दसि षष्ठ रूप कीदृशम् ? इति पृष्टे षण्णा भागोऽर्द्धं त्रय एव समभागात् लघुः प्राप्त, पुनस्त्रयाणामर्द्धकरणाभावात् सैककरणे ४, तदर्द्धे २ एव गुरु. प्राप्त, द्वयस्यार्द्धं १ एव लघु प्राप्त., तस्याप्यर्द्धाऽसम्भवात् सैककरणे २ तदर्धे १ एव गुरुप्राप्ति. । जात । ऽ । ऽ एव इ(? न)ष्टरूपज्ञानम् ।

इति वर्णोद्दिष्टनष्टप्रकरणम् ।

वर्णमेरु-प्रकरणम्

वर्णमेरुमाह—

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णैः कुर्यादाद्यन्तयोः पुनः ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्क - द्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् [।। ५७ ।।]

१	१				
१	२	१			
१	३	३	१		
१	४	६	४	१	
१	५	१०	१०	५	१

यस्य छन्दसो यावन्तो वर्णास्तावन्तः कोष्ठा एकेनाधिकाः कर्त्तव्याः । तत्रापि आद्यन्तकोशद्वये एकाङ्कन्यास, तत' पुनः उपरिस्थाङ्कयो' कोशयोर्मीलनेन विचालस्थकोशपूरण कार्यम् । यथा—द्विकवर्णच्छन्दसो द्वे रूपे–एक गुरुकं १, एकं लघुक च २, एव कोशद्वयम् । द्विवर्णच्छन्दसोपि चत्वारि रूपाणि—ऽऽ, ।ऽ, ऽ।, ।।, इति । एक सर्वगुरुक, द्वे रूपे एकगुरुके, एकं सर्वलघुकं, एव उपरितनकोशद्वयाङ्कौ १।१ तयोर्मेलने द्वाविति मध्यकोशे द्विकन्यासः । त्रिवर्णच्छन्दसोऽष्टरूपाणि—एकं सर्वगुरु ऽऽऽ, त्रीणि द्विगुरूणि २, ३, ५, त्रीणि एकगुरूणि ४, ६, ७, एकं सर्वलघु, मध्ये कोशद्वये ३।३ न्यासः, उपरिस्थ १।२ मेलने जात । चतुर्वर्णच्छन्दसि षोडशरूपाणि—एक सर्वगुरु आद्य, चत्वारि एक गुरूणि ८, १२, १४, १५, षट् द्विगुरूणि ४, ६, ७, १०, ११, १३, चत्वारि त्रिगुरूणि २, ३, ५, ९, एक सर्वलघु, एव षोडशरूपा । विचालकोशत्रये १।३ मेलने ४ प्रथम-मध्यकोशपूरण, उपरितन ३।३ मेलने ६ द्वितीयमध्यकोशे, तृतीयेपि १।३ मेलने ४ इति, एवमग्रेपि ।

'वर्णमेरुरय' इत्यादि स्पष्टम् ।। ५८ ।।

१	१	२

१	२	१	४

१	३	३	१	८

१	४	६	४	१	१६

१	५	१०	१०	५	१	३२

१	६	१५	२०	१५	६	१	६४

१	७	२१	३५	३५	२१	७	१	१२८

१	८	२८	५६	७०	५६	२८	८	१	२५६

१	९	३६	८४	१२६	१२६	८४	३६	९	१	५१२

१	१०	४५	१२०	२१०	२५२	२१०	१२०	४५	१०	१	१०२४

इति वर्णमेरु ।

द्व्यक्षरे छन्दसि ४ रूपाणि—एक सर्वगुरुरूप, द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघुः । त्र्यक्षरे छन्दसि ८ रूपाणि—१ सर्वगुरु, त्रीणि एकगुरूणि, त्रीणि द्विगुरूणि, एक सर्वलघु । चतुर्वर्णे छन्दसि १६ रूपाणि—४ एकगुरु, द्विगुरु ६, त्रिगुरु ४, एक सर्वगुरु, एक सर्वलघु । पञ्चवर्णे छन्दसि ३२ रूपाणि । षड्वर्णे ६४ रूपाणि । सप्ताक्षरे १२८ रूपाणि । अष्टाक्षरे २५६ रूपाणि । ९ वर्णे ५१२ रूपाणि । दशाक्षरे छन्दसि १०२४ रूपाणि ।

इति वर्णमेरु-प्रकरणम् ।

वर्णपताका-प्रकरणम्

वर्णपताकामाह—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कैर्योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै धृतस्तत पक्तिसञ्चारः ॥ [॥ ५९ ॥]
अङ्काः पूर्वं भृता येन तमङ्क भरणे त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत् ॥ [॥ ६० ॥]
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेय विशिष्यतु ॥ [॥ ६१ ॥]

पूर्वयुगाङ्काः वर्णच्छन्दसि १।२।४।८।१६।३२।६४ इत्यादयः, तद्धरण न्यासवेद्यम् ।

१	२
१	२

१	२	४
१	२	४
	३	

अथ तान् यथायोग पूर्वाङ्कैर्योजयेत् तदा अधोऽधस्तनी अङ्कश्रेणिर्जायते । प्रथम एकवर्णच्छन्दसि रूपद्वयमेव, तत्र २ पङ्क्तिस्थापना । द्विवर्णे मध्यस्था एका-पङ्क्ति । त्रिवर्णे मध्यस्थ पङ्क्तिद्वय । चतुर्वर्णे मध्यस्थ पङ्क्तित्रयम् । पञ्चवर्णे मध्यस्थ पङ्क्तिचतुष्टयम् ।

आदौ एक वर्णे ऽ गुरु । लघुश्चेति रूपद्वयम् । द्विवर्णे १।२ इत्यनयोर्योजने ३ द्विकाध । अत्र पूर्वं अङ्क धृत तत पङ्क्तिसञ्चारः, एकैव द्विकाद्यापङ्क्ति परतः सिद्धोऽङ्कस्तस्य साधना नास्तीति । तत्र एक रूप सर्वग प्रथम, द्वे रूपे द्वितीय-तृतीयरूपे एकगुरुके, तुर्यं सर्वलम् । एव द्विवर्णच्छन्दस चत्वार्येव रूपाणि भवन्ति ।

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

त्रिवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाध., पुनः २।४ मेलने ६ परतः सिद्धोऽङ्क, पुन· २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ४।३ योगे ७ शेषाङ्काभावात् । एव एक रूप सर्वग, द्वितीय-तृतीय-पञ्चमानि रूपाणि एकेन गुरुणा ऊनानि त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, ४, ६, ७ रूपाणि गुरुद्वयोनानि एक गुरूणि त्रीणि, एक अष्टम सर्वलघुकमिति अग्रेपि मन्तव्यम् ।

सुखेन अग्रेपि करणज्ञानाय विधि.—

१	२	४	८	१६
१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

१।२ योजने ३, पुनः ४।२ योजने ६, पुनः ८।४ योजने १२, द्वितीया कोश-श्रेणिः, १६ त्याग. सिद्धाङ्कत्वात् । अस्याः श्रेणेरप्यध २।३ योजने ५, पुन· ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने·१४ तृतीया श्रेणि । तस्या अध ४।५ योजने ९, पुन. ४।६ योजने १०, पुनः ८।७ योजने १५ तुर्याश्रेणि । ६।५ योजने ११, पुन. ६।७ योजने १३, एव श्रेणिद्वय एककोशम् । एव एक रूप सर्वग प्रथमपङ्क्तौ । द्वितीयपङ्क्तौ २।३।५।९ चत्वारि रूपाणि एक गुरुणा ऊनानि त्रिगुरूणि । [तृतीयपङ्क्तौ] ४।६।७।१०।११।१३ इति षड्रूपाणि द्विगुरूणि । [चतुर्थपङ्क्तौ] ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि । [पञ्चमपङ्क्तौ] षोडश सर्वलघु, एव षोडशरूपाणि ।

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्णे छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाधः, २।४ योजने ६ चतुःकाधः, ८।४ योजने १२, अष्टाधः, १६।८ योजने २४ द्वितीयश्रेणिः। तदधः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने १४, पुनः १६।१२ योजने २८ तृतीयश्रेणिः। ४।५ योजने ९, पुनः ४।६ योजने १०, पुनः ८।७ योजने १५, पुनः १६।१४ योगे ३० तुर्यश्रेणिः। ८।९ योजने १७, ४।७ योजने ११, पुनः ८।१२ योजने २०, पुनः १६।१५ योजने ३१ पञ्चमश्रेणिः। ६।७ योजने १३, पुनः ७।११ योजने १८, पुनः ९।१० योजने १९, पुनः १०।११ योजने २१, पुनः १०।१५ योजने २५, पुनः ८।१४ योजने २२, पुनः ८।१५ योजने २३, पुनः १२।१४ योजने २६, पुनः १२।१५ योजने २७, पुनः १४।१५ योजने २९ एवं पताकया सर्वगुर्वादिज्ञापनम्।

एकं सर्वगुरुरूपम्। २।३।५।९।१७ पञ्चरूपाणि चतुर्गुरूणि। ४।६।७।१०।११।१३।१८।१९।२१।२५ एतानि त्रिगुरूणि। ८।१२।१४।१५।२०।२२।२३।२६।२७।२९ एतानि द्विगुरूणि। १६।२४।२८।३०।३१ एतानि एकगुरूणि। ३२ एकं सर्वलघुरूपम्।

पूर्वाङ्कै उपरितनै पार्श्वस्थैर्वा पङ्क्त्यन्तरेप्युपरिस्थैरङ्काना योजना स्यात् १।२ इत्यादय., साम्ये योज्या २।३ इत्यादय, उपरितनैः ३।४ इत्यादय, पक्त्यन्तरस्थैर्योगो भाव्य.। येन येन अङ्केन मीलितेन य अङ्क: रूपस्य पताकाया भृतस्तमङ्क पुनर्जायमान न पूरयेत्, यावद्रूपै प्रस्तारस्तावद्रूपैः कोषभरणमिति ज्ञेयम्।

उद्दिट्ठा सरि अका दिज्जसु, पुव्व अंक परभरण करिज्जसु।
पाउल अक मढ परितिज्जसु, पत्थर सख पताका किज्जसु॥

एकवर्णपताका

१	२
१	२

ऽ
।

द्विवर्णपताका

१	२	४
१	२	४
	३	

ऽऽ	(१)
।ऽ	(२)
ऽ।	(३)
।।	(४)

द्विवर्णे एक सर्वगुरु, द्वे रूपे एकगुरुके द्वितीय-तृतीये, तुर्यं सर्वलघुकम्।

त्रिवर्णपताका

ऽ ऽ ऽ	(१)
। ऽ ऽ	(२)
ऽ । ऽ	(३)
। । ऽ	(४)

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

ऽ ऽ ।	(५)
। ऽ ।	(६)
ऽ । ।	(७)
। । ।	(८)

एक सर्वगुरु, द्विगुरु २।३।५, एकगुरु ४,६,७ रूपाणि, अष्टम सर्वलम्।

चतुर्वर्णपताका

S S S S	(१)
I S S S	(२)
S I S S	(३)
I I S S	(४)
S S I S	(५)
I S I S	(६)
S I I S	(७)
I I I S	(८)

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

S S S I	(९)
I S S I	(१०)
S I S I	(११)
I I S I	(१२)
S S I I	(१३)
I S I I	(१४)
S I I I	(१५)
I I I I	(१६)

षोडशके प्रस्तारे एक सर्वगुरुरूपम्, २।३।५।९ एतानि त्रि-गुरूणि, ४,६,७,१०,११,१३ एतानि द्विगुरूणि, ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरूणि, १६ एक सर्वलघुरूपम् ।

पञ्चवर्णपताका

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्णपताका

श्री	ग									
१	१									
५	२	३	५	९	१७					
१०	४	६	७	१०	११	१३	१८	१९	२१	२५
१०	८	१२	१४	१५	२०	२२	२३	२६	२७	२९
५	१६	२४	२८	३०	३१					
१	३२									
गो	शा									

एकद्वयोर्योगे ३, द्विचतुरोर्योगे ६, चतुरष्टयोर्योगे १२, अष्टषोडशयोगे २४। ऊर्ध्वाध २।३ योगे ५, चतुस्त्रियोगे वक्रत्वे ७, ८।६ योगे १४, १६।१२ योगे २८। १।३।५ योगे ९, ४।६ योगे १०, ८।७ योगे १५, १६।१४ योगे ३०।; ४।६।७ योगे १७, १।३।७ योगे ११, ८।१२ योगे २०, [११।२० योगे ३१; ६।७ योगे १३, ७।११ योगे १८, ९।१० योगे १९, १०।११ योगे २१;१०।१५ योगे २५।] ८।१४ योगे २२,१५।८ योगे २३,१२।१४ योगे २६, १५।१२ योगे २७, १५।१४ योगे २९।

ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ (१)
। ऽ ऽ ऽ ऽ (२)
ऽ । ऽ ऽ ऽ (३)
। । ऽ ऽ ऽ (४)
ऽ ऽ । ऽ ऽ (५)
। ऽ । ऽ ऽ (६)
ऽ । । ऽ ऽ (७)
। । । ऽ ऽ (८)
ऽ ऽ ऽ । ऽ (९)
। ऽ ऽ । ऽ (१०)
ऽ । ऽ । ऽ (११)
। । ऽ । ऽ (१२)
ऽ ऽ । । ऽ (१३)
। ऽ । । ऽ (१४)
ऽ । । । ऽ (१५)
। । । । ऽ (१६)
ऽ ऽ ऽ ऽ । (१७)
। ऽ ऽ ऽ । (१८)
ऽ । ऽ ऽ । (१९)
। । ऽ ऽ । (२०)
ऽ ऽ । ऽ । (२१)
। ऽ । ऽ । (२२)
ऽ । । ऽ । (२३)
। । । ऽ । (२४)
ऽ ऽ ऽ । । (२५)
। ऽ ऽ । । (२६)
ऽ । ऽ । । (२७)
। । ऽ । । (२८)
ऽ ऽ । । । (२९)
। ऽ । । । (३०)
ऽ । । । । (३१)
। । । । । (३२)

इति वर्णपताका-प्रकरणम् ।

मात्रामेरु-प्रकरणम्

अथ मात्राच्छन्दो मेरुमाह—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्कं पूर्वभागे तु [॥६२॥]

एककलच्छन्दसः ५१ अधिककोष्ठाना द्विकल-त्रिकलादीना द्वे द्वे समे पङ्क्ती कार्ये। कोऽर्थ ? द्विकल-त्रिकलयो समे पङ्क्ती द्वयोरपि चतु.कोशात्मिके कार्ये। एव चतु कलाष्टकलयोः षट्कोशरूपे। त्रयोदशकल-एकविंशतिकलयो अष्टकोशात्मिके कृत्वा अन्त्यकोशे एकाङ्क एव धार्यः। पूर्वभागे तु पुन अयुग्पङ्क्ते १। ३। ५। ७ इत्यादिकाया. प्रथमकोशेषु सर्वत्र एकक स्थाप्य, समपङ्क्ते २। ४। ६। ८ इत्यादिकाया पूर्वभागे प्रथमकोशे पूर्वयुग्माङ्काः। इह मात्रा छन्दसि १।२। ३। ५। ८। १३। २१ इत्याद्या योज्याः। एतत्तु दुर्बोधम्। सर्वपक्तिषु आदौ पूर्वयुग्माङ्का देया। द्विकलाद्यपेक्षया अयुग्पङ्क्तीना द्वितीयकोशे एकक, समपक्तीनां द्वितीयकोशे २। ३। ४। ५। ६। ७। ८ इत्यादयः स्थाप्या यावता पक्ति पूर्यते। आद्य एककललघुकोशापेक्षया २। ४। ६। ८ एतासु पक्तिसु एकक इति।

आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थै.।
उपरिस्थितेन कोष्ठ विषमायां पूरयेत् पक्तौ [॥६३॥]

१						१
२	१	१				२
३	२	१				३
५	१	३	१			४
८	३	४	१			५
१३	१	६	५	१		६
२१	४	१०	६	१		७
३४	१	१०	१५	७	१	८
५५	५	२०	२१	८	१	९

यथा द्वाभ्या एककाभ्या मेलने जात २ । अग्रे अन्तकोष्ठे एक सिद्ध एव इति द्वितीया पवित. । अस्या प्रथमकोशे त्रिकस्त विहाय कोशभरण एव तृतीय-पड्क्तौ । विषयामां द्वितीयपड्क्तिगतः द्विक. तदुपरि वामस्थित एकः, एव १।२ मीलने जाता ३, मध्यकोशे, अन्तकोशे पुन' एक सिद्ध एव । प्रथमकोशे तु 'एकाङ्कमयुग्पड्क्ते. ।' इति सूत्रणात् एकाङ्कः स्थाप्य एव, तस्याप्यादौ पूर्व-युग्माङ्क. पञ्चकः सकोशभरणेन ग्राह्यः । एव प्राप्त चतु कले पञ्चरूपाणि एक सर्वगं, त्रीणि एकगुरूणि, एक अन्ते सर्वलघुरूपम् ।

एव पञ्चकलमेरुकोशेषु द्विकलेन समकोशत्वात् चतु कलस्य १।३ एतौ सयोज्य उपान्त्ये ४ अन्ते एक सिद्ध एव । ततः द्विकलपक्तिग द्विक त्रिकलपक्तिग एकञ्च सयोज्य त्रिक स्थाप्य, तस्याप्यग्रेऽष्टक पूर्वयुग्माङ्क. । एव च त्रीणि रूपाणि द्विगुरूणि, चत्वारि एक गुरूणि । कानि कानि ? इत्याशङ्का पताकया निरस्या । अत्र मेरौ लग-क्रियावत् रूपसख्यैव ।

षट्कले तु चतु कलस्यैक, पञ्चकलस्य चतु क च सयोज्य उपान्त्ये पञ्चक, अन्त्ये तु एकः सिद्ध एव, चतु कलगतत्रिक तथा पञ्चकलगतत्रिक सयोज्य जाता. ६ । ततोप्याद्यकोशे एकक. षट्कलत्वात् आदौ सर्वगुरुकैकरूपज्ञानाय ततोप्यादौ १३ युग्माङ्क । एवञ्च एक रूप त्रिगुरुक, षट्रूपाणि द्विगुरुकाणि, पञ्चरूपाणि एकगुरुकाणि, एकमन्त्य सर्वलघुकम् । एव सर्वाणि १३ रूपाणि ।

सप्तकलके पञ्चकलस्य त्रिक, षट्कलस्यैक सयोज्य आदौ ४, तस्याप्यादौ २१ युग्माङ्क । चतु कात् परकोशे पञ्चकलगत चतु क षट्कलगत षट्क सयोज्य १०, ततः पर पञ्चकलगत एक षट्कलगत पञ्चक सयोज्य षट्, ततोऽन्ते एक सिद्ध एव । एव च चत्वारि रूपाणि त्रिगुरूणि, दशरूपाणि द्विगुरूणि, षट्रूपाणि एकगुरूणि, एक सर्वलघु, एव २१ सर्वरूपाणि ।

अष्टकलके समपड्क्तित्वात् एक सर्वगुरुरूप तदङ्कः १, तस्यादौ ३४ युग्माङ्क, एकस्य कोशादग्रेतनकोशे षट्कलपक्तिगत षट्क, सप्तकलपक्तिगत चतु क सयोज्य १०, तदग्रे षट्कलगत पञ्चक सप्तकलगतदशक १० योगे १५ धरण, तदग्रे षट्कलगत एक सप्तकलगत षट्क सयोज्य ७, अन्ते चैक । एव च एक सर्वगुरु, दशरूपाणि त्रिगुरुक णि, १५ रूपाणि द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एक सर्वल, इति ३४ रूपाणि ।

एव नवकले उपरितनपक्तिगत ४।१ योगे ५, पुन १०।१० योगे २०, पुन ६।१५ योगे २१, पुनः १।७ योगे ८ इति ५५ रूपाणि । इति मात्रामेरु ।

मात्रामेरु-कर्त्तव्यता—

सिर अंके तसु सिर पर अंके, उवरल कोट्ठ पुरुहु निस्संके ।
मत्तामेरु अंक सचारि, बुज्झइ बुज्झइ जन दुइ चारि ॥
[प्राकृतपैङ्गलम् परि० १, पद्य ४७]

दुई दुई कोठा सरि लिहहु, पढम अंक तसु अंत ।
तसु आईहि पुणु एक्कु सउ, पढमे बे वि मिलत ॥

२. S	१	१							२
३ IS	२	१							३
४ SS	१	३	१						५
५ ISS	३	४	१						८
६ SSS	१	६	५	१					१३
७. ISSS	४	१०	६	१					२१
८. SSSS	१	१०	१५	७	१				३४
९. ISSSS	५	२०	२१	८	१				५५
१०. SSSSS	१	१५	३५	२८	९	१			८९
११. ISSSSS	६	३५	५६	३६	१०	१			१४४
१२. SSSSSS	१	२१	७०	८४	४५	११	१		२३३
१३. ISSSSSS	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१		३७७
१४. SSSSSSS	१	२८	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०
१५ ISSSSSSS	८	८४	२५२	३३०	२२०	७८	१४	१	९८७

अयुग्पङ्क्ते पूर्वभागे एकाङ्कं दद्यात्, समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये प्रथमपङ्क्ते आदिमकोष्ठे इत्यर्थ. । समकोष्ठकपङ्क्तिद्वयमध्ये द्वितीयपङ्क्तेराद्यकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्कं दद्यात् ।

एककलो लघुरेव । द्विकले २ रूपे-एक गुरु, एक लघु इति। त्रिकले त्रीणि रूपाणि-द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघुरूपम् । चतु कले ५ रूपाणि-एक सर्वगुरुक, त्रीणि एकगुरूणि, एक सर्वलघु । पञ्चकले ८ रूपाणि-रूपत्रय द्विगुरुक, रूपचतुष्टय एकगुरुक, एक सर्वलघु ।

अथ मात्रासूचीमेरुः

अक्खर सखे कोट्ठ करु, आइ अंत पढमक ।
सिर दुइ अके अवर भरु, सूई मेरु णिस्संक ।।

[प्राकृतपैङ्गलम् परि १, पद्य ४४]

१. ।	०	१	१						
२ ऽ	१गु	१ल	२						
३.। ऽ	० ३	२गु	१ल	३					
४ ऽ ऽ	१ ५	३ गु	१ल	५					
५ ।ऽऽ	० ८	३ द्विगु	४ गु१	१	८				
६. ऽऽऽ	१ १३	६ द्विगु १३	५ गु१	१	१३				
७ ।ऽऽऽ	० २१	४	१०	६	१	२१			
८ ऽऽऽऽ	१ ३४	१०	१५	७	१	३४			
९ ।ऽऽऽऽ	० ५५	५	२०	२१	८	१	५५		
१० ऽऽऽऽऽ	१ ८९	२१	३५	२३	९	१	८९		
११. ।ऽऽऽऽऽ	० १४४	६	३५	५६	३६	१०	१	१४४	
१२. ऽऽऽऽऽऽ	१ २३३	२१	७०	८४	४५	११	१	२३३	
१३ ।ऽऽऽऽऽऽ	० ३७७	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	३७७
१४ ऽऽऽऽऽऽऽ	२८ ६१०	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	६१०	

मात्रासूचीमेरु सेसनागगरुरसवादे जानीयात् ३०००२७७० ।

एककलस्य एक रूप–सर्वलघु तदेव । द्विकलस्य द्वे रूपे–एक गुरु ऽ रूप, द्वितीय ल-द्वयम् । त्रिकलस्य रूपाणि ३, द्वे एकगुरुके, एक त्रिलघुकम् । चतुःकले–एक सर्वगुरु, त्रीणि द्विगुरूणि, एक सर्वल एव ५ पञ्चकले च त्रीणि द्विगुरूणि, चत्वारि एकगुरूणि, एक सर्वल एव ८ । षट्कले–एक सर्वगुरुरूप, षट् रूपाणि द्विगुरूणि, पचरूपाणि एकगुरूणि, एक सर्वल, एव १३ । सप्तकले–चत्वारि त्रि-गुरूणि, दश द्विगुरूणि, षट् एकगुरूणि, एक सर्वल, एव सर्वाणि २१ । अष्टकले–एक सर्वगुरु, दश त्रिगुरूणि, १५ द्विगुरूणि, सप्त एकगुरूणि, एक सर्व ल, एव सर्वाणि ३४ ।

[१]१० ९ ८ ७ ६ ५ ४ ३ २ १
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १

अत्र '१० एकु दश' इति । ततः पुनर्दशाना नवतिर्गुणने ९०, तत्र द्वाभ्या भागे ४५, तत· ४५ अष्टगुणे ३६०, तत्र ३ भागे लब्ध १२० तेषां सप्तगुणत्वे ८४०, तत्र ४ भागे लब्ध २१०, तेषा षड्गुणत्वे १२६०, तत्र पञ्चभिर्भागे लब्ध २५२, तेषा पञ्चगुणत्वे १२६० लब्ध, तत्र षड्भिर्भागे २१०, तेषा चतुर्गुणत्वे ८४०, सप्त-भिर्भागे लब्ध १२०, तेषा त्रिगुणत्वे ३६०, तत्र ८ भागे लब्ध ४५, तेषा द्विगुणत्वे ९०, तत्र ९ भागे लब्ध १०, तत्राप्येकगुणने तदेव १०, तत्र एकेन भागे लब्धं १। एव मेर्वङ्का सिद्धा १।१०।४५।१२०।२१०।२५२।२१०।१२०।४५।१०।१ इति ।[१]

इति मात्रामेरु-प्रकरणम् ।

---

[१]–[१] चिह्नान्तर्गतोऽयमश वस्तुतस्तु वर्णमेरुप्रकरणे पत्राङ्क ३४५ स्थ-वर्णमेरुचित्रेऽन्तिम-कोष्ठेन सम्बद्धोऽस्ति ।

मात्रापताका-प्रकरणम्

अथ मात्रापताका—

दत्त्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये ।
अवशिष्टो वै योऽङ्कस्ततोऽभवत् पङ्क्तिसञ्चार. [।।६७।।]

अत्र उद्दिष्टाङ्काः १।२।३।५।८ इत्यादय. प्रागुक्तास्तेषु द्विकापेक्षया वामस्थ एक. तयोर्योगे ३ इति त्रिके पक्तित्यागः, द्विकाधस्त्रिकः तदध. ४, तदध. ६, तदध. ७, तदध. ९ । पुनः, उद्दिष्टाङ्क. ५ द्विकत्रिकयोर्योगे जात , तदध. ८ उद्दिष्टाङ्कस्तस्य पक्तित्याग । पञ्चकाध स्थितेः तदधोऽधः १०।११।१२, पुनः पक्तौ १३, एव षट्कलस्य पताका । तस्यां त्रिक-पचञ्कयो एकस्य चतु कस्य उद्दिष्टे लोपात्–अदर्शनात् त्रिषु गुरुषु प्रथमरूपस्थेषु एकस्यैव लोप । एतावता २।३।४।६।७।९ रूपाणि द्विगुरूणि, पञ्चकादनन्तर उद्दिष्टे ६।७ अङ्कयोर्लोपात् द्विगुरुलोपेन जातानि ५।८।१०।११।१२ रूपाणि एकगुरूणि इत्यर्थः, एक १३ सर्वलघुरूपम् । एवं सर्वत्र पताका प्रागेव न्यासेन दर्शिता–उदाहृता दशमात्रिकस्य ९८ पूर्णरूपै. ।

चतु कले न्यास

१	२	५
	३	
	४	

पञ्चकलपताका

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

विषमकले पञ्चकलस्य अष्टरूपाणि । तत्र १।२।४ रूपाणि द्विगुरूणि, ५।३।६।७ रूपाणि त्रिकस्य एकस्य लोपात् एकगुरुलोपेन एकगुरुकानि ।

चतु.कले एक सर्वगुरुक, २।३।४ रूपाणि एकलोपात् एकगुरूणि, पञ्चम सर्वलम् । इति पताकाकरणम् ।

समाङ्कमात्राया, विषमे तु लोप प्राप्तोऽङ्क' परोद्दिष्टाङ्काधः स्थाप्य एकलोपे । सप्तकले तत एव लुप्तस्त्रिकः पञ्चकाध. त्रिकाधः, परेपि षडाद्या' सप्तदशान्ता अष्टकषोडशवर्जा उद्दिष्टद्विकाधः ४।६ इत्यङ्कद्वयमेव त्रिगुरुक-एकलघुरूपज्ञापकम् । उद्दिष्टपञ्चकाधः ३।६।७।१० इत्यादीनि रूपाणि द्विगुरुक-त्रिलघुरूपाणि । पुन. त्रयोदशोद्दिष्टाङ्काधः ८।१६।१८।१९।२० एकगुरु-पञ्चलघुरूपाणि । एक २१ रूप सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलेपि १।२।४ द्विगुरु-एकलघूनि, ५।३।६।७ एकगुरु-त्रिलघूनि, ८ सर्वलम् ।

मात्रापताका

उद्दिट्ठा सरि अका थिप्पहु, वामावत्ते परलइ लुप्पहु ।
एक लोपे इक गुरु जाण, दुइ तिणि लोपे दुइ तिणि जाण ।
मत्तपताका पिंगल गाव, जे पाइअ तापर हि मेलाव ।।

[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १, पद्य ४८]

चतु.कले ५ भेद

१	२	५
	३	
	४	

द्वि–त्रि–चतुर्थानि एकगुरूणि

पञ्चकले ८ भेद

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

१।२।४, रूपद्वय द्विगुरु

५।३।६।७ एकगुरु

अष्टम सर्वलघु

षट्कले पताका

१	२	५	१३
	३	८	
	४	१०	
	६	११	
	७	१२	
	९		

षट्कले १ एक सर्वगुरु

२।३।४।६।७।९, द्विगुरूणि

पञ्चाष्टदशादीनि ५।८।१०।११।१२। एकगुरूणि

त्रयोदश सर्वलघु

सप्तकलपताका

१	२	५	१३	२१
	४	३	८	
	९	६	१६	
		७	१८	
		१०	१९	
		११	२०	
		१२		
		१४		
		१५		
		१७		

सप्तकले १।२।४।९ रूपाणि त्रिगुरूणि।

५।३।६।७।१०।११।१२।१४।१५।१७, रूपाणि द्विगुरूणि।

१३।८।१६।१८।१९।२० रूपाणि एक-गुरूणि।

२१ एक सर्वलघुरूपम्।

१, २, ३, ५, ८, १३, २१, ३४, ५५, ८९

१	२	५	१३	३४	८९
	३	८	२१	५५	
	४	१०	२६	६८	
	६	११	२९	७४	
	७	१२	३१	८१	
	९	१६	३२	८४	
	१४	१८	३३	८६	
	१५	१९	४२	८७	
	१७	२०	४७	८८	
	२२	२३	५०		
	३५	२४	५२		
	३६	२५	५३		
	३८	२७	५४		
	४३	२८	६०		
	५६	३०	६३		
		३७	६५		
		३९	६६		
		४०	६७		
		४१	७१		
		४४	७३		
		४५	७४		
		४६	७५		
		४८	७८		
		४९	७९		
		१	८०		
		५७	८२		
		५८	८३		
		५९	८५		
		६१			
		६२			
		६४			
		६९			
		७०			
		७२			
		७७			

दशमात्रिकस्य पताका

उद्दिष्टवदङ्का देयाः। १।२।३।५।८। १३।२१।५५।८९; अत्र १।२ मेलने ३ इति त्रिकस्य लोपोऽस्ति, ३।५ मेलने ८ तस्य लोपः। ८।१३ मेलने २१ तल्लोपः, २१।३४मेलने५५तल्लोपः। ते लुप्ताङ्का द्वितीयपङ्क्तौ प्रथमपक्तेरधः स्थाप्याः।

२।३।४।६ इत्यादि चतुर्गुरुकाणि रूपाणि।

५।८।१०।११।१२ इत्यादीनि त्रिगुरुकाणि रूपाणि।

१३।२१।२६।२९ इत्यादीनि द्विगुरूणि

३४।५५।६८।७४ इत्यादि एकगुरूणि, ८९ सर्वलम्।

इति मात्रापताका-प्रकरणम्।

वर्णमर्कटी-प्रकरणम्

अथ वर्णमर्कटीकरण यथा—

प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरस्यां तु द्विगुणान् अक्षरसख्येषु तेष्वेव [।। ७१ ।।]

प्रथमाया पङ्क्तौ १।२।३।४।५।६।७ इत्याद्यान् लिखेत् । अपरस्या द्वितीय-पङ्क्तौ द्विगुणान् २।४।८।१६।३२।६४।१२८ इत्यादीन् लिखेत् । ऊर्ध्वाध षट्-पङ्क्तय कार्याः । प्रथमपक्तिस्थैरङ्कैर्द्वितीयपक्तिगान् अङ्कान् विभावयेत्–गुण-येत्,. जातैरङ्कैश्चतुर्थपक्तिकोशान् पूरयेत् । २।८।२४।६४।१६०।३८४।८९६ इत्यादि। तत पञ्चमी पक्ति षष्ठी च पंक्ति चतुर्थपक्तिकोशाङ्कार्द्धेन १।४।१२। ३२।८०।१९२।४४८ ईदृशाङ्करूपेण पूरयेत् । तत तुर्यपक्तिस्थै. पञ्चमपक्ति-स्थान् अङ्कान् सम्मील्य तृतीयपक्तिस्थकोशान् [३।१२।३६।९६।२४०।५७६। १३४४।] पूरितान् कुर्यात् ।

एवमनया मर्कटया वर्णवृत्त १, तद्भेदाः २, तेषा मात्रा ३, वर्णा ४, गुरव. ५, लघव ६ षडपि पदार्था ज्ञायन्ते । प्रस्तारस्यैते प्रकारा बोध्या.। यन्त्रन्यास प्रागुक्त ।[1]

एव एकाक्षरं वृत्त तस्य भेदद्वय, मात्रास्तिस्र , वर्णद्वय, एको गुरु , एको लघु । द्वयक्षरे वृत्ते चत्वारो भेदा , द्वादशमात्रा , अष्टौ वर्णा , चत्वारो गुरवस्तावत एव लघव. । एव सर्वत्र ज्ञेयम् ।

आदीति । पूरयेदिति । कुर्यादिति । वृत्तमिति । सूत्रचतुष्टय गतार्थम् । [।। ७२–७५ ।।]

अक्खरसखे कोठा किज्जसु, छह पंती तहि अका दिज्जसु ।
एक्कहि आइहि पढमा पती, दूसरि दूणा बेवि णिभती ।।
आइ वेवि गुण चौढ ठविज्जसु, ता अद्धे पचमि छठ्ठमि किज्जसु ।
चौथी पचइ दूहु मेलिज्जसु, तीसरि पती अका दिज्जसु ।।
वित्त पअ भेअ मत्त अरु वण्णह, पचमि छट्ठमि लहु गुरु गण्णह ।

१ यन्त्रन्यास ३६२ पत्राङ्के द्रष्टव्य ।

गुरु लहु माला जुयल, वेय वेय ठाविज्जे गुरु-लहुयं ।
तिस पिच्छे इम ठाविज्जइ, अद्ध गुरु अद्ध लहुयाइ ॥

वर्णमर्कटी

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	९६	२४०	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६
लघु+	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८
गुरु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८

+ अत्र लघुसंख्या वृत्तमौक्तिके षष्ठपक्तावुक्ता युक्ता च ।

आदिपक्तिस्थित एकं तेन द्वितीयपक्तिग द्विकः गुणितः जातं २, एवं तुर्यपक्तिगः द्विकः सिद्धः । आदिपक्तिगद्विकेन तदधः ४ गुण्यते जातं ८, एवं त्रिकेन अष्टगुणने २४, चतुष्केन षोडशगुणने ६४, पञ्चकेन ३२ गुणने १६०, षट्केन ६४ गुणने ३८४, सप्तकेन १२८ गुणने ८९६, जातं तुर्यपक्तिभरणम् । तुर्यपक्तिस्थाङ्काना अर्द्धेन पञ्चमी षष्ठी च पंक्तिं पूरयेत् । तुर्यपक्तिस्थं अङ्कं पञ्चमपक्तिस्थाङ्केन योज्यते तदा तृतीयपक्तिस्था अङ्का जायन्ते ।

इति वर्णमर्कटीकरणम् ।



मात्रामर्कटी-प्रकरणम्

अथ मात्रामर्कटीमाह—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पक्तिषट्क,
कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो ।
तेषु द्व्यादीनादिपङ्क्तावथाङ्कां-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क सर्वकोशेषु दद्यात् [।। ७६ ।।]

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क पक्षपक्तावथापि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तां,
कुर्यात् पूर्णान्नेत्रपक्तिस्थकोष्ठान् [।। ७७ ।।]

वृत्तं	१	२	३	४	५	६	७	८	९
भेदाः	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५
मात्रा.	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५
वर्णाः	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
गुरवः	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

आद्याङ्क एकक मुक्त्वा द्वितीयपङ्क्तौ द्व्यादीन्–द्व्यादिभिरेव भावयित्वा–गुणयित्वा, नेत्रशब्देन अत्र हरनेत्राणि त्रीणीति तृतीया पक्ति पूरयेत्, तदङ्का ४।९।२०।४०।७८।१४७।२७२।४९५ इय तृतीया पक्ति ।

तुर्यां पक्ति विमुच्य पञ्चमी पक्ति वक्ति—प्रथमे द्वितीयमङ्क, द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि दत्त्वा बाणद्विगुण तद्द्विगुण नेत्र (३) तुर्य (४) योः दद्यात् । द्विकस्य द्विकेन गुणकारकरणापेक्षया प्रथमकोश., द्विकाधस्तनः वर्णाङ्कापेक्षया त्रिकाधस्तन कोश, तत्र द्विक ततोऽग्रे द्वितीयकोष्ठे पञ्चमाङ्क दत्त्वा तत. नेत्र-(३) तुर्य (४) कोशयोः बाणा·–पञ्च, तद्द्विगुण–दशक, पुन तद्द्विगुण–विंशति २० दद्यात् ।

एकीकृत्येति । २।५।१०।२० एतान् अङ्कान् सम्मील्य जाते ३७ अङ्के एक अङ्क दत्त्वा ३८ गुणकारापेक्षया पञ्चमपङ्क्ते· पञ्चमं कोश पूर्णं कुर्यात् [।।७९।।]

त्यक्त्वा पञ्चममिति । २।१०।२०।३८ एव ७० एकं तत्रापि दत्त्वा ७१ पञ्चमपक्ते षष्ठ कोश पूरयेत् [।। ८० ।।]

कृत्वैक्यमिति । २।५।१०।२०।३८।७१ एषा ऐक्ये–मेलने जात १४६ तत्र पञ्चदशाङ्क १५ एक च हित्वा षोडशोनत्वे १३० पञ्चमपक्तेः सप्तमकोशं मुनि-(७) प्रमित पूरयेत् [।।८१।।]

एवमिति । स्पष्टार्थम् [।।८२।।]

एवमिति । अनया रीत्या पञ्चमपक्ति पूरयित्वा प्रथम गुणकारापेक्षया प्रथमकोशे द्विकाधस्तने एकाङ्क दत्वा पञ्चमपक्तिस्थैरङ्कै षष्ठी पक्ति पूरयेत् [।।८३।।]

एकीकृत्येति । पञ्चमपक्तिस्थैरङ्कै. षष्ठपक्तिस्थाङ्काना मीलनेन चतुर्थ-पक्ति पूर्णां कुर्यात् । यथा—१।२ योगे ३, पुन. ५।२ योगे ७, पुनः ५।१० मीलने १५, पुन. २०।१० मीलने ३० इत्यादि ज्ञेयम् [।।८४।।]

अथ मात्रामर्कटी

छह छह कोठा पती पार, एक्क कला लिखि लेहु विचार ।
बीए आइहि पढमा पती, दोसरि पुव्व जुअल निब्भती ।।
पढम वेवि गुणि अका लिज्जसु, छद्धइ पती तिहि भरि दिज्जसु ।
चौथी अका पुव्व हि देय्यहु, तीसरि सिर पर तहि करि लेखहु ।।
तीसरि सम छह माले अका, वाचे पंचमि भरहु निसका ।
पच इकट्ठहु ताहि समानहि, चौथी लिखहु लिखाअहु आनहि ।।

सोरठा

लिहि साअर परजन्त, इहि विहि कइ पिंगल ठिअउ ।
अक भरण यह मत्त, पढम भेअ भणि भणि भरहु ।।

दोहा

वित्त भेअ गुरु लघु सहित, अक्खर कला कहन्त ।
पिंगलक इम क्करि कहिअ, जिह गइद उरब्भत ।।

मात्रामर्कटी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	वृ.
१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५	भे
०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	गु.
१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५	ल
१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५	व
१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५	मा.

१ एकं तृतीयपक्तिस्थ, द्विकं तुर्यपक्तिस्थ एकीकृत्य पञ्चमपक्तौ त्रिकः। एव २।५ ऐक्ये ७, तथा ५।१०-ऐक्ये १५, १०।२० ऐक्ये ३०, पुन ३८।२० ऐक्ये ५८, पुनः ३८।७१ ऐक्ये १०९, पुन. ७१।१३० ऐक्ये २०१, पुन तृतीयपक्तिस्थ १३० तत्र तुर्यपक्तिस्थ २३५ ऐक्ये ३६५; एव पञ्चमीपक्ति पूरणीया।

द्वयोर्द्विगुणत्वे ४, त्रिकस्य त्रिगुणत्वे ९, चतुष्कस्य पञ्चगुणत्वे २०, पञ्चानां अष्टगुणत्वे ४०, त्रयोदशानां षड्गुणत्वे ७८, सप्तानां २१ गुणे १४७, अष्टाना ३४ गुणे २७२, नवाना ५५ गुणने ४९५ इति षष्ठी पक्ति। प्रथमद्वितीय-पक्तिभ्या निष्पन्ना।

चतुर्थीपक्तिस्तृतीयपक्तिसमा पर पूर्णाध एक, तत २। ५।१०।२०।३८। ७१।१३०। अथ तृतीयपक्तिस्थ १३० तस्याध. तुर्यपङ्क्तौ २३५।

> वृत्त प्रभेदो मात्रा च, वर्णा लघुगुरू तथा।
> एते षट् पक्तितः पूर्ण—प्रस्तारस्य विभान्ति वै [॥ ८५ ॥]

अत एव लघूनां वर्णाना सख्याङ्काः पञ्चम्यां पङ्क्तौ न्यस्ता। गुरव. पष्ठ्याम्। वर्णमर्कट्या लघुन्यास षष्ठपक्तौ, गुरुन्यास पञ्चमपङ्क्तौ वर्णेषु गुर्वादित्वात्। मात्रामर्कट्या लघुसख्या पञ्चम्या युक्ता लघ्वादित्वात्। तत्रापि अष्टमकोष्ठे २३५ भरण, अनुक्तमपि २।५।१०।२०।३८।७१।१३० एषा ऐक्ये २७६; तत्र ४० हीनकरण, न्यासे ५ अङ्कादुपरि तिर्यक् १५ ततोप्युपरि पङ्क्तौ तिर्यक्कोशे ४० सद्भावात्। एवं शेष २३६ ततोऽपि सप्तमकोशभरणवत् एकोनत्वे २३५ लघवो नवकलच्छन्दसि।

अत्र उद्दिष्टादिवत् सर्वे प्रत्यया चतुर्विशतिर्ज्ञेया। प्रस्तार १, नष्ट २, उद्दिष्ट ३, लगक्रिया ४, सख्या ५, अध्वा ६, मेरु ७, पताका ८, मर्कटी ९, समपाद १०, अर्धसमपाद ११, विषमपादता १२। एते वर्णमात्राभ्या चतुर्विशतिः। कौतुकहेतु:—

		वृत्तभेदा			वृत्तभेदा
१.	[एकाक्षरे]	२	१४.	[चतुर्दशाक्षरे]	१६,३८४
२	[द्व्यक्षरे]	४	१५	[पञ्चदशाक्षरे]	३२,७६८
३	[त्र्यक्षरे]	८	१६.	[षोडशाक्षरे]	६५,५३६
४.	[चतुक्षरे]	१६	१७.	[सप्तदशाक्षरे]	१,३१,०७२
५	[पञ्चाक्षरे]	३२	१८.	[अष्टादशाक्षरे]	२,६२,१४४
६	[षडक्षरे]	६४	१९	[एकोनविंशाक्षरे]	५,२४,२८८
७	[सप्ताक्षरे]	१२८	२०.	[विंशाक्षरे]	१०,४८,५७६
८	[अष्टाक्षरे]	२५६	२१.	[एकविंशाक्षरे]	२०,९७,१५२
९	[नवाक्षरे]	५१२	२२.	[द्वाविंशाक्षरे]	४१,९४,३०४
१०	[दशाक्षरे]	१,०२४	२३	[त्रयोविंशाक्षरे]	८३,८८,६०८
११	[एकादशाक्षरे]	२,०४८	२४	[चतुर्विंशाक्षरे]	१,६७,७७,२१६
१२.	[दादशाक्षरे]	४,०९६	२५	[पञ्चविंशाक्षरे]	३,३५,५४,४३२
१३.	[त्रयोदशाक्षरे]	८,१९२	२६.	[षड्विंशाक्षरे]	६,७१,०८,८६४

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

कोटचस्त्रयोदश-द्वाचत्वारिंशल्लक्षका नगा ।
भू. सहस्राणि षड्विंशत्यग्रा सप्तशती पुन ॥ १ ॥

प्रस्तारपिण्डसख्येय विधृता **वृत्तमौक्तिके** ।
बोधनात् साधनाल्लभ्या येषां नालस्यवश्यता ॥२॥

उद्दिष्टादिषु **वृत्तमौक्तिकमिति** व्याख्यातवान् **श्वेतसिक्**,
श्रीमेघाद्विजयाख्यवाचकवरः प्रौढया **तपाम्नायिकः** ।
यत्सम्यग्विवृत्त न वाऽनवगमान्मिथ्याधृत सज्जनै-
स्तत्सशोध्य शुभ विधेयमिति मे विज्ञप्तिमुक्तालता ॥३॥

समित्यर्थशिवभू १७५५ वर्षे, प्रौढिरेषाऽभवत्श्रिये ।
भान्वादिविजयाध्यायहेतुतः सिद्धिमाश्रिता ॥ ४ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकदुर्गमबोध

श्रीरस्तु । वाचकपाठकानाम् ।

प्रथम परिशिष्ट

टगणादि कला-वृत्तभेद-पारिभाषिक शब्द सङ्केत

१ टगण[1] ६ मात्रा, भेद १३—

१. ऽऽऽ हर[2]
२. ।।ऽऽ शशि
३. ।ऽऽ। सूर्य[3]
४. ऽ।।ऽ शक्र[4]
५. ।।।।ऽ शेष
६. ।ऽ।ऽ अहि
७. ऽ।ऽ। कमल[5]
८. ।।।ऽ। धातृ[6]
९. ऽऽ।। कलि
१०. ।।ऽ।। चन्द्र
११. ।ऽ।।। ध्रुव
१२. ऽ।।।। धर्म
१३. ।।।।।। शालि[7]

---

१ ट ठ ड ढ ण गणों की कलायें, प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में वृत्तमौक्तिक के अनुसार ही हैं किन्तु प्राकृतपैंगल में ट, ठ, ड, ढ, ण के स्थान पर छ, प, च, त, द गण नाम भी स्वीकृत हैं। स्वयम्भूछन्द और कविदर्पण में टादि के स्थान पर छ, प, च, त, द और प, त, ट, च क स्वीकृत हैं। इन दोनों ग्रंथों में केवल छः, पांच, चार आदि कलाविधान ही दिए हैं किन्तु इनके प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय की सूची नहीं है। हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन में ष प च त द गण और प्रस्तार भेद दिये हैं किन्तु नामादि की सूची नहीं है।

२ वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में हर के स्थान पर शिव है।

३ सूर्य के स्थान पर प्राकृतपैंगल में सूर, वाणीभूषण में दिनपति, और वाग्वल्लभ में दिनेश्वर है।

४ शक्र के स्थान पर वाणीभूषण में सुरपति और वाग्वल्लभ में सुरेश है।

५ कमल के स्थान पर वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में सरोज है।

६ धातृ के स्थान पर प्राकृतपैंगल में ब्रह्मा और वाग्वल्लभ में धाता है।

७ शालि के स्थान पर प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ में शालिकर है।

२ ठगण ५. मात्रा, भेद ८—

१. ।SS. इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जर पर्याय[1], रदन, मेघ, ऐरावत[2], तारापति।[3]

२. S।S. सूर्य[4], वीणा, विराट्[5], मृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड पर्याय[6], जोहल, यक्ष, भुजगम[7], पक्षी

३. ।।।S चाप

४. SS। हीर

५. ।।S। शेखर

६. ।S।। कुसुम

७. S।।। अहिगण

८. ।।।।। पापगण

तथा प्रहरण[8] (आयुध) के विविध नाम पंचकल के वाचक हैं।

---

१ कुञ्जर के पर्यायवाची शब्दो मे वृत्तमौक्तिक के मतानुसार 'गज' शब्द सम्मिलित नही है। 'गज' को चतुर्मात्रिक स्वीकार किया है।

२. वृत्तजातिसमुच्चय के अनुसार पञ्चमात्रिक ।SS ऐरावत के निम्न पर्याय और स्वीकृत है—सुरगज, सुरवारण, सुरहस्तिन्।

३ प्राकृतपैंगल के अनुसार पञ्चमात्रिक ।SS मे गगन, झम्प और लम्प तथा वाग्वल्लभ मे दन्तावल पयोदन्त भी स्वीकृत है।

४ सूर के स्थान पर प्राकृतपैगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ मे 'सूर' है।

५. विराट् के स्थान पर प्राकृतपैंगल और वाणीभूषण मे बिडाल है।

६ वृत्तजातिसमुच्चय मे गरुडपर्यायो मे निम्न शब्द और स्वीकृत है—पक्षिनाथ, विहगनाथ, विहगाधिपति, विहगपति, सुपर्ण।

७. प्राकृतपैंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक मे 'भुजगम' को S।S पचमात्रिक स्वीकार किया है जब कि वृत्तजातिसमुच्चय मे 'भुजगेन्द्र, भोगिन्, विषधर' को ।।।S पचमात्रिक माना है।

८ वृत्तमौक्तिककार ने प्रहरण (आयुधो) के विविध नाम पञ्चकल के वाचक माने हैं, ऐसा मानते हुए भी 'प्रहरण' और 'वज्र' को ।।S चतुष्कल मे, 'पञ्चशर' को ।। चतुष्कलवाची, 'तोमर' को ।S त्रिमात्रिक और 'बाण' को ।।।। चतुष्कलवाची और एकमात्रिक भी स्वीकार किया है। वृत्तजातिसमुच्चयकार ने तोमर, प्रहरण और बाण को पचकलवाची ही माना है। साथ ही प्रहरण के नामो की निम्नलिखित तालिका भी दी है—अशनि, असि, आयुध, कणक, करवाल, क्षुरप्र, चाप, तोमर, धनुस्, पट्टिश, प्रालम्ब, बाण, बाणासन, मुद्गर, रथाङ्ग, शक्तिदण्ड, शर, शरासन, शिलीमुख।

वृत्तजातिसमुच्चय मे पुरोहित, पुरोधस् और मन्त्रिन्' शब्दो को चतुष्कल एव पञ्चकल वाची स्वीकार किया है। वृत्तमौक्तिक, प्राकृतपैंगल और वाणीभूषण मे इनका कोई भी उल्लेख नही है।

३. गण ४. मात्रा, ५ भेद—

१. ऽ ऽ (गुरुयुग्म)[1] कर्ण, सुरतलता, गुरुयुगल, कर्णसमान, रसिक, रसलग्न, सुर्पतिलम्बित, मनोहर[2], लहलहित[3]

२. । । ऽ (गुर्वन्त) करतल, कर[4], पाणि, कमल, हस्त, प्रहरण, भुजदण्ड, बाहु, रत्न, वज्र, गजाभरण, भुजाभरण

३. । ऽ । (गुरुमध्य) पयोधर[5], भूपति[6], नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच वाचक शब्द, गोपाल, रज्जु, पवन

४. ऽ । । (आदिगुरु) वसुचरण, दहन, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जङ्घायुगल, रति[7]

५. । । । । (सर्वलघु) विप्र, द्विज, जाति, शिखर, पंचशर, बाण, द्विजवर

तथा गज, रथ[8], तुरंगम और पदाति ये सब चतुष्कल के वाचक हैं।

१. चतुर्मात्रिक ऽ ऽ के और । । । । के पर्याय वाणीभूषण में प्राप्त नहीं हैं।

२. मनोहर के स्थान पर प्राकृतपिंगल में 'मनहरण' है।

३ प्राकृतपिंगल में ऽ ऽ चतुर्मात्रिक में सुवर्ण अधिक है।

४. 'करपल्लव' को भी । । ऽ चतुर्मात्रिक, वृत्तजातिसमुच्चयकार ने माना है। वाग्वल्लभ-कार ने अलङ्कृति भी स्वीकार किया है।

५. वृत्तजातिसमुच्चय में पयोधर के वाची 'स्तन, स्तनभार' भी स्वीकृत हैं; जब कि स्तनादि का प्रयोग वृत्तमौक्तिककार ने कुचवाची शब्दों में किया है। वाग्वल्लभ में पयोभृत्, पयोद, जलद, जलधर, वारिद भी स्वीकृत है।

६. भूपति के पर्यायों में वृत्तजातिसमुच्चय में नराधिप, पार्थिव, भूमिनाथ, राजन् और सामन्त भी स्वीकृत हैं। प्राकृतपिंगल में नरपति, जनपतनायक अधिक हैं। वाणी-भूषण में मनुजपति अधिक है। प्रा० पिं० और वाणीभूषण में अश्वपति और चक्रवर्ती अधिक है, जब कि प्रा. पिं., वृत्तजातिसमुच्चय और वाणीभूषण द्वारा समर्थित वसु-धाधिप अधिक है। वाग्वल्लभ में मनुजपति, नक्राधीश, तुरगपति और वर्ग अधिक है।

७. प्राकृतपिंगल में चतुर्मात्रिक ऽ । । में नूपुर भी स्वीकृत है; जब कि प्राकृतपिंगल, वृत्त-मौक्तिकादि में द्विमात्रिक ऽ में स्वीकृत एवं प्रयुक्त है। वाग्वल्लभ में दहन, बलभद्र, जङ्घायुगल और रति शब्द है एवं पिता, हलायुध और पावक अधिक हैं।

८. वृत्तजातिसमुच्चय में चतुष्कलवाची गजादि के निम्नपर्याय स्वीकृत हैं—करि, कुञ्जर, गज, मातंग, वारण, वारणेन्द्र, हस्तिन्, तुरग, हरि, योध, स्यन्दन। जब कि वृत्त-मौक्तिककार ने गजातिरिक्त कुञ्जर पर्यायों को । ऽ ऽ पंचमात्रिक स्वीकार किया है।

४ ढगण ३. मात्रा भेद, ३—

१. । ऽ ध्वज[1], चिह्न, चिर, चिरालय, तोमर, पत्र, चूतमाला[2], रस, वास, पवन, वलय, तुम्बुरु,
२. ऽ । करताल, पटह[3], ताल, सुरपति, आनन्द, तूर्य निर्वाण, सागर[4]
३. । । । भाव[5], रस, ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द

५. णगण २ मात्रा, भेद २—

१. ऽ नूपुर, रसना, चामर, फणि, मुग्धाभरण, कनक, कुण्डल, वक्र, मानस, वलय, कंकण, हारावली, ताटंक, हार, केयूर[6]
२. । । सुप्रिय, परम[7]

एक लघु के नाम निम्न प्रकार हैं—

शर, मेरु, दण्ड, कनक, शब्द, रूप, रस, गन्ध, काहल, पुष्प, शंख, तथा बाण[8]।

---

१. वृत्तजातिसमुच्चय मे । ऽ त्रिकलवाची निम्न शब्द और अधिक है—कदलिका, ध्वजपट, ध्वजपताका, ध्वजाग्र, पताका, वैजयन्ती । वाग्वल्लभ मे पटच्छदन अधिक है ।

२. वाणीभूषण मे चूतमाला के स्थान पर चूडमाला है । वाग्वल्लभ मे चूतभवा, स्रक्, आम्रमाला है ।

३. वृत्तमौक्तिककार ने तूर्य और पटह को ऽ । त्रिकलवाची माना है, जब कि वृत्तजातिसमुच्चयकार ने तूर्य और पटह को । । । त्रिकलवाची माना है ।

४ प्राकृतपैंगल मे 'छन्द' ऽ । त्रिकलवाची अधिक है । वाग्वल्लभकार ने सखा, अय., आयः अधिक स्वीकार किये है और सुरपति के स्थान पर स्वःपति तथा आनन्द के स्थान पर नन्द पर्याय स्वीकार किये हैं ।

५. वृत्तमौक्तिक मे भाव और रस । । । त्रिकलवाची स्वीकृत है, और रस । एककलवाची भी । जब कि वृत्तजातिसमुच्चय मे । । भाव और रस । । द्विमात्रिक स्वीकृत है । वाग्वल्लभ मे । । । मे कुलभाविनी भी स्वीकृत है ।

६. वृत्तजातिसमुच्चय मे ऽ द्विमात्रिक मे निम्न शब्द भी स्वीकृत है—कटक, पद्मराग, भूषण, मणि, मरकत, मुक्ता, मौक्तिक, रत्न, विभूषण, हारलता । वाणीभूषण मे 'मञ्जरी' भी स्वीकृत है । वाग्वल्लभ मे अङ्गद, मञ्जीर, कटक भी स्वीकृत हैं ।

७ प्राकृतपैंगल मे सुप्रिय, परम के स्थान पर निजप्रिय, परमप्रिय है ।

८. लघुवाचक । शब्दो मे प्राकृतपैंगल मे 'लता' और वाणीभूषण एव वाग्वल्लभ मे स्पर्श भी स्वीकृत है ।

इस पद्धति से मगणादि ८ गणो के पर्याय निम्नलिखित होते हैं—

१. मगण – हर

२. यगण – इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जरपर्याय, रदन, मेघ, ऐरावत, तारापति ।

३. रगण – सूर्य, वीणा, विराट्, मृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड-पर्याय, जोहल, यक्ष, भुजंगम ।

४. सगण – करतल, कर, पाणि, कमल, हस्त, प्रहरण, भुजदण्ड, बाहु, रत्न, वज्र, गजाभरण, भुजाभरण

५. तगण – हीर ।

६. जगण – पयोधर, भूपति, नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच वाचक शब्द, गोपाल, रज्जु, पवन ।

७. भगण – वसुचरण, दहन, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जघा-युगल, रति ।

८. नगण – भाव, रस, ताण्डव और भामिनी के पर्यायवाची शब्द ।

—।—

द्वितीय परिशिष्ट

(क) मात्रिक-छन्दों का अकारानुक्रम

* चिह्नित छन्द गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और पटपद के भेद हैं।
(टि)–टिप्पणी मे उद्धृत छन्द।

(ख) वर्णिक-छन्दों का अकारानुक्रम

संकेत– ( ) वृत्तमौक्तिक मे दिया हुआ नाम-भेद, अ=अर्द्धसम छन्द, द=दण्डक छन्द, प्र=प्रकीर्णक छन्द, वि=विषमवृत्त, वै=वैतालीय वृत्त, टि=टिप्पणी मे उद्धृत छन्द।

(ग.) विरुदावली छन्दों का अकारानुक्रम

तृतीय परिशिष्ट

(क) पद्यानुक्रम

(ख.) उदाहरण-पद्यानुक्रम

चतुर्थ परिशिष्ट

क. मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची—

	ग्रन्थ-नाम	ग्रन्थकार
१	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट
२	छन्द सूत्र	पिङ्गल
३	नाटचशास्त्र	आचार्य भरत
४	वृहत्सहिता	वराहमिहिर
५	स्वयम्भूछन्द	स्वयम्भू
६	कविदर्पण	अज्ञात
७	वृत्तजातिसमुच्चय	कवि विरहाङ्क
८	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९	प्राकृतपैङ्गल	हरिहर (?)
१०	छन्दोनुशासन	हेमचन्द्राचार्य
११	छन्दोनुशासन-स्वोपज्ञटीका	"
१२	वाणीभूषण	दामोदर
१३	वृत्तरत्नाकर	केदारभट्ट
१४	वृत्तरत्नाकर-नारायणीटीका	नारायणभट्ट
१५	छन्दोमञ्जरी	गगादास
१६	वृत्तमुक्तावली	श्रीकृष्णभट्ट
१७.	वाग्वल्लभ	दु खभञ्जन
१८	जयदेवच्छन्द	जयदेव
१९	छन्दोनुशासन	जयकीर्ति
२०	रत्नमञ्जूषा	अज्ञात जैन कवि
२१	गाथालक्षण	नन्दिताढय
२२	छन्दोविचिति	जनाश्रय

सकेत— **छन्दनाम**=वृत्तमौक्तिक के क्रमानुसार है। **मात्रासख्या**=छन्द के प्रत्येक चरण की मात्रायें। **लक्षण**=ट=६ मात्रा, ठ=५ मात्रा, ड=४ मात्रा, ढ=३ मात्रा, ण=२ मात्रा, ग=दो मात्रा, ल=१ मात्रा। **सन्दर्भ-गन्थ-सङ्केताङ्क**=ऊपर सूचित सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची की क्रम-सूचक संख्या है। छन्द-नाम एव लक्षण के आगे के अक यह सूचित करते है कि इन-इन अको के ग्रन्थो मे भी यह छन्द इसी नाम से स्वीकृत है और नाम-भेद के आगे के अक यह सूचित करते है कि इन-इन ग्रन्थो मे इसी लक्षण का छन्द इस नाम से प्रचलित है। जिन छन्दो का इन ग्रन्थो मे उल्लेख नही है उनके अक यहाँ नही दिए गए है।

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
गाथा	[१२, १८, १२ १५; ड- ७, ग; इसमें छठा 'ड' जगण होता है या चार लघु होते हैं। इसके विषम गणो मे अर्थात् १, ३, ५, ७ 'ड' मे जगण निषिद्ध है। चतुर्थ चरण मे छठा 'ड' केवल एक लघु होता है।]	१, ५, ६. ७, ६, १०, १२, १४, १६, १७, २१, आर्या- १०, १४, १७, १८, १६, २०, २२.
विगाथा	[१२, १५, १२, १८]	१, ६, १२, १४, १६, १७, २१; उद्गीति- ५, ६, १०, १४, १७, १८, १६, २१.
गाहू	[१२, १५, १२, १५]	१, ६, १४, गाथिका- १६, गाह- २१; उपगीति- ५, ६, ७, १०, १२, १४, १७, १८, १६, २१.
उद्गाथा	[१२, १८, १२, १८]	१, ६, १४, १६, १७ २१; गीति- ५, ६, ७, १०, १२, १४, १७, १८, १६, २०, २१, २२
गाहिनी	[१२, १८, १२, २०]	१, ६, १२, १४, २१; गाथिनी- १६, १७, ललितावल्गुगीति- १४.
सिंहिनी	[१२, २०, १२, १८]	१, ६, १२, १४, १६, १७; ललितावल्गु-गीति- १४.
स्कन्धकम्	[१२, २०, १२, २०]	१, ५, ६, ७, ६, १०, १२, १४, १६, १७, २१; आर्यागीति- १४, १७, १८, १६, २०
दोहा	[१३, ११, १३, ११; प्रथम और तृतीय चरण मे ट, ड, ढ और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण मे ट, ड, ल; अर्द्धसम.]	१, ६, १०, १२, १४, १७, दोहक- ६; द्विपथा- १६, द्विपथ्या- १७, द्विपथक- ७, एव ५, २१ के अनुसार मात्राएं- १४, १२, १४, १२ है।
रसिका	[११; षट्पदी, ड, ड, ढ.]	१, ६ १७; रसिक- १६, उत्कृष्टा- १४; सुललित- १७; सुललितमति- १२
रोला	[२४, चतुष्पदी]	१, ६, १२, १४, १६, १७.
गन्धानक	[१७, १८, १७, १८ वर्ण, अर्द्धसम]	१, ६, १२, १६, गन्धा-१४; १७ के अनुसार १७ वर्ण २० मात्रा १८ वर्ण २४ मात्राएँ होती हैं।
चौपैया	[३०; चतुष्पदी; षोडशपदी समग्र मात्रा ४८०; ड-७, ग.]	१, ६, १२ १७, चतुष्पदा- १४, चतुष्पदी- १६

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
घत्ता	[३१; द्विपदी; ड-७, ढ; 'ढ' त्रिलघुक होता है।]	१, ६, ९, १२, १४, १६, १७; ६ के अनुसार षट्पदी है, लक्षण भिन्न-भिन्न हैं– १२, ८, १३। ८, ८, ११। १०, ८, ११। १२, ८, ११। १२, ८, १२। १०, ८, १२। १०, ८, १३। १०, ८ १४। १०, ८, २२। ५ के अनुसार चतुष्पदी, लक्षण– ९, १४, ९, १४। १२, १२, १२, १२। १६, १६, १६, १६ है।
घत्तानन्द	[३१; ट. ड. ड. ड. ठ. ड. ड.]	१, ९, १२, १४, १७
काव्यम्	[२४; चतुष्पदी, ट. ड. ड. ड. ट; तीसरा 'ड' जगण हो या चार लघु हो।]	१, ९, १२, १४, १६; वस्तुवदन– ६.
उल्लालम्	[२८; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ढ. ट ड. ढ]	१, ९, १२, १४, १६; कर्पूर– १०
षट्पद	[२४, २४, २४, २४, २८, २८, मिश्रित षट्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ण; दो चरण उल्लाल के लक्षणानुसार]	१, ६, ९, १२, १४, १६, १७; वस्तुक– २१
पज्झटिका	[१६; चतुष्पदी; ड-४; चौथा 'ड' जगण होता है।]	१, ९, १२, १४, १६, १७; पद्धटिका– ५, १०, २१, पद्धतिका– ६.
अडिल्ला	[१६; चतुष्पदी; ड-४; इसमे जगण वर्जित है और चरण के अन्त मे दो लघु होने चाहिए]	१, ५, ६, ७, ९, १०, अरिल्ला– १२; अरिल्लम्– १६, १७; अलिला– १७, अलिल्लिह– १४.
पादाकुलकम्	[१६; चतुष्पदी, गणनियम-रहित]	१, ५, ६, ९, १२, १४, १६, १७, १८, १९, २२; १० के अनुसार १२ मात्रा चतुष्पदी होती है।
चौबोला	[१६, १४, १६ १४ अ०स०]	१, ९, चतुर्वचनं– १६.
रड्डा	[१५, १२, १५, ११, १५, दोहा के चार चरण; नवपदी, प्रथम चरण मे 'ट ड. ड. ड.' अन्तिम 'ड' जगण हो या चार	१, ५, ६, ७, ९, १०, १४, १७, नवपदं– ६, १२, १४, १७.

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	लघु हो; द्वितीय चरण मे 'ड. ड. ड.' तीसरा 'ड' चार लघुरूप मे हो; तृतीय और पञ्चम चरण मे 'ढ. ड. ड. ड.' अन्त मे दो लघु आवश्यक हैं; चतुर्थ चरण मे 'ड. ड. ढ' और अन्तिम चार चरण दोहा-लक्षणानुसार होते हैं ।]	
करभी रड्डा	[१३, ११, १३, ११ १३, दोहा]	१, ७, ९; कलभी– १४.
नन्दा रड्डा	[१४, ११, १४, ११, १४, दोहा]	१, ९, १४; मोदनिका– ७.
मोहिनी रड्डा	[१९, ११, १९, ११, १९, दोहा]	१, ९, १४.
चारुसेना रड्डा	[१५, ११, १५ ११, १५, दोहा]	१, ९, १४; चारुनेत्रा– ७.
भद्रा रड्डा	[१५, १२, १५, १२, १५, दोहा]	१, ९, १४.
राजसेना रड्डा	[१५, १२, १५, ११, १५, दोहा]	१, ९, १४.
तालंकिनी रड्डा	[१६ १२, १६ ११, १६, दोहा]	१, ९, १४, राहुसेनिका– ७.
पद्मावती	[३२; चतुष्पदी, ड- ८; ये 'ड' S S, I I S, S I I, I I I I रूप मे होने चाहियें । जगण का निषेध है ।]	१, ९, १२, १४, १६; पद्मावतिका– १७.
कुण्डलिका	[दोहा-काव्य-मिश्रित]	१, ९, १२, १४, १६, १७, प्राकृतपिङ्गला-नुसार दोहा-उल्लाला-मिश्रित.
गगनाङ्गणम्	[२५ मात्रा, २० वर्ण; चतुष्पदी, ट. ड. ड. ड. ड. ल. ग.]	१, १२, १७, गगनाङ्ग–९, १६, मदनान्तक– १४.
द्विपदी	[२८; ट. ड. ड. ड. ड. ग.]	१, ९, १२, १४, १६; ५ के अनुसार २६ मात्रा द्विपदी; एवं ६, १०, १९, २१ के अनुसार २८ मात्रा चतुष्पदी; द्विदला– १७, भाण्डीरक्रीडनस्तोत्र की टीका मे १२ मात्रा, चतुष्पदी माना हैं ।
झुल्लणा	[३७, द्विपदी; गणनियमरहित]	१, झुल्लन– ९, १६.
खञ्जा	[४१; द्विपदी; ड- ९, रगण; 'ड' चार लघ्वात्मक हो]	१, ९, १२, १४, १६, खञ्जिका– १७, खंजक– ५, ६; १० के अनुसार २३ मात्रा चतुष्पदी है ।

छन्द-नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
शिखा	[विषम द्विपदी; प्रथम पद मे २८ मात्रा, २७ वर्ण; ड- ६, जगण, द्वितीय पद मे ३२ मात्रा, ३१ वर्ण; ड- ७, जगण; दोनो पदो मे 'ड' चार लघु-रूप मे हो ।	१, ६, १२, १४, १६, १७.
माला	[विषम द्विपदी; प्रथम पद मे ४५ मात्रा, ४१ वर्ण; ड- ६ रगण, गुरुद्वय; द्वितीय पद मे गाथा छन्द का तृतीय और चतुर्थ चरण अर्थात् २७ मात्रा]	१, ६, १२, १४, १६, १७.
चुलिआला	[१३, १६, १३, १६; अर्द्धसम]	१, ६, १२, १६, १७; चूलिका–१४.
सोरठा	[११, १३, ११, १३ अर्द्धसम]	१, ६, १२, १७, सौराष्ट्र– १६, १७, सौराष्ट्रा– १४; सौराष्ट्री– १७.
हाकलि	[१४; चतुष्पदी; प्रथम-द्वितीय चरण मे ११-११ वर्ण और तृतीय-चतुर्थ चरण मे १०–१० वर्ण, सगण या भगण दो गण हो और नगण तथा लघु गुरु हो]	१, ६, १२, १६ १७; काहलि– १४.
मधुभार	[८; चतुष्पदी; ड, जगण]	१, ६, १२, १६; मधुभारतम्– १४; वसुकला– १७; तालवनचरित की टीका मे 'कलगीत'
आभीर	[११; चतुष्पदी; चरण के अन्त मे जगण अपेक्षित है ।]	१, ६, १२, १४, १६, १७, यमलार्जुन-भञ्जनस्तोत्र की टीका मे 'अनुकूला'
दण्डकला	[३२; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ट. ड. ड. गुरु]	१, ६, १६; दण्डकाहल– १४.
कामकला	[३२; चतुष्पदी, यतिभेद– दण्डकला मे १०, ८, १४ पर यति होती है और इसमे १६, १६ पर यति होती है]	१,
रुचिरा	[३०, द्विपदी, ड- ७, गुरु; जगण निषिद्ध है]	१, १२, १७,

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
दीपक	[१०, चतुष्पदी; ड, लघु २, जगण]	१, ९ १२, १४, १६, १७.
सिंहविलोकित	[१६; चतुष्पदी; सगण और ४ लघु का यथेच्छ प्रयोग]	१, १२, १६, १७; सिंहावलोक– ९, १४.
प्लवङ्गम	[२१; चतुष्पदी; ट. ठ. ड. जगण, गुरु]	१, ९, १२, १६, १७.
लीलावती	[३२; चतुष्पदी; लघु गुरु वर्ण-नियम रहित; ड- ८; 'ड' मे सगण, ४ लघु जगण, भगण, गुरुद्वय का प्रयोग अपेक्षित है]	१, ९, १२, १६; लीलावतिका– १७.
हरिगीतम्	[२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ, गुरु]	१, १२, १६, हरिगीतक– १७.
हरिगीतकम्	[३०; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ गुरुद्वय]	१,
मनोहर-हरि गीतम्	२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरु; विराम पर 'ठ' गुर्वंत अपेक्षित है, यति १६, १२ पर है]	१,
हरिगीता	[२८; चतुष्पदी, ठ ट. ठ. ठ. ठ. गुरु, विराम ९, ७, १२ पर अपेक्षित है]	१, ९.
अपरा हरि-गीता	[२८; चतुष्पदी; ठ. ट. ठ. ठ. ठ. गुरु; विराम १४-१४ पर अपेक्षित है]	१,
त्रिभंगी	[३२; चतुष्पदी; ड- ८; जगण निषिद्ध है]	१, ९, १२, १६, १७.
दुर्मिलका	[३२; चतुष्पदी; ड- ८;]	१, १२, दुर्मिला– ९, १६, १७,
हीरम्	[२३; चतुष्पदी; ट. ट. ट. रगण, 'ट' एक गुरु और ४ लघु-रूप होना चाहिए।]	१. ९, १६; हीरक– १२, १७.
जनहरणम्	[३२, चतुष्पदी; ड- ८, जिसमे २८ लघु और अन्त मे सगण हो]	१, १६, जलहरण– ९, १२, १७.

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
मदनगृहम्	[४०; चतुष्पदी; ट- १०; पहला 'ट' सगण होना चाहिए]	१, ६, १२, १७; मदनदीपन- १६.
मरहट्ठा	[२९; चतुष्पदी; ट. ड. ड ड. ड. ड. गुरु, लघु]	१, ६, १२, १६, १७
मदिरा सवया	[३०, चतुष्पदी, भ –७, ग.]	१
मालती सवया	[३२, चतुष्पदी, भ –७, ग.२]	१
मल्ली सवया	[३४, चतुष्पदी, स.–८, ग.]	१
मल्लिका सवया	[३१, चतुष्पदी, ज.–७ ल.ग.]	१
माधवी सवया	[३३, चतुष्पदी, ज.–७, ल ग ग.]	१
मागधी सवया	[३२; चतुष्पदी, ड.–८,]	१
घनाक्षरम्	[४८ मात्रा, ३१ वर्ण, चतुष्पदी]	१
गलितकम्	[२१; चतुष्पदी, ठ ठ. ड ड. लघु, गुरु]	१, ६, १०; संपिण्डितागलिता– ७.
विगलितकम्	[२३, चतुष्पदी, ठ. ठ. ट. ड. ठ,]	१, १०.
सगलितकम्	[१३, चतुष्पदी; ड. ड. ठ.]	१, १०; पदगलिता– ७.
सुन्दरगलितकम्	[१३; चतुष्पदी, ठ. ठ. लघु. गुरु;]	१, १०.
भूषणगलितकम्	[१६; चतुष्पदी ठ ठ ढ. ढ.]	१, १०.
मुखगलितकम्	[२०, चतुष्पदी; ट. ढ. ढ ढ ढ. गुरु]	१, १०.
विलम्बित-गलितकम्	[२२; चतुष्पदी, ट ड. ड ड. ड; अन्तिम 'ड' गुर्वन्त हो]	१, १०.
समगलितकम्	[२५, चतुष्पदी; ड ठ. ठ ड ड लघु, गुरु]	१, १०.
अपर सम-गलितकम्	[३२, द्विपदी; प्रथम पद मे— ड. ठ. ठ. ड. ड. ल ग. ड. ढ, द्वितीय पद मे—ट. ढ. ढ. ढ. ढ. ग. ड ड. ड,]	१
अपर सङ्ग-लितकम्	[३२, द्विपदी; अपर सङ्ग-लितकम् की पदस्थिति पूर्ण-रूपेण विपरीत होती है]	१

छन्द नाम	मात्रा-सख्या एव लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
अपरं लम्बिता-गलितकम्	[२२, चतुष्पदी, ड. ड. ड. ड. ड. गुरु; प्रथम और तृतीय चरण मे जगण नहीं,]	१; लम्बितागलितकम्–७, १०.
विक्षिप्तिका-गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और तृतीय चरण मे ठ. ठ. ठ. ठ ठ, द्वितीय और चतुर्थचरण मे ड ठ. ठ ठ ठ. ग होता है ।]	१; विच्छित्तिर्गलितकम्–१०.
ललिता-गलितकम्	[२४; चतुष्पदी; ड- ६,]	१, ७, १०
विषमिता-गलितकम्	[२५, चतुष्पदी; प्रथम और द्वितीय चरण में ठ. ड. ड ड. ड. ड, तृतीय एवं चतुर्थ चरण मे ड ड ड. ड. ड. ड. ग. होता है ।]	१; विषमागलितक– १०,
मालागलितकम्	[४६; चतुष्पदी; ट. ड- १०, अर्थात् १ ३, ५, ७, ९, वां 'ड' जगण, २, ४, ६, ८ वां 'ड' चार लघ्वात्मक, और १० वां 'ड' सगण होना चाहिये]	१, १०.
मुग्धामाला-गलितकम्	[३८; चतुष्पदी, ट. ड- ८]	१, मुग्धगलितकम्– ५, १०
उद्गलितकम्	[३०, चतुष्पदी; ट. ड- ६;]	१, उद्गाता– ७, उग्रगलितकम्– ५, १०

क. (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नाम-भेद

गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य एवं षट्पद नामक छन्दों के प्रस्तार-क्रम से भेद, लक्षण एवं नाम-भेद निम्नलिखित ग्रन्थो मे ही प्राप्त हैं—

गाथा-प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैंगल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	गाथालक्षण और कवि-दर्पण
१	२७	३	३०	लक्ष्मीः	लक्ष्मीः	लक्ष्मीः	लक्ष्मीः	कमला
२	२६	५	३१	ऋद्धिः	ऋद्धिः	ऋद्धि.	ऋद्धिः	ललिता
३	२५	७	३२	बुद्धिः	बुद्धि	बुद्धि·	बुद्धिः	लीला
४	२४	९	३३	लज्जा	लज्जा	लज्जा	लज्जा	ज्योत्स्ना
५	२३	११	३४	विद्या	विद्या	विद्या	विद्या	रम्भा
६	२२	१३	३५	क्षमा	क्षमा	क्षमा	क्षमा	मागधी
७	२१	१५	३६	देही	देही	गौरी	देही	लक्ष्मी
८	२०	१७	३७	गौरी	गौरी	देही	गौरी	विद्युत्
९	१९	१९	३८	धात्री	धात्री	रात्री	धात्री (रात्री)	माला
१०	१८	२१	३९	चूर्णा	चूर्णा	पूर्णा	चूर्णा	हंसी
११	१७	२३	४०	छाया	छाया	छाया	छाया	शशिलेखा
१२	१६	२५	४१	कान्ति.	कान्तिः	कान्ति	कान्तिः	जाह्नवी
१३	१५	२७	४२	महामाया	महामाया	महामाया	महामाया	शुद्धिः
१४	१४	२९	४३	कीर्त्ति	कीर्त्तिः	कीर्त्ति.	कीर्त्ति	काली
१५	१३	३१	४४	सिद्धि.	सिद्धिः	सिद्धा	सिद्धा	कुमारी
१६	१२	३३	४५	मानी	मानिनी	मानी	मानिनी (मनोरमा)	मेधा
१७	११	३५	४६	रामा	रामा	रामा	रामा	सिद्धि·
१८	१०	३७	४७	विश्वा	गाहिनी	गाहिनी	गाहिनी	ऋद्धिः
१९	९	३९	४८	वासिता	विश्वा	विश्वा	विश्वा	कुमुदिनी
२०	८	४१	४९	शोभा	वासिता	वासिता	वासिता	धरणी
२१	७	४३	५०	हरिणी	शोभा	शोभा	शोभा	यक्षिणी
२२	६	४५	५१	चक्री	हरिणी	हरिणी	हरिणी	वीणा
२३	५	४७	५२	कुररी	चक्री	चक्री	चक्री	ब्राह्मी (वाणी)
२४	४	४९	५३	हसी	सारसी	सारसी	सुरसी	गान्धर्वी
२५	३	५१	५४	सारसी	कुररी	कुररी	कुररी	मञ्जरी
२६	२	५३	५५	×	सिंही	सिंही	सिंही	गौरी
२७	१	५५	५६	×	हसी	हसी	हसी (हसपदवी)	×

स्कन्धक प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृतपैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	३०	४	३४	नन्द	नन्दः	×	×
२	२९	६	३५	भद्रः	भद्रः	×	×
३	२८	८	३६	शिव.	शेषः	नन्दः	नन्द्रः
४	२७	१०	३७	शेषः	सारंगः	भद्रः	भद्रः
५	२६	१२	३८	सारङ्ग·	शिवः	शेष	शेषः
६	२५	१४	३९	ब्रह्मा	ब्रह्मा	सारगः	सारङ्गः
७	२४	१६	४०	वारणः	वारणः	शिव	शिव.
८	२३	१८	४१	वरुण.	वरुणः	ब्रह्म	ब्रह्मा
९	२२	२०	४२	मदनः	नीलः	चारण·	वारण
१०	२१	२२	४३	नीलः	मदनः	वरुण	वरुण
११	२०	२४	४४	तालाङ्क	तालाङ्क	नीलः	नील
१२	१९	२६	४५	शेखरः	शेखरः	मदन	निशाङ्क
१३	१८	२८	४६	शर	शरः	तालङ्क.	मदन.
१४	१७	३०	४७	गगनम्	गगनम्	शेखर	ताल.
१५	१६	३२	४८	शरभ	शरभः	शर	शेखर
१६	१५	३४	४९	विमतिः	विमतिः	गगनम्	शर.
१७	१४	३६	५०	क्षीरम्	क्षीरम्	शरभ	गगनम्
१८	१३	३८	५१	नगरम्	नगरम्	विमति·	सरभः
१९	१२	४०	५२	नर	नर	क्षीरम्	विमति.
२०	११	४२	५३	स्निग्ध	स्निग्धः	नगरम्	क्षीरम्
२१	१०	४४	५४	स्नेहलु	स्नेहः	नर	नगनम
२२	९	४६	५५	मदकल	मदकल	स्निग्धः	नरः
२३	८	४८	५६	भूप	भूपालः	स्नेहनम्	स्निग्धम्
२४	७	५०	५७	शुद्धः	शुद्ध.	मदकल·	स्नेह
२५	६	५२	५८	कुम्भ.	सरित्	लोभ	मदकल
२६	५	५४	५९	सरिः	कुम्भः	शुद्ध	भूपाल
२७	४	५६	६०	कलशः	कलशः	सरित्	शुद्ध
२८	३	५८	६१	शशी	शशी	कुम्भ·	सरित्
२९	२	६०	६२	+	+	कलश	कुम्भ.
३०	१	६२	६३	+	+	शशधर	शशी

दोहा प्रस्तार-भेद

प्रस्तार-क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ	गाथा-लक्षण
१	२३	२	२५	+	+	+	भ्रमरः	+
२	२२	४	२६	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमरः	भ्रामर	भ्रमर.
३	२१	६	२७	भ्रामरः	भ्रामरः	भ्रामरः	शरभः	भ्रामरः
४	२०	८	२८	शरभः	शरभः	शरभ	श्येन	समर
५	१९	१०	२९	श्येनः	श्येन	श्येनः	मण्डूक.	सञ्चार
६	१८	१२	३०	मण्डूकः	मण्डूकः	मण्डूकः	मर्कट॰	मकरन्दः
७	१७	१४	३१	मर्कटः	मर्कट.	मर्कटः	करभ	मर्कटक
८	१६	१६	३२	करभः	करभः	करभः	नर	नरः
९	१५	१८	३३	मदकलः	नर	नरः	मरालः	मराल
१०	१४	२०	३४	पयोधरः	मराल	मरालः	मदकल.	मदकल
११	१३	२२	३५	चल	मदकलः	मदकलः	पयोधर	पयोधर
१२	१२	२४	३६	नरः	पयोधर	पयोधर	चलः	+
१३	११	२६	३७	मरालः	चलः	वल.	वानरः	+
१४	१०	२८	३८	त्रिकल	वानर	वानरः	त्रिकलः	+
१५	९	३०	३९	वानर	त्रिकलः	त्रिकलः	कच्छपः	+
१६	८	३२	४०	कच्छ॰	कच्छपः	कच्छपः	मत्स्यः	+
१७	७	३४	४१	मत्स्य	मत्स्य	मत्स्य	शार्दूलः	+
१८	६	३६	४२	शार्दूल	शार्दूलः	शार्दूल	अहिवरः	+
१९	५	३८	४३	अहिवर	अहिवर	अहिवर.	व्याघ्र	+
२०	४	४०	४४	व्याघ्रः	व्याघ्र.	व्याघ्र	विडालः	+
२१	३	४२	४५	उन्दुर	विडाल	विडाल.	श्वा	+
२२	२	४४	४६	शुनक	शुनक.	श्वा	उदुम्बर (उन्दुरु)	+
२३	१	४६	४७	विडाल	उन्दुर	उन्दुर	सर्प.	+
२४	०	४८	४८	सर्प	सर्प	सर्प.	शशधर	+

रोला-प्रस्तार-भेद

प्र क्र.	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	लघु	गुरु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	६६	०	६६	रसिका	रसिका	६६	०	६६	लौहाङ्गिनी	लोहाङ्गी
२	६४	१	६६	हंसी	हसी	५८	४	६६	हसी	हसिनी
३	६२	२	६६	रेखा	रेखा	५०	८	६६	रेखा	रेखा
४	६०	३	६६	तालाङ्का	तालङ्किनी	४२	१२	६६	तालङ्किनी	तालाङ्की
५	५८	४	६६	कम्पिनी	कम्पिनी	३४	१६	६६	कम्पी	कम्पी
६	५६	५	६६	गम्भीरा	गम्भीरा	२६	२०	६६	गम्भीरा	गम्भीरा
७	५४	६	६६	काली	काली	१८	२४	६६	काली	काली
८	५२	७	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी	१०	२८	६६	कलरुद्राणी	कलरुद्राणी

रसिका-प्रस्तार-भेद

प्र क्र.	गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	प्रथम-चरणे गुरु	लघु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्वल्लभ
१	१३	७०	६६	कुन्द	कुन्द	११	२	२४	कुन्द	कुन्द
२	१२	७२	६६	करतल	करतल	१०	४	२४	करताल	कर्णांसल
३	११	७४	६६	मेघ	मेघः	९	६	२४	मेघ.	मेघः
४	१०	७६	६६	तालाङ्क	तालाङ्क	८	८	२४	तालङ्क	तालाङ्कः
५	९	७८	६६	रुद्र.	कालरुद्र	७	१०	२४	कालः	कालरुद्रः
६	८	८०	६६	कोकिल	कोकिलः	६	१२	२४	रुद्र.	कोकिलः
७	७	८२	६६	कमलम्	कमलम्	५	१४	२४	कोकिल	कमल.
८	६	८४	६६	इन्दु.	इन्दु.	४	१६	२४	कमल.	चन्द्र.
९	५	८६	६६	शम्भु	शम्भु	३	१८	२४	इन्द्र.	शम्भु
१०	४	८८	६६	चमर	चामर.	२	२०	२४	शम्भु	चामरः
११	३	९०	६६	गणेश	गणेश्वर.	१	२२	२४	चामरः	गणेश्वर.
१२	२	९२	६६	शेष	सहस्राक्ष	०	२४	२४	गणेश्वर.	+
१३	१	९४	६६	सहस्राक्षः	शेष					

रसिका छन्द के केवल प्रथम चरण के ही वाग्वल्लभ के मतानुसार ११ भेद होते हैं और वृत्तरत्नाकर के टीकाकार नारायणभट्ट के मतानुसार १२ भेद होते हैं। वाग्वल्लभ और नारायणी टीका के अनुसार अवशिष्ट द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण २४ मात्रा सहित यथेष्ट गुरु, लघु निर्मित होते हैं।

काव्य-प्रस्तार-भेद

प्र क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१	०	९६	९६	शक्र.	शक्रः	शक्र
२	१	९४	९५	शम्भु.	शम्भुः	शम्भु·
३	२	९२	९४	सूर्यः	सूर्यः	शूर
४	३	९०	९३	गण्डः	ग.ण्डः	गण्ड
५	४	८८	९२	स्कन्ध.	स्कन्धः	स्कन्धः
६	५	८६	९१	विजयः	विजयः	विजय
७	६	८४	९०	तालाङ्क.	दर्प	दर्प
८	७	८२	८९	दर्प.	तालाङ्कः	ताराङ्क
९	८	८०	८८	समर.	समर	समर
१०	९	७८	८७	सिंह·	सिंहः	सिंह
११	१०	७६	८६	शेषः	शेष	शीर्षः
१२	११	७४	८५	उत्तेजाः	उत्तेजा.	उत्तेज
१३	१२	७२	८४	प्रतिपक्षः	प्रतिपक्षः	फणि.
१४	१३	७०	८३	परिधर्म	परिधर्म.	रक्ष.
१५	१४	६८	८२	मराल	मराल	प्रतिधर्म.
१६	१५	६६	८१	दण्ड	मृगेन्द्र	मराल
१७	१६	६४	८०	मृगेन्द्र	दण्ड	मृगेन्द्र
१८	१७	६२	७९	मर्कट	मर्कटः	दण्ड
१९	१८	६०	७८	मदनः	मदनः	मर्कटः
२०	१९	५८	७७	राष्ट्र	महाराष्ट्र	अनुबन्ध.
२१	२०	५६	७६	वसन्त	वसन्तः	वासण्ठ
२२	२१	५४	७५	कण्ठ	कण्ठ	कण्ठ
२३	२२	५२	७४	मयूर	मयूर	मयूर.
२४	२३	५०	७३	वन्धः	वन्ध	वन्ध.
२५	२४	४८	७२	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमरः
२६	२५	४६	७१	भिन्नमहाराष्ट्र	द्वितीयो महाराष्ट्र.	भिन्नमहाराष्ट्रः
२७	२६	४४	७०	वलभद्रः	वलभद्रः	वलभद्र
२८	२७	४२	६९	राजा	राजा	राजा
२९	२८	४०	६८	वलित	वलित.	वलित
३०	२९	३८	६७	राम	राम	मयूख
३१	३०	३६	६६	मन्थान	मन्थान	मन्थानः

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
३२	३१	३४	६५	मोह.	बली	बली
३३	३२	३२	६४	बली	मोहः	मोहः
३४	३३	३०	६३	सहस्रनेत्रः	सहस्राक्ष	सहस्राक्षः
३५	३४	२८	६२	बाल.	बाल.	बाल.
३६	३५	२६	६१	दृप्त.	दृप्त	दर्पित.
३७	३६	२४	६०	शरभ	शरभः	सरभ.
३८	३७	२२	५९	दम्भः	दम्भः	दम्भः
३९	३८	२०	५८	दिवसः	अहः	उद्दम्भ.
४०	३९	१८	५७	उद्दम्भ	उद्दम्भः	वलितांकः
४१	४०	१६	५६	वलिताकः	वलिताक	तुरग.
४२	४१	१४	५५	तुरग	तुरङ्गः	हारः
४३	४२	१२	५४	हरिण.	हरिण	हरिण
४४	४३	१०	५३	अन्ध	अन्ध	अन्ध.
४५	४४	८	५२	भृङ्गः	भृङ्ग	भृङ्ग.

षट्पद-प्रस्तार-भेद

प्र क्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१	७०	१२	८२	अजयः	अजय.	अजय.
२	६९	१४	८३	विजय	विजय.	विजय.
३	६८	१६	८४	बलि	बलि.	बलि.
४	६७	१८	८५	कर्णः	कर्ण	वर्ण
५	६६	२०	८६	वीर.	वीरः	वीर
६	६५	२२	८७	वैताल	वैताल	वेताल
७	६४	२४	८८	बृहन्नर	बृहन्नल	बृहन्नल.
८	६३	२६	८९	मर्क	मर्कट.	मर्कट
९	६२	२८	९०	हरि	हरि	हरिः
१०	६१	३०	९१	हर	हर	हर
११	६०	३२	९२	विधि	ब्रह्मा	ब्रह्मा
१२	५९	३४	९३	इन्दु	इन्दु	इन्दु
१३	५८	३६	९४	चन्दनम्	चन्दनम्	चन्दनम्
१४	५७	३८	९५	शुभङ्कर	शुभङ्करः	शुभङ्करः

प्र.क्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
१५	५६	४०	९६	श्वा	श्वा	शाल·
१६	५५	४२	९७	सिंहः	सिंह	सिंह
१७	५४	४४	९८	शार्दूल	शार्दूल	शार्दूल
१८	५३	४६	९९	कूर्म	कूर्म·	कूर्म
१९	५२	४८	१००	कोकिल	कोकिल	कोकिल
२०	५१	५०	१०१	खर	खर	खर
२१	५०	५२	१०२	कुञ्जर	कुञ्जर	कुञ्जर
२२	४९	५४	१०३	मदनः	मदन	मदन
२३	४८	५६	१०४	मत्स्य	मत्स्यः	मत्स्य
२४	४७	५८	१०५	तालाङ्क	तालाङ्क	सारङ्गः
२५	४६	६०	१०६	शेष·	शेष	शेष
२६	४५	६२	१०७	सारङ्ग	सारङ्ग	सारस
२७	४४	६४	१०८	पयोधर.	पयोधर	पयोधर.
२८	४३	६६	१०९	कुन्द	कुन्द	कुन्द
२९	४२	६८	११०	कमलम्	कमलम्	कमलम्
३०	४१	७०	१११	वारण	वारणः	कुन्द
३१	४०	७२	११२	जङ्गम	शरभ.	वारणः
३२	३९	७४	११३	शरभ	जङ्गमः	शरभ
३३	३८	७६	११४	द्युतीष्टम्	द्युतीष्टम्	जङ्गम
३४	३७	७८	११५	दाता	दाता	शरः
३५	३६	८०	११६	शर	शर	सुशरः
३६	३५	८२	११७	सुशर	सुशर	मसर
३७	३४	८४	११८	समर	समर	सारसः
३८	३३	८६	११९	सारस	सारस	सरसः
३९	३२	८८	१२०	शारद	शारद	मेरुः
४०	३१	९०	१२१	मद	मेरु.	सकल
४१	३०	९२	१२२	मदकर	मदकर	मृग
४२	२९	९४	१२३	मेरु	मद	सिद्ध
४३	२८	९६	१२४	सिद्धि	सिद्धि.	बुद्धि
४४	२७	९८	१२५	बुद्धि	बुद्धि	कलकल
४५	२६	१००	१२६	करतलम्	करतलम्	कमलाकर
४६	२५	१०२	१२७	कमलाकर	कमलाकर	धवल.
४७	२४	१०४	१२८	धवल	धवल	मृतक

प्र.क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत-पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर-नारायणी-टीका
४८	२३	१०६	१२९	मानस	मनः	ध्रुव
४९	२२	१०८	१३०	ध्रुवक	ध्रुव	वलय
५०	२१	११०	१३१	कनकम्	कनकम्	किन्नरः
५१	२०	११२	१३२	कृष्ण	कृष्णः	शक
५२	१९	११४	१३३	रञ्जनम्	रञ्जनम्	जन.
५३	१८	११६	१३४	मेघकर	मेघकर	मेघाकर
५४	१७	११८	१३५	ग्रीष्म	ग्रीष्म	ग्रीष्म
५५	१६	१२०	१३६	गरुड	गरुड	गरुड.
५६	१५	१२२	१३७	शशी	शशी	शशी
५७	१४	१२४	१३८	सूर्य	सूर्यः	सूर्यः
५८	१३	१२६	१३९	शल्यः	शल्य	शल्य
५९	१२	१२८	१४०	नवरङ्गः	नवरङ्ग.	नर :
६०	११	१३०	१४१	मनोहर	मनोहरः	तुरग.
६१	१०	१३२	१४२	गगनम्	गगनम्	मनोहरः
६२	९	१३४	१४३	रत्नम्	रत्नम्	गगनम्
६३	८	१३६	१४४	नर.	नरः	रत्नम्
६४	७	१३८	१४५	हीरः	हीर.	नवः
६५	६	१४०	१४६	भ्रमरः	भ्रमर	हीर.
६६	५	१४२	१४७	शेखरः	शेखरः	भ्रमरः
६७	४	१४४	१४८	कुसुमाकरः	कुसुमाकरः	शेखर.
६८	३	१४६	१४९	दीप्तः	दीपः	कुसुमाकरदीपः
६९	२	१४८	१५०	शङ्खः	शङ्ख.	शङ्खः
७०	१	१५०	१५१	वसु	वसु	वसुः
७१	०	१५२	१५२	शब्दः	शब्द.	शब्द.

ख. वर्णिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सङ्केत—क्रमाङ्क एवं छन्द-नाम=वृत्तमौक्तिक के अनुसार हैं। लक्षण=छन्द लक्षण मे प्रयुक्त ग=गुरु, ल=लघु, म=मगण, य=यगण, र=रगण. स=सगण त=तगण, ज=जगण, भ=भगण और न=नगण के सूचक है। सन्दर्भ-ग्रन्थ सकेताङ्क=सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची एव तदनुसार क्रमसूचक सख्या चतुर्थ परिशिष्ट क. पृ. ४१४ के अनुसार है।

एकाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	श्रीः	[ग.]	१, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १९, २२; उक्तम्–५, गी–६; गौ–७.
२.	इ'	[ल.]	१, १९; स्नु–१७.

द्व्यक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३.	कामः	[ग. ग.]	१, ६, १२, १६; अत्युक्तं–५; नौ–७; स्त्री–६, १०, १२, १३, १५; पद्मम्–११, १९; आशीः–२२.
४.	मही	[ल ग.]	१, ६, १२, १६, १७; सुखं–१०, १९.
५.	सारः	[ग. ल.]	१, १६; सारु–६, १२; दु खं–१०; चारु–१७, जत्रु–१९;
६.	मधु.	[ल. ल.]	१, ६, १२, १६, १७; मदः–१०; पुष्पम्–११; वलि–१९.

त्र्यक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७	ताली	[म]	१, ६, १६; नारी–१, ६, ७, १०, १३, १५, १७; श्यामाङ्गी–१९.
८.	शशी	[य.]	१, ६, १२, १६; मध्यमं–५; केशा–१०, ध्रु'–११; बलाका–१७; वनम्–१९
९	प्रिया	[र.]	१, ६, १२, १६, मध्यमं–५; मृगी–६, १०, १३, १५, १७; तडित्–११; सुधी–१९, चञ्चला–२२.
१०	रमण	[स]	१, ६, १२, १६, १७; मध्यमं–५, मदन–१०; रजनी–११; प्रवरः–१९.
११	पञ्चालम्	[त]	१, ६, १२, १६, १७; सेना–१९.
१२.	मृगेन्द्रः	[ज]	१, ६, १२, १६; मृगेन्दु–१७, सुवस्तु–१९.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३.	मन्दर.	[भ]	१, ६, १२, १६, मन्दरि–१७; हृदयम्–१९.
१४.	कमलम्	[न]	१, ६, १२, १६; हरणि–१७; दृग्–१९.

चतुरक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५.	तीर्णा	[म. ग]	१, ६, १२, १६; कन्या–१, ६, १०, १३, १५, १७; कीर्णा–१७, गीति–१९.
१६	धारी	[र ल]	१, ६, १२, १६, १७, वर्त्म–१९.
१७.	नगाणिका	[ज ग]	१, ६; १२, १६; विलासिनी–१०; जया–११, १९; कला–१७
१८.	शुभम्	[न ल.]	१, पट्ट–१७, हरि.–१७; दयि–१९.

पञ्चाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१९	सम्मोहा	[म ग.ग.]	१, ६, १६; सम्मोहासार.–१२, १७; वाला–१७
२०.	हारी	[त ग.ग]	१, ६, १२, हारीत–१६; लोलं–१७; सहारी–१७, मृगाक्षि–७, तिष्ठद्गु–१९.
२१	हंस	[भ.ग ग.]	१, ६, १२; पंक्ति.–१०, १२, १३, १५, १७; अक्षरोपपदा–११; कुन्तलतन्वी–११, काचनमाला–१९.
२२	प्रिया	[स ल ग.]	१, १५, १७; रमा–१९.
२३.	यमकम्	[न.ल ल]	१, ६, १६; हलि–१७; जग्मि–१७

षडक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४	शेषा	[म. म.]	१, ६, १२, १६; सावित्री–१०, १६; विद्युल्लेखा–१३, १५, १७
२५	तिलका	[स स]	१, ६, १२, १६, १७; रमणी–१०; नलिनी–११; कुमुदम्–१९
२६	विमोहम्	[र र.]	१, विमोहा–१७; विज्जोहा–१, ६, १२, १६, १७; मालती–३; शर्फरिका–१०; गिग्न–११; हंसमाला–१९
२७.	चतुरसम्	[न.य.]	१, १२, १६; चउरंसा–१; चतुरंसा–६; शशिवदना–१०, १३, १५, १७, मकरन्दगोर्या–३, ११; मुकुलिता–११, २०; कनकलना–१९.

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२८.	मन्थानम्	[त त.]	१, ६, १२, १६, मन्थाना-१
२९.	शंखनारी	[य य.]	१, ६, १६; सोमराजी-१, ६, १०, १५, १७; शखधारी- २; द्रुतम्-१९
३०	सुमालतिका	[ज ज.]	१, १२; मालती-१, ६; मालतिका-१७; मनोहर-१६
३१.	तनुमध्या	[त य.]	१, २, ३, ६ ७, ८, १०, १३, १५, १८, १९, २०, २२.
३२.	दमनकम्	[न न]	१, ६ १२, १६; उपवलि-१७

सप्ताक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३३.	शीर्षा	[म.म ग]	१, १२; शीर्षरूपक-६; गान्धर्वी-१०, १९; मुक्तागुम्फ-१६; शिप्रा-१७
३४.	समानिका	[र ज ग]	१, ६, १२, १६; उष्णिक्-१०, शिखा-११; चामरम्-१७, गोभिनी-१९,
३५	सुवासकम्	[न ज ल]	१, ६, १२, १६, वासकि-१७, सवासनि-१७;
३६	करहञ्चि	[न.स ल.]	१, १२; करहञ्च-६; करहंस-१६, अहरि-१७; करहन्तृ-१७; गोपिकागीते मुखदेवम् ।
३७	कुमारललिता	[ज स.ग.]	१, २, ८, १०, १४, १५, १८, १९, २०, २२.
३८.	मधुमती	[न.न ग.]	१, १४, १५; हरिविलसितं-१०, हरिविलसितकं-७; चपला-११; द्रुतगति -११; लटह -१९.
३९.	मदलेखा	[म.स.ग.]	१, ६, ७, १०, १३, १५; १९ में लक्षण 'भ स.ग.' है।
४०.	कुसुमतति	[म.न ल)	१; अचट्ट-१७.

अष्टाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४१	विद्युन्माल	[म.म.ग ग.]	१, २, ३, ६, ७, ८, ९ १०, १२, १३, १५, १६, १८, १९
४२.	प्रमाणिका	[ज.र ल.ग.]	१, ६, ८, ९, १२, १३, १५, १६, १९, प्रमाणी-१०, १८; स्थिर.-४; मत्त-चेष्टितम्-३, ११; वालगर्भिणी-२२.
४३.	मल्लिका	[र.ज.ग.ल.]	१, ६, १२, १६, समानिका-१, ५, ६,

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१०, १३, १५, १७; समानी–१८, १६; समानं–२२.
४४.	तुङ्गा	[न.न ग.ग.]	१; तुङ्ग–६, १२; रतिमाला–१०; तुरङ्गा-१२.
४५.	कमलम्	[न स.ल.ग.]	१, ६, १२, १६, लसदसु–१७.
४६.	माणवकक्रीडितकम्	[भ.त ल.ग.]	१, २, ७, १२, २०, २२, माणवकक्रीडा–१६; माणवकम्–५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६.
४७.	चित्रपदा	[भ.भ.ग.ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १६; वितान–७ १८, १६; चित्रपदम्–२०; हंसरुतम–२२
४८.	अनुष्टुप्		१, १२; श्लोक–७, ८, १६.
४६.	जलदम्	[न.न ल.ल.]	१; कृतयु.–१७; कृशयु –१७.

नवाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५०.	रूपामाला	[म म.म]	१, ६; रूपामाली–१२, १५ १६, १७.
५१.	महालक्ष्मिका	[र.र.र.]	१, ६, १२, १७; महालक्ष्मी–१६.
५२.	सारङ्गम्	[न य स]	१, सारङ्गिका–१, ६, १२, १६. १७; मुखला–१७
५३	पाइंत्तम्	[म भ स.]	१, पाइंत्ता–१, ६, १२, १६; पापित्ता–१७; सिंहाक्रान्ता–१०; वीरा–१७; अवीरा–१७.
५४.	कमलम्	[न न.स.]	१, ६, १२; कमला–१५, १६; लघुमणि-गुणनिकर –१०; मदनकं–१७; रतिपदम्–१७.
५५	विम्वम्	[न स य]	१, ६, १२, १६, १७; गुर्वी–७, १८; विशाला–६, १०
५६	तोमरम्	[स ज ज]	१, ६, १२, १६, १७.
५७	भुजगशिशुसृता	[न न.म]	१, २, ५, १०, १७, १८, २०, २२. भुजगशिशुसृतम्–१६; भुजगशिशुभृता–१, ८, १३, १५, १७, भुजगशिशुवृता–१७, मधुकरी–३; मधुकरिका–११.

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८	मणिमध्यम्	[भ.म.स]	१, १५, १७, १८, २२; मणिबन्धम्–१६, १७.
५९	भुजङ्गसङ्गता	[स.ज.र.]	१, १५, १७.
६०	सुललितम्	[न न न.]	१; चुलकम्–१७

दशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६१	गोपाल.	[म म म ग]	१; पद्मावर्त –१७.
६२.	संयुतम्	[स ज.ज ग.]	१, १६; संयुता–१, ९, १७; संयुगा–१७; सगतिका–१२; संहृतिका–१७.
६३	चम्पकमाला	[भ म स ग]	१, २, ६, ७, ९, ११, १२, १६, १७, १८; रुक्मवती–१, ८, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, रुमवती–२२; रूपवती–५, १७; सुभावा–११; पुष्पसमृद्धि –११
६४.	सारवती	[भ भ भ ग]	१, ९, १६, १७, हारवती–१२, चित्रगति-१०, १९; विश्वमुखी–१७,
६५	सुषमा	[त य भ ग]	१, ५, ९, १२, १६, १७.
६६	अमृतगतिः	[न ज न ग]	१, ९, १६, १७; मृगलतिका–१७
६७	मत्ता	[म भ स ग]	१, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; हंसी–१६, विलासिता–२२.
६८	त्वरितगति	[न ज न ग]	१, ७. १०, १५, १७. १९.
६९.	मनोरमम्	[न र ज ग]	१; मनोरमा–१, ६, १०, १३, १५. १७
७०.	ललितगति.	[न न न ल]	१, कृतकवलि–१७.

एकादशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७१.	मालती	[म म म ग ग]	१, ९, १२, माला–१६, मारती–१७; भारती–१७
७२	बन्धु	[भ भ भ ग.ग]	१, ९, १२, १७; दोधकम्–१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२ १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२. उपचित्रा–११, सरोरुह–१६,
७३.	सुमुखी	[न.ज ज.ल.ग.]	१, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७; द्रुतपदगति –११

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७४.	शालिनी	[म.त.त.ग.ग.]	१, २. ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
७५.	वातोर्मी	[म.भ.त.ग.ग.]	१, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उर्मिला–४; वातोर्मीमाला–२०, २२. १० एवं १९ में [म.भ भ ग ग.] लक्षण भी माना है।
७६.	उपजातिः	[शालिनी-वातोर्मीमिश्रा]	१,
७७.	दमनकम्	[न.न.न.ल.ग]	१, ६, १२, १६. १७
७८.	चण्डिका	[र.ज.र.ल.ग.]	१; श्रेणिका–१; श्रेणिः–१९; श्येनी–२, १०, १५, १७. १८, २०, २२; श्येनिका–५, १३, १७; सेनिका–१२, १७, नि.श्रेणिका–५; नि श्रेणिकम्–११, ताल–१६.
७९,	सेनिका	[ज.र.ज.ग.ल.]	१, ६; सैनिकम् - १७;
८०.	इन्द्रवज्रा	[त.त ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९. २०, २२; उपस्थिता–६, ११.
८१	उपेन्द्रवज्रा	[ज.त ज ग ग.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८२	उपजाति.	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रामिश्रा]	१, २, ४, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९; इन्द्रमाला–१९, २०, २२.
८३.	रथोद्धता	[र.न.र.ल.ग.]	१, २, ३, ४ ५, ६. ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८४.	स्वागता	[र न.भ.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७ १८, १९, २०, २२.
८५.	भ्रमरविलसिता	[म.भ.न.ल.ग.]	१, ४, ५, १५, १७, १८, २०, २२; भ्रमरविलसितम्–१, ७, १०, १३, १९; यानवासिका–११.
८६.	अनुकूला	[भ.त.न.ग.ग.]	१. १५, १७; कुडमलदन्ती–७, १०, थी–१०, १३, १७, १८, सान्द्रपदम्–११, १९; रुचिरा–११, मौक्तिकमाला–१७
८७.	मोटनकम्	[त.ज.ज.ल.ग.]	१, ३, १०, १५, १८, मोटकम्–१९.

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८८.	सुकेशी	[म.स.ज.ग.ग.]	१, एकरूपम्–५, १०, १६; विश्वविराट्–१७; मणि –१६.
८९.	सुभद्रिका	[न.न र.ल.ग.]	१, ५, १२, १७, २०; भद्रिका–६, १०, १३, १५, १८, १६; प्रसभम्–४; अपरवक्त्रम्–११, उत्तरान्तिका–११; समुद्रिका–१७.
९०.	वकुलम्	[न.न.न.ल.ल.]	१, अगरिम–१७.

द्वादशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९१.	आपीडः	[म.म.म.म.]	१, विद्याधरः–६; विद्याधार–१२, १५, १७, विद्याहारः–१६; कल्याण–१०, काञ्चनम्–११.
९२.	भुजंगप्रयातम्	[य.य.य.य.]	१, २, ४, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; अप्रमेया–३, ११.
९३.	लक्ष्मीधरम्	[र.र.र.र.]	१, ६, ९, १०, १२, १६, १७; स्रग्विणी–१, २, १३, १५, १७, १८, १९, पद्मिनी–३, ११; शृङ्गारिणी–१७
९४.	तोटकम्	[स स स स.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
९५	सारङ्गकम्	[त त त त]	१, सारङ्ग–१२, १५, १७; सारङ्गरूपम्–१६; सारङ्गरूपकम्–६, कामावतारः–१०, १९, मेनावली–१७; रणक्रीडास्तोत्र में 'भृङ्गार.'.
९६.	मौक्तिकदाम	[ज ज ज ज]	१, ९, १०, १२, १३, १५, १७, १९, मुक्तादाम–१६.
९७	मोदकम्	[भ भ भ भ]	१, ९, १२, १६, १७, मोटक–१५
९८	सुन्दरी	[न भ भ र]	१, ९, १२, १६, हरिणप्लुता–३; मत्तकोकिलकम्–१९.
९९.	प्रमिताक्षरा	[स ज स स]	१, २, ३, ४, ६, १०, १२, १३, १५, १७, १८, १९, २०, प्रतिमाक्षरा–२२.
१००	चन्द्रवर्त्म	[र न भ स]	१, १०, १३, १५, १७, १८, १९.

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१	द्रुतविलम्बितम्	[न भ भ र]	१, २, ६, ७, ८, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२; हरिणप्लुतम्–३, ११.
१०२	वशस्थविला	[ज त.ज र.]	१; वंशस्थविलम्–१, १५, १७; वशस्त-नितम्–१; वंशस्थम्–३, ६, ७, ८, १०, १३, १६, १७, १८, १६, २२; वंशस्था–२, २०; वसन्तमञ्जरी–७, ११; अभ्र-वंशा–११
१०३	इन्द्रवंशा	[त त ज र]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२, इन्दुवशा–१७, वीरा-सिका–१७.
१०४	उपजाति	[वंशस्थविला-इन्द्रवशा मिश्रा]	१, १७; करम्बजाति–१६, कुलालचक्रम्–१६, वंशमालिका–१६, वशमाला–२०
१०५	जलोद्धतगति	[ज स ज स]	१, २, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२
१०६	वैश्वदेवी	[म म य य]	१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२, चन्द्रलेखा–३.
१०७	मन्दाकिनी	[न न र र]	१, १५, १७; गौरी–२; प्रभा–१, १७
१०८	कुसुमविचित्रा	[न.य.न य]	१, २, १०, १३, १५, १७, २२; मदन-विकारा–११; गजलुलितम्–११, गजल-लिता–१६.
१०६	तामरसम्	[न ज.ज य]	१, ६, १०, १३, १५, १७; ललितपदा–४, १६, कमलविलासिनी–११
११०.	मालती	[न ज ज.र]	१, ४, ६, १०, १३, १५, १७, वरतनु–२, ११, १४, १६, यमुना–१.
१११.	मणिमाला	[त य त य.]	१, ६, ११, १३, १५, १७, १६; अब्ज-विचित्रा–१६, पुष्पविचित्रा–१०, १८
११२.	जलधरमाला	[म.भ.स.म.]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १८ १६, कान्तोत्पीडा–२, ११, सौदामिनी–२२
११३.	प्रियम्वदा	[न भ.ज.र.]	१, ६, १०, १३, १५; प्रियम्वद–१७; मत्तकोकिला–११
११४.	ललिता	[त.भ.ज.र]	१, १०, १३, १५, १७; सुललिता–१
११५.	ललितम्	[भ त.न स]	१; ललना–१, २, १०, वीरणमाला–१८; रति–१६

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
११६.	कामदत्ता	[न.न.र य.]	१, ३, १०, १६, परिमितविजया–१७.
११७.	वसन्तचत्वरम्	[ज.र.ज र.]	१, ६, ११; विभावरी–१०; पञ्चचामरम्–१३, १५; ललामललिताधरा–१७;
११८.	प्रमुदितवदना	[न.न र.र.]	१, ६, १०, १३, १७, १६, २२; प्रभा–१, ११, १३, १७; चञ्चलाक्षी–२, ११; मन्दाकिनी–१७; गौरी–१४.
११९.	नवमालिनी	[न ज भ.य.]	१, २, १०, १४, १८, १९, २०, २२; नवमालिका–१३, १५; नयमालिनी–१७, वनमालिका–१७.
१२०.	तरलनयनम्	[न.न न.न.]	१, १२, १५, १७; तरलनयना–१६; तरलनयनी–९.

त्रयोदशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२१.	वाराह	[म म.म म.ग.]	१, सव्याली–१७.
१२२	माया	[म.त य स ग.]	१, ९, १२, १६; मत्तमयूरम्–१, २, ३, ४, ६, ९, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २२, मत्तमयूर –२०
१२३	तारकम्	[स.स स.स ग]	१, ९, १२, १६, १७
१२४.	कन्दम्	[य य.य.य.ल.]	१, ९, १२, १६; कन्द.–१७; कन्दुकम्–१५
१२५	पङ्क्तावलिः	[भ न ज.ज ल.]	१, ९, १२, पङ्क्तवती–१७; कमलावली–१६
१२६	प्रहर्षिणी	[म न ज र ग]	१, २, ३, ४, ६, ८, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; मयूरपिच्छम्–७.
१२७.	रुचिरा	[ज भ स ज ग]	१, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२, प्रभावती–३, सदागतिः–७; अतिरुचिरा–१४, १७
१२८	चण्डी	[न.न स.स.ग.]	१, १५, १७; कमलाक्षी–१०; हाकलिका-१७; कलावती–१६
१२९	मञ्जुभाषिणी	[स.ज.स ज ग]	१, १३, १५, १७: सुनन्दिनी–१; नन्दिनी-५, १०, १९, २२; प्रबोधिता–१, १५; कनकप्रभा–२, १४, मनोवती–११; १९ मे 'न. ज. स. ज ग.' और १० मे 'ज. त ज स. ग' लक्षण भी माना है।

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३०	चन्द्रिका	[न न त त ग]	१, १३, १५, १७, उत्पलिनी–१, १७; कुटिलमति–२; कुटिलगति–१०; ६ मे चन्द्रिका का लक्षण 'न. न त र ग' है और १९ मे 'य. म र र ग' है।
१३१	कलहंस	[स ज स स ग.]	१, १५. १७; सिंहनाद–१, १७, कुटजं–१, १०, १९, कुटजा–१७, भ्रमर–११; भ्रमरी–१९; क्षमा–१७
१३२	मृगेन्द्रमुखम्	[न ज.ज र ग]	१, १५, १७; सुवक्त्रा–१०, १९, अचला ११
१३३	क्षमा	[न न.त.र ग]	१, १३; १० में 'न.त.त र ग' लक्षण है।
१३४	लता	[न स ज ज.ग.]	१; लयः–१०, उपगतशिखा–१७,
१३५	चन्द्रलेखम्	[न स र र ग]	१, १४, चन्द्रलेखा–१, १०; चन्द्ररेखा–१५
१३६	सुद्युतिः	[न स.त त ग]	१; विद्युन्मालिका–१०.
१३७	लक्ष्मी	[त भ.स ज ग.]	१, ४, १०, १९; प्रभावती–१५, १६, १७ रुचि–१९.
१३८.	विमलगति	[न न.न न ल.]	१; अडमरू–१७

चतुर्दशाक्षर छन्द

क्रमाङ्क	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३९.	सिंहास्य.	[म म.म.म.ग ग]	१; संकल्पासारः–१७, संकल्पाधार–१७.
१४०.	वसन्ततिलका	[त भ.ज ज ग.ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९; काश्यपमते सिंहोन्नता–२, ७, ११, १३, १७, २२, सैतवमते उद्धर्षिणी–२, १०, १३, १७, राममते मधुमाधवी १७; भरतमते सुन्दरी–१७, वसन्ततिलकम्–८, २०, २२; सैतवमते इन्दुमुखी–२२.
१४१	चक्रम्	[भ न न न ल.ग]	१, १२, १७; चक्रपदम्–९, १६
१४२	असम्बाधा	[म त न स ग ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
१४३.	अपराजिता	[न न र स.ल ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
१४४.	प्रहरणकलिका	[न न भ.न.ल.ग]	१, ५, ६, १५, १७, १९, २०, प्रहरणकलिता–२, १०, १३, १८; प्रहरणगलिता–२२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१४५.	वासन्ती	[म.त न म ग ग]	१, १५, १७.
१४६.	लोला	[म स म भ ग ग.]	१, १३, १५, १७, अलोला–१०, १७
१४७.	नान्दीमुखी	[न न.त त ग.ग.]	१, ५, १५, १७, नन्दीमुखी–११; वसन्त-१०, १६
१४८.	वैदर्भी	[म.भ न.य ग.ग.]	१, १४; कुटिला–२, १४, कुटिलं–१०, १४; हंसश्येनी–११; हंसश्यामा–१६, मध्यक्षामा–१४; चूडापीडम्–१७.
१४९.	इन्दुवदनम्	[भ.ज स न.ग ग.]	१, इन्दुवदना–१, १३, १७; वरसुन्दरी–२; स्खलितम्–१०, वनमयूर–११, १६; इन्द्रवदना–१७, विलासिनी–२२; १० मे 'भ.ज स न.ल ग.' लक्षण है।
१५०.	शरभी	[म.भ न त ग.ग.]	१; शरभा–३.
१५१	अहिधृति	[न,न भ.ज.ल ग.]	१
१५२	विमला	[न ज भ ज ल ग.]	१; धृति–१०; मणिगकटकम्–११. १६; प्रमदा–१४
१५३	मल्लिका	[स.ज स ज ल ग]	१, मञ्जरी–१४; कुमारीलता–१७.
१५४	मणिगणम्	[न न न न.ल ल.]	१, अकहरि–१७, अकुहरि–१७

पञ्चदशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१५५	लीलाखेल	[म म.म.म म]	१, १५; सारंगिका–१, ६, सारंगी–१२, १६, १७, कामक्रीडा–१०. १४, १८; लीलालेखः–१७, ज्योति–१६, मित्रम्–१६.
१५६	मालिनी	[न न.म य य.]	१. २, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२, नान्दीमुखी–३, ११,
१५७	चामरम्	[र ज र.ज र]	१, ६, १२, १६, तूणकम्–१, १०, १५, १७, तोणकम्–५, तोटकं–७, पंचयामलं–१७; महोत्सव–१६.
१५८	भ्रमरावलिका	[स.स.स स स]	१, १७; भ्रमरावली–१, ६, १२, १६.
१५९.	मनोहस	[स.ज.ज.भ र]	१, ६, १२, मणिहस–१७; पदहंसकम्–१६
१६०	शरभम्	[न.न.न.न स.]	१, ६, १२, १६, १७; शशिकला–१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६; मणिगुणनिकर–१, २, ४, ५, ११, १३, १५, १७

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१८. १६, २०, २२; स्रक्-१, ११, १३, १५, १७, १८, १६, चन्द्रावर्ता-२, ११, २२, माला-२, ११, २०, २२; मणिनिकर-१७; रुचिरा-१६; चन्द्रवर्त्मा-२०.
१६१.	निशिपालकम्	[भ ज स न र]	१, ६, १२, १६, १७
१६२	विपिनतिलकम्	[न स न र र.]	१, १५, १७.
१६३	चन्द्रलेखा	[म र.म य य]	१, ६, १०, १३, १५, १७, चण्डलेखा-१, ७, १०, १४ मे 'र र.म.य य' और १६ मे 'र.र.त त म' लक्षण है।
१६४.	चित्रा	[म म म य य]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, चित्रम्-१, मण्डुकी-११, १८, १६; चञ्चला-११
१६५.	केसरम्	[न.ज.भ ज र]	१; प्रभद्रकम्-६, १०, १३, १७; सुकेसरम्-१४, १६.
१६६.	एला	[स ज न.न.य.]	१, १०, १३, १७, १६
१६७	प्रिया	[न न त भ र]	१; उपमालिनी-६, १०, रूपमालिनी-१४
१६८.	उत्सव.	[र न भ भ र]	१; सुन्दरम्-१०; मणिभूषणं-११, १६; रमणीयं-११, १६; नूतन-१७, सूक्कणं-१७.
१६६.	उडुगणम्	[न न न न न]	१, शरहृतिः-१७

षोडषाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७०.	रामः	[म म म म म ग]	१, ब्रह्मरूपकम्-१, ६, १६, ब्रह्मरूपम्-१५; ब्रह्म-१२, १७; कामुकी-१०; चन्द्रापीडम्-१७.
१७१	पञ्चचामरम्	[ज र ज र ज ग]	१, ५, ६, १०, १४, १५, १६, नराचम्-१, ६, १२, १४, १५, १६, १७
१७२	नीलम्	[भ.भ भ भ भ.ग.]	१, ६, १२, १६, १७, अश्वगतिः-६, १४, १५; सङ्गतम्-१०, पद्ममुखी-११, १६, सुरता-११, सद्यमुद्धरणं-११, सोपानकं-११; रवगति-१७, विशेषिका-१७
१७३.	चञ्चला	[र ज र ज.र ल.]	१, ६, १२, १६, १७; चित्रसंज्ञं-१, १४, १५; चित्रं-५, ६, १७; चित्रशोभा-५;
१७४.	मदनललिता	[म भ न म न ग]	१, १०, १५, १७, मदनललित-५.

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७५	वाणिनी	[न.ज भ ज र ग]	१, ६, १०, १३, १५, १७, १६; १० मे वाणिनी का 'न.ज ज ज र ग' लक्षण भी स्वीकार किया है।
१७६	प्रवरललितम्	[य म न स र ग]	१, ३, १५, १७, जयानन्दम्–१०, १६
१७७	गरुडरुतम्	[न ज भ ज त ग]	१, १५, १७, चन्द्रलेखा–२२.
१७८	चकिता	[भ स.म.त.न ग]	१, १५, १७
१७६.	गजतुरग-विलसितम्	[भ.र.न न न.ग]	१; ऋषभगजविलसितम्–१, २, ३, १०, १३, १५, १७, १८, १६, गजवरविलसितम्–५, मत्तगजविलसितम्–११; वृषभगजविलसिता–२०; ऋषभगजविलसिता–२२.
१८०.	शैलशिखा	[भ र न भ भ ग]	१, २, १०, १४; भामिनी–१६.
१८१.	ललितम्	[भ र न.र न.ग]	१, ४; धीरललिता–१४, १५, महिषी–१०.
१८२	सुकेसरम्	[न स ज स ज ग]	१,
१८३	ललना	[स न न ज.भ ग]	१,
१८४.	गिरिवरधृतिः	[न न न न न ल]	१, अचलधृति–१, ५, ६, १०, १५, १७, १८

सप्तदशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१८५	लीलाधृष्टम्	[म म म म म.ग ग]	१; मानाक्रान्ता १७
१८६	पृथ्वी	[ज स ज स य ल.ग]	१, २, ५, ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२, विलम्बितगतिः ३, ११.
१८७	मालाधती	[न स ज स य.ल ग.]	१; मालाधर–१, ६, १२, १६, १७
१८८	शिखरिणी	[य म.न.स भ ल ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२,
१८६.	हरिणी	[न स म र स ल ग]	१, २, ३, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२, वृषभचरितम्–४; वृषभललितम् ११.
१६०.	मन्दाक्रान्ता	[म.भ.न.त.त ग.ग.]	१, २, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२. श्रीधरा–३, ११

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१६१.	वशपत्रपतितम्	[भ र.न भ न ल ग.]	१, २, ३, ४, ६, १०. १३, १५, १७, १८, १६, २२; वंशपत्रपतिता–१, २०; वशदलम्–१, ११, वशतलं–५, वंशपत्रललितम्–५, वशपत्रम्–१७
१६२.	नर्द्दटकम्	[न ज.भ ज ज.ल ग]	१, १७; नर्कुट–८, नर्कुटकम्–४, ७, ११, १३, १५, १८, १६, अवितथम्–२, १०, १४.
	कोकिकलम्[8]	[न.ज भ ज ज ल ग.]	१, २, १०, १३, १४, १५, १७, १६
१६३.	हारिणी	[म.भ न म य ल.ग]	१, ५, १०, १५; १७ मे 'म भ.न य.म ल ग' लक्षण है।
१६४.	भाराक्रान्ता	[म भ न र स ल ग]	१, ५, १०, १५, १७,
१६५	मतंगवाहिनी	[र ज.र.ज र.ल ग]	१,
१६६.	पद्मकम्	[न.स म त त ग ग]	१, १०,; पद्मम्–५
१६७.	दशमुखहरम्	[न.न.न न न.ल ल.]	१, अचलनयनम्–१७

अष्टादशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१६८.	लीलाचन्द्रः	[म म म म म म]	१, ६
१६६.	मञ्जीरा	[म म भ म स म.]	१, ६, १२, १६, १७
२००.	चर्चरी	[र स ज.ज भ र]	१, ६, १२, १६, १७; विबुधप्रिया–२, १४; उज्ज्वलम्– १०, मालिकोत्तरमालिका–११, १६, मत्तकोकिलम्–१७, कूर्परं–१७; चञ्चरी १७, रूपगोस्वामी कृत मुकुन्दमुक्तावली मे 'रंगिणी' और गोवर्द्धनोद्धरण मे 'मुग्धसौरभम्' नाम दिए हैं।
२०१	क्रीडाचन्द्र.	[य य.य य य.य.]	१, १२. १७; क्रीडाचक्रम्–१६; वारवाणा–१७; क्रीडगा–१७, चन्द्रिका–१७
२०२.	कुसुमितलता	[म त न.य य य]	१, २, ५, १०, १३, १५, २२, चित्रलेखा–३; चन्द्रलेखा–७; कुसुमलतावेल्लिता–१७, १८, कुसुमितलतावेल्लिता–१६, २०
२०३	नन्दनम्	[न ज भ.ज र र.]	१, १५, १७.
२०४	नाराच.	[न न र र.र र]	१, १५, १७; नाराचकम्–२, मञ्जुला–१, महामालिका–१७, तारका–६, वरदा–१६; निशा–१६
२०५	चित्रलेखा	[म भ न य य य]	१, ५, १०, १४, १५, १७; चन्द्रलेखा–१७; महाराणा कुम्भकर्ण रचित पाठ्यरत्न-

[8]लक्षण 'नर्द्दटकम्' का है परन्तु यतिभेद के कारण अपर नाम 'कोकिलकम्' दिया है।

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			कोष के अनुसार 'य. त. न य. य. स.' लक्षण है।
२०६.	भ्रमरपदम्	[भ र न न.न.स.]	१, ५, ६, १०, १४, १५.
२०७	शार्दूलललितम्	[म स.ज स त स]	१, ५, १०, १४, १५, १७.
२०८.	सुललितम्	[न न म त.भ र]	१, ५, १०.
२०९.	उपवनकुसुमम्	[न न.न न.न न.]	१, तुमुलकम्–१७.

एकोनविंशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१०.	नागानन्द	[म म.म.म म म.ग.]	१,
२११	शार्दूलविक्रीडितम्	[म स.ज.स त त.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२, शार्दूलसट्टकम्–९
२१२.	चन्द्रम्	[न न न ज न न ल]	१, १२, १६, चन्द्रमाला–१, ९.
२१३.	धवलम्	[न न न न न.न.ग.]	१, १२, १६, १७; धवला–१, ९
२१४	शम्भुः	[स त य भ म.म ग]	१, ९, १२, १६, १७
२१५.	मेघविस्फूर्जिता	[य म न.स र र.ग.]	१, १०, १४, १५, १८, १९; विस्मिता–२, सुवृत्ता–४, रम्भा–५, ११, १९, चन्द्रकान्ता–७.
२१६	छाया	[य म न स त त.ग.]	१, ५, १० १४, १५, १७.
२१७.	सुरसा	[म र भ न य.न ग]	१, १५, १७.
२१८	फुल्लदाम	[म त.न स र.र ग.]	१, १५, १७; पुष्पदाम–५, १०, १४.
२१९	मृदुलकुसुमम्	[न.न.न.न.न न.ल.]	१,

विंशाक्षर छन्द

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२०.	योगानन्दः	[म म म.म म.म ग ग.]	१,
२२१	गीतिका	[स ज ज.भ.र स ल ग]	१, १२, १५, १७; गीता–९, हरिगीतम्-१६.
२२२	गण्डका	[र.ज.र ज.र.ज.ग.ल]	१, ९, १२, १७, चित्तवृत्तम्–१, चित्रं–६; वृत्तम्–१, २, १०. १४, १५, १८, १९, २२, मुण्डक–१६, ईदृश–१७; मादृशं–१७.
२२३.	शोभा	[य.म न न त.त.ग ग.]	१, ५, १०, १४, १५, १७.
२२४	सुवदना	[म र भ न य भ ल ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; वृत्तम्–७; २२ के अनुसार 'म र भ.न य भ ल ल ' लक्षण है।

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२५	प्लवङ्गभङ्ग-मङ्गलम्	[ज र ज.र ज.र ल.ग.]	१,
२२६	शशाङ्कचलितम्	[त.भ ज.भ.ज भ.ल.ग.]	१; शशांकचरितम्–७, शशाकरचितम्–१०.
२२७.	भद्रकम्	[भ.भ भ.भ र.स.ल.ग.]	१; नन्दकम्–१०; भासुरम्–१६.
२२८.	अनवधिगुणगणम्	[न.न न न न न.ल.ल.]	१,

एकविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२२६	ब्रह्मानन्द	[म.म म म म म म]	१,
२३०.	स्रग्धरा	[म.र.भ.न.य.य.य.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६, २०, २२.
२३१.	मञ्जरी	[र न.र.न.र.न.र.]	१; तरंग.–१०; तरगमालिका–१६; कनकमालिका–१७.
२३२	नरेन्द्रः	[भ.र.न न.ज.ज.ज.]	१, ६, १२, १६.
२३३.	सरसी	[न ज.भ.ज.ज ज र.]	१, १५, १७; सुरतरु–१, सिद्धकम्–१; सिद्धिः–५, १०; सिद्धिका–६; शशिवदना–२, ११; चित्रलता–११; चित्रलतिका–१६, सलिलम्–१४; श्री.–१४; चम्पकमालिका–१७, १६; चम्पकावली–१७; पञ्चकावली–१७.
२३४.	रुचिरा	[न.ज भ.ज.ज ज र.]	१, ११.
२३५.	निरुपम-तिलकम्	[न.न.न न.न न.न.]	१,

द्वाविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२३६.	विद्यानन्दः	[म.म म म.म म म.ग.]	१,
२३७.	हंसी	[म.म.त.न.न न.स.ग.]	१, ६, १२, १५, १६, १७; रजतहंसी–१७.
२३८	मदिरा	[भ भ भ भ भ भ भ.ग]	१, ५, १०, १४, १५, १७; लताकुसुमम्–६, ११, १६; सवैया–१६; मानिनी–१७
२३६.	मन्द्रकम्	[भ.र.न र न र.न.ग.]	१; मद्रकम्–२, ३, ५, १०, १८, १६, २२; भद्रकम्–६, १३, १५, २०; विशुद्धचरितम्–७; १७ मे 'भ र न स न.र न ग.' लक्षण है। भद्रकं–१७; भद्रिका–१७;
२४०	शिखरम्	[भ र.न.र न.र न ग.]	१.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४१.	अच्युतम्	[न.न न.न.स ज.ज.ग.]	१,
२४२.	मदालसम्	[त.भ.य.ज.स.र.न.ग.]	१; सितस्तवक-१७; परिस्तबक-१७.
२४३.	तरवरवृत्तम्	[न न.न.न.न.न.न.ल.]	१,

त्रयोविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४४.	दिव्यानन्दः	[म म.म.म.म.म.म.ग.ग.]	१,
२४५.	सुन्दरिका	[स.स.भ स त.ज.ज.स.ग.]	१, ९, १२; सुन्दरी-१६.
	पद्मावतिका	[स.स.भ.स.त.ज.ज.ल.ग.]	१, १२.
२४६.	अद्रितनया	[न ज.भ.ज भ.ज.भ.ल.ग.]	१, १५, १७; अश्वललितम्-१, २, ३, १३, १७, १८, १९, २०, २२; ललितं-५, १०; हयलीलाङ्गी-७.
२४७.	मालती	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.ग.ग.]	१; सवैया १६; मत्तगजेन्द्रः-१७.
२४८.	मल्लिका	[ज.ज.ज.ज.ज.ज.ज.ल.ग.]	१; मानवती-१७; मानिनी-१७.
२४९.	मत्ताक्रीडम्	[म.म.त.न.न.न.न.ल.ग]	१, १५, १८, १९; मत्ताक्रीडा-२, ५, ६, १०, १३, १७, २०, २२.
२५०.	कनकवलयम्	[न.न.न.न.न.न.न.ल.ल.]	१,

चतुर्विंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५१.	रामानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.म.]	१
२५२.	दुर्मिलका	[स.स.स.स.स.स.स.स.]	१, १२; दुर्मिला-२, १६; द्विमिला-१७; सवैया-१६,
२५३.	किरीटम्	[भ.भ.भ.भ भ.भ.भ भ.]	१, ९, १२, १७; सुभद्रं-१०; सुभद्रकम्-६; सवैया-१६; मेदुरदन्तं-१७; मेदुरदं-१७.
२५४.	तन्वी	[भ.त.न.स भ.भ.न.यः]	१, २, ५, ७, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२५५.	माधवी	[ज.ज.ज.ज ज ज.ज.ज.]	१; अनामय-१७.
२५६.	तरलनयनम्	[न.न.न न.न न.न.न.]	१.

पञ्चविंशाक्षर छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५७.	कामानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म.म.ग.]	१
२५८	क्रौञ्चपदा	[भ.म.स,भ.न.न न.न.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९, २०; क्रौंचपदी-७; क्रोञ्चपदा-१७; क्रौञ्चीपदा-२२.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२५९	मल्ली	[स स.स स स.स स स ग.]	१; मुदिरम्–१७
२६०	मणिगुणम्	[न न न न.न न.न.न.ल]	१

षड्विंशाक्षर छन्द

२६१.	गोविन्दानन्दः	[म.म.म.म.म.म.म म ग ग]	१, जीमूताधानम्–१७
२६२	भुजङ्गविजृम्भितम्	[म.म त न न.न.र स ल.ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
२६३	अपवाहः	[म न न.न.न न न.स.ग ग]	१, ५, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०; अपवाहकः–२; २२, अवबाधम्–६;
२६४	मागधी	[भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.भ.ग.ग.]	१; प्रियजीवितम्–१७.
२६५	कमलदलम्	[न न न.न.न.न.न.न.ल ल]	१.

प्रकीर्णक छन्द

१	पिपीडिका	[म म त न.न न न ज भ.र]	१, ५, १०; जलद दण्डक–२२
२	पिपीडिकाकरभः	[म म त न न न.न.ल–५, ज भ.र]	१, ५, १०.
३	पिपीडिकापणव.	[म म त न न.न न ल–१०, ज.भ र]	१, ५, १०
४	पिपीडिकामाला	[म म त.न न न.न.ल–१५, ज भ र.]	१, ५, १०.
५	द्वितीयत्रिभङ्गी	[ल–२०, भ ग.ग.स ग.ग.ल.ल ग.ग.]	१, १६
६	शालूर	[ग.ग. ल–२४, स]	१, १६.

दण्डक छन्द

१.	चण्डवृष्टिप्रपात	[न.न.र–७]	१, १०, १३, १५, १७, मेघमाला–३; चण्डवृष्टिः–५, १०, १६; चण्डवृष्टिप्रयातः–२, ६, १८, १९, २०, २२
२.	प्रचितकः	[न न.र–८]	१, २
३	अर्णः	[न न र–८]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; अर्णवः–२२.

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४.	सर्वतोभद्र.	[न न.य य.य.य.य य.य.]	१; प्रचितकः–६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९.
५.	अशोककुसुम-मञ्जरी	[र ज.र.ज.र.ज.र ज.र.ल.]	१; अशोकपुष्पमंजरी–५, ६, १०, १५, १७; अशोकमंजरी–१६.
६.	कुसुमस्तवक	[स.स स स.स स स.स.स.स.]	१, १५, १६, १७; कुसुमस्तर–५, कुसुमस्तरण–१०.
७.	मत्तमातङ्ग.	[र.र.र र र.र.र र र]	१, १०; मत्तमातंगलीलाकरः–५, १५, १७; मत्तमातंगखेलितः–१६.
८.	अनंगशेखरः	[ज.र.ज.र.ज र.ज.र.ज ग.]	१, ५, ६, १०, १५, १६, १७

अर्द्धसमवृत्त

क्रमाक	छन्द-नाम		लक्षण		लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१	पुष्पिताग्रा	१,३.*	[न न र.य.]	२,४.•	[न.ज ज.र.ग]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२	उपचित्रम्	,,	[स.स स ल ग.]	,,	[भ.भ.भ.ग.ग.]	१, ६, १०, १३; १५; उपचित्रा–१७; उपचित्रकम्–२, ५, १८, १९, २०, २२.
३.	वेगवती	,,	[स.स स ग.]	,,	[भ.भ.भ.ग.ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
४.	हरिणप्लुता	,,	[स स स ल ग]	,,	[न.भ.भ र]	१, २, १०, १३, १५, १६, १७, १८, २२; हरिणीप्लुता–१९, २०; हरिणपदम्–५; हरिणोद्धता–६.
५	अपरवक्त्रम्	,,	[न.न र ल ग]	,,	[न.ज.ज र]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
६	सुन्दरी	,,	[स स ज ग]	,,	[स.भ.र ल.ग]	१, १५, १७; प्रबोधिता–१०; विबोधिता–१९; सुरमालिका–१७, वियोगिनी–१७.
७	भद्रविराट्	,,	[त.ज र ग]	,,	[म.स.ज ग.ग.]	१, २, १०, १३, १७, १८, १९, २०, २२; भद्रविराटिका–५.

*–१,३. अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण ।

•–२,४. अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण ।

क्र.	छन्द-नाम	लक्षण		सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८.	केतुमती	१,३ [स ज स ग]	२,४. [भ.र.न.ग.ग.]	१, २, ३. ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६, २०, २२.
६.	वाङ्मती	,, [र ज.र.ज.]	,, [ज.र.ज.र.ग.]	१, यवमती–२, ५, ६, १०, १३, १८; अमरावती–१७; यमवती–१७, २०, २२, यवध्वनि–१६, २० के अनुसार 'र.ज र.ज.ग' 'ज.र.ज.र ग.' लक्षण है।
१०.	षट्पदावली	,, [ज.र.ज.र.]	,, [र ज र ज.ग.]	१, ५, १०, १४.

विषमवृत्त

क्र.	छन्द-नाम	लक्षण		सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	उद्गता	[*१. स ज स.ल. *३. भ न.भ ग.	*२. न स.ज.ग. *४. स ज स ग.]	१, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६; उद्गतः २०,
२	उद्गताभेद.	[१ स ज स ल ३. भ न ज ल ग.	२. न स ज ग. ४. स.ज.स ग]	१, १५, २२
३.	सौरभम्	[· ज स ल. ३. र न.भ.ग	२. न स.ज ग. ४. स.ज स.ज.ग.]	१, १७, सौरभकम्–२, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १६; सौरभकः–२०; सौरभकं–२२.
४,	ललितम्	[१. स ज स ल. ३. न न स.स.	२. न.स ज ग. ४. स ज स ज.ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २२, ललित–२०
५,	भाव	[१. म म, ३ म म	२. म म. ४. भ.भ भ ग.]	१.

६, वक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय और चतुर्थ चरण मे 'म.ग य ग' होता है]
१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२

७, पथ्यावक्त्रम् [लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय एवं चतुर्थ चरण का पांचवां छठा और सातवां अक्षर 'जगण' होता है]
१, २, ६, १०, १३, १५, १७, १८; पथ्या–५, १६, २०, २२

---

*–१–प्रथम चरण का लक्षण, २–द्वितीय चरण का लक्षण, ३–तृतीय चरण का लक्षण, ४–चतुर्थ चरण का लक्षण।

वैतालीय-छन्द

क्रमाङ्क	छन्दनाम		लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१.	वैतालीयम्	*१,३	[१४ मात्रा-कला ६, र.ल ग]	१,२,४,६,७, १०, १३, १५,
		•२,४.	[१६ मात्रा-कला ८, र.ल ग]	१७,१८, १९, २०, २२
२.	औपच्छन्दसकम्	१,३.	[१६ मात्रा-कला ६, र ल ग.ग.]	१, २, ४, ६, ७, १०, १३,
		२,४	[१८ मात्रा-कला ८, र य]	१५ १७, १८, १९. २०, २२.
३.	आपातलिका	१,३	[१४ मात्रा-कला ६, भ ग.ग]	१, २, ६, ७, १०, १३, १७
		२,४.	[१६ मात्रा-कला ८, भ ग.ग.]	१८, १९, २०. २२
४	नलिनम्		[१४ मात्रा-कला ६, भ.ग ग]	१,
५	अपरं नलिनम्		[१६ मात्रा-कला ८, भ.ग.ग.]	१,
६.	दक्षिणान्तिका वैतालीयम्		[१४ मात्रा-ल ग, कला ३, र ल.ग]	१, ६, १०, १३, १७, २२.
७	उत्तरान्तिका वैतालीयम्		[१६ मात्रा-कला ८, र ल ग]	१, १३
८	प्राच्यवृत्ति	१,३.	[१४ मात्रा-कला ६, र.ल.ग.]	१, २, ६, १०, १३, १७,
		२,४.	[१६ मात्रा-कला ३, ग, कला ३, र.ल.ग.]	१८, १९, २०, २२
९.	उदीच्यवृत्ति	१,३	[१४ मात्रा-ल.ग, कला ३, र.ल ग.]	१, २, ६, १३, १७, १८, १९, २०, २२.
		२,४.	[१६ मात्रा-कला ८, र.ल.ग]	
१०	प्रवृत्तकम्	१,३.	[१४ मात्रा-ल ग. कला ३, र ल.ग]	१, २, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २०, प्रसवतकम्-२२
		२,४	[१६ मात्रा-कला ३, ग. कला ३, र ल.ग.]	
११	अपरान्तिका		[१६ मात्रा-कला ३, ग. कला ३, र.ल.ग]	१, २, ६, १०, १३, १७, १८, २२; अपरान्तिकम्-१९.
१२	चारुहासिनी		[१४ मात्रा-ल. ग. कला ३, र ल.ग.]	१, २, ६, १०, १३, १७, १८, १९

*१,३, अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

•२,४ अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

(ग.) छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तारसंख्या[८]

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तार सख्या
		एकाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २	
१.	श्रीः	S	१
२.	श्री·	।	२
		द्व्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४	
३.	कामः	S S	१
४.	मही	। S	२
५	सारः	S ।	३
६.	मधु	। ।	४
		त्र्यक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८	
७.	ताली	S S S	१
८.	शशी	। S S	२
९.	प्रिया	S । S	३
१०.	रमणः	। । S	४
११.	पाञ्चालम्	S S ।	५
१२.	मृगेन्द्रः	। S ।	६
१३.	मन्दरः	S । ।	७
१४	कमलम्	। । ।	८
		चतुरक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १६	
१५.	तीर्णा	S S S S	१
१६	धारी	S । S ।	११
१७.	नगाणिका	। S । S	६
१८.	शुभम्	। । । ।	१६
		पञ्चाक्षरछन्द–प्रस्तारभेद ३२	
१९.	सम्मोहा	S S S S S	१
२०.	हारी	S S । S S	५
२१.	हंस.	S । । S S	७
२२.	प्रिया	। । S । S	१२
२३.	यमकम्	। । । । ।	३२

---

[८] यहाँ क्रमाङ्क और छन्द नाम वृत्तमौक्तिक के ... दिए गए है। S चिह्न गुरु अक्षर का सूचक है और । लघु का। अंतिम ...ार भेदो की सख्या दी गई है।

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	षडक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ६४		
२४.	शेषा	ऽऽऽ ऽऽऽ	१
२५	तिलका	।।ऽ ।।ऽ	२८
२६	विमोहम्	ऽ।ऽ ऽ।ऽ	१९
२७.	चतुरंसम्	।।। ।ऽऽ	१६
२८	मन्थानम्	ऽऽ। ऽऽ।	३७
२९.	शंखनारी	।ऽऽ ।ऽऽ	१०
३०	सुमालतिका	।ऽ। ।ऽ।	४६
३१.	तनुमध्या	ऽऽ। ।ऽऽ	१३
३२.	दमनकम्	।।। ।।।	६४
	सप्ताक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १२८		
३३.	शीर्षा	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
३४	समानिका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ	४३
३५	सुवासकम्	।।। ।ऽ। ।	११२
३६	करहञ्चि	।।। ।।ऽ ।	९६
३७.	कुमारललिता	।ऽ। ।।ऽ ऽ	३०
३८.	मधुमती	।।। ।।। ऽ	६४
३९.	मदलेखा	ऽऽऽ ।।ऽ ऽ	२५
४०	कुसुमततिः	।।। ।।। ।	१२८
	अष्टाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २५६		
४१	विद्युन्माला	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽ	१
४२	प्रमाणिका	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ	८६
४३	मल्लिका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।	१७१
४४	तुङ्गा	।।। ।।। ऽऽ	६४
४५	कमलम्	।।। ।।ऽ ।ऽ	९६
४६	माणवक्रक्रीडितकम्	ऽ।। ऽऽ। ।ऽ	१०३
४७.	चित्रपदा	ऽ।। ऽ।। ऽऽ	५५
४८	अनुष्टुप्		
४९	जलदम्	।।। ।।। ।।	२५६
	नवाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ५१२		
५०	रूपामाला	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ	१
५१	महालक्ष्मिका	ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ	१४७

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
५२	सारङ्गम्	।।। ।ऽऽ ।।ऽ	२०८
५३	पाइंत्तम्	ऽऽऽ ऽ।। ।।ऽ	२४१
५४	कमलम्	।।। ।।। ।।ऽ	२५६
५५	विम्बम्	।।। ।।ऽ ।ऽऽ	९६
५६	तोमरम्	।।ऽ ।ऽ। ।ऽ।	३६४
५७	भुजगशिशुसृता	।।। ।।। ऽऽऽ	६४
५८	मणिमध्यम्	ऽ।। ऽऽऽ ।।ऽ	१९९
५९.	भुजङ्गसङ्गता	।।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ	१७२
६०	सुललितम्	।।। ।।। ।।।	५१२

दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १०२४

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
६१	गोपाल	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽ	१
६२.	संयुतम्	।।ऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ	३६४
६३.	चम्पकमाला	ऽ।। ऽऽऽ ।।ऽ ऽ	१९९
६४.	सारवती	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ	४३९
६५.	सुषमा	ऽऽ। ।ऽऽ ऽ।। ऽ	३९७
६६	अमृतगति	।।। ।ऽ। ।।। ऽ	४९६
६७	मत्ता	ऽऽऽ ऽ।। ।।ऽ ऽ	२४१
६८.	त्वरितगति	।।। ।ऽ। ।।। ऽ	४९६
६९	मनोरमम्	।।। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ	३४४
७०	ललितगति	।।। ।।। ।।। ।	१०२४

एकादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २०४८

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
७१	मालती	ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽ	१
७२	बन्धु	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽऽ	४३९
७३	सुमुखी	।।। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ	८८०
७४	शालिनी	ऽऽऽ ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ	२८९
७५	वातोर्मी	ऽऽऽ ऽ।। ऽऽ। ऽऽ	३०५
७६	उपजाति	[शालिनी वातोर्मी मिश्रित]	
७७.	दमनकम्	।।। ।।। ।।। ।ऽ	१०२४
७८.	चण्डिका	ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ	६८३
७९	सेनिका	।ऽ। ऽ।ऽ ।ऽ। ऽ।	१३६६
८०	इन्द्रवज्रा	ऽऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ	३५७
८१	उपेन्द्रवज्रा	।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ	३५८
८२	उपजाति	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रा मिश्रित]	

म क	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
८३.	रथोद्धता	ऽ। ऽ ।।। ऽ। ऽ । ऽ	६९९
८४	स्वागता	ऽ। ऽ ।।। ऽ।। ऽ ऽ	४४३
८५.	भ्रमरविलसिता	ऽ ऽ ऽ ऽ।। ।।। । ऽ	१००९
८६	अनुकूला	ऽ।। ऽ ऽ। ।।। ऽ ऽ	४८७
८७.	मोटनकम्	ऽ ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ	८७७
८८.	सुकेशी	ऽ ऽ ऽ ।। ऽ । ऽ। ऽ ऽ	३४५
८९	सुभद्रिका	।।। ।।। ऽ। ऽ । ऽ	७०४
९०.	वकुलम्	।।। ।।। ।।। ।।	२०४८

द्वादशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४०९६

म क	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
९१	आपीड	ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ	१
९२.	भुजङ्गप्रयातम्	। ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ	५८६
९३	लक्ष्मीधरम्	ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ	११७१
९४	तोटकम्	।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ ।। ऽ	१७५६
९५	सारङ्गकम्	ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ। ऽ ऽ।	२३४१
९६	मौक्तिकदाम	। ऽ। । ऽ। । ऽ। । ऽ।	२९२६
९७.	मोदकम्	ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।।	३५११
९८.	सुन्दरी	।।। ऽ।। ऽ।। ऽ। ऽ	१४६४
९९	प्रमिताक्षरा	।। ऽ । ऽ। ।। ऽ ।। ऽ	१७७२
१००	चन्द्रवर्त्म	ऽ। ऽ ।।। ऽ।। ।। ऽ	१९७९
१०१.	द्रुतविलम्बितम्	।।। ऽ।। ऽ।। ऽ। ऽ	१४६४
१०२	वंशस्यविला	। ऽ। ऽ ऽ। । ऽ। ऽ। ऽ	१३८२
१०३.	इन्द्रवंशा	ऽ ऽ। ऽ ऽ। । ऽ। ऽ। ऽ	१३८१
१०४.	उपजाति	[वंशस्थविलेन्द्रवशा मिश्रित]	
१०५	जलोद्धतगतिः	। ऽ। ।। ऽ । ऽ। ।। ऽ	१८८६
१०६	वैश्वदेवी	ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ । ऽ ऽ । ऽ ऽ	५७७
१०७.	मन्दाकिनी	।।। ।।। ऽ। ऽ ऽ। ऽ	१२१६
१०८	कुसुमविचित्रा	।।। । ऽ ऽ ।।। । ऽ ऽ	९७६
१०९	तामरसम्	।।। । ऽ। । ऽ। । ऽ ऽ	८८०
११०	मालती	।।। । ऽ। । ऽ। ऽ। ऽ	१३९२
१११.	मणिमाला	ऽ ऽ। । ऽ ऽ ऽ ऽ। । ऽ ऽ	७८१
११२.	जलधरमाला	ऽ ऽ ऽ ऽ।। ।। ऽ ऽ ऽ ऽ	२४१
११३.	प्रियम्वदा	।।। ऽ।। । ऽ। ऽ। ऽ	१४००
११४.	ललिता	ऽ ऽ। ऽ।। । ऽ। ऽ। ऽ	१३९७

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
११५.	ललितम्	SII SSI III IIS	२०२३
११६.	कामदत्ता	III III SIS ISS	७०४
११७	वसन्तचत्वरम्	ISI SIS ISI SIS	१३६६
११८	प्रमुदितवदना	III III SIS SIS	१२१६
११९	नवमालिनी	III ISI SII ISS	९४४
१२०	तरलनयनम्	III III III III	४०९६

त्रयोदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ८१९२

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१२१	वाराहः	SSS SSS SSS SSS S	१
१२२.	माया	SSS SSI ISS IIS S	१६३३
१२३.	तारकम्	IIS IIS IIS IIS S	१७५६
१२४	कन्दम्	ISS ISS ISS ISS I	४६८२
१२५	पङ्क्तावलिः	SII III ISI ISI I	७०३९
१२६.	प्रहर्षिणी	SSS III ISI SIS S	१४०१
१२७	रुचिरा	ISI SII IIS ISI S	२८०६
१२८.	चण्डी	III III IIS IIS S	१७९२
१२९	मञ्जुभाषिणी	IIS ISI IIS ISI S	२७९६
१३०	चन्द्रिका	III III SSI SSI S	२३६८
१३१.	कलहंस	IIS ISI IIS IIS S	१७७२
१३२	मृगेन्द्रमुखम्	III ISI ISI SIS S	१३९२
१३३.	क्षमा	III III SSI SIS S	
१३४	लता	III IIS ISI ISI S	२९१२
१३५	चन्द्रलेखम्	III IIS SIS SIS S	११८४
१३६	सुद्युतिः	III IIS SSI SSI S	२३३६
१३७	लक्ष्मी	SSI SII IIS ISI S	२८०५
१३८	विमलगतिः	III III III III I	८१९२

चतुर्दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १६३८४

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१३९.	सिंहास्यः	SSS SSS SSS SSS SS	१
१४०.	वसन्ततिलका	SSI SII ISI ISI SS	२९३३
१४१.	चक्रम्	SII III III III IS	८१९१
१४२	असम्बाधा	SSS SSI III IIS SS	२०१७
१४३	अपराजिता	III III SIS IIS IS	५८२४
१४४.	प्रहरणकलिका	III III SII III IS	८१२८
१४५	वासन्ती	SSS SSI III SSS SS	४८१

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
१४६	लोला	SSS IIS SSS SII S S	३०९७
१४७	नान्दीमुखी	III III SSI SSI S S	२३६८
१४८	वैदर्भी	SSS SII III ISS S S	१००९
१४९	इन्दुवदनम्	SII ISI IIS III S S	३८२३
१५०.	शरभी	SSS SII III SSI S S	
१५१	अहिधृति.	III III SII ISI I S	७०९६
१५२	विमला	III ISI SII ISI I S	७०८८
१५३	मल्लिका	IIS ISI IIS ISI I S	
१५४	मणिगणम्	III III III III I I	१६३८४

पञ्चदशाक्षर छन्द प्रस्तारभेद ३२७६८

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
१५५	लीलाखेल.	SSS SSS SSS SSS SSS	१
१५६.	मालिनी	III III SSS ISS ISS	४६७२
१५७.	चामरम्	SIS ISI SIS ISI SIS	१०९२३
१५८	भ्रमरावलिका	IIS IIS IIS IIS IIS	१४०४४
१५९.	मनोहंस	IIS ISI ISI SII SIS	११९२८
१६०.	शरभम्	III III III III IIS	१६३८४
१६१.	निशिपालकम्	SII ISI IIS III SIS	१२०१५
१६२	विपिनतिलकम्	III IIS III SIS SIS	९६९६
१६३	चन्द्रलेखा	SSS SIS SSS ISS ISS	४६२५
१६४.	चित्रा	SSS SSS SSS ISS ISS	४६०९
१६५.	केसरम्	III ISI SII ISI SIS	११०८४
१६६	एला	IIS ISI III III ISS	८१७२
१६७.	प्रिया	III III SSI SII SIS	११५८४
१६८	उत्सव.	SIS III SII SII SIS	११७०७
१६९	उडुगणम्	III III III III III	३२७६८

षोडशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६५५३६

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
१७०.	राम	SSS SSS SSS SSS SSS S	१
१७१	पञ्चचामरम्	ISI SIS ISI SIS ISI S	२१८४६
१७२	नीलम्	SII SII SII SII SII S	२८०८७
१७३	चञ्चला	SIS ISI SIS ISI SIS I	४३६९१
१७४	मदनललिता	SSS SII III SSS III S	२९१६९
१७५	वाणिनी	III ISI SII ISI SIS S	१११८४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१७६	प्रवरललितम्	ISS SSS III IIS SIS S	१०,१७८
१७७	गरुडरुतम्	III ISI SII ISI SSI S	१६,३७६
१७८	चकिता	SII IIS SSS SSI III S	३०,७५१
१७९	गजतुरगविलसितम्	SII SIS III III III S	३२,७२७
१८०	शैलशिखा	SII SIS III SII SII S	
१८१	ललितम्	SII SIS III SIS III S	३०,१५१
१८२	सुकेशरम्	III IIS ISI IIS ISI S	
१८३	ललना	IIS III III ISI SII S	
१८४	गिरिवरधृति	III III III III III I	६५,५३६

सप्तदशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १,३१,०७२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१८५	लीलाधृष्टम्	SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
१८६	पृथ्वी	ISI IIS ISI IIS ISS IS	३८,७५०
१८७	मालावती	III IIS ISI IIS ISS IS	३८,७५२
१८८	शिखरिणी	ISS SSS III IIS SII IS	५९,३३०
१८९	हरिणी	III IIS SSS SIS IIS IS	४६,११२
१९०.	मन्दाक्रान्ता	SSS SII III SSI SSI SS	१८ ६२९
१९१	वंशपत्रपतितम्	SII SIS III SII III IS	६४,९८३
१९२	नर्दटकम्	III ISI SII ISI ISI IS	५६,२४०
	कोकिलकम्	III ISI SII ISI ISI IS	५६,२४०
१९३	हारिणी	SSS SII III SSS ISS IS	३७,८७३
१९४	भाराक्रान्ता	SSS SII III SIS IIS IS	४६,५७७
१९५.	मतङ्गवाहिनी	SIS ISI SIS ISI SIS IS	
१९६	पद्मकम्	III IIS SSS SSI SSI SS	
१९७	दशमुखहरम्	III III III III III II	१,३१,०७२

अष्टदशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २,६२,१४४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
१९८	लीलाचन्द्रः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
१९९	मञ्जीरा	SSS SSS SII SSS IIS SSS	१२,६७२
२००	चर्चरी	SIS IIS ISI ISI SII SIS	९३,०१९
२०१	क्रीडाचन्द्र.	ISS ISS ISS ISS ISS ISS	३७,४५०
२०२	कुसुमितलता	SSS SSI III ISS ISS ISS	३७,८५७
२०३	नन्दनम्	III ISI SII ISI SIS SIS	७६,७२०
२०४	नाराच	III III SIS SIS SIS SIS	७४,९४४
२०५	चित्रलेखा	SSS SII III ISS ISS ISS	३७,८७३

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२०६.	भ्रमरपदम्	S I I S I S I I I I I I I I I I I S	१,३०,९७१
२०७	शार्दूलललितम्	S S S I I S I S I I I S S S I I I S	१,१६,५६९
२०८	सुललितम्	I I I I I I S S S S S I S I I S I S	
२०९.	उपवनकुसुमम्	I I I I I I I I I I I I I I I I I I	२,६२,४४

एकोनविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ५,२४,२८८

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२१०	नागानन्दः	S S S S S S S S S S S S S S S S S S S	१
२११	शार्दूलविक्रीडितम्	S S S I I S I S I I I S S S I S S I S	१,४९,३३७
२१२.	चन्द्रम्	I I I I I I I I I I S I I I I I I I I	५,२३,२६४
२१३.	धवलम्	I I I I I I I I I I I I I I I I I I S	२,६२,१४४
२१४	शम्भु	I I S S S I I S S S I I S S S S S S S	३,१७२
२१५	मेघविस्फूर्जिता	I S S S S S I I I I I S S I S S I S S	७५,७१४
२१६.	छाया	I S S S S S I I I I I S S S I S S I S	१,४९,४४२
२१७	सुरसा	S S S S I S S I I I I I I S S I I I S	२,३७,४५७
२१८	फुल्लदाम	S S S S S I I I I I I S S I S S I S S	८५,७४५
२१९.	मृदुलकुसुमम्	I I I I I I I I I I I I I I I I I I I	५,२४,२८८

विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १०,४८,५७६

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२२०	योगानन्दः	S S S S S S S S S S S S S S S S S S S S	१
२२१	गीतिका	I I S I S I I S I S I I S I S I I S I S	३,७२,०७६
२२२	गण्डका	S I S I S I S I S I S I S I S I S I S I	६,९९,०५१
२२३	शोभा	I S S S S S I I I I I I S S I S S I S S	१,५१,४९०
२२४.	सुवदना	S S S S I S S I I I I I I S S S I I I S	४,६६,८३३
२२५	प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्	I S I S I S I S I S I S I S I S I S I S	
२२६	शशाङ्कचलितम्	S S I S I I I S I S I I I S I S I I I S	
२२७	भद्रकम्	S I I S I I S I I S I I S I S I I S I S	
२२८	अनवधिगुणगणम्	I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I	१०,४८,५७६

एकविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद २०,९७,१५२

क्रमाक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
२२९.	ब्रह्मानन्द	S S S S S S S S S S S S S S S S S S S S S	१
२३०	स्रग्धरा	S S S S I S S I I I I I I S S I S S I S S	३,०२,९९३
२३१	मञ्जरी	S I S I I I S I S I I I S I S I I I S I S	७,६५,६२७
२३२	नरेन्द्रः	S I I S I S I I I I I I I S I I S I I S I	४,५०,५१९
२३३	सरसी	I I I I S I S I I I S I I S I I S I S I S	७,११,६००
२३४	रुचिरा	I I I I S I S I I I S I I S I I S I S I S	७,११,६००
२३५.	निरुपमतिलकम्	I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I I	२०,९७,१५२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

द्वाविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ४१,९४,३०४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२३६.	विद्यानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२३७	हंसी	SSS SSS SSI III III III IIS S	१०,४८,३२१
२३८	मदिरा	SII SII SII SII SII SII SII S	१७,९७,५५९
२३९	मन्द्रकम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१९,३१,२२३
२४०	शिखरम्	SII SIS III SIS III SIS III S	१९,३१,२२३
२४१	अच्युतम्	III III III III IIS ISI ISI S	
२४२.	मदालसम्	SSI SII ISS ISI IIS SIS III S	१९,१५,५०९
२४३.	तरुवरवत्तम्	III III III III III III III I	४१,९४,३०४

त्रयोविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ८३,८८,६०८

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२४४	दिव्यानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२४५.	सुन्दरिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,९०,०४४
	पद्मावतिका	IIS IIS SII IIS SSI ISI ISI IS	३५,९०,०४४
२४६	अद्रितनया	III ISI SII ISI SII ISI SII IS	३८,६१,४२४
२४७	मालती	SII SII SII SII SII SII SII SS	१७,९७ ५५९
२४८	मल्लिका	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI IS	३५,९५ ११८
२४९	मत्ताक्रीडम्	SSS SSS SSI III III III III IS	४१,९४,०४९
२५०.	कनकवलयम्	III III III III III III III II	८३,८८,६०८

चतुर्विंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद १,६७,७७,२१६

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५१	रामानन्दः	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२५२	दुर्मिलका	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS	७१,९०,२३६
२५३	किरीटम्	SII SII SII SII SII SII SII SII	१,४३,८०,४७१
२५४	तन्वी	SII SSI III IIS SII SII III ISS	३६,५५ ३६७
२५५	माधवी	ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI ISI	१,१९,८३,७२६
२५६	तरलनयनम्	III III III III III III III III	१,६७,७७,२१६

पञ्चविंशाक्षर छन्द–प्रस्तारभेद ३,३५,५४,४३२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२५७	कामानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS S	१
२५८.	क्रौञ्चपदा	SII SSS IIS SII III III III III S	१,६७,७६.३८१
२५९	मल्ली	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS S	७१,९०,२३६
२६०	मणिगुणम्	III III III III III III III III I	३,३५,५४,४३२

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या

षड्विंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६,७१,०८,८६४

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	प्रस्तारसंख्या
२६१.	गोविन्दानन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SS	१
२६२.	भुजङ्गविजृम्भितम्	SSS SSS SSI III III III SIS IIS IS	२,३८,५४,८४९
२६३	अपवाह	SSS III III III III III III IIS SS	८३,८८,६०१
२६४	मागधी	SII SII SII SII SII SII SII SII SS	१,४३,८०,४७१
२६५.	कमलदलम्	III III III III III III III III II	६,७१,०८,८६४

प्रकीर्णक-छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१.	पिपीडिका	SSS SSS SSI III III III III ISI SII SIS
२	पिपीडिकाकरभः	SSS SSS SSI III III III III III III SIS IIS IS
३.	पिपीडिकापणवः	SSS SSS SSI III III III III III III III IIS ISI ISI S
४.	पिपीडिकामाला	SSS SSS SSI III III III III III III III III III ISI SII SIS
५	द्वितीयत्रिभंगी	III III III III III III IIS IIS SII SSS IIS S
६	शालूरः	SSI III III III III III III III III IS

दण्डक-छन्द

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण
१	चण्डवृष्टिप्रपात	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
२	प्रचितक	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
३	अर्ण	III III SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
४.	सर्वतोभद्र	III III ISS ISS ISS ISS ISS ISS ISS
५	अशोककुसुममञ्जरी	SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS I
६	कुसुमस्तवक	IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS IIS
७.	मत्तमातङ्ग.	SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS SIS
८.	अनङ्गशेखर	ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI SIS ISI S

अर्धसम-वृत्त

क्रमाक	छन्द-नाम	प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण	द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण
१	पुष्पिताग्रा	I I I I I I S I S I S S	I I I I S I I S I S I S S
२.	उपचित्रम्	I I S I I S I I S I S	S I I S I I S I I S S
३	वेगवती	I I S I I S I I S S	S I I S I I S I I S S
४.	हरिणप्लुता	I I S I I S I I S I S	I I I S I I S I I S I S
५.	अपरवक्त्रम्	I I I I I I S I S S S	I I I I S I I S I S I S
६.	सुन्दरी	I I S I I S I S I S	I I S S I I S I S I S
७.	भद्रविराट्	S S I I S I S I S S	S S S I I S I S I S S
८	केतुमती	I I S I S I I I S S	S I I S I S I I I S S
९	वाङ्मती	S I S I S I S I S I S I	I S I S I S I S I S I S S
१०	षट्पदावली	I S I S I S I S I S I S	S I S I S I S I S I S I S

विषमवृत्त

१.	उद्गता	[प्र.च]* I I S I S I I I S I	[द्वि च.]* I I I I I S I S I S
		[तृ च.]* S I I I I I S I I S	[च च.]* I I S I S I I I S S
२.	उद्गताभेदः	[प्र च.] I I S I S I I I S I	[द्वि च] I I I I I S I S I S
		[तृ च.] S I I I I I I S I I S	[च.च] I I S I S I I I S S
३.	सौरभम्	[प्र च.] I I S I S I I I S I	[द्वि च] I I I I I S I S I S
		[तृ च.] S I S I I I S I I S	[च.च.] I I S I S I I I S I S I S
४	ललितम्	[प्र च] I I S I S I I I S I	[द्वि च] I I I I I S I S I S
		[तृ च] I I I I I I I I S I I S	[च च.] I I S I S I I I S I S I S
५	भाव	[प्र च] S S S S S S	[द्वि च.] S S S S S S
		[तृ च] S S S S S S	[च च] S I I S I I S I I S
६	वक्त्रम्	[समचरणे] S S S, S I S S S	
७	पथ्यावक्त्रम्	[समचरणे] I S I (५ ६ ७ वां वर्ण)	

---

*[प्र च] प्रथम चरण का लक्षण। [द्वि.च.] द्वितीय चरण का लक्षण
[तृ च] तृतीय चरण का लक्षण। [च च] चतुर्थ चरण का लक्षण

(घ) विरुदावली छन्दों के लक्षण*

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
द्विगा कलिका	१६ मा०च०	४–चतुष्कल	चतुष्कुल की मैत्री
रादिकलिका	२० मा०च०	४–पञ्चकल	१–२ और ३–४ पंचकलों की मैत्री
मादिकलिका	४८ मा०च०	मगण, षट्कल–७	
नादिकलिका	२४ मा०च०	त्रिकल–८, अर्थात् नगण ८,	अनुप्रासयुक्त
गलादिकलिका	२० मा०च०	४–पंचकल, प्रत्येक पंचकल के आदि मे गुरु	
मिश्रा कलिका	२७ व०च०	गुरु-लघु-मिश्र	तिल-तंदुल के समान गुरु और लघु मिश्रित हो।
(१) मध्या कलिका		आदि और अन्त में कलिका और मध्य मे गद्य	
(२) मध्या कलिका		आदि और अन्त मे मैत्री-रहित गद्य और मध्य मे कलिका।	
द्विभङ्गी कलिका	२८ व०च०	गुरु-लघु-क्रम से २४ वर्ण, अन्त मे ४ गुरु	६ भंग होते हैं इनमें भग होने पर भी मैत्री होती है। द्वितीय और चतुर्थ मधुर एवं श्लिष्ट होते हैं।
विदग्धत्रिभङ्गी कलिका	२४ व०च०	त न,त न,त.न,भ.भ	युग्मार्ण-भंग और दोनों भगणो की मैत्री

---

*कलिका मे प्रत्येक के चार चरण होते हैं। चण्डवृत्तों मे प्रत्येक मे ६, ८, १०, १२, १४ तक कलिका विरुद होते हैं। विरुद तीन होते हैं। धीर, वीर, देव आदि सम्बोधन होते हैं। यहाँ केवल चण्डवृत्त छन्दों के लक्षण मात्र दिये गये हैं, कलिका विरुदादि के नहीं दिये गये हैं क्योंकि ये ऐच्छिक होते हैं।

संकेत—म = मगण, य = यगण, र = रगण, स = सगण, त = तगण, ज = जगण, भ = भगण, न = नगण, ग = गुरु, ल = लघु, षट्कल = ६ मात्रा, पञ्चकल = ५ मात्रा, चतुष्कल = ४ मात्रा, त्रिकल = ३ मात्रा, च = चतुष्पदी, व = वर्ण, मा = मात्रा

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
तुरगत्रिभगी कलिका	२२ व०च०	त भ ल,त भ ल,त.भ ल ग	
पद्य ,, ,,	३२ मा०च०		देखें, प्रथम खंड के चतुर्थ प्रकरण मे पद्मावती, त्रिभङ्गी, दण्डकलादिछन्द
हरिणप्लुत ,,	३३व०च०	न य भ,न य भ,न य भ,भ.भ.	६ भंग हो ओर दोनो भगणों की मैत्री हो।
नर्त्तक ,, ,,	३४व०च०	न.य.भ,न य भ,न य.भ,न.ज ल	
भुजङ्ग ,, ,,	३०व०च०	म भ ल ल,म भ ल ल,म भ ल.ल,भ भ	दूसरे और चौथे मे भंग, क्वचित् चौथे मे भग न भी हो, दोनो भगणो की मैत्री हो।
वलिगतात्रिगता ,, ,,	३३व०च०	म न न,म न.न,म न न,भ भ	तृतीय वर्ण मे भंग हो।
ललिता ,, ,, ,,	३०व०च०	त न.भ,त न भ त न भ,भ.	द्वितीय वर्ण मे भग हो।
वरतनु ,, ,, ,,	३६व०च०	न.य न ल,न य न ल,न य.न ल, भ भ	६ भग होते हैं।
मुग्धा द्विपादिका युग्म-भंगा कलिका	२०व०च०	म त ल,म त ल,भ.भ.	युग्मभंग
प्रगल्भा ,, ,, ,,	१८व०च०	म त ल,म त ल,ग ग ग ग	
मध्या(१),, ,, ,,	१८व०च०	म भ स म भ भ	
,, (२) ,, ,, ,,	१४व०च०	न ल भ न ज ल.	
,, (३) ,, ,, ,,	११व०च०	न न स ल ल	
,, (४) ,, ,, ,,	११व०च०	न ज न ल ल.	
शिथिला,, ,, ,,	१८व०च०	म त ल,म त ल,ल.ल.ल ल	
मधुरा ,, ,, ,,	२२व०च०	म.भ ल ल,म भ ल ल भ,भ	
तरुणी ,, ,, ,,	२०व०च०	म भ ल ल,म भ ल.ल,ग ग ग.ग.	
	प्रति चरण-वर्ण		
पुरुषोत्तम चण्डवृत्त	९	स स.भ.	४, ८ वर्ण श्लिष्ट; ३, ६ वर्ण दीर्घ;
तिलक ,,	१५	न न स न.न	१०वां वर्ण मधुर;
अच्युत ,,	२४	न.य न य.न य.न.य. शेष चरण मे–न.य.न.य न य.न.ज.	छठा वर्ण श्लिष्टपर; ४ या ८ पद होते हैं।
वर्द्धित ,,	१३	भ.न.ज.ज ल.	२, ६, १२वा वर्ण श्लिष्ट

छन्द-नाम		प्रति चरण-वर्ण	लक्षण	विशेष
रण	,,	१२(१४)	ज.र ज र अन्तिम चरण मे–ज.भ ल ज भ ल	१, ३, ५, ७, ६, ११वा वर्ण श्लिष्ट; पद - संख्या ऐच्छिक होती है।
वीर	,,	१२	म भ न न	१, २, ३, ४, वर्ण श्लिष्ट, पद-संख्या १२
शाक	,,	१०	भ भ र ल	५वां वर्ण श्लिष्ट; ७, ६वां वर्ण दीर्घ; दूसरा वर्ण मधुर,
मातङ्गखेलित	,,	१०	र.र य.ल.	५, १०वां वर्ण श्लिष्ट या मधुर; ५वें वर्ण पर भग और मैत्री, १, ३, ६, ८वा वर्ण दीर्घ, पद - सख्या ऐच्छिक,
उत्पल	,,	६(१२)	भ.भ मतान्तरे–भ भ भ.भ	२, ५वां वर्ण श्लिष्ट; पद-सख्या ऐच्छिक;
गुणरति	,,	७(१४)	स न ल मतान्तरे–स न ल स न ल	३ रा वर्ण दीर्घ; पद-सख्या ऐच्छिक;
कल्पद्रुम	,,	६	त ज य	२, ३, ६, ६वा वर्ण श्लिष्ट; ६वा वर्ण श्लिष्टपर, पद-सख्या ऐच्छिक;
कन्दल	,,	६	भ भ	२ रा वर्ण मधुर, ५वा वर्ण श्लिष्ट;
अपराजित	,	११	भ स.ज ग ल	२ रा वर्ण मधुर; ६, ८, १०वा वर्ण दीर्घ;
नर्त्तन	,,	११	स.स र ल ल.	४, ७वां वर्ण श्लिष्ट; ८वा वर्ण मधुर;
तरत्समस्त	,,	११	ज म स.ल ल	३, ५ ६ वर्ण श्लिष्ट, सश्लिष्ट एव मधुर,
वेष्टन	,,	१०	न.य ल ल ल ल.	७वां वर्ण श्लिष्ट; ५, ६, वर्ण दीर्घ
अस्खलित	,,	१०	त र भ ल	३, ५, ७, ८वा वर्ण सश्लिष्ट; प्रथम वर्ण दीर्घ;
पल्लवित	,,	१३	भ त न ल ल ल ल	२ रा वर्ण शिथिल या मधुर, ४, ५वा वर्ण दीर्घ;

छन्द-नाम	प्रति चरणवर्ण	लक्षण	विशेष
समग्रम् ,,	१२(१३)	ज र ज र. अन्तिम चरण में–ज र ज.र ल	३ रा वर्ण मधुर; ५वां वर्ण श्लिष्ट; पद-सख्या ऐच्छिक.
तुरग ,,	१०	भ न ज ल.	२, ६वा वर्ण मधुर, पद-संख्या ऐच्छिक;
पङ्केरुह ,,	६	न य	छठा वर्ण कवर्ग-रचित, छठा वर्ण मधुर और इसी वर्ण पर भग और मैत्री भी। इकारादि स्वरभेद होने पर इसी छन्द के भेद वनते हैं। पद-सख्या ऐच्छिक।
सितकञ्ज ,,	६	न य.	छठा वर्ण चवर्गीय, शेष पकेरुह के अनुसार।
पाण्डूत्पल ,,	६	न य	छठा वर्ण टवर्गीय, शेष पकेरुह के समान।
इन्दीवर ,,	६	न य	छठा वर्ण तवर्गीय, शेष पकेरुहवत्।
अरुणाम्भोरुह ,	६	न य	छठा वर्ण पवर्गीय; शेष पकेरुहवत्।
फुल्लाम्बुज ,,	६	न य	छठे वर्ण का भंग और मैत्री यवर्गीय लकार से होती है।
चम्पक ,,	६	भ न	२ रा वर्ण मधुर एव क्वचित् श्लिष्ट, पद-सख्या ऐच्छिक।
वञ्जुल ,,	७	न.ज ल	५वां वर्ण मधुर, पद-सख्या ऐच्छिक।
कुन्द ,,	६	भ.ज.	२, ६ वर्ण मधुर एव क्वचित् श्लिष्ट; पद-सख्या ऐच्छिक
बकुलभासुर ,,	१६मा०	४ चतुष्कल, जगण रहित	शृङ्खलाबद्ध;
बकुलमङ्गल ,,	१२व०	भ भ.भ.भ.	तृतीय भगण शृङ्खलाबद्ध; पद-सख्या ऐच्छिक;
मञ्जरी कोरक	१२व०	भ.भ भ भ	प्रथम मञ्जरी पश्चात् कोरक, मञ्जरी का लक्षण नही; आद्यन्त यमकाकित शृङ्खला रहित; २० पद;

छन्द-नाम	प्रतिचरण वर्ण	लक्षण	विशेष
गुच्छक ,,	१६	न.स ज न ज.ल.	सानुप्रास एवं यमकाकित; १६ पद,
कुसुम ,,	१२	न न न न	२० पद, पादान्तयमक,
दण्डकत्रिभङ्गी-कलिका	३३	न न. र-६.	पद-सख्या ऐच्छिक
सम्पूर्णविदग्ध-त्रिभगी कलिका	२४	त न त न त.न. भ भ·	८ पद; आशीःपद्ययुक्त; द्वितीयाक्षर मे भग,
मिश्रकलिका		कलिका-लक्षण–भ.न.ज ल.	६ कलिका, आद्यन्त मे आशी पद्य, मध्य मे कलिका विरुदसहित.
साधारण चण्डवृत्त	सामान्यलक्षण––कलान्यास ऐच्छिक; वर्ण सख्या ३ से कम नहीं और १७ वर्ण से अधिक नहीं। जिस गण से प्रारम्भ हो वही गण अन्त तक रहना चाहिये। प्र, ङ्ग, ग्र, स्फु, स्मि, स्म, क्व इत्यादि सयुक्त वर्णो के सयोग होने पर भी इस प्रकरण मे पूर्व-पूर्व वर्ण का लघुत्व होता है। मात्रिक मे चतुष्कलद्वय होने पर जगण का प्रयोग निषिद्ध है। इसके अनेक भेद होते हैं।		
साप्तविभक्तिकीकलिका	(प्रथमा विभक्ति) भ. स; (द्वितीया०) न. य, (तृतीया०) न.न.स ल.; (चतुर्थी०) त त. त., (पचमी०) य य, (षष्ठी०) त. त, (सप्तमी०) स. स, (सम्बोधन) त न, सब विभक्तियो के चार-चार चरण होते हैं।		
अक्षमयी कलिका	अ से क्ष पर्यन्त प्रत्येक अक्षर के दो चतुष्कल होते हैं। चतुष्कल मे ऽ ऽ, । । । ।, ऽ । ।, । । ऽ का यथेच्छ प्रयोग, जगण का प्रयोग निषिद्ध है।		
सर्वलघुकलिका	१५, १६ या १७	सर्व लघु	कलिका सहित

खण्डावली

तामरस खण्डावली	११	र स स ल.ल	कलिका के आद्यन्त मे विरुद-रहित आशी पद्य
मञ्जरी खण्डावली	१६मा०	चार चतुष्कल जगण रहित	आद्यन्त मे आशी.पद्य

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त वर्णिक-वृत्त*

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		चतुरक्षर-छन्द	
२	व्रीडा	य ग	१०, ६; क्रीडा–१७, वृद्धि.–१६
३	समृद्धिः	र ग	१०; पुण्य–११; नन्द–१७, वृद्धि १६
४	सुमति	स ग	१०, १६; भ्रमरी–११, दोला–१७; रामा–१७,
५	सोमप्रिया	त ग	१०; धरा–१७, तारा–१६
७	सुमुखी	भ ग	१०, १६; ललिता–११, बला–१७
८	मृगवधू	न ग	७, १०, १५; सती–१७; मधु–१६; कुसुमिता– २२; तरणिजा–१७
९	मुग्धम्	म ल	१७, गोपाल–१७, वल्ली–१६
१०	वारि	य ल	१७; कर्तृ–१७, सद्म–१६
१२	कारु	स ल	१७; वीरु–१७; कदली–१६
१३	तावुरि	त ल	१७; कृष्ण–१७, त्रपु–१६
१४.	ऋजु	ज ल	१७, जपा–१६.
१५	अनृजु	भ ल	१७; निशि–१७, जतु–१६.
		पञ्चाक्षर-छन्द	
२	नाली	य ग ग	१७;
३	प्रीति.	र ग ग	१०, १६, सूरिणी–१७.
४	धनपक्ति	स ग ग	१०; प्रगुण–१७, चतुर्वंशा–१७; सुदती–१६
६.	सती	ज ग ग	१०, १६, शिखर–११, कण्ठी–१७
८	कललि	न ग ग	१७;

---

*जिन छन्दो का वृत्तमौक्तिक मे समावेश नहीं हुआ है और जो अन्य सन्दर्भ-ग्रन्थो मे प्राप्त होते हैं वे अवशिष्ट छन्द प्रस्तार-क्रम से इस परिशिष्ट मे दिए गए हैं। प्रारम्भ मे प्रस्तारानुक्रम से उस छन्द की प्रस्तार-सख्या दी है, तत्पश्चात् छन्द का नाम और उसके लक्षण दिए हैं। तदनन्तर सन्दर्भ-ग्रन्थ का सकेत और छन्द का नाम-भेद एव सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेताक दिया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और सकेताक पृष्ठ ४१४ के अनुसार हैं।

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-पङ्क्ताङ्क
९	सावित्री	म ल ग	१०; हासिका-१७
१०.	जया	य ल ग	६, १०; नरी-१७.
११	विदग्धकः	र ल ग	१०; वागुरा-११; वैनस-१७; शामिनी-२२; घृति-१९
१३	नन्दा	त ल ग	६, १०, १९. कणिका-१७
१४	शिला	ज ल ग	१७,
१५	रतिः	भ ल ग	१०, मण्डलम्-१७; शर्म-१९
१६.	अभिमुखी	न ल ग	१०, मृगचपला-११, कनकमुखी-११, धृति-१९, सुलू-१७
१७.	कुम्भारि	म ग ल	१७
१८	भ्रूः	य ग ल	१७.
१९.	ह्री	र ग ल	१७
२०.	पालि	स ग ल	१७.
२१	किञ्जल्कि	त ग ल	१७
२२	वार्द्धि	ज ग ल	१७
२३	विट्	भ ग ल	१७
२४.	पांशु	न ग ल	१७
२५	मालीनम्	म ल ल	१७.
२६	वरीयः	य ल ल	१७.
२७.	कल्किः	र ल ल	१७
२८	जतु	स ल ल	१७.
२९	छिद्रम्	त ल ल	१७
३०	क्षुपम्	ज ल ल	१७; हरम्-१७
३१	क्षुत्	भ ल ल	१७; विष्णु-१७

षडक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-पङ्क्ताङ्क
	शिखण्डिनी	य म	१०, २०; पन्था-१७
३	मालिनी	र म	३, १०; करेणु-१७
४	सूचीमुखी	स म	१०, २०, अभिख्या-१७.
५	वभ्रू	त म	१७.
६	कञ्जा	ज म	१७
७.	विभ्रान्ता	भ म	१०; सिन्धुरया-१७
८	गुणवती	न म	१७
९	मुनन्दा	म य	१०, तन्त्री-१७, तटी-१९
११	पिकाली	र य	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२.	विमला	स य	१०, कमनी–१७
१४.	अरजस्का	ज य	१७
१५.	कामलतिका	भ य	१०; ईति–१७; कामललिता–१६.
१७.	तटी	म र	१०; अवोढा–१७.
१८.	कच्छपी	य र	१७.
२०.	मृदुकीला	स र	१७.
२१	जला	त र	१०, स्थाली–१७.
२२.	वलीमुखी	ज र	१७
२३.	लघुमालिनी	भ र	१०; शुनकम्–१७
२४.	निरसिका	न र	१७, मणिरुचि–१६
२५.	मुकुलम्	म स	१०, १६; वीथी–११, निस्का–१७.
२६.	मशगा	य स	१७
२७.	कर्मंदा	र स	१७.
२६.	वसुमती	त स	१०, १७
३०	कुही	ज स	१७
३१.	सौरभि	भ स	१७.
३२.	सरि	न स	१७.
३३.	साहूति	म त	१७.
३४.	विन्दू	य त	१७.
३५	मन्त्रिका	र त	१७.
३६.	ढुण्ढि	स त	१७.
३८.	क्षमापालि	ज त	१७.
३६.	रुढि	भ त	१७.
४०.	अनिभृतम्	न त	१७
४१.	मङ्कुरम्	म ज	१७.
४२.	वृत्तहारि	य ज	१७
४३	आर्भवम्	र ज	१७
४४.	मधुमारकम्	स ज	१७.
४५.	हाटकशालि	त ज	१७.
४७.	पाकलि	भ ज	१७.
४८.	पुटमर्द्दि	न ज	१७.
४६.	कसरि	म भ	१७
५०	सोमश्रुति	य भ	१७.
५१	सोपधि	र भ	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५२	गुरुमध्या	स भ	१०; शंखद्युति-१७
५३.	इन्धा	त भ	१७
५४	सावदु	ज भ	१७.
५५.	नन्दि	भ भ	१७
५६.	अयमितम्	न भ	१७.
५७.	प्रोया	म न	१७
५८	अत्ति	य न	१७
५९	कच्छपी	र न	१०, प्रतरि-१७.
६०	विससि	स न	१७
६१	अतिकलि	त न	१७.
६२.	सुदाधि	ज न	१७
६३.	अनति	भ न	१७.

सप्ताक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२.	प्रहाण	य म ग	१७.
३.	सैरवी	र म ग	१७
४	शम्बूक	स म ग	१७.
५.	निम्नाशय	त म ग	१७.
६.	सुमोहिता	ज म ग	१७.
७	अघोरा	भ म ग	१७
८	होला	न म ग	१७.
९	इभभ्रान्ता	म य ग	१७
१०	अभीक	य य ग	१७.
११.	अहिंसा	र य ग	१७
१२	रसधारि	स य ग	१७
१३	वेधा	त य ग	१७.
१४.	पद्या	ज य ग	१७
१५	किणपा	भ य ग	१७
१६.	कुमुद्वती	न य ग	१०; सुरि-१७.
१७	किर्मीरम्	म र ग	१७
१८	वयस्य	य र ग	१७
१९.	हंसमाला	र र ग	६, १०, भूरिधाम-१७.
२०.	दीप्ता	स र ग	१०; हंसमाला-१७, १४.
२१.	भीमार्जनम्	त र ग	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२२.	सुभद्रा	ज र ग	१०; पुरोहिता–१७.
२३.	ह्लोडपदा	भ र ग	१७
२४	मनोज्ञा	न र ग	१०; खरकरा–१७.
२६.	मुदिता	य स ग	१०; महनीया–१७.
२७.	उद्धता	र स ग	१०, ३; शरगीति–१७; उद्यता–२२.
२८	करभित्	स स ग	१७
२९.	भ्रमरमाला	त स ग	१०, ३, १९; स्थूला–१७, वज्रक–२०.
३१	विधुवक्त्रा	भ स ग	१०, रुचिरं–१७, मदलेखा–१९.
३२.	दृति.	न स ग	१७
३३.	हिन्दीरं	म त ग	१७
३४.	ऊपिकम्	य त ग	१७
३५	मृण्टपादा	र त ग	१७
३६.	मायाविनी	स त ग	१७
३७	राजराजी	त त ग	१७
३८.	कुठारिका	ज त ग	१७.
३९.	कल्पमुखी	भ त ग	१७.
४०.	परभृतम्	न त ग	१७
४१	महोन्मुखी	म ज ग	१७
४२	महोद्धता	य ज ग	१७.
४४	विमला	स ज ग	१०; कठोद्गता–१७
४५	पूर्णा	ज ग	१७.
४६	वह्निर्वलि	ज ज ग	१७.
४७.	शारदी	भ ज ग	१०, उन्दरि–१७, धुनी–१९
४८	पुरटि	न ज ग	१७.
४९	सरलम्	म भ ग	१०, १९; वर्करिता–१७.
५०	केशवती	य भ ग	१७.
५१	सौरकान्ता	र भ ग	१७.
५२.	अधिकारी	स भ ग	१७
५३	चूडामणि	त भ ग	१४, निर्वाधिका–१७
५४	महोधिका	ज भ ग	१७.
५५	मौरलिकम्	भ भ ग	१९; कलिका–१० १९, सोपान–११ २२, भोगवती–११.
५६	स्वनकरी	न भ ग	१७
५७	नवसरा	म न ग	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८	चिररुचि	य न ग	१७
५९.	वहुलया	र न ग	१७
६०	यमनकम्	स न ग	१७.
६१	हीरम्	त न ग	१७; मधुकरिका–१०, वज्रम्–११.
६२.	स्विदा	ज न ग	१७;
६३.	चित्रम्	भ न ग	१०, १६; उत्पला–१७
६५	नीहारी	म म ल	१७
६६.	कसासारि	य म ल	१७
६७	खर्विणी	र म ल	१७
६८	गृह्णिणी	स म ल	१७
६९	वर्धिष्णु	त म ल	१७, शूर–१७.
७०	श्रोणी	ज म ल	१७,
७१	व्याहारी	भ म ल	१७.
७२.	किशलय	न म ल	१७
७३	देवलम्	म य ल	१७.
७४.	नर्द्दि	य य ल	१७.
७५	अनासादि	र य ल	१७
७६	अलालापि	स य ल	१७.
७७	गुञ्जा	त य ल	१७.
७८	ऋचा	ज य ल	१७
७९	नन्दयु	भ य ल	१७.
८०	अनु	न य ल	१७.
८१.	अम्मेयी	म र ल	१७.
८२	मयूरी	य र ल	१७
८३	सामिका	र र ल	१७.
८४	प्रोञ्छिता	स र ल	१७.
८५.	वृन्दा	त र ल	१७.
८६	प्रतर्दि	ज र ल	१७.
८७.	मौनपवी	भ र ल	१७.
८८	मणिमुखी	न र ल	१७.
८९.	मौलिस्रक्	म स ल	१७.
९०.	परभानु	य स ल	१७.
९१.	मेथिका	र स ल	१७.
९२.	गोधि	स स ल	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
९३.	सरलाग्नि	त स ल	१७.
९४.	विरोही	ज स ल	१७
९५.	वरजापि	भ स ल	१७.
९७	सम्पाक	म त ल	१७.
९८.	पद्धरि	य त ल	१७.
९९.	गूर्णिका	र त ल	१७
१००	काह्नी	स त ल	१७
१०१.	कामोद्धता	त त ल	१७
१०२.	खर्परि	ज त ल	१७.
१०३	शन्तनु	भ त ल	१७; लीला–१७.
१०४	मुरजिका	न त ल	१७
१०५	कालम्बी	म ज ल	१७.
१०६	उपोहा	य ज ल	१७.
१०७	कार्पिका	र ज ल	१७.
१०८	मुहुरा	स ज ल	१७.
१०९	दोषा	त ज ल	१७
११०	उपोदरि	ज ज ल	१७.
१११	जासरि	भ ज ल	१७.
११३.	भूरिमधु	म भ ल	१७
११४	भूरिवसु	य भ ल	१७
११५.	हर्षिणी	र भ ल	१७,
११६	लोलतनु	स भ ल	१७.
११७.	क्रीडान्तिकम्	त भ ल	१७
११८	स्तरधि	ज भ ल	१७
११९	पौरसरि	भ भ ल	१७
१२०.	वीरवटु	न भ ल	१७
१२१	श्रमति	म न ल	१७.
१२२	श्रहृतिः	य न ल	१७
१२३.	वरशशि	र न ल	१७
१२४	धनधरि	स न ल	१७.
१२५.	मुशकि	त न ल	१७
१२६.	कुरदि	ज न ल	१७
१२७	कोशि	भ न ल	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
		अष्टाक्षर-छन्द	
२.	अनिर्भर	य म ग ग	१७
७.	इन्द्रफला	भ म ग ग	१७; इन्द्रबला–१७.
८.	गोपावेदी	न म ग ग	१७.
१०	भूमधारी	य य ग ग	१७
११	मौलिमालिका	र य ग ग	१७
१२.	युगधारि	स य ग ग	१७.
१४	विराजिकरा	ज य ग ग	१७
१५	वात्या	भ य ग ग	१७
१६.	पाञ्चालाङ्घ्रि	न य ग ग	१७.
१८.	कुलाधारी	य र ग ग	१७; शुद्धगा–१७
१९.	पद्मिनी	र र ग ग	२२.
२०.	परिधारा	स र ग ग	१७
२१	विभा	त र ग ग	१०.
२२	यशस्करी	ज र ग ग	१७.
२४	कुररिका	न र ग ग	१७
२६.	मनोला	य स ग ग	१७
२८	पञ्चशिखा	स स ग ग	१७; रमणीयशिखा–१७.
३०.	भार्ङ्गी	ज स ग ग	१७.
३२.	गुणलयनी	न स ग ग	१०, रुद्राली–१७
३४	पारान्तचारी	य त ग ग	१७.
३६	कौंचमार.	स त ग ग	१७
३७	कराली	त त ग ग	१७; केतुमाला–१९
३८	वारिशाला	ज त ग ग	१७; वितान–१७
४०	वृत्तभार	न त ग ग	१७
४३	सिंहलेखा	र ज ग ग	३, १०, १७, मालिनी–७.
४४	दिगीश	स ज ग ग	१७
४५.	मानवनदा	त ज ग ग	१७.
४७	कृष्णगतिका	भ ज ग ग	१७
४८	चित्रविलसितम्	न ज ग ग	३.
४९	अनिमीरा	म भ ग ग	१७
५०.	अतिमोहा	य भ ग ग	१७, वितानम्–१०, १३; वितानं के १३ और ११ के अनुसार 'त. र ल ग.' एवं 'त. य ल ल' लक्षण भी हैं।

प्रस्तार-सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५४	चतुरीहा	ज भ ग ग	१७.
५६	वृतमुखी	न भ ग ग	१७.
५७	हंसरुतम्	म न ग ग	२, १०, १४, १७
६१.	सन्ध्या	त न ग ग	१७
७४.	विहावा	य य ल ग	१७.
७५	अनुष्टुप्	र य ल ग	१०.
८१	क्षमा	न र ल ग	१६
८३	हेमरूपम्	र र ल ग	१८.
८४.	शल्लकप्लुतम्	स र ल ग	१७
८५	नाराचिका	त र ल ग	१४, १७, नाराचम्–५, १०; नाराचक–६, १६
८८.	सुमालती	न र ल ग	१०, १६, उपलिनी–१७; कृतवती–१७
९२	मही	स स ल ग	१०; कलिला–१७, करिला–१७
९३	श्यामा	त स ल ग	७
१००	सरघा	स त ल ग	१७
१०४	माण्डवकम्	न त ल ग	१७
१०५	हाठनी	म ज ल ग	१७
१०७	अद्धरा	र ज ल ग	१७; उद्धरा–१७
१०९.	विद्या	त ज ल ग	१७; उदया–१७; आनुष्टुव्–१६.
११०	अरालि	ज ज ल ग	१७
११२.	ललितगति	न ज ल ग	१०; अखनि –१७.
११५	कुरुचरी	र भ ल ग	१७.
१२०	गजगति.	न भ ल ग	१५, १७.
१२१	शिखिलिखिता	म न ल ग	१७.
१२५	ईढा	त न ल ग	१७, ईला–१७.
१२७.	अरि	भ न ल ग	१७
१२८.	कुसुमम्	न न ल ग	७; हरिपद–१७, हृतपदं–१७.
१४०	नागारि	स य ग ल	१७
१४७	लक्ष्मी	र र ग ल	१७
१४८	वलीकेन्दु	स र ग ल	१७.
१५०	अमानिका	ज र ग ल	१७
१५२	नखपदा	न र ग ल	१७
१६०	हरित्	न स ग ल	१७
१६५.	किष्कु	त त ग ल	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१८०	अनूतनर्म	स भ ग ल	१७; नूतनर्म–१७
१८१	अमरन्दि	त भ ग ल	१७
१८२.	कुलचारि	ज भ ग ल	१७
१९०.	करञ्जि	ज न ग ल	१७
१९६	वृन्तम्	स म ल ल	१७
१९८.	शाखोटकि	ज म ल ल	१७
१९९.	पञ्जरि	भ म ल ल	१७
२००	अप्रीता	न म ल ल	१७; प्रीता–१७, अतिप्रीता–१७; अलिप्रीता–१७
२०१	मन्थरि	म य ल ल	१७.
२०२.	वातुलि	य य ल ल	१७
२०४.	संफुल्लकम्	त य ल ल	रूपगोस्वामिकृत नन्दाहरणस्तोत्र
२१०.	भाषा	य र ल ल	१७; संभाषा–१७; सभासा–१७
२१६.	पाकलि	न र ल ल	१७
२२०.	अमना	स स ल ल	१७
२३०	आकतनु	ज त ल ल	१७
२३५	आखेटम्	र ज ल ल	१७.
२४१.	अतिजनि	म भ ल ल	१७.
२४४	सूतमधु	स भ ल ल	१७
२४६.	मरु	ज भ ल ल	१७
२५०	चयनम्	य न ल ल	१७
२५१	कुशकम्	र न ल ल	१७
२५२	निरुदम्	स न ल ल	१७.
२५३	सिन्धुक्	त न ल ल	१७
२५४.	क्षरम्	ज न ल ल	१७; क्षुर–१७.
२५५	वेशि	भ न ल ल	१७; वेषि–१७

नवाक्षर-छन्द

२	मेघालोकः	य म म	१७
७.	वक्त्रम्	भ म म	१०
१६.	मायासारी	न य म	१७
२५	खेलाढ्यम्	म स म	१७.
२८	तारम्	म स म	१०, उदरश्रि–१७, उदरस्रक्–१७, उदरास्रक्– ७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२६.	वैसारु	त स म	१७; वैसारम्–१७.
३०.	निर्विन्ध्या	ज स म	१७; निर्वन्ध्या–१७.
३१.	कर्मिष्ठा	भ स म	१७, किर्मिष्ठा–१७.
४६.	घृतहाला	म भ म	१७
५२	कलहम्	स भ म	१७.
५७	अयनपताका	म न म	१७.
६१	मकरलता	त न म	१०; रम्भा–१७; ६ के अनुसार–'म.न य' लक्षण है
७४	विशल्यम्	य य य	१७; वृहत्यं–१६.
६७	अर्धक्षामा	म त य	१७, सुन्दरखेखा–१६
१००	सम्वुद्धिः	स त य	१७.
१०३	शम्बरधारी	भ त य	१७
११२	शशिलेखा	न ज य	१०; शरलीढा–१७.
११७.	रुचिरा	त भ य	१०
१२१.	कांसीकम्	म न य	१७
१२४	सुगन्धिः	स न य	१७
१२५.	कामा	त न य	१७.
१५२.	वृहतिका	न र र	५, १०.
१६४	निभालिता	स त र	१७
१६६.	चारुहासिनी	ज त र	१६
१७१	कामिनी	र ज र	१०; तरंगवती–११, २०.
१७३.	रवोन्मुखी	त ज र	१७
१७४.	अवनिजा	ज ज र	१७.
१७५	प्रवह्लिका	भ ज र	१७
१७६	हलोद्गता	न ज र	१७.
१८०	मधुमल्ली	म भ र	१७.
१८२	सहेलिका	ज भ र	१७
१८३.	मदनोद्धुरा	भ भ र	१७; उत्सुकम्–१०, १६.
१८४.	करशया	न भ र	१७
१८७	भद्रिका	र न र	१०, १४, १७, १६.
१६२.	उपच्युतम्	न न र	१०, १६.
२१५.	निषधम्	भ र स	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१७.	कनकम्	म स स	१०; गाथा–१६.
२२०.	सौम्या	स स स	१०; अर्धकला–१७.
२२३.	रञ्जकम्	भ स स	१७
२३६.	अक्षि	स ज स	१०, १६
२३६,	उदयम्	भ ज स	१०; विद्युत्–१६.
२४४.	अनवीरा	स भ स	१७.
२४७.	प्रियतिलका	भ भ स	१७
२५१	हलमुखी	र न स	२, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १६,
२५३.	आकेकरम्	त न स	१७
२५५	धौनिकम्	भ न स	१७
२६३	वल्गा	त त त	१७
३००	कीटमाला	स ज त	१७.
३२०.	मसृणकम्	न न त	१७.
३३६	लीला	न य ज	१७.
३५६	वारिधियानम्	भ त ज	१७
३६६	कुहू	ज ज ज	१७.
३८३	कठिनास्थि	भ न ज	१७; अहीरी–१७
४००.	विकचवती	न य भ	१७.
४०६	वन्दारुः	म स भ	१७.
४३६	दधि	भ भ भ	१७; उदधि–१७.
४६४.	स्फुटघटिता	न य न	१७

दशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२	शेफाली	य म म ग	१७
१०.	धूम्राली	य य म ग	१७.
२०.	नीरोहा	स र म ग	१७
३०	वीरान्ता	ज स म ग	१७
४०	निर्मेघा	न त म ग	१७.
४६	मध्याधार	म भ म ग	१७.
५०	वशारोपी	य भ म ग	१७
५५	वन्धूक	भ भ म ग	१६
६१	फूलम्	त न म ग	१७.
६३	वन्धूकम्	भ न म ग	१०.
६६.	बोधातुरा	य म य ग	१७; सकृद्बोधा–१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
८०.	सुराक्षी	न य य ग	१७
८९.	कुवलयमाला	म स य ग	३.
९०.	कलापान्तरिता	य स य ग	१७.
९९	द्वारवहा	र त य ग	१७; भारवहा–१७
१००.	विशदच्छाय.	स त य ग	१७
११०.	इन्द्र	ज ज य ग	१७, ऐन्द्री–१७.
११२	विपुलभुजा	न ज य ग	१०.
१२१	हीराङ्गी	म न य ग	१७, पणव–२, १०, १८, २०; पणवक–१९; पणला–२२. कुवलयमाला–११;
१४७	हेमहास	र र र ग	१७, बाला–१७.
१७१.	मयूरसारिणी	र ज र ग	२, ३, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २२
१७२.	सुखला	स ज र ग	१७
१७३.	नमेरु	त ज र ग	१७, लाजवती–१७.
१९५	कलिका	र म स ग	१०
१९६	गणदेहा	स म स ग	१७.
२०५	मदिराक्षी	त य स ग	१९
२०८.	नरगा	न य स ग	१७.
२१७.	उद्धतम्	म स स ग	१०, प्रसरा–१७
२१९	मणिरंग.	र स स ग	१०, १९; केरम्–१७.
२२०	उदितम्	स स स ग	१७; वितानम्–४.
२३६	माला	स ज स ग	१०; प्रमिता–११.
२४४	बलधारी	स भ स ग	१७.
२५१.	अचलपक्तिः	र न स ग	१७
२५२	असितधारा	स न स ग	१७
२५३	उन्नालम्	त न स ग	१७.
२५४	निरन्तिकम्	ज न स ग	१७.
२५५	उपधाय्या	भ न स ग	१७
२५६	तनिमा	न न स ग	१७
२९३.	विशालान्तिकम्	त त त ग	१७
२९४	विशालप्रभम्	ज त त ग	१७
२९६	चरपदम्	न त त ग	१७.
३००.	उपसकुला	स ज त ग	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०३	खेटकम्	भ ज त ग	१७,
३०६	बर्हातुरा	त भ त ग	१७
३१७	नीराञ्जलि	त न त ग	१७.
३२७.	दीपकमाला	भ म ज ग	१५
३३१	पंक्तिका	र य ज ग	५, १०, कर्णपालिका–१७; मौक्तिकम्–१६.
३४२	सराविका	ज र ज ग	१७.
३४५.	शुद्धविराट्	म स ज ग	२, ५, ६, १०, १७, १८, १६, २०, २२; विराट्–१७.
३४७	अक्षरावली	र स ज ग	१७
३४८	सहजा	स स ज ग	१७.
३४६	अहिला	त स ज ग	१७
३५१	कुप्यम्	भ स ज ग	१७
३५२.	अनुचयिता	न स ज ग	१७.
३६३	वर्मिता	र ज ज ग	१७
३६५	उपस्थिता	त ज ज ग	२, ५, १०, १३, १७, १८, २०, २२
३६६	उषिता	ज ज ज ग	१०; जरा–१७.
३७५	भिन्नपदम्	भ भ ज ग	१७.
३७६	वडिशभेदिनी	न भ ज ग	१७.
३७७.	पणवः	म न ज ग	१३, १७
३८४	चितिभृतम्	न न ज ग	१७
४००.	फलिनी	न य भ ग	१७
४१२.	सुरयानवती	स स भ ग	१७
४१५	विरलम्	भ स भ ग	१७; कटिका–१७.
४२४	छलितकम्	न त भ ग	१७
४२८	प्रवादपदा	स ज भ ग	१७
४३३	हंसक्रीडा	म भ भ ग	१६
४३६	वारवती	स भ भ ग	१७
४३७	परिचारवती	त भ भ ग	१७
४३८.	काण्डमुखी	ज भ भ ग	१७
४४०	शरत्	न भ भ ग	१७
४४७.	गहना	भ न भ ग	१७
४४८	फलधरम्	न न भ ग	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४८७	मृगचपला	भ त न ग	१०; मौक्तिकमाला-१३.
४९२	धमनिका	स ज न ग	१७.
४९७.	हंसी	म भ न ग	१४, १७.
५०५.	कुमुदिनी	म न न ग	१०; कुसुमसमुदिता-११.
५११	कृतमणिता	भ न न ग	१७; मणिता-१७
५१२	निलया	न न न ग	१०, मकरमुखी-१७
६९२	महिमावसायि	स भ र ल	१७
६९३.	कामचारि	त भ र ल	१७
६९४.	नेमधारि	ज भ र ल	१७
६९५	हीरलम्बि	भ भ र ल	१७.
६९६.	वनिताविनोदि	न भ र ल	१७
६९९	विरेकि	र न र ल	१७
७२८.	कृकपादि	न र स ल	१७.
७३२	लुलितम्	स स स ल	१७.
७४८	रसभूम	स ज स ल	१७
७६३	चारुचारणम्	र न स ल	१७.
७६५.	सरसमुखी	त न स ल	१७
७६८.	ऋतम्	न न स ल	१७.
७७५.	कीलालम्	भ म त ल	१७,
७८४.	खौरलि	न य त ल	१७
७९३	कामनिभा	म स त ल	१७.
८००.	विलसि	न स त ल	१७
	कान्तिडम्बरम्	र स ज ल	रूपगोस्वामिकृत सुदर्शनादिमोचन स्तोत्र
१०००	वीरनिधिः	न त न ल	१७
	हारिहरिणम्	भ स न ल	रूपगोस्वामिकृत वर्षाशरद्विहाररचरितम्

एकादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५	आराधिनी	त म म ग ग	१७
१०.	अमालीनम्	य य म ग ग	१७.
१३.	मेघध्वनिपूरः	त य म ग ग	१७
१५	उद्धतिकरी	भ य म ग ग	१७
२०	अपयोधा	स र म ग ग	१७.
२५	अन्तर्वनिता	म स म ग ग	१७
३०.	प्रफुल्लकदली	ज स म ग ग	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३९.	लक्ष्मणलीला	भ त म ग ग	१७
४३.	कूलचारिणी	र ज म ग ग	१७; कूलिका–१७
४८	विलुलितमञ्जरी	न ज म ग ग	१७.
५७	भूरिघटकम्	म न म ग ग	१७.
६४.	कलितकमलमाला	न न म ग ग	१७
७५	वल्लवीविलासः	र य य ग ग	१७
८०	विकसितपद्मावली	न य य ग ग	१७
८६	अमोघमालिका	ज र य ग ग	१७
९२	ललितागमनम्	स स य ग ग	१७.
१००	ससृतशोभासार.	स त य ग ग	१७.
१०८	ललितालवलम्	स ज य ग ग	१७
११२	वार्ताहारी	न ज य ग ग	१७.
१२२	कडारम्	य न य ग ग	१७.
१२४.	उदितदिनेश.	स न य ग ग	१७.
१३२	जालपाद	स म र ग ग	१७.
१४७.	दारदेहा	र र र ग ग	१७; दारुदेहा–१७
१८४	रोचकम्	भ भ र ग ग	१०.
१८७	सुधाधारा	र न र ग ग	१७
१९२.	कुपुरुषजनिता	न न र ग ग	१४.
१९९	कन्दविनोदः	भ म स ग ग	१७
२१७	विलम्बितमध्या	म स स ग ग	१७.
२२०	विष्टम्भः	स स स ग ग	१७.
२२३	क्रोशितकुशला	भ स स ग ग	१७.
२४४.	उपहितचण्डी	स भ स ग ग	१७.
२४७	श्रितकमला	भ भ स ग ग	१७
२५६	वृन्ता	न न स ग ग	२, १०, १३, १८, १९, २०; रथपदं–१७; वृन्ता–१७; सुकृति.–१७
२८६	उपस्थितम्	ज स त ग ग	६, १०, १३, १७, १८; शिखण्डित–१५ टी०[a]
२९३	प्राकारबन्धः	त त त ग ग	१७; लयग्राहि–१०, १९, बिम्बंकमाला–१५ टी०
३००.	विहारिणी	स ज त ग ग	१७, भासिनी–१७.

[a] १५ टी०=छन्दोमञ्जरी 'प्रभा' टीका, हरिदास कृत।

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०६.	ईहामगी	त भ त ग ग	१७.
३२०	परिमलललितम्	न न त ग ग	१७.
	विलासिनी	ज र ज ग ग	२.
३४८	विमला	स स ज ग ग	१७.
३५०	सरोजवनिका	ज स ज ग ग	१७.
३५१.	अमन्दपाद	भ स ज ग ग	१७
३५२	पञ्चशाखी	न स ज ग ग	१७
३६४.	पट्टुपट्टिका	स ज ज ग ग	१७.
३६५	उपस्थिता	त ज ज ग ग	१७, १६
४००.	श्रुतकीर्ति.	न य भ ग ग	१७; पतिता–१०, ४, १४, १६; श्री –१६
४१२	वर्णवलाका	स स भ ग ग	१७
४१५.	अमितशिखण्डी	भ स भ ग ग	१७
४४०.	रोधकम्	न भ भ ग ग	१७
४७२.	मदनमाला	न र न ग ग	१७.
४८०.	अशोका	न स न ग ग	१०.
५०५.	मात्रा	म न न ग ग	१७.
५०८	सुवृत्तिः	स न न ग ग	१७.
५१२	वृत्ताङ्गी	न न न ग ग	२२.
५८६	भुजङ्गी	य य य ल ग	१७.
६००	जवनशालिनी	न र य ल ग	१७.
६०६	सारिणी	ज स य ल ग	२०, सङ्गता–२२.
६०८.	प्रसृमरकरा	न स य ल ग	१७.
६२०	सारणी	स ज य ल ग	१०
६४०	गल्लकम्	न न य ल ग	१७
६५०	प्रपातावतारम्	य य र ल ग	१७
६५६.	गह्वरम्	र र र ल ग	१७.
६६३	वारयात्रिकम्	भ र र ल ग	१७
६६४.	इन्दिरा	न र र ल ग	१७, १५ टी०; कनकमञ्जरी–रूपगोस्वामिकृत वस्त्रहरण स्तोत्र; भाविनी–१७; भामिनी–१७,
६९२	सीधुः	स भ र ल ग	१७, अपरान्तिका–१६.
७००	प्रतारिता	स न र ल ग	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७०१.	नीला	त न र ल ग	१७
७२०	सौरभवर्द्धिनी	न य स ल ग	१७.
७२८	भुजगहारिणी	न र स ल ग	१७
७३१	अच्युतम्	र स स ल ग	१७, १९
७३२	विदुषी	स स स ल ग	१०, उपचित्रम्–१७, १४; सुचित्रं–१७; नरेश –१७.
७३६	सम्मदमालिका	न स स ल ग	१७.
७४२	कनककामिनी	ज त स ल ग	१७.
७४७.	द्रुता	र ज स ल ग	१५ टी०, उपदारिका–१७.
७४८	दारिका	स ज स ल ग	१७.
७४९	मालविका	त ज स ल ग	१७.
७५०.	नाभसम्	ज ज स ल ग	१७.
७५१	सौभगकला	भ ज स ल ग	१७.
७५२.	वीवध	न ज स ल ग	१७
७५३	आशापाद	म भ स ल ग	१७.
८००.	भुजलता	न स त ल ग	१७.
८२०.	हरिकान्ता	स भ त ल ग	१७
८२३.	कलस्वनवश	भ भ त ल ग	१७.
८३२.	मदनया	न न त ल ग	१७.
८७८	खटका	ज ज ज ल ग	१७.
८७९.	शल्कशकलम्	भ ज ज ल ग	१७.
८८५	उत्थापनी	त भ ज ल ग	१०, जिह्माशया–१७
८८९.	कुशलकलावतिका	म न ज ल ग	१७
८९५	अर्थशिखा	भ न ज ल ग	१७
९२८	निरवधिगति.	न स भ ल ग	१७
९६०	दामघटिता	न न भ ल ग	१७
९९४.	विमला	स म न ल ग	१०
९७६	कमलदलाक्षरी	न य न ल ग	१०, रुचिरमुखी–११, समित्–१७
९८५.	सामपदा	म स न ल ग	१७.
१०२१	मुखचपला	त न न ल ग	१०
११७१	गम्भारि	र र र ग ल	१७
१२१३.	कामुकलेखा	भ म स ग ल	१७
१३१७.	संश्रयश्री.	त त त ग ल	१७

प्रस्तार-संख्या	छद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१३७२.	पिचुलम्	स स ज ग ल	१७.
१४००.	कालवर्म	न भ ज ग ल	१७.
१५११.	सान्द्रपदम्	भ त न ग ल	१७; १५ टी०
१७७७	शेषापीडम्	म भ स ल ल	१७.
२०००.	केलिचरम्	न य न ल ल	१७.

द्वादशाक्षर-छन्द

३१	भाषितभरणम्	भ स म म	१७.
३२	विषमव्याली	न स म म	१७
६१	शम्पा	त न म म	१७.
६४	मिथुनमाली	न न म म	१७
९१	किंशुकास्तरणम्	र स य म	१७.
९२	रसलीला	स स य म	१७.
९३.	विशालाम्भोजाली	त स य म	१७; अम्भाजाली–१७.
९४.	वीणादण्डम्	ज स य म	१७
९७.	मत्ताली	म त य म	१७.
१२८.	वसनविशाला	न न य म	१७
१९३.	लीलारत्नम्	म म स म	१७.
२५३.	विवरविलसितम्	त न स म	१७
२५६.	शुद्धान्तम्	न न स म	१७
३४८.	साक्षी	स स ज म	१७
३६४.	स्वरर्वाषिणी	स ज ज म	१७.
४४८.	धवलकरी	न न भ म	१७
४७६.	लुम्बाक्षी	स स न म	१७; लुब्धाक्षी–१७
५०५.	मलयसुरभिः	म न न म	१७
५२५.	वाहिनी	त य म य	२०
५७६.	पुटः	न न म य	२, ३, ४, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २२, पुटा–२०
५७८.	आधिदैवी	य म य य	१७.
६०४.	समयप्रहिता	स स य य	१७
६०८.	मिहिरा	न स य य	१७
६१४.	कलवल्लीविहङ्गः	म त य य	१७.
६६२	असुधारा	ज र र य	१७; अस्रधारा–१७.
६८८	बलोर्जिता	न ज र य	१७, १९; अचलमर्चिका–१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- सङ्केताङ्क
६८६.	पुण्डरीकम्	म भ र य	१७
६६२.	वधिरा	स भ र य	१७
६६५.	वलभी	भ भ र य	१७.
७१६	केकीरवम्	स य स य	१०; महेन्द्रवज्रा–१६; शिविका–१६.
७३३	कोल	ज्ञ स स य	१०
७३७	लीढालर्क	म त स य	१७.
७४१	वनिताविलोक	त त स य	१७.
७४२	कुमुदिनीविकाश	ज त स य	१७
७५३	वसन्तहास	म भ स य	१७.
७५७	श्रुति	त भ स य	१६
७५८.	स्मृति	ज भ स य	१६.
७८३.	सिक्तमणिमाला	भ य त य	१७; श्वेतमणिमाला–१७
७८४.	विद्रुमदोला	न य त य	१७
८१७	सुखशैलम्	म भ त य	१७
८२०.	करमाला	स भ त य	१७
८३२	विजयपरिचया	न न त य	१७
८६५	कासारक्रान्ता	म त ज य	१७.
८७७	माया	त ज ज य	१७.
८७८.	परिलेखः	ज ज ज य	१७, धारी–१७
८७६	वरत्रा	भ ज ज य	१७.
८८१	कुम्भोघ्नी	म भ ज य	१७
८८४	शरमेया	स भ ज य	१७
८८५	नीरान्तिकम्	त भ ज य	१७
८८८	कलहसा	न भ ज य	१०, १६, द्रुतपदम्–१७, द्रुतपदा–४, ११, १६, मुखरम्–११
८६१.	अर्दितपादम्	र न ज य	१७.
८१२	परितोषा	स न ज य	१७
८६३.	छलितकपदम्	त न ज य	१७
८६४.	उपधानम्	ज न ज य	१७
८६५	पथिकान्ता	भ न ज य	१७.
६७१	कुमुदिनी	र य न य	१०; कुमुदविभा–३, तथा ३ के अनुसार 'न य र य' लक्षण भी हैं।
६६१.	अर्पितमदना	भ स न य	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१६	द्रुतपदम्	न भ न य	१४
१०२१.	विरतिमहती	त न न य	१७.
१०८०.	ततम्	न न म र	२, १०, १८, ललितम्—१७, १४; गौरी—१७.
११४२	गलितनाला	ज भ य र	१७.
११६२	सरोजावली	य य र र	१७.
११७६	मेघावली	न र र र	१०; वसन्तः—११.
११९९.	विप्लुतशिखा	भ ज र र	१७.
१२००.	विशिखलता	न ज र र	१७
१२३६	सुतलम्	स र स र	१७
१३६५.	अन्तर्विकासवासक	त र ज र	१७
१३७१	परिपुङ्खिता	र स ज र	१७
१३७६	प्रसूमरमरालिका	न स ज र	१७
१३९०	विधारिता	ज ज ज र	१७.
१३९१	पिकालिका	भ ज ज र	१७; पिधायिनी—१७
१४०४.	विरला	स न ज र	१७; वीरला—१७.
१४०७	अविरलरतिका	भ न ज र	१७.
१४६०	राधिका	स भ भ र	१७.
१४७२.	उज्ज्वला	न न भ र	१०, १३, १७; चपलनेत्रा—११; चलनेत्रिका १८
१५१५	विपुलपालिका	र ज न र	१७
१५२४.	उपलेखा	स भ न र	१७.
१५२६.	भसलविनोदिता	ज भ न र	१७.
१५२७.	विरतप्रभा	भ भ न र	१७.
१५३१	मुकुलितकलिकावलि	र न न र	१७.
१६७६	अतिवासिता	स य र स	१७
१६९१.	भुजङ्गजुषी	र स र स	१७
१६९५	अर्जितफलिका	भ स र स	१७.
१७०३.	ललना	भ त न स	१४.
१७२८.	ह्री	न न न स	१०.
१७३५.	ललना	भ म स स	१७; १५ टी०
१७३८	कुरङ्गावतारः	य य स स	१७.
१७७४.	विकत्थनम्	ज ज स स	१७
१७७५	नीलगिरिका	भ ज स स	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७८३.	वनिताभरणम्	भ भ स स	१७.
१८२५	सुभद्रावतरणि	म त त स	१७.
१८८१	विरलोद्धता	म स ज स	१७.
१८८२.	सुविहिता	य स ज स	१७.
१८८४.	उदर्करचिता	स स ज स	१७.
१८८५,	सुवनमालिका	त स ज स	१७; उपवनमालिका–१७.
१९७२	नगमहिता	स भ भ स	१७; क्रमुकवती–१७.
१९७५	सम्मदवदना	भ भ भ स	१७.
१९८२.	कुमारगति	ज न भ स	१७.
२०१६	उदयनमुखी	न स न स	१७
२०२०	रसिकपरिचिता	स त न स	१७
२०२९	व्यायोगवती	त ज न स	१७
२०३०	वियोगवती	ज ज न स	१७
२०३१	सगमवती	भ ज न स	१७.
२०४४	ज्वलिता	स न न स	१७
२०४५	रूपावलिः	त न न स	१७.
२०४६	अनीचकम्	ज न न स	१७.
२०४७.	भासितसरणि	भ न न स	१७.
२०४८.	कृतकृतिका	न न न स	१७; कतिका–१७.
२३६८.	विकलबकुलवल्ली	न न त त	१७
२४०६.	निमग्नकीला	ज त ज त	१७.
३२६५	वासरमणिका	भ स स भ	१७.
३५०८.	अरिला	स भ भ भ	१७

त्रयोदशाक्षर-छन्द

२२५.	उल्काभास	म त स म ग	१७
२४१	लीलालोल	म भ स म ग	१७.
३७५.	कलाधाम	भ भ ज म ग	१७.
४३९	वासविलासवती	भ भ भ म ग	१७
४७२	विपन्नकदनम्	न र न म ग	१७, विपन्नकलनं–१७; विपन्नकवलम्–१७.
७८४	विभा	न य त य ग	१७.
९७५	रसधारा	न य न य ग	१७
१००९.	प्रज्ञामूलम्	म भ न य ग	१७, भद्रा–२२.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	क्षमा	न न म र ग	१०.
१,१५४.	चञ्चरीकावल	य म र र ग	१७, १४; चन्द्रणी-१०; चन्द्रिका-१६.
१,१६२.	दर्पमाला	य य र र ग	१७; दर्भमाला-१७.
१,१६५	भाजनशीला	त य र र ग	१७.
१,१७१.	श्रद्धरान्ता	र र र र ग	१७.
१,२०६	आनता	म न र र ग	१७.
१,२१६.	प्रमोदः	न न र र ग	१७; चन्द्रिका-१०.
	कोडुम्भ.	म त स र ग	१०.
१,३६८	सुकर्णपूरम्	न र ज र ग	१७.
१,३७२	जगत्समानिका	स स ज र ग	१७.
१,३६०.	अतिरंहः	ज ज ज र ग	१७
१,४६१	माणविकाविकाश	त भ भ र ग	१७.
१,४६६.	कीरलेखा	न र न र ग	१७.
१,६३६	आननमूलम्	भ त य स ग	१७.
१,७५३	लोध्रशिखा	म स स स ग	१७.
	उपस्थितम्	ज स त स ग	१३.
	गौरी	न न त स ग	१०; २ के अनुसार 'न न न स ग' लक्षण है।
१,८६६.	शलभलोला	य य ज स ग	१७.
१,८८१	पंकजधारिणी	म स ज स ग	१७.
१ ८८४	कुबेरकटिका	स स ज स ग	१७.
१,८८६.	रुचिवर्णा	ज स ज स ग	१७, साला-१७.
१,८८७	मयूखसरणि	भ स ज स ग	१७
१,६८४.	विधुरवितानम्	न न भ स ग	१७.
	मदललिता	न ज न स ग	१०, १६.
२,३४१.	पारावत.	त त त त ग	१७
२,३४२	प्रवाहिका	ज त त त ग	१७.
२,३४३.	स्विन्नशरीरम्	भ त त त ग	१७.
२,३४४.	उर्वशी	न त त त ग	१०; परिवृढम्-१७; कौमुदी-१६.
२,३५१.	वामवदना	भ ज त त ग	१७
२,३५२.	किरात	न ज त त ग	१७
	विद्युत्	न न त त ग	१४, कुटिलगति-१४
२,३६६	भसलमदम्	भ स ज त ग	१७; भसलपदम्-१७.
२,४००	कठिनी	न स ज त ग	१७.

प्रस्तार-सख्या	छद-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,४०५	वृद्धवामा	त त ज त ग	१७
२,४२१.	मर्मस्फुरम्	त भ ज त ग	१७.
२,७०६.	पृषद्वती	त र र ज ग	१७; निस्तुषा–१७,
२,७१०.	अखण्डमण्डनम्	ज र र ज ग	१७.
२,७३१.	कलापतिप्रभा	र ज र ज ग	१७
२,७५२	अशोकपुष्पकम्	न न र ज ग	१७; अशोकम्–१७.
२,७६२	करपल्लवोद्गता	य य स ज ग	१७.
२,७६३	सार्द्धपदा	र य स ज ग	१७
२,७६४.	सुदन्तम्	स य स ज ग	१०, अम्बुदावली–१७, मणि-कुण्डलम्–१६
२,७६०	मञ्जुभाषिणी	ज त स ज ग	१०. मंजुहासिनी–१४.
२,७६५	मञ्जुमालती	र ज स ज ग	१७; मजुभाषिणी–१६
२,८०८.	विरोधिनी	न भ स ज ग	१७.
२,८१६	नलिनम्	न न स ज ग	१६
२,६०७	चन्द्रहासकरा	र स ज ज ग	१७.
२,६०८.	द्रुतलम्बिनी	स स ज ज ग	१७
२,६०६.	कनककेतकी	त स ज ज ग	१७
२,६१०	गरुदवारिता	ज स ज ज ग	१७
२,६११	अमितनगानिका	भ स ज ज ग	१७.
२,६१८.	आपणिका	ज त ज ज ग	१७.
२,६२६	गुणसारिका	ज ज ज ज ग	१७, गणसारिका–१७
२,६३३	प्रमोदतिलका	त भ ज ज ग	१७; अभ्रकम्–१०
२,६३६	सारसनावलि	न भ ज ज ग	१७
२,६४३	उपचितरतिका	भ न ज ज ग	१७
२,६८२	उदात्तहास	ज त भ ज ग	१७.
३,०४६.	फलनायिका	ज त न ज ग	१७
३,२७७	अभ्रभ्रमशीला	त य स भ ग	१७
३,३६०.	विदना	न स त भ ग	१७
३,४७३.	प्रपातलिता	भ स ज भ ग	१७
३,५११.	कमंठः	भ भ भ भ ग	१७, अन्नरुचि–१६
[illegible]	मयूरलिता	भ र न भ ग	१७.
[illegible]	मणिलोद्गमगुणी	न र र न ग	१७
[illegible]	प्रबोधललिता	र न र न ग	१७
३,७८८	शोभासरस्वतीललिता	म य म न ग	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३,८३५	परगतिः	र न स न ग	१७.
३,८६२	अभिरामा	स भ त न ग	१७.
३,६६४.	उपसरसी	स न ज न ग	१७.
४,०४८	मदनजवनिका	न य न न ग	१७
४,०६०	वरिवशिता	स स न न ग	१७; परिवशिता–१७.
४,०६३	अर्धकुसुमिता	भ स न न ग	१७
४,०८४.	विनताक्षी	स भ न न ग	१७; वनिताक्षी–१७.
४,०८५	नरावलिः	त भ न न ग	१७, निरावलि–१७
४,०८६.	अभीरुका	ज भ न न ग	१७
४,०८७.	कनकिता	भ भ न न ग	१७.
४,०६६.	त्वरितगतिः	न न न न ग	१०; हरवनिता–१७, उपनमिता–१७.
४,४६०.	सुखकारिका	स ज ज म ल	१७.
५,८१३.	अट्टहासिनी	त भ र स ल	१७.
	अङ्गरुचिः	भ भ भ भ ल	१०.
७,८०७.	पङ्क्तावलि	भ न य न ल	१७
८,०००.	अशनि	न न त न ल	१७.

चतुर्दशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०५.	वंशोत्तासा	त य स म ग ग	१७.
६६१.	कालध्वानम्	म म न य ग ग	१७; कालध्वान्तम्–१७.
१,०२१.	पारावारः	त न न य ग ग	१७.
१,२६३	प्रपन्नपानीयम्	त य त र ग ग	१७
१,२६६	अनिन्दगुर्विन्दु	न य त र ग ग	१७; गुर्विन्दु–१७, पूर्वेन्दु–१७.
१,५३७.	घोरध्वानम्	म म म स ग ग	१७.
१,७४४	ललितपताका	न य स स ग ग	१७
२,०२२	सम्बोधा	ज त न स ग ग	१७
२,०६५	विन्ध्यारूढम्	म र म त ग ग	१७, वन्ध्यारूढम्–१७
२,३२१	लक्ष्मी	म र त त ग ग	५, १०, चन्द्रशाला–१६; बिम्बालक्ष्यम्–१७
२,३२२	दृप्तदेहा	य र त त ग ग	१७.
२,३२३	बभ्रुलक्ष्मी	र र त त ग ग	१७
२,३३२	सरमासरणिः	स स त त ग ग	१७
२,३३५.	पुष्पशकटिका	भ स त त ग ग	१६, लक्ष्मी–१६.
२३३७.	निर्यत्पारावार.	म त त त ग ग	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,३३६.	कल्पकान्ता	र त त त ग ग	१७
२,३४४.	परीवाह'	न त त त ग ग	१७.
	शरभललितम्	न भ न त ग ग	१०; शरभा–११
२,६८७	वाटिकाविकाश	भ न य ज ग ग	१७; वाटिकाविलास –१७; वाटिका–
२,७३१.	अर्कशेषा	र ज र ज ग ग	१७.
२,७४०	मदावदाता	स भ र ज ग ग	१७.
२,८०४.	वंशमूलम्	स भ स ज ग ग	१७; सुनन्दा–१६.
२,८०५.	चेलाञ्चलम्	त भ स ज ग ग	१७; वेलाञ्चलम्–१७, वेलान्तरम्-१७.
२,८०६	कुसुम्भिनी	ज भ स ज ग ग	१७
२,८०८.	विलम्बनीया	न भ स ज ग ग	१७.
२,८१६.	अनन्तदामा	न न स ज ग ग	१७.
	नदी	न न त ज ग ग	१४
	कुमारी	न ज भ ज ग ग	१४
	कृतमालम्	त ज य भ ग ग	१७.
३,२८७.	शारदचन्द्रः	त य स भ ग ग	१७
३,३१३.	परिणाही	म भ स भ ग ग	१७.
३,४६६.	रतिरेखा	त य भ भ ग ग	१७.
३,४८४.	मन्मथः	स स भ भ ग ग	१७.
३,५११.	जाहमुखी	भ भ भ भ ग ग	१७
३,५१५.	वलना	र न भ भ ग ग	१०; लता–११, वनलता–१६.
३,८६२.	प्रतिभादर्शनम्	स भ त न ग ग	१७.
	राजरमणीय'	ज स र न ग ग	१०, २०; रूपगोस्वामिकृत-वत्सचारणादिस्तोत्र मे 'प्रफुल्ल कुसुमाली' है।
	वरसुन्दरी	भ ज स न ग ग	१४
	सुपवित्रम्	त र न न ग ग	१४
४,००६.	उपचित्रम्	न न न न न ग	१०, १६; अलिपदम्–१७
	ज्योत्स्ना	म र म य ल ग	५, १०; ज्योत्स्निका–५
४,६७०.	शरिमफरभुजा	न न म य ल ग	१०; फामला–१६.
४,६८०.	प्रपात	य य य य ल ग	१७
४,७०४	जलदरसिता	न स य य ल ग	१७
४,८४४	पथ्या	म ज स य ल ग	१७; प्रचिता–१६.
५,२६७	कल्पमोसिता	र र र र ल ग	१७
५,४१८.	गुणधरा	र ज स र ल ग	१७.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५,४५९.	कलाधरः	र र ज र ल ग	१७
५,४६२.	कुडङ्गिका	ज र ज र ल ग	१७
	सुकेसरम्	न र न र ल ग	१०, १४.
	सुदर्शना	स ज न र ल ग	१९.
५,६६२.	वितानिता	न न न र ल ग	१७
	सिंहः	न म र स ल ग	१०
	जया	म र र स ल ग	५, १०.
५,८१३.	अलकालिका	त भ र स ल ग	१७; अलिकालका–१७
५,८१५.	दर्दुरकः	भ भ र स ल ग	१०, १९
५,८१९	गगनोद्गता	र न र स ल ग	१७.
५,८५२	विनन्दिनी	स स स स ल ग	१७.
६,१७२.	भूरिशिखा	स स म त ल ग	१७.
६,३६४.	क्रीडायतनम्	स स स त ल ग	१७; क्रीडावसथम्–१७
६,५४१.	नासाभरणम्	त य भ त ल ग	१७
६,५८३.	कर्णिशर	भ भ भ त ल ग	१७
७,०३२.	विपाकवती	न भ ज ज ल ग	१७.
७,०८६.	काकिणिका	ज ज भ ज ल ग	१७.
७,०८७.	कारविणी	भ ज भ ज ल ग	१७.
७,३१५.	कूर्चललितम्	र र र भ ल ग	१७.
७,५३२.	कलहेतिका	स ज ज भ ल ग	१७
७,५३५.	अञ्चलवती	भ ज ज भ ल ग	१७.
८,०२७.	गगनगतिका	र स ज न ल ग	१७
८,०८१.	निर्मुक्तमाला	म र भ न ल ग	१७.
९,३६३.	कामशाला	र र र र ग ल	१७
९,९७५	उन्नर्म	भ भ स स ग ल	१७
११,६२८	उपकारिका	स ज ज भ ग ल	१७
११,६३१.	हेममिहिका	भ ज ज भ ग ल	१७
११,६३२.	हेतिः	न ज ज भ ग ल	१७
१४,०४४.	मधुपालि	स स स स ल ल	१७
१६,०००.	वेशम्भरि	न न य न ल ल	१७

पञ्चदशाक्षर-छन्द

१३.	वज्राली	त य म म म	१७.
१६	स्फोटक्रीडम्	न य म म म	१७

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- सङ्केताङ्क
२२३	क्रीडितकटका	भ स स म म	१७.
४३३.	चार्वटकम्	म भ भ म म	१७.
२,२६६.	आनद्धम्	र न स त म	१७.
	चन्द्रलेखा	र र त त म	१६
३,३१६.	बहुलाभ्रम्	स भ स भ म	१७.
३,८८१	वाणीभूषा	म म त न म	१७.
४,६८२	सिंहपुच्छम्	य य य य य	१७
५,५२५.	कुमारलीला	म न र य य	१७.
५,५३२.	भोगिनी	न न र य य	१०.
	केतनम्	भ य स स य	१०
	शिशु.	त ज स स य	१०.
	ऋषभः	स ज स स य	१०, १६.
६,६३१.	दीपकम्	भ त न त य	१७
७ १२०	परिमलम्	न य न ज य	१७
	मयूरललितम्	ज स न भ य	१६.
७,६३६	शरकल्पा	न न स न य	१७
	चन्द्रोद्योत.	न न म र र	१०.
६,३६३.	लास्यकारी	र र र र र	१७.
६,६६८.	मदनमालिका	न र न र र	१७
	मृदङ्ग	त भ ज ज र	१०.
११,५७५.	प्लवगम	भ भ त भ र	१७.
११,६३१.	मयूवदना	भ ज ज भ र	१७
११,६३२	कलभाषिणी	न ज ज भ र	१०, १६; अरविन्द –११, १६
११,७१२	गौः	न न भ भ र	१०
११,६६३.	सारिणी	र न र न र	१७
११,६६८.	चमरीचरम्	न न र न र	१७
१२,४६६.	जननिधिवेला	न य स म स	१७
१३,०५७	लीलाचन्द्रम्	म म त य स	१७
१३,५०२	घोरितम्	भ न र र स	१७.
१४,०१५.	शान्तसुरभि	भ न र स स	१७.
१४,२६०.	फर्णलता	न भ भ स स	१७
१५,६०१.	विगकलिता	म भ स भ स	१७
१५,७५७	शीर्षविरहिता	त य भ भ स	१७.
१६,०५३.	शङ्कावली	त भ र न स	१७.

प्रस्तार-सङ्ख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२३,१३१	ऊहिनी	र स य ज ज	१७.
२३,२६४	मितसखिय	न स स ज ज	१७.

षोडशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सङ्ख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१,०२४	माल्योपस्थम्	न न न य म ग	१७.
४,०९६.	कल्पाहारी	न न न न म ग	१७.
	वेल्लिता	स स स न म ग	१०, २०.
५,५३६.	प्रतीपवल्ली	स स भ र य ग	१७
७,१५९	आरभटी	भ भ न ज य ग	१७
९,२८०	वक्रावलोक	न न म र र ग	१७
	सुरतललिता	म न स त र ग	१०.
	चित्रम्	र ज र ज र ग	१०.
१० १९२	अभिधात्री	स स स ज र ग	१७.
१३,१०८	अनिलोहा	स भ त य स ग	१७.
	कान्तम्	न य न य स ग	१९.
१३,३०९	भोगावलि	त न न य स ग	१७
१४,०४४.	कामुकी	स स स स स ग	१०; सोमडकम्–११, कलधौत-पदम्–१७
	ललितपदम्	न न न ज स ग	१०, कमलदलम्–१९
१५,३७६	वलिवदनम्	न य म भ स ग	१७
१५,५६५.	सूतशिखा	त य स भ स ग	१७
१५,५८०	परिखायतनम्	स स स भ स ग	१७; परिखापतनं–१७
१५,६०१	मालावलयम्	म भ स भ स ग	१७
	शरमाला	भ भ भ भ स ग	१०; स्मरशरमाला–१९.
१६,३६९	भीमावर्त्त	म भ न न स ग	१७
१६,३८४	शिशुभरणम्	न न न न स ग	१७.
	कोमललता	स त स त त ग	१०, २०.
२३,२६४.	तरवारिका	न स स ज ज ग	१७.
	मङ्गलमङ्गना	न भ ज ज ज ग	१०, १९.
२५,५५२.	कमलपरम्	न य न य भ ग	१७.
२७,८२४	मणिकल्पलता	न ज र भ भ ग	६, १०, १४; त्रोटकम्–१७; चिन्तामणि–१९; इन्दुमुखी–१९
२८,६७२.	कलहकरम्	न न न न भ ग	१७
	प्रमुदिता	भ र न र न ग	१०.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०,५८४.	नरशिखी	न भ ज स न ग	१७
३१,२०७.	सारवरोहा	भ त न त न ग	१७
	वरयुवतिः	भ र य न न ग	२, १०, १४.
	ललना	र न न न न ग	१०, २०, २२.
३२,७६८.	चलधृति.	न न न न न ग	१०
३६,९९७.	दन्तालिका	त म र म य ल	१७.
४३,६६७.	कल्पधारि	र र र ज र ल	१७; चारि–१७.
५२,४१७	कुल्यावर्त्तम्	म म स भ त ल	१७; कुल्यावृत्तं–१७

सप्तदशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
११,९६८.	वीरविश्राम	न न र न र ग ग	१७
१६,१८३.	वल्वजम्	भ भ त न स ग ग	१७, वल्गुजम्–१७
१६,१८९.	क्रूराशनम्	त न त न स ग ग	१७; कूराशनम्–१७, क्रूरासनं–१७; कूरासन १७;
२०,३६८.	कामरूपम्	म र भ न त ग ग	१७.
२३,९००.	अतिशायिनी	स स ज भ ज ग ग	२, १०, १४, १७, १९; यादवी–११; चित्रलेखा–१४.
२३,९०४	शायिनी	न स ज भ ज ग ग	१७
	वाणिनी	न ज भ ज ज ग ग	१०, १८.
३२,३२०.	सलेखा	न न म न न ग ग	१७
३२,३८३.	तितिक्षा	भ न य न न ग ग	१७
३२,७६८.	वसुधारा	न न न न न ग ग	१०, १९.
	रोहिणी	न स म म य ल ग	१०.
३८,७५१.	बालविक्रीडितम्	भ स ज स य ल ग	१७.
३८,७५८	कालसारोद्धतः	ज त ज स य ल ग	१७
	कान्ता	य भ न र स ल ग	१४.
	हरिः	न न म र स ल ग	१४.
५२,४६५	विरुवरुतम्	म भ स भ त ल ग	१७
५२,९९३.	कासारम्	म म त न त ल ग	१७.
५६,१६७	वंशल.	भ त ज ज ज ल ग	१७.
	विलासिनी	न ज भ ज भ ल ग	४.
६४,६१२.	विधुरविरहिता	स त य भ न ल ग	१७
६४,९२४	शुकवनिता	स स भ भ न ल ग	१७; शिशुकवनिता–१७
६४,९४७.	बाहान्तरितम्	त न भ भ न ल ग	१७.

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६९,३९२.	कर्णस्फोटम्	न य त न म ग ल	१७
७४,८९९.	प्रतीहार.	र र र र र ग ल	१७.
७५,७१४	कान्तारम्	य म न स र ग ल	१७.
८१,१४०.	फल्गु	स भ स भ स स ल	१७.
	ललितभृङ्ग.	भ स न ज न ग ल	रूपगोस्वामिकृत रासक्रीडास्तोत्र

अष्टादशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३१,४५०.	परामोदः	य स स ज न म	१७.
३२,२३०.	विलुलितवनमाला	न न म न न म	१७
	अनङ्गलेखा	न स म म य य	५, १०.
	चन्द्रमाला	न न म म य य	५, १०
३७,४४०.	नीलशार्दूलम्	न न म य य य	१७; नीलशालूरं–१७, नील-मालूरम्–१७
	मन्दारमाला	स त न य य य	१९
४४,०२५	सत्केतु	म न न ज र य	१७.
	पङ्कजवक्त्रा	न न स स त य	१०, पङ्कजमुक्ता–१९.
	भङ्गि	भ भ भ भ न य	१०; विच्छित्तिः–११.
	काञ्ची	म र भ य र र	१०; वाचालकाञ्ची–११, २०.
	केसरम्	म भ न य र र	५, १०, १४
७४,८९९	सिन्धुसौवीरम्	र र र र र र	१७
	निशा	न न र र र र	१०, तारका–११, मल्ला-मालिका–१४.
७७,५०४.	पर्विणी	न न र न न र	१७.
७७,८०९.	क्रोडक्रीडम्	म भ न न र र	१७
	बुद्बुदम्	स ज स ज त र	१०
८९,००८.	वसुपदमञ्जरी	न ज भ ज ज र	१७.
	हरिणीपदम्	न स म त भ र	५, १०.
९३,०१७.	हरिणप्लुतम्	म स ज ज भ र	१४, १७.
	कुरङ्गिका	म त न ज भ र	५, १०.
	चलम्	म भ न ज भ र	१०, १४; अचलम्–५.
९५,७०४.	षट्पदेरितम्	न र न र न र	१७.
९६,०९४	पार्थिवम्	ज स ज स न र	१७
	गुच्छकभेद	न न न न न र	रूपगोस्वामिकृत-अरिष्टवधस्तोत्र

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१,१२,३४८.	परिपोषकम्	स स स स स स	१७.
	क्रीडा	य म न स त स	१०; सुधा–१४; मुक्तामाला-१४, १७.
	सुरभि	स न ज न भ स	१०, १६.
	मणिमाला	भ भ भ म भ स	१०, १६
१,२६,३६१.	अश्वगति	भ भ भ भ भ स	१६
१,४६,७६७.	अर्धान्तरालापि	त त त त त त	१७; अद्धान्तरालापि–१७
१,४६,७६८.	पतङ्गपादः	ज त त त त त	१७
२,२४,६६५.	हीरकहारधरम्	भ भ भ भ भ भ	१७.
२,४६,६६१.	दण्डी	त न त न त न	१७.

एकोनविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२०,४६६.	झिल्लीलीला	न य म म ज म ग	१७
३१,२२५.	विधुनिधुवनम्	म न न त न म ग	१७
४८,१८६.	माराभिसरणम्	त न म भ स य ग	१७
७४,८६६.	लोललोलम्बलीलम्	र र र र र र ग	१७
	विस्मिता	य म न स र र ग	१४
	मुग्धकम्	य म न न र र ग	१०.
	माधवीलता	म र भ स स ज ग	१०, २०
	रतिलीला	ज स ज स ज स ग	१०, १६
	तरुणीवदनेन्दु.	स स स स स स ग	६, १०.
१,३०,३४६.	किरणकीर्त्ति	त ज त भ न स ग	१७.
	वञ्चितम्	म त न स त त ग	१०, चन्द्रबिम्बम्–५; विम्ब-१४, विचितम्–१४.
१,५५,४८१.	शिलीमुखोज्जृम्भितं	म स ज न ज त ग	१७.
१,७४,७६३	कलापदीपकम्	र ज र ज र ज ग	१७.
१,७४,७८४	प्रपञ्चचामरम्	न न र ज र ज ग	१७; प्रपञ्चम्–१७
	पञ्चचामर	न न स ज र ज ग	१४
१,७८,१३६	कल्पलतापताकिनी	म न न स स ज ग	१७
	मकरन्दिका	य म न स ज ज ग	५, १०, १४.
	मणिमञ्जरी	य भ न य ज ज ग	१४.
	तरलम्	न भ र स ज ज ग	१०, १६
	ऊर्जितम्	र स स त ज ज ग	१०, शार्ङ्ग–१६.
१,६२,१६२	निर्गलितमेखना	न न र न भ ज ग	१७.
	वायुवेगा	म स ज स न ज ग	१०, २२.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१,६६ ६२१.	ग्रावास्तरणम्	म भ स भ म भ ग	१७
	समुद्रलता	ज स ज स त भ ग	१४
२,४१,३३६.	टङ्कणम्	र न र न र न ग	१७.

विंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५२,४६५	वाणीवाण	म भ स भ त य ग ग	१७.
१,२६,०३१	भेकालोकः	भ म म त न स ग ग	१७.
	चित्रमाला	म र भ न त त ग ग	५, १०; सुप्रभा-७ ११.
१,५१,४१३.	विष्वग्वितानम्	त भ ज न त त ग ग	१७
१,५१,४८६	भूरिशोभा	म म न न त त ग ग	१७.
१,६१,२४०.	संलक्ष्यलीला	न र न र न त ग ग	१७.
१,६३,६८८.	भारावतार	न त ज न न त ग ग	१७; हारावतारः-१७
२,२४,६६५	वीरविमानम्	भ भ भ भ भ भ ग ग	१७.
२,६८,६७६	मत्तेभविक्रीडितम्	स भ र न म य ल ग	१०, १७, १६
	रत्नमाला	म न स न म य ल ग	१०.
२,६६,५६४.	अवन्ध्योपचार	य य य य य य ल ग	१७.
३,५५,७६६	कामलता	भ र न भ भ र ल ग	१०; उत्पलमालिका-११, १७, १६.
	दीपिकाशिखा	भ न य न न र ल ग	१०, २०
	मुद्रा	न भ भ म स स ल ग	१०, १६; उज्ज्वलम्-११, १६,
	पुटभेदकम्	र स स स स स ल ग	१६
५,०७,६५५	सौरभशोभासारः	भ म त न स न ल ग	१७

एकविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८१,६२१	अशोकलोक	म म म म त र म	१७, अशोकलोकालोकः-१७.
	ललितगतिः	न न न य य र म	१६
८६,०८०.	मन्दाक्षमन्दरम्	न न म म ज र म	१७.
१,६१,८२७	तल्पकतल्लजम्	भ भ भ भ भ ज म	१७.
२,६६,५६४.	विद्युद्दाली	य य य य य य य	१७.
५,६७,६०५	दूरावलोक	म र भ न य र र	१७.
५,६६,५०८.	शरकाण्डप्रकाण्डम्	स र न र र र र	१७
६,१६,६६२.	कलमतल्लिका	न र न र न र र	१७.
	ललितविक्रम	भ र न र न र र	१०, २०
	वनमञ्जरी	न ज ज ज ज भ र	१०, १६

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	कथागतिः	त र भ न ज भ र	१०, २०.
	पद्मसद्म	र स न ज न भ र	१६
८,६८,७८०	प्रतिमा	स स स स स स स	१७; सवैया-१७
६,००,११२.	कमलशिखा	न य म भ स स स	१७
६,३६,२४०.	ललितललाम	न ज त त त त स	१७
	मत्तक्रीडा	म म त न न न स	१०
	चन्दनप्रकृति	र ज त न न न स	१०.
१७,६७,५५६	तडिदम्बरम्	भ भ भ भ भ भ भ	१७; सवैया-१७.

द्वाविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२,०२,६५१.	वासकलीला	भ म स त य भ म ग	१७.
३,३१,७७६	द्रुतमुखम्	न न न न म र य ग	१७.
५,६०,११३	भीमाभोगः	म त त म म र र ग	१७.
५,६८,६०२.	वीरनीराजना	य य य य र र र ग	१७.
५,६६,१८५.	कङ्कणक्वाणवाणी	म र र र र र र ग	१७
५,६६,१८७	कङ्कणक्वाणः	र र र र र र र ग	१७.
	महास्रग्धरा	स त त न स र र ग	१०, १६.
८,१७,६३८	अर्भकमाला	भ त न त न म स ग	१७.
८,७६,४४१.	भस्त्रानिस्तरणम्	म स भ न ज र स ग	१७
८,६८,७८०.	अयमानम्	स स स स स स स ग	१७.
	दीपार्चिः	म स ज स ज स ज ग	१०, २०.
	मदनसायक	न भ ज भ ज भ ज ग	१६
१५,७०,४८५.	भोगावली	त भ र स न न ज ग	१७
१६,३६,०६०	स्वर्णाभरणम्	स स स स न य भ ग	१७.
१६,७७,५११.	निष्कलकण्ठी	भ म स त य स भ ग	१७.
१६,१४,०३७	भुजङ्गोद्धतम्	त भ र र स र न ग	१७.
	लालित्यम्	म स र स त ज न ग	१४.
	यरतनु.	म त य न न न न ग	१०.
२०,६७,१५२.	अचलविरतिः	न न न न न न न ग	१७
३१,२४,५८८	वनवासिनी	स ज ज न र न स ल	१७

त्रयोविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८,४२,१७६.	परिपानीयम्	न न भ त ज य स ग ग	१७
१७,५२,४७६	विलासवास.	भ न भ भ न ज भ ग ग	१७; सुभाग-१७; विलासः १७.

प्रस्तार-सख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१७,६८,१०४.	मन्थरायनम्	न र न न भ भ भ ग ग	१७; मन्थरं–१७.
१८,३१ ६०३.	पुलकाञ्चितम्	भ स न य न न भ ग ज	१७.
२०,८६,४४७	इन्द्रविमानम्	भ त न म भ न न ग ग	१७.
	वृन्दारकम्	ज स ज स य य य ल ग	१०, २०.
२८,१७,४०१.	विपुलायितम्	म न ज भ न ज र ल ग	१७.
	चित्रकम्	र न र न र न र ल ग	६, १०, १९.
३२,७०,१४५.	पारावारान्तस्थम्	म म म स भ स त ल ग	१७; पारावारान्तः–१७.
३३,६४,८०१	रामावद्धम्	म भ स भ त न त ल ग	१७.
३५,२८,५४२	विलम्बललितम्	ज स ज स ज स ज ल ग	१७, बिलम्–१७.
३५,६५,११७.	शङ्ख.	त ज ज ज ज ज ज ल ग	१०, १९.
३५,६५,१२०.	हंसगतिः	न ज ज ज ज ज ज ल ग	१०, १९; महातरुणीदयितम्-११, १९; श्रवणाभरण–१७; विराजितम्–१७.
३६,४३,८७९.	गोत्रगरीयः	भ त न त य न ज ल ग	१७.
	चपलगति	भ म स भ न न न ल ग	१०.
४१,९४,३०४	भ्रमरचमरी	न न न न न न न ल ग	१७.
५०,४५,३७५	सभृतशरधि.	भ न य भ न य स ग ल	१७
५९,६१,८६३	चकोर.	भ भ भ भ भ भ भ ग ल	१७

चतुर्विंशाक्षर छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६,८८,२९९.	वंशलोन्नता	र ज र म म ज र म	१७.
१०.४६,२६३.	धौरेयम्	भ भ स स न न स म	१७
२३,६६,७४६.	भुजङ्ग	य य य य य य य य	१७, महाभुजङ्ग –१७; सुधायः १७
३१,०२,६३५.	भासमानबिम्बम्	र ज भ स ज भ स य	१७; मानबिम्बं–१७; भासमानं–१७.
३५,६५,१२०.	समाहितम्	न ज ज ज ज ज ज य	१७.
३६,३८,२७२	विगाहितगेहम्	न न न य म न ज य	१७, गाहितगेहं–१७; गाहितदेहम्–१७.
३६,५३,११३.	अधीरकरीरम्	म न न भ स न ज य	१७.
४१,५६,८५५.	अर्दितम्	भ भ भ भ भ भ न य	१७; नर्दितम्–१७.
४१,९०,३३५.	पार्षतसरणम्	भ न य म न न न य	१७
	ललितलता	न न भ न ज न न य	१०, १९.
४१,९३,४७९.	कोकपदम्	भ म स भ न न न य	१७, हंसपदम्–१९.

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४७,९३,४९१	गङ्गोदकम्	र र र र र र र र	१७
	मेघमाला	न न र र र र र र	३, १०, २२.
४८,४८,३०१.	उत्कटपट्टिका	त ज र ज न स र र	१७.
	महामदनसायक	न भ ज भ ज भ ज र	१९.
	विभ्रमगति	म स ज स त त भ र	१०, २०.,
५९,९३,९१२	शम्बरम्	न भ भ र न भ भ र	१७.
८३,६८,५६७	वेल्लितवेलम्	भ भ भ म स न न स	१७
	द्रुतलघुपदगति	भ भ भ त न न न स	१०
	सम्भ्रान्ता	न य भ त न न न स	१०.
८३,८८,६०८.	अतुलपुलकम	न न न न न न न स	१७.

पञ्चविंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
	मत्तेभ	म म म म म त य म ग	१९.
२९,७६,६०३	शरभूरिणी	र स ज ज भ र स य ग	१७.
४७,९३,४९१	ह्रीणहैयङ्गवीनम्	र र र र र र र र ग	१७
७२,०२,८१५.	नीपवनीयकम्	भ न न स भ स स स ग	१७.
७५,७६,८०८.	कुमुदमाला	न त स भ य न त स ग	१७
८२,८३,९०४	रसिकरसाला	न न स स भ त न स ग	१७
८३,६२,४८९	विरहविरहस्यम्	भ न न त य न न स ग	१७
८३,८१,३११	भास्करम्	भ न ज य भ न न स ग	१७.
९५,९२,४६७.	चित्तचिन्तामणि	र र र न ज त त त ग	१७
१,१३,८५,९७३	व्याकोशकोशलम्	त य भ भ स स स ज ग	१७.
	हसलय	न न न न स भ भ भ ग	१०, १९
१,४३,८०,४७१	शिविका	भ भ भ भ भ भ भ भ ग	१७.
१,५४,४५,९९१.	भाविनीविलसितम्	र न र न र न र न ग	१७.
१,६१,७५,१६८	विशेषकवलितम्	न न म म ज ज ज न ग	१७, विशेषितं–१७.
	चपलम्	न ज ज य न न न न ग	१०
१,६७,७४,७१७	अभ्रभ्रमणम्	त न म स न न न न ग	१७
	हसपदा	त य भ भ न न न न ग	६, १०, २०
१,६७,७७,२१६	अलका	न न न न न न न न ग	१७; अलिका–१७
१,९१,७३,९६२	मल्लपल्लीप्रकाशम्	य य य य य य य य ल	१७
२,३५,२५,०८४	सौदामनदाम	स स स स न ज य स ल	१७

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

षड्विंशाक्षर-छन्द

प्रस्तार-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३३,६६,१६६.	तनुकिलकिञ्चितम्	म म म न ज न त य ग ग	१७
३६,६४,५७६.	विनयविलास.	न य न य न य न य ग ग	१७
६५,११,४६७	विश्वविश्वासः	म य य य र र त त ग ग	१७
६५,३४,६६१	अशोकानोकहम्	म भ न भ न र त त ग ग	१७.
६५,८७,०६१	आभासमानम्	य य य य त त त त ग ग	१७.
६५,८७,०६५.	वीरविक्रान्तः	म न ज त त त त त ग ग	१७.
१,११,८४,८११.	विकुण्ठकण्ठ.	र ज र ज र ज र ज ग ग	१७
१,१२,०२,८१६.	चारुगति	न न स म न ज र ज ग ग	१७
१,५७,६०,३२१.	भसनशलाका	म भ स म न य त न ग ग	१७.
१,६७,६७,८७१.	उज्जिम्भतकदनम्	भ न ज ज ज न न न ग ग	१७
	मकरन्द	न य न य न न न न ग ग	१७.
	वनलतिका	न न न न न न न न ग ग	१६
१,६१,३२,६६२	कुहककुहरम्	न न म य न न म य ल ग	१७
१,६२,४८,२८५.	सूरसूचक	म स ज स स स य य ल ग	१७
१,६८,१५,६१०.	विषाणाश्रितम्	य न र भ ज त स य ल ग	१७.
२,२३,६६,४२७.	विनिद्रसिन्धुर	र र र र ज र ज र ल ग	१७
२,२३,८०,१७७	शकुन्तकुन्तल.	म र र न न र ज र ल ग	१७.
२,८१,४२,४२७	काकलीकलकोकिलः	र स ज ज भ र स ज ल ग	१७.
	सुधाकलशः	न ज भ ज ज ज भ ज ल ग	१०, १६.
२,६३,३०,६४३	भृङ्गलवलयितं	भ न न भ म न न ज ल ग	१७
३,२१,७५ ७६२.	विरामवाटिका	न ज र स न ज र न ल ग	१७.
३,३५,६२,८२१.	कर्णाटकम्	त भ ज भ ज भ न न ल ग	१७.
	आपीड	भ न न स म न न न ल ग	१०,
	वेगवती	न ज न स भ न न न ल ग	१०
३,८३,४७,६६८.	कुम्भकम्	न न र र र र र र ग ल	१७
५,७५,२१,८८४	वशंवद.	स स स स स स स स ल ल	१७.

प्रकीर्णक-छन्द

२७.	मालावृत्त	म त त त न न य य य	५, ६, मालाचित्र–१०
२७.	विकसितकुसुमम्	म भ न न न न न न स	१६, मालावृत्तम्–१६.
२७.	मालावृत्तम्	म म त न भ म म भ म	१६.

वर्णसंख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२७.	त्रिपदललितम्	न न न न भ न भ न स	१६.
२८.	त्रिभङ्गी	न स भ न त ज त स य	१६.
२६	प्रमोदमहोदयः	म त य त न न न र स ल ग	१०.
२६.	कला	न न न न न न न न न ल ग	१६.
२६.	मणिकिरण	न न भ न ज न न न न ल ग	१६;
३०	नृत्तललितम्	भ ज स न भ ज स न भ य	१०, वृत्तललितम्–१६.
३१.	लहरिका	न न न न न न न न न न ग	१६.
३१.	विशालं	३१ वर्ण	१६.
३१.	खञ्जविशालं	३१ वर्ण	१६.
३२.	उपविशालं	३२ वर्ण	१६.
३२.	खञ्जोपविशालं	३२ वर्ण	१६.
३३	चक्र	भ न न भ न न भ न न भ य	१६
३४	चित्रलय	भ न न भ न न भ न न भ न ग	१६.
३४.	अतिच्छन्दः	म म त न न न न न स ज ज ग	२०, मेघदण्डक–२२
३८.	ललितलता	न-१२, ल ग	१०, १६
३८	पिपीलिकादण्डकः	म म त न न न न न न न र स ल ग	२२
४२.	पणवदण्डकः	म म त न न न न न न न न ज भ र	२२.
४६	करभदण्डक	म म त न न न न न न न न न स ज ज ग	२२.
५०.	ललितदण्डक:	म म त न न न न न न न न न न न र स ल ग	२२.
	वारी	४६ मात्रा	१६.
	उपवारी	४२ मात्रा	१६.

दण्डक-छन्दः

वर्णसंख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३३.	अर्णवः	[न न र–६]	५, ६, १०, १३. १५, १६, १७, १८, १६; अर्ण–२२.
३६.	व्यालः	[न न र–१०]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६; प्लवः–२२.
३६.	जीमूत:	[न न र–११]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६; व्यालः–२२.
४२.	लीलाकरः	[न न र–१२]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १६; जीमूत–२२.

वर्ण-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४५.	उद्दाम	[न. न र–१३]	५ ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, लीलाकरः–२२
४८.	शङ्ख	[न न र–१४]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८ १९; उद्दाम –२२
५१.	विश्ववाट्	[न न र.–१५]	१७; समुद्र –६, १०; अर्क – १६; आरामः– १४, माला–५; सिंह –२२
५४.	कालदण्ड	[न न र –१६]	१७, सग्राम –१४, १७; भुजंग –६, १०, चन्द्रेश –१६; मालाः–५, समुद्र –२२.
५७.	पौण्ड्रक	[न न र- १७]	१७, सुराम –१४; भोगीन्द्र –१६; माला –५, भुजङ्ग–२२
६०.	उदारपाद	[न न र–१८]	१७, वैकुण्ठः–१४, पीयूष.–१६, माला –५, प्रचितक.–२२.
६३.	सोत्कण्ठ	[न न. र–१९]	१४, १७, वाराह.–१६; मालाः–५ प्रचितक.–२२
६६.	सार	[न न र –२०]	१४, १७, वात –१६, माला–५. ,,
६९	कासार	[न न र–२१]	१४, १७, माला–५, महाचण्डवृष्टि –१६; ,,
७२.	विस्तारः	[न न र–२२]	१४,१७,माला–५,महाचण्डवृष्टि –१६; ,,
७५.	संहार	[न न र–२३]	१४, १७, ,, ,, ,,
७८	नीहार	[न न र–२४]	१४, १७, ,, ,, ,,
८१.	मन्दार	[न न र–२५]	१४, १७, ,, ,, ,,
८४	केदारः	[न न र–२६]	१४, १७, ,, ,, ,,
८७	साधारः	[न न. र–२७]	१४ १७, ,, ,, ,,
९०.	सत्कार	[न.न र–२८]	१४, १७, ,, ,, ,,
९३	सस्कारः	[न न र–२९]	१४, १७, ,, ,, ,,
९६.	विमर्ष	[न न. र–३०]	१७, माकन्द.–१४,माला–५ ,, ,,
९९	शेषशाली	[न न र–३१]	१७; गोविन्द–१४; ,, ,, ,,
१०२	सानन्द	[न न. र–३२]	४, १४, ,, ,, ,,
१०५	सन्दोह	[न न र–३३]	१४; ,, ,, ,,
१०८	नन्द	[न न र–३४]	१४, ,, ,, ,,
२८	पन्नग	[न ग र–८]	१०, ६;
३१	दम्भोलि	[न ग. र–९]	१०, १६,
३४.	हेलावली	[न ग. र–१०]	१०, १६,
३७.	मालती	[न ग. र–११]	१०, १६,

वर्ण-संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४०.	केलि	[न,ग. र–१२]	१०, १६,
४३.	ककेल्लिः	[न ग. र–१३]	१०, १६;
४६	लीलाविलासः	[न.ग र –१४]	१०, १६,
२८.	शकायतनम्	[भ–९, ग]	१७.
२९.	भुजगविलास.	[भ–९, ग ग]	५, १०, १६.
२८.	लावण्यलीला-प्लुतम्	[न य–८, ल]	१७.
२८	आलानिकम्	[न न र य–६, ल]	१७.
२९.	स्मारमाला-कुल.	[स, य–८, ल ग]	१७.
३१.	आर्द्रस्तवक	[न य न य न य न य न य ल]	१७.
४८.	विदग्धसुभगी	[त न त न त न भ भ त न त न त न भ भ]	१७.
५७	विशेषस्तबकम्	[न य न य न य न य भ स भ स भ स म भ स भ स]	१७
२९	चण्डपाल·	[ल ५, र–८]	५, चण्डकील –१६; चण्डकालः–१०.
३५	,,	[ल ५, र–१०]	५.
३२	सिंहविक्रान्त.	[ल ५, य–९]	५, १०, १४, १७.
३०.	मेघमाला	[न न म म, य–६]	५, १६ [न न यथेष्ट मगण] १६, [न म यथेच्छ यगण१०]
३६.	चण्डवेग	[न न य–१०]	५, १०, १६
३२.	सिंहक्रीडः	[य–१०, ग ग]	५, १७
३०.	कामबाण	[त–१०]	५, १०, दाम–१६, [यथेच्छ त, ग २; स, ग २; ज, ग २; य, ग २ ।] १६
२९	सिंहविक्रान्त	[ल–५, य–८]	१६
३६.	उद्दालकः	[म–१२]	१६.
४८	सिंहविक्रीड	[य–१६]	१०, १६, सिंहविक्रान्त –१४.
३६.	वितानम्	[ज–१२]	१६
३६.	वर्तुल	[भ–१२]	१६

वर्ण-सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३६.	अचल	[न–१२]	१६.
२८.	वर्णक.	[न न भ–७, ग]	४.
३५	समुद्रः	[न न. र ज र ज र ज र ज र ल.ग]	४.
	उत्कलिका	[न न, पचमात्रिकगण यथेष्ट]	१०.
३०.	बाललीलातुर	[१० गण ऐच्छिक]	१७.
३२.	मनोहरणकवित्त	[१० गण ऐच्छिक, ल–२]	१७.
८६	कुसुमितकायः	[म म त न त य ज त र भ स स भ स भ स भ स भ त य स भ त य स भ न न ग ग]	१७
	मकरालय	[न ग र, सप्ताक्षरगण यथेच्छ	१६.
	सिंह	[ल ३, यथेच्छ गण]	१६.
	अब्द.	[ल. ४, यथेच्छ गण]	१६.
	चण्ड	[ल. ५, यथेच्छ गण]	१६.
	वात	[ल ७, यथेच्छ गण]	१६.
६६६.	महादण्डक	[न न, र–३३३]	समयसुन्दरकृत विज्ञप्तिपत्री

अर्द्धसमवृत्त

वर्ण-सख्या°	वृत्तनाम	विषमचरणो का लक्षण•	समचरणो का लक्षण*	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सकेतांक
(३, ८)	कामिनी	[र]	[ज र ल ग]	१०.
(३, १२)	शिखी	[र]	[ज र ज र]	१०.
(३, १६)	नितम्बिनी	[र]	[ज र ज र जग]	१०
(३, २०)	वारुणी	[र]	[ज र ज र ज र ल ग]	१०
(३, २४)	वतसिनी	[र]	[ज र ज र ज र ज र]	१०

टि– ° वर्णसख्या के कोष्ठक मे प्रयुक्त पहला अंक प्रथम और तृतीय चरणो का और दूसरा अक द्वितीय और चतुर्थ चरण के वर्णों का द्योतक है।

• विषम चरण अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण।

* सम चरण अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण।

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(५, ११)	इला	[स ल ग]	[स स स ल ग]	१०
(५, २४)	मृगाङ्कमुखी	[स ल ग]	[स स स स स स स स]	१०
(८, ३)	वानरी	[ज र ल ग]	[र]	१०.
(८, ८)	प्रवर्तकम्	[र ज ग ग]	[ज र ल ग]	१९
(९, १०)	वैसारी	[त ज र]	[भ स ज ग]	१७.
(१०, १०)	अतैलम्	[ज त त ग]	[त त त ग]	१७ अर्त्तिलम्–१७
(१०, १३)	शुकावली	[त ज र ग]	[म न ज र ग]	१७.
(१०, १२)	समुद्रकान्ता	[त ज र ग]	[म स स य]	१७.
(१०, १४)	विलासवापी	[त ज र ग]	[स भ र ज ग ग]	१७.
(१०, १०)	विश्वप्रभा	[त त त ग]	[ज त त ग]	१७
(१०, १२)	सम्पातशीला	[त म र ग]	[स न म य]	१७
(१०, १०)	घटिका	[त स ज ग]	[स स ज ग]	१७.
(१०, १३)	जारिणी	[न त त ग]	[र र न त ग]	१७.
(१०, ९)	वासववन्दिता	[म स ज ग]	[त ज र]	१७,
(१०, ११)	करधा	[म स ज ग]	[न न र ल ग]	१७.
(१०, ११)	सुधा	[म स ज ग]	[स भ र ल ग]	१७
(१०, १०)	प्रभासिता	[म स ज ग]	[स स ज ग]	१७
(१०, १२)	मकरावली	[म स स ग]	[स भ भ स]	१०
(१०, १०)	आलोलघटिका	[स स ज ग]	[त स ज ग]	१७.
(१०, १२)	अरुन्तुद	[स स ज ग]	[न ज ज र]	१७.
(१०, १०)	प्रभासिता	[स स ज ग]	[म स ज ग]	१७.
(१०, १२)	नवनीलता	[स स ज ग]	[स भ ज र]	१७, अवनीलता–१७. अवलीलता–१७.
(११, ११)	विपरीताख्यानिकी	[ज त ज ग ग]	[त त ज ग ग]	२, ५, १०, १३, १७, १८, १९, २२
(११, ११)	आख्यानिकी	[त त ज ग ग]	[ज त ज ग ग]	२, ५, १० १३, १७ १९, आख्यानिका–१८ २०, २२
(११, १२)	किन्नटक	[त ज ज ल ग]	[स स स स]	१७
(११, ११)	समयवती	[त न त ल ग]	[स म न ल ग]	१७
(११, १२)	शिशिराशिखा	[न न र ल ग]	[न ज ज र]	१७
(११, १०)	वैयाली	[न न र ल ग]	[म स ज ग]	१७.
(११, ११)	पाटलिका	[न य न ग ग]	[भ भ भ ग ग]	१७
(११, १२)	साचीकृतवदना	[न य भ ग ग]	[त न भ स]	१७

वर्ण-सख्या	वृत्तनाम	विषमचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सकेताक
(११, ११)	औपगवम्	[न र र ग ग]	[भ र र ल ग]	१७
(११, १२)	उपाढ्यम्	[न स ज ग ग]	[भ भ र य]	१७.
(११, ११)	करभोद्धता	[भ त र ल ग]	[स न र ल ग]	१७
(११, १३)	विलसितलीला	[भ भ त ल ग]	[न ज न स ग]	१०, १६
(११, १२)	द्रुतमध्या	[भ भ भ ग ग]	[न ज ज य]	२, ६, १०, १३, १७ १८, १६, २०, २२; चलमध्या–५
(११, ११)	कोरकिता	[भ भ भ ग ग]	[न य न ग ग]	१७.
(११, १२)	कमलाकरा	[भ भ भ ग ग]	[भ न ज य]	१७
(११, १०)	वर्गवती	[भ भ भ ग ग]	[स स स ग]	१७
(११, ११)	अवहित्रा	[भ भ भ ग ग]	[स स स ल ग]	१७
(११, १०)	केतु	[भ र न ग ग]	[स ज स ग]	१७.
(११, ११)	औपगवीतम्	[भ र र ल ग]	[न र र ग ग]	१७
(११, १३)	वद्धास्यम्	[म भ न ल ग]	[स स न न ग]	१७
(११, १०)	युद्धविराट्	[म स ज ग ग]	[त ज र ग]	१७
(११ १२)	असुराढ्या	[म स ज ग ग]	[न न र य]	१७
(११, ११)	वर्णिनी	[र न भ ग ग]	[र न र ल ग]	१७
(११ १२)	किलकिता	[र न र ल ग]	[न भ ज र]	१७
(११, ११)	सारिका	[र न र ल ग]	[र न भ ग ग]	१७
(११, १०)	ललिता	[र स स ल ग]	[स ज ज ग]	१४.
(११, ११)	शालभञ्जिका	[स न र ल ग]	[भ त र ल ग]	१७
(११, १२)	विमानिनि	[स भ र ल ग]	[म न ज र]	१७.
(११, १०)	असुधा	[स भ र ल ग]	[म स ज ग]	१७
(११, १०)	सुन्दरी	[स भ र ल ग]	[स स ज ग]	१७, सुरमालिका–१७, वियोगिनी–१७.
(११, ११)	अयवती	[स म न ल ग]	[त न त ल ग]	१७;
(११, १२)	मालभारिणी	[स स ज ग ग]	[स भ र य]	१०, २०; नितम्बिनी-११; उपोद्गता–१७ वसन्तमालिका–१७. परिश्रुता–१७, सुबोधिता–१६, प्रिया–१६
(११, १२)	हरिलुप्ता	[स स स ल ग]	[स भ भ र]	१७.
(१२, १२)	शखनिधिः	[ज त ज र]	[त त ज र]	१६; सुनन्दिनी–१६
(१२, १२)	विपरीतभामा	[ज भ स य]	[त भ स य]	१६
(१२, ३)	शिखण्डि	[ज र ज र]	[र.]	१०

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणे का लक्षण	समचरणे का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(१२, १३)	पद्मावती	[त भ ज य]	[स ज स स ग]	१७
(१२, १२)	सरसीकम्	[त भ ज य]	[स भ ज य]	१७
(१२, १२)	पद्मनिधिः	[त त ज र]	[ज त ज र]	१६; नन्दिनी–१६
(१२, ११)	अवाचीकृतवदना	[त न भ स]	[न य भ ग ग]	१७.
(१२, १२)	भामा	[त भ स य]	[ज भ स य]	१६
(१२, १२)	सिंहप्लुतम्	[त भ स य]	[ज भ स य]	१६, (श्रुति-स्मृति-उपजाति)
(१२, ११)	ईहा	[न ज ज य]	[भ भ भ ग ग]	१७.
(१२, ११)	अपरवक्त्रम्	[न ज ज र]	[न न र ल ग]	१७; मृदुमालती–१७.
(१२, १०)	अनूपकम्	[न ज ज र]	[स स ज ग]	१७.
(१२, १३)	मञ्जुसौरभम्	[न ज ज र]	[स ज य ज ग]	१४
(१२, ७)	क्षान्ति.	[न न न य]	[म म ग]	१६; चूडा–१६
(१२, १२)	कौमुदी	[न न भ भ]	[न न र र]	१४.
(१२, ११)	सुराढ्या	[न न र य]	[म स ज ग ग]	१७
(१२, १५)	शरावती	[न न र य]	[स भ न ज र]	१७
(१२, ११)	किलकिती	[न भ ज र]	[र न र ल ग]	१७
(१२, ११)	अकुसुमचरम्	[भ न ज य]	[भ भ भ ग ग]	१७.
(१२, ११)	आमलकी	[भ भ भ भ]	[भ भ भ ग ग]	१६; चुक्षा–१६
(१२, ११)	उपाढ्यम्	[भ भ र य]	[न स ज ग ग]	१७
(१२, १२)	उत्पोहा	[भ भ र य]	[स भ र ज]	१७.
(१२, ११)	विमानिनी	[भ न ज र]	[स भ र ल ग]	१७
(१२, १६)	अहीनताली	[म न ज र]	[स भ स ज र ग]	१७.
(१२, १३)	वियद्वाणी	[म स ज म]	[स भ र य ग]	१७
(१२, १०)	कान्ता	[म स स य]	[त ज र ग]	१७.
(१२, १३)	मृगीयवानी	[र ज र ज]	[ज र ज र ग]	१४, १८
(१२, १३)	चमूरुभीरु	[र न ज र]	[स न ज र ग]	१७.
(१२, १०)	पातशीला	[स न म य]	[त म र ग]	१७.
(१२, १२)	उपसरसीकम्	[स भ ज य]	[त भ ज य]	१७
(१२, १०)	करीरीता	[स भ ज र]	[स स ज ग]	१७.
(१२, ११)	लुप्ता	[स भ भ र]	[स स स ल ग]	१७.
(१२, १२)	अर्भकपंक्ति	[स भ र ज]	[भ भ र य]	१७.
(१२, १३)	अप्रमाथिनी	[स भ र य]	[न ज ज र ग]	१७
(१२, ११)	प्रमालिका	[स भ र य]	[स स ज ग ग]	१७; उपोद्गता–१७ सौरभसचितम्–१७.

वर्ण-सख्या	वृत्तनाम	विषमचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सन्दर्भ ग्रथ-सकेताक
(१२, ११)	नटक	[स स स स]	[त ज ज ल ग]	१७
(१३, १३)	प्रकीर्णकम्	[ज भ स ज ग]	[त भ स ज ग]	१६; (रुचि-रुचिर-उपजाति)
(१३, १३)	निर्मधुवारि	[त भ र स ल]	[स ज स ज ग]	१७.
(१३, १४)	लास्यलीलालय·	[त य र र ग]	[भ स त त ग ग]	१७.
(१३, १२)	अञ्चिताग्रा	[न ज ज र ग]	[न न र य]	१७
(१३, १२)	प्रमाथिनी	[न ज ज र ग]	[स भ र य]	१७
(१३, १४)	आलेपनम्	[न त त त ग]	[न भ य य ल ग]	१७.
(१३, १६)	परप्रीणिता	[न न त त ग]	[न न स त त ग]	१७
(१३, १३)	विमुखी	[न न भ स ल]	[न न स स ग]	१७.
(१३, १५)	प्रमोदपरिणीता	[न न र ज ग]	[न ज ज भ य]	१७
(१३, १८)	सुरहिता	[न न स स ग]	[त न न न ग]	१७
(१३, १३)	रुचिमुखी	[न न स स ग]	[न न भ स ल]	१७
(१३, १३)	शिशुमुखी	[न भ ज ज ग]	[न भ स ज ग]	१७.
(१३, १३)	अनिरया	[न भ स ज ग]	[न भ ज ज ग]	१७
(१३, १४)	प्रतिविनीता	[न य ज र ग]	[स भ र न ग ग]	१७
(१३, १३)	अल्परुतम्	[भ न ज ज ग]	[भ न य न ल]	१७.
(१३, १३)	अर्धरुतम्	[भ न य न ल]	[भ न ज ज ग]	१७
(१३, १३)	अनङ्गपदम्	[भ भ भ भ ग]	[स स स स ग]	१७
(१३, १३)	धीरावर्त्तः	[म त य स ग]	[म भ स म ग]	१७.
(१३, १३)	धीरावर्त्तः	[म भ स म ग]	[म त य स ग]	१७.
(१३, १०)	किशुकावली	[म न ज र ग]	[त ज र ग]	१७
(१३, १३)	अलिपदम्	[र र न त ग]	[न त त त ग]	१७
(१३, १३)	मधुवारि	[स ज स ज ग]	[त भ र स ल]	१७
(१३, १३)	कलनावती	[स ज स ज ग]	[स ज स स ग]	१७.
(१३, १२)	पद्मावती	[स ज स स ग]	[त भ ज य]	१७
(१३, १३)	कलना।	[स ज स स ग]	[स ज स ज ग]	१७
(१३, १२)	चमूरु.	[स न ज र ग]	[र न ज र]	१७.
(१३ १२)	वियद्वाणी	[स भ र य ग]	[म स ज म]	१७.
(१३, १४)	मन्दाक्रान्ता	[स स ज र ग]	[म स ज र ग ग]	१७.
(१३, ११)	कामाक्षी,	[स स न न ग]	[म भ न ल ग]	१७
(१३, १३)	भुजङ्गभृता	[स स स स ग]	[भ भ भ भ ग]	१७.
(१४, १५)	अवरोधवनिता	[न भ भ र ल ग]	[स स ज भ य]	१७.
(१४, १३)	अनालेपनम्	[न भ य य ल ग]	[न त त त ग]	१७.

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणों का लक्षण	समचरणों का लक्षण	संदर्भ-ग्रंथ-संकेतांक
(१४, १३)	लास्यलीला	[भ स त त ग ग]	[त य र र ग]	१७.
(१४, १३)	सम्मदाक्रान्ता	[म स ज र ग ग]	[स स ज र ग]	१७
(१४, १८)	मार्दङ्गी	[स न स न ग ग]	[म न ज न ज य]	१७, मातङ्गी–१७.
(१४, १०)	अक्रोशक्रुष्टा	[स भ र ज ग ग]	[त ज र ग]	१७.
(१४, १३)	अतिप्रतिविनीता	[स भ र न ग ग]	[न य ज र ग]	१७.
(१५, १४)	उरगी	[न न न न स]	[न न भ न ल ग]	१९
(१५, १५)	देवगीति	[र ज र ज र]	[ज र ज र य]	२२.
(१५, १३)	प्रमोदपदम्	[न ज ज भ य]	[न न र ज ग]	१७.
(१५, १६)	आसववासिता	[न भ ज र य]	[स भ र ज स ग]	१७.
(१५, १२)	बृहच्छरावती	[स भ न ज र]	[न न र य]	१७.
(१५, १४)	अवरोधवनिता	[स स ज भ य]	[न भ भ र ल ग]	१७.
(१६, ३)	सारसी	[ज र ज र ज ग]	[र]	१०.
(१६, १६)	वासिनी	[त ज भ ज ज ग]	न ज भ ज ज ग]	१७.
(१६, १६)	वासववासिनी	[न ज भ ज ज ग]	[त ज भ ज ज ग]	१७
(१६, १३)	अपरप्रीणिता	[न न स त त ग]	[न न त त ग]	१७.
(१६, १५)	अनासववासिता	[स भ र ज स ग]	[न भ ज र य]	१७.
(१६, १२)	हीनताली	[स भ स ज र ग]	[म न ज र]	१७.
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न ज न ल ग]	[न ज भ स न स]	१०
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न भ र ल ग]	[न ज भ स न स]	१९.
(१८, १४)	मार्दंगी	[म न ज न न य]	[स न स न ग ग]	१९.
(२०, ३)	अपरा	[ज र ज र ज र ल ग]	[र]	१०.
(२४, ३)	हंसी	[ज र ज र ज र ज र]	[र]	१०
(२९, ३१)	शिखा	[न न न न न न न न न ल ग]	[न न न न न न न न न न ग]	२, ५, १०, १३, १८, १९, २०, २२.
(३१, २९)	खञ्जा	[न न न न न न न न न न ग]	[न न न न न न न न न ल ग]	२, ५, १०, १३, १८, १९, २२.

षष्ठ परिशिष्ट

गाथा एवं दोहा भेदों के उदाहरण[1]

गाथा-भेदों के उदाहरण

१. लक्ष्मीः

यत्रार्याया वर्णास्त्रिशत्सख्या लघुत्रय तत्र ।
दीर्घास्तारातुल्याश्चेत्स्युः प्रोक्ता तदा लक्ष्मी ॥१॥

२. ऋद्धिः

यत्रार्याया वर्णा एकत्रिंशन्मिता यदा पञ्च ।
लघवः षड्विंशत्या दीर्घा ऋद्धि' समा नाम्ना ॥२॥

३. बुद्धिः

यत्रार्याया वर्णा दन्तैस्तुल्या भवन्ति चेद् दीर्घा. ।
तत्त्वैस्सप्तलघूनां नाम्ना बुद्धिस्तदा भवति ॥३॥

४. लज्जा

यत्रार्याया वर्णा देवैस्तुल्या जिनोन्मिता गुरवः ।
नवलघवश्चेत्तत्र प्रोक्ता नाम्ना तदा लज्जा ॥४॥

५. विद्या

वर्णा वेदाग्निमिता गुरवो रामाश्विभिर्मिता यत्र ।
रुद्रमिता लघवश्चेन्नाम्ना विद्या तदा आर्या ॥५॥

६. क्षमा

बाणाग्निमिता वर्णा आकृतितुल्यास्तु यत्र गुरवस्स्यु. ।
ह्रस्वा विश्वनियमिता प्रोक्ता नाम्ना क्षमा सार्या ॥६॥

७ देही

षट्त्रिंशन्मितवर्णाः प्रकृतिमिताः सम्भवन्ति चेद् दीर्घा. ।
बाणेन्दुमिता लघवः कथिता सार्या तदा देही ॥७॥

---

[1] वृत्तमौक्तिक मे गाथा और दोहा छन्द के प्रस्तार-भेद से नाम एव सक्षेप मे लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इन भेदो के उदाहरण प्राप्त नही हैं अत वाग्वल्लभ-ग्रन्थ से इनके लक्षणयुक्त उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे है ।

८. गौरी

सप्ताग्निमिता वर्णा नखमितगुरवो घनोन्मिता लघवः ।
यत्र स्युः किल सार्या तर्हि भवेन्नामतो गौरी ॥८॥

९. धात्री, रात्री च

वसुगुणतुल्या वर्णा गुरवो लघवो यदातिधृतितुल्याः ।
फणिपप्रोक्ता सार्या भवति तदा नामतो धात्री ॥९॥

१० चूर्णा

नवगुणपरिमितवर्णा धृतिमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
प्रकृतिमिता यदि सार्या प्रोक्ता नाम्ना तदा चूर्णा ॥१०॥

११ छाया

द्विगुणितनखमितवर्णा घनमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
विकृतिमिता यदि सार्या कथिता नाम्ना तदा छाया ॥११॥

१२. कान्तिः

शशियुगपरिमितवर्णा अष्टिप्रमिता भवन्ति चेद्गुरवः ।
शरकृतिपरिमितलघवो नाम्ना सार्या भवेत् कान्तिः ॥१२॥

१३ महामाया

यमयुगपरिमितवर्णास्तिथिमितगुरवश्च भोन्मिता लघव ।
सार्या भवति तदानी फणिना कथिता महामाया ॥१३॥

१४ कीर्त्तिः

गुणयुगपरिमितवर्णा मनुमितगुरवो नवाश्विमितलघव ।
स्युर्यदि यत्र च सार्या फणिना कथिता तदा कीर्त्ति. ॥१४॥

१५. सिद्धा

श्रुतियुगपरिमितवर्णा अतिरवितुल्या भवन्ति चेद्गुरव ।
शशधरगुणमितलघवः प्रभवति सा नामतस्सिद्धा ॥१५॥

१६ मानिनी, मनोरमा च

शरयुगपरिमितवर्णा रविमितगुरवश्च देवमितलघव ।
यदि फणिगणपतिभणिता सार्या खलु मानिनी ज्ञेया ॥१६॥

१७ रामा

रसयुगपरिमितवर्णा. शिवमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
शरगुणपरिमितलघवो यत्र भवति सोदिता रामा ॥१७॥

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियत चेत् ।
नगगुणपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ॥१८॥

१९. विश्वा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगभिमिताः प्रभवति फणिपतिभणितविश्वा ॥१९॥

२० वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरव शशियुगमितलघव. ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ॥२०॥

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुग्जलनिधिमितास्तथा लघव. ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ॥२१॥

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरव शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनु. प्रभवति नियत तदा हरिणी ॥२२॥

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ॥२३॥

२४ सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ॥२४॥

२५. कुररी

स्युरथ गुणमितगुरव इह यदि शशधरशरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति लसद्यतिरिय कुररी ॥२५॥

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरथ सिंही ॥२६॥

२७ हंसी, हंसपदवी च

शशिमितगुरुशरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहसपदविरथ नियतकृतयति ॥२७॥

दोहा-भेदों के उदाहरण

१. भ्रमरः

यत्र स्युर्दीर्घास्त्रयोविंशत्या तुल्याश्च ।
द्वौ ह्रस्वौ स्याता यदा पूर्व.स्यान्नाम्ना च ॥१॥

२. भ्रामरः

द्वाविंशत्या सम्मिता दीर्घा ह्रस्वा यत्र ।
चत्वारः स्युर्भ्रामरो नाम्नाऽसौ स्यादत्र ॥२॥

३. सरभः

चेत्स्युर्भूदस्रोन्मिता दीर्घा ह्रस्वा यर्हि ।
षण्णागेशेनोदितो नाम्ना सरभस्तर्हि ॥३॥

४. श्येनः

दीर्घा विंशत्या मिता अष्टौ लघवो यत्र ।
पिङ्गलनागप्रोदितः श्येन. स्यादित्यत्र ॥४॥

५ मण्डूक

दीर्घा अतिधृत्युन्मिता ह्स्वाः स्युर्दश यर्हि ।
ब्रूतेऽनन्तो नामतो मण्डूक किल तर्हि ॥५॥

६ मर्कट

दीर्घाः स्युर्धृतिसम्मिता ह्रस्वा द्वादश यत्र ।
पिङ्गलनागेनोदितो मर्कटनामा तत्र ॥६॥

७. करभः

दीर्घा स्युर्घनसम्मिता इन्द्रमिता लघवश्च ।
ब्रूते शेषो यदि तदा नाम्नाऽसौ करभश्च ॥७॥

८. नरः

षोडश गुरव. सन्ति चेल्लघवो यत्र किलापि ।
पिङ्गलनागेनाऽसकौ नाम्ना नर आलापि ॥८॥

९. मराल

अष्टादश लघवो यदा गुरवः पञ्चदशैव ।
मरालनामेत्यहिपति· शेषो वक्ति तदैव ॥९॥

१०. मदकलः

मनुमितगुरवो विंशतिर्लघवः सन्ति यदा च ।
मदकलनामाऽसौ भवेदित्थ शेष उवाच ॥१०॥

११. पयोधरः

नाम पयोधर इति भवेदतिरविगुरवस्सन्ति ।
न्यस्ता आकृतिसम्मिता लघवो यत्र भवन्ति ॥११॥

१२. चलः

लघवश्च चतुर्विंशतिर्गुरवो द्वादश यत्र ।
स्यु. फणिगणपतिरिति वदति चलनामाऽसावत्र ॥१२॥

१३. वानर

एकादश गुरवो यदा रसयममितलघवश्च ।
नाम्ना वानर इह तदा फणिनायकभणितश्च ॥१३॥

१४. त्रिकल

वसुयममितलघवो यदा दश गुरवश्च भवन्ति ।
तदा विशिष्य त्रिकल इति नाम बुधा निगदन्ति ॥१४॥

१५. कच्छप.

लघवो द्विगुणिततिथिमिता गुरवो नव यदि सन्ति ।
नाम्ना कच्छप इति भवति सुधियो नियतमुशन्ति ॥१५॥

१६. मत्स्य.

रदपरिमितलघवो यदा वसुमितगुरवस्सन्ति ।
भवति मत्स्य इह खलु तदा विबुधा इति कथयन्ति ॥१६॥

१७. शार्दूलः

श्रुतिगणपरिमितलघव इह नगमितगुरवो यत्र ।
फणिगणपतिपरिभणित इति शार्दूल. स्यात्तत्र ॥१७॥

१८ अहिवरः

रसगुणपरिमितलघव इह रसमितगुरवो यर्हि ।
अहिवर इति खलु नामतः फणिपतिभणितस्तर्हि ॥१८॥

१९. व्याघ्र

वसुगुणपरिमितलघव इह शरमितगुरवश्चापि ।
व्याघ्रक इति भवति सनियममहिगणपतिनाऽलापि ॥१९॥

२०. विडालः

गगनजलधिमितलघव इह जलनिधिमितगुरवश्च ।
प्रभवति यदि फणिपतिभणित इति नाम विडालश्च ॥२०॥

२१. श्वा

यदि यमयुगमितलघव इह गुणपरिमितगुरुकाणि ।
श्वा फणिपतिगुरुमतिभिरिति भवति सनियममभाणि ॥२१॥

२२. उदुम्बरः, उन्दुरुश्च

द्विगुरुजलधियुगलघुभिरिह नियमिततनुरनुभवति ।
फणिपतिरिति तत उन्दुरुः सुनियतकृतयति भवति ॥२२॥

२३. सर्पः

शशिगुरुरसयुगमितलघुभिरथ कृततनुरिह लसति ।
फणिगणपतिरधिकृतविरति सर्प इति समभिलषति ॥२३॥

२४. शशधरम्

वसुजलनिधिपरिमितलघुभिरभिनियमिततनु भवति ।
शशधरमिदमिति नियतयति फणिगणपतिरनुभवति ॥२४॥



सप्तम परिशिष्ट

ग्रन्थोद्धृत ग्रन्थ-तालिका

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
अथ च		१८६.
अथवा		३८.
अनर्घराघवम्	मुरारिः	२०५.
अन्येऽपि		२०५.
अष्टाध्यायी	पाणिनिः	२०३.
इति वा		१८८.
उदाहरणमञ्जरी	लक्ष्मीनाथभट्टः	१०, १३, १६, १७, २१, २४, ८१.
कविकल्पलता	देवेश्वर.	२०५.
कादम्बरी	बाणः	२०६.
काव्यादर्श	दण्डी	७५.
किरातार्जुनीयम्	भारविः	६८, १००, १०६, १३६, १६२.
कृष्णकुतूहलमहाकाव्यम्	रामचन्द्रभट्टः	१०५, १०७, ११४, ११६, १२१, १३५, १३७, १३८, १३६, १५१, १६१.
कण्ठाभरणम्		१२०.
खड्गवर्णने	लक्ष्मीनाथभट्ट	१६०.
गौरीदशकस्तोत्रम्	शङ्कराचार्य	१०५.
गोविन्दविरुदावली	श्रीरूपगोस्वामी	२२२, २२४, २२८.
गीतगोविन्दम्	जयदेव	२०५.
चन्द्रशेखराष्टकम्	मार्कण्डेय	१४५.
छन्दःसूत्रम्	पिङ्गल.	१८४, २०४.
छन्दःसूत्रवृत्ति	हलायुध	१५८, १७३, १७५, १७७, १७८, १६४, १६८, १६६, २००.
छन्दोरत्नावली	अमरचन्द्र (?)	३३०, ३३१.
छन्दश्चूडामणि ?	शम्भु	१०६, १३६, १६७, २७२, २८०, २८२, २८३
छन्दोमञ्जरी	गङ्गादासः	६२, ६३, १०५, १२४, १४०, १४७, २०६.



अष्टम परिशिष्ट

छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख*
१	अभिनववृत्तरत्नाकर	भास्कर	सी. सी,
२	,, टिप्पण	,, श्रीनिवास	,,
३	एकावली	फतेहशाह वर्मन् ?	मिथिला केटलॉग
४	कर्णतोष	मुद्गल	अनूप, सी सी. मे इसका नाम 'कर्णसन्तोप' है।
५	कर्णानन्द	कृष्णदास	हि. एस,
६	कविदर्पण		प्रकाशित
७	कविशिक्षा	जयमंगलाचार्य	हि एस,
८	काव्यजीवन	प्रीतिकर अवस्थी	हि. एस, सी. सी,
९	काव्यलक्ष्मीप्रकाश	शिवराम S/o कृष्णराम	सी. सी.
१०	काव्यावलोकन [कन्नडभाषीय]	नागवर्म	कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थसूची
११	कीर्त्तिच्छन्दोमाला	रामानारायण S/o विष्णुदास	युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
१२	,, टीका	,, ,,	,,
१३	क्षेपक विज्जाहला		जैन-ग्रन्थावली

* संकेत—सी सी. = केटलॉगस केटलॉगरम्; मिथिला केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन मिथिला; अनूप = केटलॉग ऑफ दी अनूप संस्कृत लायब्रेरी बीकानेर, हि.एस = ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर, एम कृष्णमाचारी; युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग = ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ दी संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी लायब्रेरी ऑफ दी युनिवर्सीटी ऑफ बॉम्बे, रायल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग = एन डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑफ संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी लायब्रेरी ऑफ दी बॉम्बे ब्रांच ऑफ दी रायल एशियाटिक सोसायटी; बड़ोदा केटलॉग = एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन दी ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट बरोडा, रा प्रा प्र. जोधपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर; रा प्रा.प्र चित्तौड़ = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय चित्तौड़; रा प्रा प्र बीकानेर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय बीकानेर, रा प्रा प्र जयपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, शाखा कार्यालय जयपुर।

	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
१४	गायारत्नकोष		जैन-ग्रन्थावली
१५	गायारत्नाकर		,,
१६	गाथालक्षण	नन्दिताढ्य	प्रकाशित
१७	,,	रत्नचन्द्र ?	रॉयल एशियाटिक सोसायटी बम्बई केटलॉग
१८	छन्दःकन्दली		उल्लेख. कविदर्पण
१९	छन्द.कल्पतरु	राघव झा	मिथिला केटलॉग, हि एस
२०	छन्द कल्पलता	मथुरानाथ	हि एस
२१	छन्द कोष	रत्नशेखरसूरि	प्रकाशित
२२	,, टीका	,, चन्द्रकीर्त्ति	सी सी
२३	छन्द.कौमुदी	नारायणशास्त्री खिस्ते	प्रकाशित
२४	छन्द कौस्तुभ	दामोदर	वडोदा केटलॉग
२५	,,	राधादामोदर	सी सी, हि एस
२६	,, टीका	,, विद्याभूषण	सी सी
२७	,, ,,	,, कृष्णराम	,,
२८	छन्दस्तत्त्वसूत्रम्	धर्मनन्दन वाचक	रा प्रा प्र जोधपुर
२९	छन्द पयोनिधि		प्रकाशित
३०	छन्द.पीयूष	जगन्नाथS/oराम	रा प्रा प्र जोधपुर, सी सी,
३१	छन्द प्रकाश	शेषचिन्तामणि	वड़ोदा केटलॉग, हि एस,
३२	,, टीका	,, सोमनाथ	सी सी
३३	छन्द प्रशस्ति	श्रीहर्ष	सी सी [उल्लेख–नैषध १७/२१९]
३४	छन्द प्रस्तारसरणि	कृष्णदेव	वड़ोदा केटलॉग
३५	छन्दःशास्त्र	जयदेव	प्रकाशित
३६	,,	,, हर्षट	सी सी
३७	छन्द शिक्षा	परमेश्वरानन्द शास्त्री	प्रकाशित
३८	छन्द शेखर	जयशेखर	जैन-ग्रन्थावली
३९	,,	राजशेखर	प्रकाशित
४०	छन्दश्चन्द्रिका		प्रकाशित
४१	छन्दश्चिह्नम्		,,
४२	छन्दश्चिह्नप्रकाशनम्	आत्मस्वरूप उदासीनP/o गंगाराम उदासीन	,,
४३	छन्दश्चूडामणि	शम्भु	उल्लेख वृत्तरत्नाकर-नारायणभट्टी टीका
४४	छन्दश्छटामण्डन	कृष्णराम [जयपुर]	हि एस,

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
४५	छन्दःश्लोक		सी सी,
४६	छन्द सार	चिन्तामणि	युनिवर्सीटी लायब्रेरी बम्बई केटलॉग
४७	,,	जगन्नाथ पाण्डेय	प्रकाशित
४८	छन्दःसारसंग्रह	चन्द्रमोहन घोष	,,
४९	छन्दःसारावली		,,
५०	छन्द.सिद्धान्तभास्कर	केशवजीनन्दS/oसूरजी	मिथिला केटलॉग
५१	छन्दःसुधाकर	कृष्णराम	हि. एस.
५२	छन्दःसुधाचिल्लहरी	जानीमहापात्रS/oजयदेव याज्ञिक	अनूप, हि.एस.
५३	छन्द सुन्दर	नरहरि	सी.सी.
५४	छन्द.सख्या	?	,,
५५	छन्दःसग्रह		,, [उल्लेख-तन्त्रसार]
५६	,, [वृत्तबोधः]		प्रकाशित
५७	छन्दोरूपक		जैनग्रंथावली
५८	छन्दोऽङ्कुर	गगासहाय	प्रकाशित
५९	छन्दोऽवतंस	लालचन्द्रोपाध्याय	रा.प्रा.प्र. चित्तौड
६०	छन्दोग्रन्थ		सी सी.
६१	छन्दोगोविन्द*	गगादास	सी सी., [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श और वृत्तमौक्तिक]
६२	छन्दोदर्पण	गोविन्द	सी सी
६३	छन्दोदीपिका	कुमारमणि s/o हरिवल्लभ	,,
६४	,, टीका	,, कृष्णराम	,,
६५	छन्दोनिघण्टु		अनूप,
६६	,, (पिंगलसारिनष्टोद्दिष्टलक्षणम्)	हरिद्विज	रा.प्रा प्र. बीकानेर
६७	छन्दोऽनुशासन	जयकीर्त्ति	प्रकाशित
६८	,,	जिनेश्वर	हि.एस.
६९	,,	वाग्भट	सी.सी [उल्लेख-अलङ्कारतिलक]
७०	,,	हेमचन्द्र	प्रकाशित
७१	,, टीका	,,	,,

* वस्तुत छन्दोगोविन्द और छन्दोमञ्जरी दोनो एक ही ग्रन्थ है ।

	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
७२	छन्दोऽम्बुधि		सी सी
७३	छन्दोमञ्जरी	गंगादास s/o गोपालदास वैद्य	प्रकाशित
७४	,, टीका	,, कृष्णराम	सी सी.
७५	,, ,,	,, कृष्णवल्लभ	हि एस
७६	,, ,,	,, गोवर्धनदास	हि.एस ,सी सी
७७	,, ,, [छन्दोमञ्जरीजीवन]	,, चन्द्रशेखर भारती	,, ,,
७८	छन्दोमञ्जरी टीका	,, जगन्नाथ सेन s/o जटाधर कविराज	हि एस., सी सी
७९	,, ,,	,, जीवानन्द	प्रकाशित
८०	,, ,	,, दाताराम	हि.एस, सी.सी
८१	,, ,,	,, रामधन	प्रकाशित
८२	,, ,,	,, वंशीधर	हि एस, सी सी
८३	,, ,,	,, हरिदत्तशास्त्री शकरदत्तपाठकश्च	प्रकाशित
८४	छन्दोमञ्जरी	गोपाल*	संस्कृत कॉलेज बनारस रिपोर्ट सन् १९०९-१७
८५	,,	गोपालदास*	हि.एस
८६	,,	गोपालचन्द्र*	सी.सी.
८७	छन्दोमन्दाकिनी	गुरुप्रसाद शास्त्री	प्रकाशित
८८	छन्दोमहाभाष्य	दामोदरभट्ट s/o रघुनाथ	बड़ोदा केटलॉग
८९	छन्दोमातङ्ग		सी सी [उल्लेख-वृत्तरत्नाकरादर्श]
९०	छन्दोमार्तण्ड	मणिलाल	बड़ोदा केटलॉग
९१	छंदोमाला	शार्ङ्गधर	हि एस
९२	छंदोमुक्तावली	प्यारेलाल	सी.सी.
९३	,,	शम्भुराम s/o सीताराम	हि.एस , सी सी.
९४	छंदोरत्न	पद्मनाभभट्ट	सी सी
९५	छंदोरत्नहलायुध	?	सी सी.

* छन्दोमञ्जरी के कर्त्ता गोपालदास वैद्य के पुत्र गगादास है। अत सभव है प्रतिलिपिकारो के भ्रम से गोपाल, गोपालदास, गोपालचंद्र नाम से भिन्न ३ प्रणेता का भ्रम हो गया हो।

	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
९६	छंदोरत्नाकर		सी सी.,हि एस. [उल्लेख-संगीतनारायण और लक्ष्मीनाथभट्टकृत-पिंगलप्रदीप]
९७	छंदोरत्नावली	अमरचन्द्र कवि	जैन - ग्रंथावली [उल्लेख-मेघविजयकृत-वृत्तमौक्तिक दुर्गमबोध]
९८	छंदोरहस्य	धनसागर p/o गुणवल्लभ उपाध्याय	रा प्रा प्र. जोधपुर
९९	छंदोलक्षण		सी सी.
१००	छंदोलघुविवेक		,,
१०१	छंदोऽलङ्करण	जगद्धर	सी सी.
१०२	छंदोविचय		बड़ोदा केटलॉग, सी सी
१०३	छंदोविचार	सुखदेव	,,
१०४	छंदोविचिति	पतञ्जलि	सी सी.
१०५	,,	दण्डी	,, [उल्लेख-काव्यादर्श १।१२]
१०६	,, भाष्य	? यादवप्रकाश	,,
१०७	,, टीका	? शंकरभट्ट	हि.एस.
१०८	छंदोविन्मण्डन	स्वामी चन्दनदास	प्रकाशित
१०९	छंदोविलास	श्रीकण्ठ	सी सी
११०	छंदोविवेक		,,
१११	छंदोवृत्तरत्न		,,
११२	छन्दोवृत्ति	श्रीनिवास	,,
११३	छन्दोव्याख्या		अनूप
११४	छन्दश्शतक	हर्षकीर्त्ति	राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डार, जयपुर भा. ४
११५	छन्दोऽष्टादशक	रूपगोस्वामी	सी. सी. [उल्लेख—वैष्णव-तोषिणी]
११६	छन्दोहृदयप्रकाश		सी सी
११७	जगद्विजयछन्द		प्रकाशित
११८	जगन्मोहनवृत्तशतक	वासुदेवब्रह्मपण्डित	हि एस.
११९	जनाश्रयी	जनाश्रय	,,
१२०	पिङ्गलछन्द शास्त्रसंग्रह		मधुसूदन पुस्तकालय, लाहोर सूचीपत्र
१२१	पिङ्गलछन्द सूत्र	पिङ्गल	प्रकाशित

	नाम	कर्त्ता एव टीकाकर	उल्लेख
१२२	,, टीका [मिताक्षरा]	,, जगन्नाथमिश्र	रा.प्रा.प्र., जोधपुर
१२३	,, टीका	,, दामोदर	हि एस.
१२४	,, टीका	,, पद्मप्रभसूरि	सी सी
१२५	,, ,,	पिंगल, पशु कवि ?	सी सी
१२६	,, ,,	,, भास्कराचार्य	,,
१२७	,, ,,	,, मथुरानाथ शुक्ल	,,
१२८	,, ,,	,, मनोहरकृष्ण	,,
१२९	,, ,, [भाव्यराज]	,, यादवप्रकाश	हि एस
१३०	,, ,,	,, वामनाचार्य	सी सी.
१३१	,, ,,	,, वेदाङ्गराज	,,
१३२	,, ,,	,, श्रीहर्ष शर्मा S/o मकरध्वज	हि. एस
१३३	,, ,, [मृतसञ्जीवनी]	,, हलायुध	प्रकाशित
१३४	पिंगलसारोद्धार		जैन-ग्रंथावली
१३५	प्रस्तारचिंतामणि	चिंतामणि दैवज्ञ	मधुसूदन पुस्तकालय, लाहोर सूत्रीपत्र, हि एस
१३६	,, टीका	,, ,,	हि एस, सी. सी.
१३७	प्रस्तारपत्तन	कृष्णदेव	,, ,,
१३८	प्रस्तारविचार		हि एस.
१३९	प्रस्तारशेखर	श्रीनिवास	,,
१४०	प्राकृत-छंद-कोष	अल्हू	राजस्थान के जैन शास्त्र भंडार, जयपुर भा ४
१४१	प्राकृतपिंगल	पिंगल	प्रकाशित
१४२	,, टीका [कृष्णीय विवरण]	,, कृष्ण	प्राकृतपैंगलम्
१४३	,, टीका [पिंगलभावोद्योत]	,, चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप
१४४	,, ,,	,, चित्रसेन	सी सी.
१४५	,, ,,	,, दुर्गेश्वर	उल्लेख–रूपगोस्वामिकृत नन्दोत्सवादिचरितटीकायाम्
१४६	,, ,,	,, नारायणदीक्षित	अनूप

	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
१४७	,, ,,	,, पशुपति	सी. सी
१४८	,, ,, [पिंगलछंदोविवृति]	,, यादवेन्द्र [दशावधान भट्टाचार्य उपनाम]	बड़ोदा केटलॉग
१४९	,, ,, [पिंगलसारविकाशिनी]	,, रविकर S/o [श्रीपति, हरिहर उप नाम]	प्रकाशित
१५०	,, ,, [पिंगलतत्त्वप्रकाशिका]	,, राजेन्द्रदशावधान	सी. सी
१५१	,, ,,	,, लक्ष्मीनाथ भट्ट	प्रकाशित
१५२	[पिंगलप्रदीप]		
	,, ,, [विद्वन्मनोरमा]	,, विद्यानन्दमिश्र	मिथिला केटलॉग
१५३	,, ,, [पिंगल प्रकाश]	,, विश्वनाथ S/o विद्यानिवास	हि. एस. सी सी. मिथिला केटलॉग,
१५४	,, ,, [पिंगलप्रकाश]	,, वंशीधरSo/कृष्ण	सी सी.
१५५	,, ,,	,, श्रीपति	मिथिला कटलॉग
१५६	,, ,,	,, वाणीनाथ	हि एस सी सी.
१५७	प्राकृत पिंगलसार	हरिप्रसाद	अनूप, सी. सी.
१५८	,, टीका	,,	,, ,,
१५९	वन्धकौमुदी	गोपीनाथ	अनूप,
१६०	रत्नमञ्जूषा		प्रकाशित
१६१	,, भाष्य		,,
१६२	वाग्वल्लभ	दु खभञ्जन	,,
१६३	,, टीका [वरवर्णिनी]	,, देवीप्रसाद	,,
१६४	वाणीभूषण	दामोदर	,,
१६५	वृत्ताकल्पद्रुम	जयगोविन्द	हि एस
१६६	वृत्ताकारिका	नारायण पुरोहित	,,
१६७	वृत्ताकौतुक	विश्वनाथ	,, सी सी.
१६८	वृत्तकौमुदी	जगद्गुरु	,, ,,
१६९	,,	रामचरण	,, ,,
१७०	वृत्ताकौस्तुभ-टीका	शिवरामS/oकृष्णराम	सी सी.

क्रमाक	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
१७१	वृत्ताचन्द्रोदय	भास्कराध्वरिन्	हि. एस, सी, सी,
१७२	वृत्तचन्द्रिका	रामदयालु	,, ,, मधुसूदन०
१७३	वृत्तचिन्तामणि	गोपीनाथ दाधीच	रा. प्रा .प्र. लक्ष्मीनाथ-संग्रह जयपुर
१७४	वृत्तचिन्तारत्न	शान्तराज पण्डित	हि. एस,
१७५	वृत्ताजातिसमुच्चय	विरहाक	प्रकाशित
१७६	,, टीका	,, गोपाल	,,
१७७	वृत्ततरङ्गिणी	कृष्ण	हि एस,
१७८	वृत्तदर्पण	गगाधर	सी सी
१७९	,,	जानकीनन्द कवीन्द्र S/o रामानन्द	मिथिला केटलॉग
१८०	,,	भीष्ममिश्र	,, हि. एस, सी सी,
१८१	,,	मणिमिश्र	सी सी,
१८२	,,	मथुरानाथ	सी सी
१८३	,,	वेंकटाचार्य	सी सी,
१८४	,,	सीताराम	हि. एस,
१८५	वृत्तदीपिका	कृष्ण	,, सी. सी,
१८६	,,	वेंकटेश	,,
१८७	वृत्तद्यु मणि	यशवंत S/o गंगाधर	वड़ोदा के हि एस, सी सी
१८८	,,	गंगाधर	हि एस,
१८९	वृत्ताप्रत्यय	शकरदयालु	,, सी सी,
१९०	वृत्तप्रत्ययकौमुदी		सी सी,
१९१	वृत्ताप्रदीप	जनार्दन	,, हि एस,
१९२	,,	वद्रीनाथ	हि एस,
१९३	वृत्तामणिकोष	श्रीनिवास	प्रकाशित
१९४	वृत्तामणिमाला	गणपतिशास्त्री	हि. एस
१९५	वृत्तामणिमालिका	श्रीनिवास	हि एस,
१९६	वृत्तामहोदधि		वडोदा केटलॉग
१९७	वृत्तमाणिक्यमाला	सुषेण	सी. सी
१९८	वृत्तामाला	वल्लभाजि	,, हि एस,
१९९	,,	विरुपाक्षयज्वन्	हि एस,
२००	वृत्तामुक्तावली	कृष्ण भट्ट	प्रकाशित
२०१	,,	कृष्णराम	हि एस, सी सी
२०२	,,	गगादास	,, ,,

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२०३	वृत्तमुक्तावली	दुर्गादत्त	मिथिला केटलॉग
२०४	,,	मल्लारि	अनूप, रा प्रा प्र जोधपुर
२०५	,, टीका [तरल]	,,	,, वडोदा केटलॉग
२०६	,,	शंकर शर्मा	सी सी, केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स् इन अवध भा० २१, सन् १८९०
२०७	,,	हरिव्यास मिश्र	हि एस, सी सी,
२०८	वृत्तमुक्तसारावली	शृंगराचार्य	हि एस.
२०९	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप, सी सी, हि. एस.
२१०	,, टीका [दुष्करोद्धार]	,, लक्ष्मीनाथ भट्ट	अनूप
२११	,, टीका [दुर्गमबोध]	,, मेघविजय	विनयसागर संग्रह, कोटा
२१२	वृत्तरत्नाकर	केदार भट्ट	प्रकाशित
२१३	,, टीका 'नौका'	अयोध्याप्रसाद	हि एस, सी सी,
२१४	, ,,	,, आत्माराम	हि एस, सी. सी,
	,,	,, ठा आसल	रा प्रा प्र, जोधपुर
२१६	,, ,, [कविचिन्तामणि]	,, करुणाकरदास S/o कुलपालिका	वडोदा केटलॉग
२१७	,, ,,	,, कृष्णराम	सी सी,
२१८	,, ,,	,, कृष्णवर्मन्	हि एस,
२१९	,, ,,	,, कृष्णसार	हि एस,
२२०	,, ,,	,, क्षेमहंस	रा प्रा प्र. जोधपुर, सी सी,
२२१	,, ,,	,, गोविन्द भट्ट	हि एस सी सी.
२२२	,, ,, [वृत्तपुष्पप्रकाशन	,, चिन्तामणि	सी सी
२२३	,, ,, [सुधा]	,, चिन्तामणि पण्डित	हि. एस, सी सी
२२४	,, ,,	,, चूडामणि दीक्षित	,, ,,
२२५	,, ,, [वृत्तरत्नाकरवार्तिक]	,, जगन्नाथ S/o राम	सी सी
२२६	,, ,, [भावार्थदीपिका]	,, जनार्दन विबुध	हि एस, सी सी, वड़ोदा केटलॉग

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकर	उल्लेख
२२७	वृत्तरत्नाकर-टीका	केदारिभट्ट, जीवानन्द	प्रकाशित
२२८	,, ,,	,, ज्ञारसराम शास्त्री	,,
२२९	,, ,,	,, तारानाथ	हि. एस,
२३०	,, ,,	,, त्रिविक्रम S/o रघुसूरि	,, सी सी,
२३१	,, ,, [वृत्तरत्नाकरादर्श]	,, दिवाकरS/oमहादेव	अनूप, हि. एस, सीसी,
२३२	,, ,,	,, देवराज	हि एस,
२३३	,, ,,	,, नरसिंहसूरि	,,
२३४	,, ,, [मणिमञ्जरी]	,, नारायण पंडित S/o नृसिंहयज्वन्	सी सी.
२३५	,, ,,	,, नारायणभट्ट S/o रामेश्वर	प्रकाशित
२३६	,,	,, नृसिंह	प्रकाशित
२३७	,,	,, पूर्णानन्द कवि	वडोदा केटलॉग
२३८	,, ,,	,, प्रभावल्लभ	हि. एस,
२३९	,, ,,	,, भास्करार्य S/o दायाजिभट्ट	,, रा प्रा प्र. जोधपुर
२४०	,, ,, [बालबोधिनी]	,, यशः कीर्ति P/o अमरकीर्ति	अनूप. रा प्रा प्र. जोधपुर
२४१	,, ,,	,, रघुनाथ	हि. एस, सी सी,
२४२	,, ,,	,, रामचन्द्र कवि-भारती	प्रकाशित
२४३	,, ,, [प्रभा]	,, विश्वनाथ कवि S/o श्रीनाथ	हि. एस, सी सी, वडोदा केटलॉग
२४४	,, ,,	,, शार्दूल कवि	,, ,,
२४५	,, ,,	,, शुभविजय	रा प्रा प्र जोधपुर
२४६	,, ,,	,, श्रीकण्ठ	सी सी,
२४७	,, ,, [धीशोधिनी]	,, श्रीनाथ कवि	सी सी, वडोदा केटलॉग,
२४८	,, ,, [छन्दोलक्ष्यलक्षण]	,, श्रीनाथ S/o गोविन्द भट्ट	,, हि एस,
२४९	,, ,, [सुगमवृत्ति]	,, समयसुन्दर	अनूप, रा प्रा.प्र जोधपुर

क्रमाक	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
२५०	वृत्तरत्नाकर टीका [अर्थदीपिका]	केदारभट्ट, सदाशिव S/o विश्वनाथ	अनूप
२५१	,, ,, [वृत्तरत्नावली]	,, सारस्वत सदाशिव मुनि	हि. एस, सी सी,
२५२	,, ,, [सुकविहृदयानन्दिनी]	,, सुल्हण S/o भास्कर	,, ,, अनूप
२५३	,, ,,	,, सोमपण्डित	,, ,,
२५४	,, ,, [मुग्धबोधकरी]	,, सोमचन्द्रगणि	,, ,, अनूप रा प्रा. प्र जोधपुर
२५५	,, ,, [वृत्तरत्नाकरसेतु]	,, हरिभास्कर S/o आपाजी भट्ट	,, अनूप
२५६	वृत्तरत्नाकर, अवचूरि	,, ?	अनूप,
२५७	,, बालावबोध	,, मेरुसुन्दर	रा. प्रा. प्र जोधपुर
२५८	वृत्तरत्नार्णव	नरसिंह भागवत P/o रामचन्द्र योगीन्द्र	हि एस,
२५९	वृत्तरत्नावली	कालिदास	,,
२६०	,,	कृष्णराम	,,
२६१	,,	चिरंजीव भट्टाचार्य	अनूप, मिथिला और बड़ोदा केटलॉग
२६२	,,	यशवर्तसिंह	हि. एस, सी सी, रा. प्रा. प्र जोधपुर
२६३	,,	दुर्गादत्त	,, ,,
२६४	,,	नारायण	,, ,,
२६५	,,	मणिराम S/o वसंत	सी सी,
२६६	,, टीका [चन्द्रिका]	,, कालिकाप्रसाद	,,
२६७	,, ,,	मिश्र सानन्द	हि एस, सी. सी
२६८	,, ,,	रविकर	,, ,,
२६९	,,	राजचूडामणि	,, ,, [उल्लेख-काव्यदर्पण]
२७०	,,	रामदेव चिरंजीव	,, ,,
२७१	,,	रामास्वामी शास्त्री	,,
२७२	,,	वेंकटेश S/o सरस्वती	प्रकाशित
२७३	वृत्तरामायण	कवि P/o रामानुजाचार्य	सी सी,

क्रमाक	नाम	कर्त्ता एव टीकाकार	उल्लेख
२७४	वृत्तरामायण	रामस्वामी शास्त्री	हि॰ एस,
२७५	वृत्तारामास्पद	क्षेमकरणमिश्र	हि एस, सी. सी.
२७६	वृत्तलक्षण	उमापति	हि एस.,सी सी वृत्तावार्तिक
२७७	वृत्तवार्तिकम्	रामपाणिवाद	प्रकाशित
२७८	,,	वैद्यनाथ	हि एस, सी. सी,
२७९	वृत्ताविनोद	फतेहगिरि	,, ,,
२८०	वृत्ताविवेचन	दुर्गासहाय	,, ,,
२८१	वृत्तासार	पुष्करमिश्र	अनूप
२८२	,,	भारद्वाज	हि एस, सी सी, बड़ोदा केटलॉग
२८३	,,	रमापति उपाध्याय	मिथिला केटलॉग, सी सी,
२८४	,, टीका [वृत्तासारालोक]	,, ,,	,,
२८५	वृत्तसारावली	यशोधर	अनूप,
२८६	वृत्तसिद्धान्तमञ्जरी	रघुनाथ	हि॰ एस, सी॰ सी,
२८७	वृत्तसुधोदय	मथुरानाथ शुक्ल	,, ,,
२८८	वृत्तसुधोदय	वेणीविलास	हि एस,
२८९	वृत्ताभिराम	रामचन्द्र	,, , सी सी, बड़ोदा केटलॉग
२९०	वृत्तालङ्कार	छबिलालसूरि	हि एस,
२९१	वृत्तिबोध	बलभद्र	अनूप
२९२	वृत्तिवार्तिक	विद्यानाथ	केटलॉग ऑफ संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन अवध भाग १५, सन् १८८२
२९३	वृत्तोक्तिरत्न	नारायण	हि एस,
२९४	शृङ्गारमञ्जरी		कन्नडप्रान्तीय ताडपीय ग्रंथ सूची
२९५	श्रुतबोध	कालिदास	प्रकाशित
२९६	,, टीका	,, कनकलाल शर्मा	,,
२९७	,, ,, [पदद्योतनिका]	,, चतुर्भुज	सी सी
२९८	,, ,, [बालविवेकिनी]	,, ताराचन्द्र	हि॰ एस, सी.सी, मिथिला केटलॉग

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२९९	श्रुतबोध-टीका	कालिदास, नयविमल	हिमांशुविजयजी ना लेखो
३००	,, ,,	नाराजी S/o हरजी	सी सी,
३०१	,, ,,	,, नेतृसिंह	रा. प्रा. प्र जोधपुर
३०२	,, ,, [सुबोधिनी]	,, मनोहर शर्मा	हि एस, सी सी रा प्रा. प्र. जोधपुर
३०३	,, ,, [ज्योत्स्ना]	,, माधव S/o गोविंद	,,
३०४	,, ,,	,, मेघचन्द्र	हि एस [सी. सी मे कर्ता का नाम नहीं है और P10 के स्थान पर मेघचन्द्र का नाम है]
३०५	,,	,, लक्ष्मीनारायण	हि एस, सी. सी.
३०६	,, ,,	,, व्रजरत्न भट्टाचार्य	प्रकाशित
३०७	,, ,,	,, वररुचि ?	सी. सी.
३०८	,, ,, [श्रुतबोधप्रबोधिनी]	,, वासुदेव	हि. एस, सी. सी.
३०९	,, ,,	,, शुकदेव	,, ,,
३१०	,, ,, [बालबोधिनी]	,, हंसराज	,,
३११	,, ,,	,, हर्षकीर्त्ति	,, ,,
३१२	, [आनंदवर्धिनी]	,,	प्रकाशित
३१३	समवृत्तसारः	नीलकण्ठाचार्य	हि. एस, सी. सी.
३१४	सुवृत्ततिलकम्	क्षेमेन्द्र	प्रकाशित
३१५	संगीतराज-पाठ्यरत्नकोष	महाराणा कुंभा	तृतीय उल्लास
३१६	संगीत सह पिंगल		जैन ग्रन्थावली
३१७	स्वयम्भू छन्द	स्वयंभू	प्रकाशित

पुराणादि ग्रंथ

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
३१८	अग्निपुराण		अध्याय ३२८-३३५
३१९	गरुडपुराण पूर्वखण्ड		,, २०७-२१२
३२०	नारदपुराण पूर्वखण्ड		,, ५७ वां
३२१	विष्णुधर्मोत्तर तृतीयखण्ड		,, ३ रा
३२२	बृहत्संहिता	वराहमिहिर	,, १४वां
३२३	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य	अध्याय १४-१५

सहायक-ग्रन्थ

१ अग्निपुराण

२ अथर्ववेदीय वृहत्सर्वानुक्रमणी

३. अनर्घराघवननाटक — मुरारि

४. अरिष्टवधस्तोत्र — रूपगोस्वामी

५ [illegible] हृदयं — वाग्भट

६ [illegible]पनिदान सूत्र — गार्ग्य

७. ऋग्यजुष् परिशिष्ट

८ ऋग्वेद के मन्त्रद्रष्टा कवि — बद्रीप्र स । पंचोली

९. ऋग्वेद मे गोतत्त्व — ,,

१०. ए हिस्ट्री ऑफ क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर — एम कृष्णमाचारी

११ ए हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर — आर्थर ए. मेकडॉनल

१२. ए हिस्ट्री ऑफ सस्कृत लिटरेचर — कीथ

१३ ऐतरेय आरण्यक

१४ कविकल्पलता — देवेश्वर

१५ कविदर्पण — सं० एच. डी. वेल्हणकर

१६ कांकरोली का इतिहास — पो० कण्ठमणि शास्त्री

१७ काठक सहिता

१८. कामसूत्रम् — वात्स्यायन

१९. काव्यादर्श — दण्डी

२० किरातार्जुनीय काव्य — भारवि

२१. कुमारसम्भव काव्य — कालिदास

२२ कौषीतकि महाब्राह्मण

२३ गाथालक्षण — सं० एच डी वेल्हणकर

२४ गीतगोविन्द — जयदेव

२५ गोपाललीलामहाकाव्य — सं० बेचनराम शर्मा

२६. गोवर्धनोद्धरण स्तोत्र — रूपगोस्वामी

२७ गोविन्दविरुदावली — ,,

२८. गौरीदशकस्तोत्र — शंकराचार्य

२९ छन्द कोश — स० एच डी वेल्हणकर

३० छन्द सूत्र-हलायुध टीका सहित — पिंगल, हलायुध

३१. छन्द सूत्र-टिप्पणी — अनन्तराम शर्मा

३२ छन्द सूत्रभाष्य — यादवप्रकाश

३३.	छन्दोनुशासन	जयकीर्त्ति, स० एच. डी. वेल्हणकर
३४.	छन्दोनुशासन स्वोपज्ञटीकोपेत	हेमचन्द्राचार्य
३५	छन्दोमञ्जरी टीकासहित	गगादास
३६.	छन्दोमञ्जरी जीवन	चन्द्रशेखर भारती
३७	छान्दोग्योपनिषद्	
३८.	जयदामन्	एच. डी. वेल्हणकर
३९.	जयदेवच्छन्द	सं० ,,
४०	जनाश्रयीछन्दोविचिति	जनाश्रय
४१.	जैन ग्रन्थवावली	
४२	जैमिनीय ब्राह्मण	
४३	ताड्यमहाब्राह्मण	
४४	तैत्तिरीय ब्राह्मण	
४५.	दिग्विजय महाकाव्य	महो० मेघविजय
४६	देवानन्द-महाकाव्य	,,
४७	नन्दाहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
४८	नन्दोत्सवादिचरितस्तोत्र टीका	,,
४९.	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य
५०	नारदपुराण	
५१	निरुक्त-दुर्गवृत्तिसहित	यास्क, दुर्गसिंह
५२.	पाठ्यरत्नकोष	महाराणा कुम्भा
५३.	पाणिनीयशिक्षा	पाणिनि
५४.	पिंगलप्रदीप	लक्ष्मीनाथ भट्ट
५५	प्राकृतपिंगलोद्योत	चन्द्रशेखरभट्ट
५६.	प्राकृतपैंगलम्	डा० भोलाशंकर व्यास
५७	प्राचीन भारत मे गणतान्त्रिक व्यवस्था	वद्रीप्रसाद पंचोली
५८.	बृहत्संहिता	वराहमिहिर
५९.	भट्टिकाव्य	भट्टि
६०	भागवतपुराण १० मस्कन्ध	
६१.	भारतेन्दु ग्रन्थावली भा० ३	स० व्रजरत्नदास
६२.	महाभारत शान्तिपर्व	
६३	मात्रिक-छन्दों का विकास	डा शिवनन्दनप्रसाद
६४	मालतीमाधव	भवभूति
६५.	मुकुन्दमुक्तावलीस्तोत्र	रूपगोस्वामी
६६	मैत्रायणीसंहिता	
६७	युक्तिप्रबोध	महो० मेघविजय
६८	रघुवंश	कालिदास

६९	रंगक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७०.	रसिकरञ्जनम्	रामचन्द्र भट्ट
७१.	रासक्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७२.	रोमावलीशतक	रामचन्द्र भट्ट
७३	वत्सचारणादिस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७४.	वर्षाशरद्विहारचरितस्तोत्र	,,
७५.	वल्लभवंशवृक्ष	स० पो० कण्ठमणि शास्त्री
७६.	वस्त्रहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७७.	वाग्वल्लभ	दु खभञ्जन कवि
७८.	वाजसनेयी संहिता	
७९.	वाणीभूषण	दामोदर
८०	वार्त्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन	डॉ० हरिहरनाथ टंडन
८१.	विजयदेवमाहात्म्य	श्रीवल्लभोपाध्याय
८२.	विज्ञप्तिपत्री	समयसुन्दरोपाध्याय
८३.	विज्ञप्तिलेख-संग्रह प्रथम भाग	सं० मुनि जिनविजय
८४	वृत्तजातिसमुच्चय	स० हरिदामोदर वेल्हणकर
८५	वृत्तमुक्तावली	देवर्षि कृष्णभट्ट
८६.	वृत्तरत्नाकर नारायणीटीकायुत	केदारभट्ट, नारायणभट्ट
८७	वेदविद्या	डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल
८८	वैदिक छन्दोमीमासा	युधिष्ठिर मीमासक
८९.	वैदिक-दर्शन	डॉ० फतहसिंह
९०.	वैदिक-साहित्य	रामगोविन्द त्रिवेदी
९१	शतपथ ब्राह्मण	
९२.	शिशुपालवध	माघकवि
९३.	श्रुतबोध	कालिदास
९४.	शृङ्गारकल्लोल	रायभट्ट
९५	सुदर्शनादिमोचनस्तोत्र	रूपगोस्वामी
९६	सुवृत्ततिलक	क्षेमेन्द्र
९७.	सौन्दर्यलहरी	शंकराचार्य
९८	स्वयंभूछन्द	सं० हरि दामोदर वेल्हणकर
९९	सप्तसन्धानमहाकाव्य	महो० मेघविजय
१००.	सभाप्या रत्नमञ्जूषा	स० हरि दामोदर वेल्हणकर
१०१.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	कीथ
१०२	,,	वाचस्पति गैरोला
१०३.	सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका	लक्ष्मीनाथ भट्ट
१०४	हंसदूतम्	रूपगोस्वामी
१०५.	हरिमीडे-स्तोत्र	शंकराचार्य
१०६.	हिमांशुविजयजी नां लेखो	

सूची-पत्र

1	A descriptive Catalogue of Sanskrit and Prakrita Manuscripts in the Library of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society.	H.D. Velankar
2	An alphabetical list of manuscripts in the Oriental Institute, Baroda.	Raghavan Nambiyar Shiromani
3	A descriptive catalogue of manuscripts in Mithila	Kashi Prasad Jayaswal
4.	A descriptive Catalogue of the Sanskrit and Prakrit Manuscripts the Library of the University of Bombay	H D Velankar
5.	कन्नड-प्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थ-सूची	के. भुजबली शास्त्री
6	Catalogue of Anupa Samskrita Library, Bikaner	Dr C. Kunhan Raja
7	Catalogue of Samskrita manuscripts in Avadha Part–15, 1882 Part–21; 1890	... ...
8.	Catalogus Catalogum	T. Aufrecht
9	मधुसूदन पुस्तकालय, लाहौर, का सूचीपत्र	
10.	राजस्थान के जैन शास्त्रभंडार	डॉ. कस्तूरचद कासलीवाल
11.	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर का सूचीपत्र	
12.	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, चित्तौड़, यति बालचन्द्रजी सग्रह का सूचीपत्र	
13	राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, जयपुर, लक्ष्मीनाथ दाधीच सग्रह का सूचीपत्र	
14.	राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, बीकानेर का सूचीपत्र	
15	संस्कृत कॉलेज बनारस, रिपोर्ट सन् १९०९–१९१७	

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला में प्रकाशित

(क) संस्कृत-प्राकृत-ग्रन्थ

१ **प्रमाणमञ्जरी**, (ग्रन्थाङ्क ४), तार्किक चूडामणि सर्वदेवाचार्य कृत; अद्वयारण्य, बलभद्र, वामनभट्ट कृत टीकात्रयोपेत, सम्पादक – मीमासान्यायकेसरी प० पट्टाभिराम शास्त्री, विद्यासागर (७+१०६), १९५३ ई०। मू. ६.००

२ **यन्त्रराज-रचना**, (ग्रन्थाङ्क ५), महाराजा सवाई जयसिंह कारित; सपादक – स्व० प० केदारनाथ ज्योतिर्विद् (८+२८), १९५३ ई०। मू. १.७५

३ **महर्षिकुलवैभवम्** भाग १, (ग्रन्थाङ्क ६), स्व० प० मधुसूदन ओझा प्रणीत, म म. प० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित एव हिन्दी व्याख्या सहित (५६+२९१), १९५६ ई०। मू. १०.७५

४. **महर्षिकुलवैभवम्** (मूलमात्र), (ग्रन्थाङ्क ५९), स्व० प० मधुसूदन ओझा प्रणीत, सपादक – प० प्रद्युम्न ओझा (१६+१३३+१०), १९६१ ई०। मू. ४.००

५. **तर्कसग्रह**, (ग्र० ९), अन्नभट्ट कृत टीकाकार – क्षमाकल्याण गणि; संपादक – डा० जितेंद्र जेटली, (१७+७४), १९५६ ई०। मू. ३ ००

६ **कारकसवधोद्योत**, (ग्र० १८), पं० रभसनन्दी कृत, कातन्त्रव्याकरणपरक रचना; संपादक - डा० हरिप्रसाद शास्त्री (२२+३४), १९५६ ई०। मू. १.७५

७ **वृत्तिदीपिका**, (ग्र० ७), मौनिकृष्णभट्ट कृत; संपादक – स्व० प० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, साहित्याचार्य (६+४४+१२), १९५६ ई०। मू २ ००

८. **कृष्णगीति**, (ग्र० १६), कवि सोमनाथ विरचित, राधाकृष्ण सम्बन्धी प्रेमकाव्य, सपादिका – डॉ० कु० प्रियवाला शाह (२७+३२), १९५६ ई०। मू १ ७५

९. **शब्दरत्नप्रदीप**, (ग्र० १९), अज्ञातकर्तृक, बह्वर्थक शब्दकोश; सपादक डॉ० हरिप्रसाद शास्त्री (१२+४४), १९५६ ई०। मू. २.००

१० **नृत्तसग्रह**, (ग्र० १७), अज्ञातकर्तृक; सपादिका – डॉ० कु० प्रियवाला शाह (६+४५), १९५६ ई०। मू १.७५

११ **शृङ्गारहारावली**, (ग्र० १५), श्री हर्षकवि विरचित सस्कृत-गीतकाव्य; सपादिका – डॉ० कु० प्रियवाला शाह (१०+८२) १९५६ ई०। मू २.७५

१२. **राजविनोद महाकाव्य**, (ग्र० ८), महाकवि उदयराज प्रणीत, अहमदाबाद के सुलतान महमूद बेगडा का चरित्र-वर्णन; संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२८+४४) १९५६ ई०। मू. २ २५

१३ चक्रपाणिविजय महाकाव्य, (ग्र० २०), भट्ट लक्ष्मीधर विरचित; उषा-परिणय सबधी अद्यावधि अज्ञात काव्य; संपादक – के का. शास्त्री (७+११२), १९५६ ई० । मू. ३.५०

१४ नृत्यरत्नकोश (प्रथम भाग), (ग्र० २५), महाराणा कुम्भकर्ण कृत, सगीतराजरत्न-कोषान्तर्गत, सपादक – प्रो० रसिकलाल छो० परीख एव डॉ० कु० प्रियबाला शाह (७+१४४), १९५७ ई० । मू. ३ ७५

१५ उक्तिरत्नाकर, (ग्र० १२), साधुसुन्दर गणि विरचित, सस्कृत एव देशी शब्दकोष, सपादक – मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य (१०+११८), १९५७ । मू. ४.७५

१६. दुर्गापुष्पाञ्जलि, (ग्र० २२), म. म. प० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत, सपादक प० श्री गङ्गाधर द्विवेदी (३९+१४७), १९५६ ई० । मू ४ २५

१७ कर्णकुतूहल एवं कृष्णलीलामत, (ग्र० २६), महाकवि भोलानाथ, जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह समाश्रित विरचित, सपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (२५+३०), १९५७ ई० । मू. १.५०

१८ ईश्वरविलास-महाकाव्यम्, (ग्र० २९), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, जयपुर निर्माता सवाई जयसिंह द्वारा अनुष्ठित अश्वमेध यज्ञ का प्रत्यक्ष वर्णन एव जयपुर राज्येतिहास सम्बन्धी अनेक संस्मरण संवलित महाकाव्य, सपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (७६+२९३), १९५८ ई० । मू. ११.५०

१९ रसदीर्घिका, (ग्र० ४१), कवि विद्याराम प्रणीत, सस्कृत रसालङ्कारपरक सरल एव लघु कृति, सपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१२+८०) १९५९ ई० । मू २ ००

२० पद्यमुक्तावली, (ग्र० ३०), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, अनेक साहित्यिक एव ऐतिहासिक पद्य सग्रह, सपादक – कविशिरोमणि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री (२०+१४६), १९५९ ई० । मू ४.००

२१ काव्यप्रकाश भाग १, (ग्र० ४६), मूल ग्रन्थकार मम्मटाचार्य के समकालीन भट्ट सोमेश्वर कृत 'काव्यादर्श सकेत' सहित, जैसलमेर के जैन ग्रन्थ-भडारो से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर सपादित, सपादक – श्री रसिकलाल छो० परीख (४+३५२), १९५९ ई० । मू १२ ००

२२ काव्यप्रकाश भाग २, (ग्र० ४७), सपादक – श्री रसिकलाल छो० परीख (२२+११०+९४), १९५९ ई० । मू ८.२५

२३ वस्तुरत्नकोश, (ग्र० ४५), अज्ञातकर्तृक, सस्कृत का सामान्यज्ञान-कोश; सपादक – डॉ० कु० प्रियबाला शाह (९+६४), १९५९ ई०।, मू. ४ ००

२४ दशकण्ठवधम्, (ग्र० २३), म म प० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी कृत, रामचरित्रात्मक सस्कृत-चम्पू, सपादक – श्री गङ्गाधर द्विवेदी (४+१५६), १९६० ई० । मू. ४ ००

२५ श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्रम्, (ग्र० ५४), पृथ्वीधराचार्य विरचित, कवि पद्मनाभ प्रणीत भाष्यान्वित, पूजा-पञ्चाङ्गादि सवलित, संपादक – श्री गोपालनारायण बहुरा (१+१९९), १९६० ई० । मू ३.७५

२६ रत्नपरीक्षादि सप्तग्रन्थ सग्रह, (ग्र० ६०), दिल्ली-सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के मुद्राधीक्षक ठक्कुर फेरू विरचित, मध्यकालीन भारत की आर्थिक दशा एव रत्नपरीक्षादि वस्तुजात-सग्रहादिक विषयों पर विस्तृत विवेचनात्मक ग्रन्थ; सपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य । १९६१ ई० । मू ८.२५

२७ स्वयम्भूछन्द, (ग्र० ३७) कवि स्वयम्भू कृत, दसवी शताब्दी मे रचित प्राकृत एवं अप-भ्रंश छन्द.शास्त्र पर अलभ्य कृति, सम्पा० प्रो एच०डी० वेलणकर (२५+२४४) १९६२ ई० । मू. ७.७५

२८. वृत्तजातिसमुच्चय, (ग्र० ६१), कवि विरहाङ्क कृत, ६वी शताब्दी मे प्रणीत सस्कृत एवं प्राकृत छन्दःशास्त्र पर अलभ्य कृति; सपादक प्रो० एच डी. वेलणकर (३२+१४४), १९६२ ई० । मू ५.२५

२९. कविदर्पण, (ग्र० ६२), अज्ञातकर्तृक, १३वी शताब्दी मे रचित प्राकृत-सस्कृत छन्दः-शास्त्र पर अनुपम कृति; सपादक – प्रो० एच. डी. वेलणकर (५२+१५६), १९६२ ई० । मू ६.००

३०. वृत्तमुक्तावली, (ग्र० ६९), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट प्रणीत, वैदिक एव सस्कृत छन्द शास्त्र पर दुर्लभ कृति; सपादक – पं० श्री मथुरानाथ भट्ट (१७+७६) १९६३ ई० । मू ३ ७५

३१. कर्णामृतप्रपा, (ग्र०२) सोमेश्वर भट्ट कृत (१३वी शताब्दी) मध्यकालीन सस्कृत-काव्य-सग्रह, जैसलमेर के जैन-भडारो से प्राप्त अलभ्य प्रति के आधार पर; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य; (१०+५६), १९६३ ई० । मू २ २५

३२ पदार्थरत्नमञ्जूषा, (ग्र ३८), श्रीकृष्णमिश्र प्रणीत दर्शनशास्त्र की वैशेषिक शाखा पर आधारित, जैसलमेर के जैन-भडारो से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर सपा-दित; संपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, प्रस्तावना – श्री दलसुख मालवणिया । (७+४५) १९६३, ई० । मू ३ ७५

३३. त्रिपुराभारती-लघु-स्तव, (ग्र० १), लघ्वाचार्य प्रणीत वागीश्वरी स्तोत्र, सोमतिलक सूरि (१३४० ई०) कृत टीका सहित, सपादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य (१०+५६) १९५२ ई० । मू. ३ २५

३४ प्राकृतानन्द, (ग्र० १०), रघुनाथ कवि कृत प्राकृत भाषा व्याकरण सबधी महत्त्वपूर्ण रचना, सपादक – पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य (१७+५२+५३+७६) १९६२ ई० । मू ४.२५

३५. इन्द्रप्रस्थ-प्रबन्ध, (ग्र ७०), अज्ञात कर्तृक, दिल्ली के प्रारम्भिक शासको के विषय मे ऐतिहासिक काव्य; संपादक – डा० दशरथ शर्मा (८+४६) १९६३ ई० । मू. २.२५

(ख) राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ

१. कान्हडदे प्रबन्ध, (ग्र. ११) : महाकवि पद्मनाभ विरचित, सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी के द्वारा जालोर दुर्ग के प्रसिद्ध घेरे आदि का वर्णन; सम्पादक - प्रो. के. बी. व्यास (३३+२७५) १९५३ ई.। मू. १२.२५

२. क्यामखां रासा, (ग्र. १३) कवि जान कृत, फतेहपुर के नवाब अलफखांन तथा राजपूताने के क्यामखानी मुस्लिम राजपूतो के उद्गम और इतिहास का रोचक वर्णन, सम्पादक - डॉ. दशरथ शर्मा और अगरचन्द भवरलाल नाहटा (५०+१२८) १९५३ई मू. ४.७५

३. लावा रासा, (ग्र. १४) अपर नाम कूर्मवंशयशप्रकाश, गोपालदान कविया कृत, नरूका (कछवाहा) राजपूतो और पिंडारी पठानो के बीच हुए पाँच युद्धो का समकालीन ओजस्वी वर्णन, सम्पादक - श्री महताबचन्द खारेड, (१९+८६) १९५३ ई। मू. ३.७५

४. बांकीदास री ख्यात, (ग्र.२१) बांकीदास कृत, राजस्थान के प्राचीन ऐतिहासिक विवरणो का प्रमुख ग्रन्थ, सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (९+२१८) १९५६ ई.। मू ५ ५०

५ राजस्थानी साहित्य सग्रह भाग १, (ग्र २७) राजस्थानी भाषा में रचित प्रतिनिधि गद्य कथा सग्रह; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (१४+५२) १९५७ ई। मू. २ २५

६ राजस्थानी साहित्य सग्रह भाग २, (ग्र. ५२) तीन ऐतिहासिक वार्ताएं; बगडावत, प्रतापसिंह महोकमसिंह और वीरमदे सोनगिरा; सम्पादक - पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, (२४+१०८) १९६० ई.। मू २.७५

७ कवीन्द्र कल्पलता, (ग्र. ३४) : मुगल बादशाह शाहजहाँ के समकालीन कवीन्द्राचार्य सरस्वती कृत ; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत (७+५५+५) १९५८ ई मू. २००

८. जुगलविलास, (ग्र ३२) कुशलगढ के महाराजा पृथ्वीसिंहजी अपरनाम कवि पीथल कृत , सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, (५+५०) १९२० ई.। मू. १.७५

९ भगतमाळ, (४३) चारण ब्रह्मदास दादूपथी कृत, सम्पादक - श्री उदयराज उज्ज्वल (८+६४) १९५९ ई.। मू १ ७५

१०. राजस्थान पुरातत्व मन्दिर के हस्तलिखित ग्रन्थो की सूची भाग १, (ग्र. ४२) ई. स. १९५६ तक सगृहीत ४००० ग्रंथो का वर्गीकृत सूचीपत्र ; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, (२+३०२+२०) १९५९ ई। मू ७ ५०

११ राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, भाग २, (ग्र ५१), ७८५५ तक के ग्रन्थो का सूची-पत्र , सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा, एम ए, (२+३९१) १९६० ई.। मू. १२.००

१२. राजस्थानी हस्तलिखित-ग्रन्थ-सूची भाग १, (ग्र. ४४) मार्च १९५८ तक के ग्रंथो का विवरण ; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य, (३०२+१९), १९६० ई, मू. ४.५०

१३ राजस्थान हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग २, (ग्र. ५८) १९५८-५९ के संगृहीत ग्रथो का विवरण ; सम्पादक - पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, (२+६१) १९६१ ई.। मू. २.७५

१४. स्व. पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रथ सग्रह, (ग्र. ५५), सम्पादक - श्री गोपालनारायण वहुरा और श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी (८+१६३+३८) १९६१ ई.। मू ६ २५

१५. मुंहता नैणसी री ख्यात भाग १, (ग्र ४८), मुंहता नैणसी कृत साधारणत राजस्थान-देशीय एव मुख्यत· (मारवाड) राज्य का प्रथम प्रामाणिक व ऐतिहासिक ग्रथ, सम्पादक आ. श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३६५), १९६० ई.। मू. ८ ५०

१६. मु० नै० री ख्यात भाग २, (ग्र. ४९), आ. श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३४३) १९६२ ई.। मू. ९ ५०

१७. मु० नै० री ख्यात भाग ३, (२+२६४) १९६४ ई। „ „ मू ८ ००

१८. सूरजप्रकास भाग १, (ग्र. ५६) : चारण करणीदान कविया कृत, सामान्य रूप से मारवाड का ऐतिहासिक विवरण और विशेषत: जोधपुर के महाराजा अभयसिंहजी व सरवुलन्दखान के बीच हुए अहमदाबाद के युद्ध का समकालीन वर्णन ; सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (२०+३१०+३७), १९६१ ई.। मू ८ ००

१९ सूरजप्रकास भाग २, (ग्र ५७); सम्पादक - श्री सीताराम लाळस (९+३६३+६१) १९६२ ई.। मू. ९.५०

२०. „ भाग ३, (ग्र. ५८), „ „ „ (९७+२७५+८४), १९६३ ई.। मू. ९ ७५

२१. नेहतरग, (ग्र. ६३) : बूदी नरेश राव बुधसिंह हाडा कृत, काव्य-शास्त्रीय-ग्रथ; सम्पादक - श्री रामप्रसाद दाधीच, (३२+१२०), १९६१ ई.। मू. ४ ००

२२. मत्स्य-प्रदेश की हिन्दी-साहित्य को देन, (ग्र. ६६) : लेखक डॉ. मोतीलाल गुप्त, पूर्वी राजस्थान में हस्तलिखित ग्रथो की खोज विषयक शोध-प्रबन्ध; (९+२९६), १९६० ई.। मू ७.००

२३ राजस्थान में सस्कृत साहित्य की खोज, (ग्र.३१) : अनु० श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, प्रोफ़ेसर एस आर भाण्डारकर द्वारा हस्तलिखित सस्कृत ग्रथो की खोज मे मध्यप्रदेश व राजस्थान मे (१९०५-६) मे की गई खोज की रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद (२+७७+१९), १९६३ ई.। मू. ३.००

२४. समदर्शी आचार्य हरिभद्र, (ग्र ६८) : लेखक–प० सुखलालजी, हिन्दी अनुवादक–शान्तिलाल म. जैन, राजस्थान के गणमान्य साहित्यकार एव विचारक आचार्य हरिभद्र का जीवन-चरित्र और दर्शन; (८+१२२), १९६३ ई०। मू. ३.००

२५. वीरवांण, (ग्र. ३३) : ढाढी बादर कृत, जोधपुर के वीर शिरोमणि वीरमजी राठौड संबंधी रचना; सम्पादिका–रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत
(१६+६२+११२), १९६० ई० । मू. ४ ५०

२६ वसन्त-विलास फागु, (ग्र. ३६) अज्ञातकर्तृक, १३वी शताब्दी का एक प्रचीन राजस्थानी भाषा निबद्ध शृंगारिक काव्य; सम्पादक एम सी मोदी,
(१४+११६), १९६० ई० । मू. ५ ५०

२७. रुक्मणीहरण, (ग्र ७४) महाकवि सायाजी झूला कृत, राजस्थानी भक्तिकाव्य, सम्पादक–पुरुषोत्तमलाल मेनारिया (५२+११३) १९६४ ई० । मू. ३ ५०

२८. बुद्धि-विलास, (ग्र. ७३) · बखतराम साह कृत, जयपुर के संस्थापक सवाई जयसिंहजी का समकालीन ऐतिहासिक वर्णन, सम्पादक–श्री पद्मधर पाठक,
(२४+१७९), १९६४ ई० । मू. ३.७५

२९ रघुवरजसप्रकास, (ग्र ५०) चारण कवि किसनाजी आढा कृत, राजस्थानी भाषा का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ, सम्पादक–श्री सीताराम लाळस;
(२०+३७६), १९६० ई० । मू. ८ २५

३० संस्कृत व प्राकृत ग्रन्थो का सूचीपत्र भाग १ (ग्र. ७१) : राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर संग्रह का स्वरित रोमन-लिपि मे ४००० का सूचीपत्र, अंत मे विशिष्ट ग्रन्थो के उद्धरण, सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य;
(१६+८६+३७३+१५९), १९६३ ई० । मू. ३७.५०

३१ संस्कृत व प्राकृत ग्रन्थों का सूचीपत्र भाग २ अ (ग्र. ७७) : सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य, (१६+७०+३२९+९९), १९६४ ई० । मू. ३४.५०

३२. सन्त कवि रज्जब–सम्प्रदाय और साहित्य (ग्र. ७६) लेखक–डॉ. व्रजलाल वर्मा,
(८+३१४), १९६५ ई० । मू. ७ २५

३३ प्रतापरासो, जाचिक जीवण कृत, (ग्र ७५) अलवर राज्य के संस्थापक रावराजा प्रतापसिंहजी के शौर्य का ऐतिहासिक वर्णन, भाषा-शास्त्रीय विशिष्ट अध्ययन सहित, सम्पादक–डॉ मोतीलाल गुप्त (१६६+११८), १९६५ । मू ६.७५

३४ भक्तमाल, राघोदास कृत, चतुरदास कृत टीका; सम्पादक–श्री अगरचन्द नाहटा ।
(४२+२७+२८६), १९६५ ई० । मू. ६ ७५

